GP-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

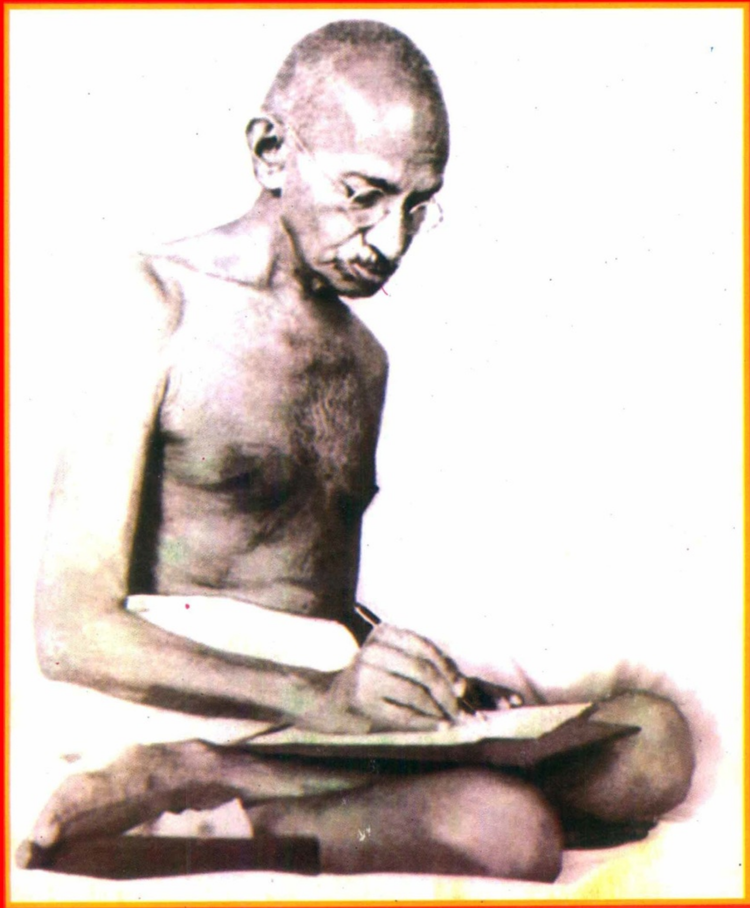

महात्मा गाँधी : जीवन एवं कार्य

GP-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

महात्मा गाँधी : जीवन एवं कार्य

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

अध्यक्ष

प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राजस्थान)

संयोजक / सदस्य

संयोजक

डॉ. बी. अरुण कुमार
सह आचार्य,राजनीति विज्ञान
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. (डॉ.) एम.एल. शर्मा
आचार्य,गांधी अध्ययन केन्द्र
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

प्रो. के.एस. भारती
विभागाध्यक्ष (गांधी एवं विचार)
टी.के.एम. नागपुर विश्वविद्यालय, नागपुर

प्रो. एन. राधाकृष्णन्
पूर्व अध्यक्ष गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति
राजघाट, नई दिल्ली

प्रो. आर.एस. यादव
विभागाध्यक्ष (राजनीतिक विज्ञान) एवं निदेशक, गांधी अध्ययन केन्द्र
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र

प्रो. एम.एल. शर्मा
आचार्य,गांधी अध्ययन केन्द्र
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़

प्रो. पी. मोटियानी
शांति एवं संदर्भ निवारण विभाग
गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद
गुजरात

सम्पादक एवं पाठ लेखक

सम्पादक

डॉ. लीलाराम गुर्जर
सह आचार्य,राजनीति विज्ञान
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

इकाई लेखक	इकाई संख्या	इकाई लेखक	इकाई संख्या
प्रो. (डॉ.) नरेश दाधीच सह आचार्य, राजनीति विज्ञान वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	1	**प्रो. (डॉ.) नीतिन दास गुप्ता** सह(लेखक) आचार्य, गुरुदास कॉलेज, कलकत्ता	9
प्रो. (डॉ.) हिमांशु बोराई आचार्य,राजनीति विज्ञान विभाग हेमवती नन्दन बहुगुणा विश्वविद्यालय श्रीनगर(गढ़वाल) उत्तरांचल प्रदेश	3	**प्रो.(डॉ.) रोनाल्ड जे. टरचक** आचार्य (सेवानिवृत्त) मेरीलेण्ड विश्वविद्यालय, यू.एस.ए.	9
डॉ. मनीष शर्मा सहायक आचार्य, गांधी अध्ययन केन्द्र पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़	4	**डॉ.फूल सिंह गुर्जर** व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, कोटा	10
डॉ. बी. अरुण कुमार सह आचार्य,राजनीति विज्ञान वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	2,5,6	**डॉ. वी. के. राय** सह आचार्य,राजनीति विज्ञान इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद	11,13
प्रो. (डॉ.) रमेश जैन सलाहकार, पत्रकारिता (जनसंचार) वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	7	**डॉ. अल्पना पारीक** व्याख्याता, राजनीति विज्ञान (प्रतिनियुक्ति, निदेशालय कॉलेज शिक्षा,जयपुर) जयपुर	12
डॉ. ज्योति शर्मा व्याख्याता, राजनीति विज्ञान विभाग सुबोध महिला महाविद्यालय, जयपुर	8	**प्रो. आर.एस. यादव** विभागाध्यक्ष(राजनीतिक विज्ञान)एवं निदेशक, गाँधी अध्ययन केन्द्र कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, कुरुक्षेत्र	14

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच कुलपति **वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**	**प्रो. (डॉ.) एम.के. घड़ोलिया** निदेशक,संकाय विभाग **वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**	**योगेन्द्र गोयल** सहायक उत्पादन अधिकारी **वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय,कोटा**

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन : अप्रैल 2012 ISBN - 13/978-81-8496-292-5

सर्वाधिकार सुरक्षित : इस सामग्री के किसी भी अंश को वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

कुलसचिव, व. म. खु. विश्वविद्यालय, कोटा द्वारा वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा के लिये मुद्रित एवं प्रकाशित।

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

विषय सूची

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई - 1	महात्मा गाँधी	7–22
इकाई - 2	महात्मा गाँधी(1869-1893)	23–34
इकाई - 3	जीवन और दर्शन	35–58
इकाई - 4	दक्षिणी अफ्रीका में महात्मा गाँधी(1893-1906)	59–71
इकाई - 5	दक्षिणी अफ्रीका में सत्याग्रह	72–88
इकाई - 6	भारत में गाँधी(1915-1948)	89–124
इकाई - 7	गाँधी : एक पत्रकार	125–132
इकाई - 8	गाँधी आश्रम और अहिंसात्मक आन्दोलन	133–146
इकाई - 9	नारी सम्बन्धी गाँधी के विचार	147–160
इकाई - 10	अस्पृश्यता और गाँधी : विचार एवं कार्य	161–174
इकाई - 11	महात्मा गाँधी और भाषा	175–186
इकाई - 12	बुनियादी शिक्षा के विभिन्न आयाम	187–193
इकाई - 13	महात्मा गाँधी : एक जननेता के रूप में	194–207
इकाई - 14	महात्मा गाँधी और राष्ट्रवाद	208–217

इकाई - 1

महात्मा गाँधी

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 जीवन परिचय
1.3 गाँधी चिन्तन पर प्रभाव
 1.3.1 पूर्वी प्रभाव
 1.3.2 पश्चिमी प्रभाव
1.4 दार्शनिक विचार
1.5 सत्याग्रह
1.6 आर्थिक विचार
1.7 राजनीतिक विचार
1.8 महात्मा गाँधी का चिन्तन में योगदान
1.9 सारांश
1.10 अभ्यास प्रश्न
1.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ्ने के बाद आप समझ सकते हैं:

- महात्मा गाँधी के जीवन के बारे में
- महात्मा गाँधी का महान चिन्तन क्या था
- महात्मा गाँधी के चिन्तन की विशेषतायें
- महात्मा गाँधी के चिन्तन की प्रमुख अवधारणायें
- महात्मा गाँधी का योगदान

1.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी को एक चिन्तक के रूप में प्रस्तुत करने में सबसे बडी बाधा यह आती है कि उनका व्यक्तित्व इतना विशाल था कि उनके चिन्तन पर अधिक ध्यान नहीं दिया गया । उनका कथन "मेरा जीवन ही मेरा सन्देश है" उनको चिन्तक के रूप मैं जानने में बाधक है । जैसे कि अलबर्ट आईनस्टीन ने कहा कि आने वाली पीढ़ियाँ यह विश्वास नहीं करेगी कि गाँधी जैसा एक हाड मांस का मानव पृथ्वी पर रहता था । महात्मा गाँधी की तुलना इतिहास बदलने वाले व्यक्तियों में की जाती है । उन्हें बुद्ध और ईसा जैसे व्यक्तित्व के समान वर्ग में रखा जाता है । इतने महान व्यक्तित्व के धनी होने के कारण तथा समय के सन्दर्भ में हमसे इतने नजदीक होने के कारण उनको बहुत वर्षो तक एक विचारक के रूप में महत्व नहीं दिया गया । 21 वीं शताब्दी के आरम्भ में आज उनको विकास की एक वैकल्पिक व्यवस्था के जनक के रूप

मे प्रस्तुत किया जा रहा है । आज के सभी सामाजिक वैज्ञानिकों को जब भी पूँजीवादी, भौतिकतावादी व इन्द्रियजन्य विकास की अवधारणा के विकल्प की आवश्यकता होती है, महात्मा गाँधी को याद किया जाता है । विश्व में धर्म की स्थापना करने वालों के अलावा किसी भी अन्य व्यक्ति पर इतना अधिक नहीं लिखा गया है और न ही किसी भी व्यक्ति की इतनी अधिक और विपरीत व्यक्तित्व वाले महान लोगों से इनकी तुलना की गई है । महात्मा गाँधी की तुलना बुद्ध, संत फ्रांसिस, ऐमरसन, लिंकन, सनयातसेन, रूसो, थोरो, मार्क्स और टाल्सटॉय जैसे व्यक्तियों से की गई है ।

उनका व्यक्तित्व भी बहु आयामी था । दक्षिण अफ्रीका में मानव अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाला भारत के जन आन्दोलन का सफलतापूर्वक नेतृत्व करने वाला, सामाजिक बुराइयों; अस्पृश्यता के विरूद्ध युद्ध करने वाला, प्राकृतिक चिकित्सा स्वस्थ भोजन का प्रयोग करने वाला, समाज सुधारक, महिलाओं को समान दर्जा दिलाने वाला, विभिन्न धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन करने वाला, बुद्धिमान प्रचारक, कुशल पेम्फलेटर, हजारों व्यक्तियों को नैतिक निर्देशन देने वाला, आश्रम और सामुदायिक जीवन की स्थापना करने वाला और एक संत के रूप में पहचाना जाने वाला व्यक्तित्व महात्मा गाँधी का था । उनके द्वारा लिखे गये लेखन की व्यापकता इतनी अधिक है कि उसे व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करना असंभव है । उनके द्वारा अपने जीवन में डेढ़ करोड़ शब्द लिखे गये जिनका 100 ग्रन्थों में संकलन किया गया है । उन्होंने जीवन के हर पहलू पर अपने विचार प्रस्तुत किये है । 1933 में उन्होंने लिखा कि मैने जो कुछ लिखा है उसमें सत्य और अहिंसा के सिद्धान्तों का समावेश करना आवश्यक है । जिन बातों में उनके सिद्धान्तों का समावेश नहीं होता है, उन बातों को त्याग देना चाहिये । उन्होंने अपने चिन्तन के विकासात्मक पहलुओं पर जोर दिया । 1939 में उन्होंने लिखा कि लिखते समय यह कभी नहीं सोचता हूँ कि इस विषय पर पहले क्या लिखा? मेरा उद्देश्य अपने पहले लिखे गये वक्तव्य के प्रति समानता बनाये रखना नहीं है, अपितु सत्य के प्रति प्रतिबद्धता बनाये रखना है । उन्होंने अपने चिन्तन में कई अवधारणाओं को जन्म दिया है और पुरानी अवधारणाओं को नये ढंग से प्रस्तुत कर स्वराज, स्वदेशी, सत्याग्रह, सर्वोदय इत्यादि अवधारणाओं को संशोधित किया और लोकप्रिय बनाया । इतना लिखने के पीछे उनका कारण विस्तृत पठन की प्रवृत्ति थी । 1923 में यर्वदा जेल में 55 वर्ष की आयु में उन्होंने एक साल में 150 पुस्तकों का अध्ययन किया जिसमें उन्होंने महाभारत, भारतीय दर्शन के सभी छः सम्प्रदायों मनुस्मृति, उपनिषद्, गीता की सभी टीकाऐं, विलियम जेम्स, एच.जी. वेल्स, रूडयार्ड किपलिंग जैसे लेखकों की रचनायें पढी थी । 1944 में कार्लमार्क्स के दास केपिटल का अध्ययन किया और यह टिप्पणी की कि मैं यह नहीं जानता कि मार्क्सवाद सही है या नहीं है, लेकिन जब तक गरीब का शोषण होता रहेगा उनके लिए कुछ करना चाहिए।

आज विश्व में भारत की पहचान का एक बहुत बड़ा कारण महात्मा गाँधी है । महात्मा गाँधीजी द्वारा किये गये कार्यो और उनके द्वारा बताये गये सिद्धान्तों का अनुसरण सारे विश्व में होता है और भारत के नागरिक होने के कारण हमें उनके कार्यो और विचारों के सही परिप्रेक्ष्य को समझना चाहिए और उस पर गर्व करना चाहिये ।

1.2 जीवन परिचय

महात्मा गाँधी का जन्म 2 अक्टुबर, 1869 को गुजरात प्रांत के पोरबन्दर में हुआ था । इनके पिता करमचंद गाँधी ने 4 शादियां की थी और 3 पत्नियों की मृत्यु के पश्चात् चौथी पत्नी पुतली बाई से उन्हें 3 पुत्र और 1 पुत्री हुए । करमचंद गाँधी की पहली पत्नी के भी 2 पुत्रियां थी । उनके 3 पुत्रों में सबसे बड़े लक्ष्मीदास, दूसरे कृष्णदास और तीसरे मोहनदास थे । तीसरे और सबसे छोटे पुत्र मोहनदास ही महात्मा बने । गाँधीजी जाति से बनिया थे तथा जूनागढ़ राज्य के कुटियाना जगह से सम्बन्धित थे । गाँधीजी के पड़दादा हरजीवन गाँधी ने 1777 में पोरबन्दर में एक मकान खरीदा और व्यापारी के रूप में वे वहाँ स्थापित हुए । हरजीवन गाँधी के पुत्र उत्तमचंद महात्मा गांधी के दादा पोरबन्दर के शासक राणा सिंह जी के दीवान नियुक्त हुए । 1847 में उत्तमचंद इस राज्य के 28 वर्ष तक दीवान बने रहे । करमचंद गाँधी की शिक्षा बहुत कम हुई थी, लेकिन उन्हें राज्य के कार्यो और व्यक्तियों का पर्याप्त अनुभव था । उनकी ख्याति एक ईमानदार, प्रतिबद्ध, सक्षम एव आज्ञाकारी प्रशासक के रूप में थी । महात्मा गाँधी की माता पुतली बाई एक धार्मिक एवं मजबूत महिला थी । वे अनेक व्रतों और उपवासों से मजबूत बनी थी तथा वे आंतरिक रूप से सशक्त महिला थी । महात्मा गाँधी ने माना कि उनके जीवन के व्यक्तित्व में जो कुछ शुद्धता है वह उनकी माता की देन है । महात्मा गाँधी ने 6 वर्ष की उम्र में पढाई आरम्भ की । पहले पोरबंदर और कुछ मिय बाद राजकोट से उन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा पूरी की । शिक्षा के आरम्भिक दिनों में वे एक भीरू बच्चे थे । अन्य बच्चों से दोस्ती करने की अपेक्षा स्वयं तक सीमित रहते थे । वे प्रकृति से झूठ व फरेब से परे थे । 1887 में महात्मा गाँधी ने मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की और उनको परिवार के मित्र माउजी दवे ने यह सुझाव दिया कि उन्हें कानून की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड जाना चाहिए ताकि वे बेरिस्टर बन सके और वापसी में अपने पिता का स्थान ले सके ।

4 सितम्बर, 1888 को वे पानी के जहाज से इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गये । 3 वर्ष तक उन्होंने इंग्लैण्ड में रहकर कानून की शिक्षा प्राप्त की और पुन: भारत लौट आये । उन्होंने भारत में वकालात करने की कोशिश, की लेकिन वे अधिक सफल न हुए । उनमें सार्वजनिक भाषण देने की कला का अभाव था और वे न्यायालय के जज के समक्ष अपने तर्को को सही प्रकार से प्रस्तुत नहीं कर पा रहे थे । ऐसे समय उन्हें दक्षिण अफ्रीका जाने का न्योता मिला । दक्षिण अफीका में एक मुस्लिम भारतीय व्यापारी अब्दुला ने उन्हें अपना मुकदमा लड़ने के लिए आमंत्रित किया । मई 1893 में महात्मा गाँधी डरबन में पहुँचे । वहाँ एक रेल यात्रा के दौरान उन्हें रंगभेद का सामना करना पड़ा और इस रंगभेद की नीति को उन्होंने बाद मे कई स्थानों पर एक भयावह रूप में देखा । धीरे-धीरे महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका सरकार की रंगभेद नीतियों के विरूद्ध बढ़ती जन चेतना को संगठित रूप प्रदान किया । दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाँधी 1915 तक रहे और इस बीच उन्होंने न केवल अपनी राजनीति को विकसित किया अपितु राजनीतिक संगठन बनाया, राजनीतिक विरोध के स्वरूप का निर्धारण किया तथा राजनीतिक विरोध को जनता और विश्व के कोने-कोने तक फैलाने के सफल प्रयास का तरीका सीख लिया । राजनीति में सफल होने के बावजूद उन्होंने स्वयं के साथ प्रयोग करना नहीं छोड़ा । इसे उन्होंने

"सत्य के साथ प्रयोग" नाम दिया । यह 1925 में उनके द्वारा लिखी गई आत्मकथा का शीर्षक भी था । दक्षिण अफ्रीका के प्रवास के दौरान हड़तालें की, अहिंसात्मक संघर्ष किया, कई अखबार निकाले, आश्रमों की स्थापना की और एक पेम्फलेटर के रूप में ख्याति प्राप्त की । इसी दौरान उन्होंने अपनी दार्शनिक सोच को पहली बार एक पुस्तक "हिन्द स्वराज्य" में प्रस्तुत किया । महात्मा गाँधी ने 1909 में इस पुस्तक को लिखा यह पुस्तक 20 छोटे-छोटे अध्यायों में विभक्त है । 11 अध्यायों में उस समय के इतिहास के परिप्रेक्ष्य में टिप्पणियाँ है, बाकी में दार्शनिक प्रश्नों पर टिप्पणियां है । यह पुस्तक इंग्लैण्ड से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज पर 13 से 22 नवम्बर, 1909 में दस दिनों के भीतर गुजराती भाषा में लिखी गयी । आज इस पुस्तक को आधुनिकता की प्रमुख आलोचना की पुस्तक के रूप में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है ।

1915 में भारत लौटने के पश्चात् महात्मा गाँधी ने 1947 तक भारतीय राजनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । 1920 से 1947 तक का समय गाँधी युग के रूप मे जाना जाता है । भारत आने के पश्चात् गाँधीजी ने गोपाल कृष्ण गोखले की सलाह पर एक वर्ष तक भारत का दौरा किया जिससे कि वह भारत के आम आदमियों की सभी समस्याओं को जान सके और भारतीय समाज के बारे में समझ सके । भारत में आने से पूर्व उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में सत्ता के विरोध का एक नया और सफल हथियार "सत्याग्रह" खोज लिया था । उन्होंने भारत की आजादी की लड़ाई में इसका सफलतापूर्वक प्रयोग किया । भारत में महात्मा गाँधी ने कई आन्दोलनों का सफलतापूर्वक नेतृत्व प्रदान किया । इसमें सबसे पहला बड़ा आन्दोलन 1917 में चम्पारण में हुआ । उसके पश्चात् 1919 का खिलाफत आन्दोलन, 1920 का असहयोग आन्दोलन, 1930 का नमक सत्याग्रह आन्दोलन एव सविनय अवज्ञा आन्दोलन, 1942 का भारत छोड़ो आन्दोलन आदि प्रमुख हैं । महात्मा गाँधी द्वारा भारत में किये गये इन आन्दोलनों के विस्तार में न जाते हुए हम यह कह सकते है कि कुछ प्रवृत्तियाँ इन आन्दोलनों को विशिष्टता प्रदान करती है।

(1) महात्मा गाँधी ने राष्ट्रीय आन्दोलन की राजनीतिक चेतना को सकारात्मक रूप से जानने व संगठित करने का अभूतपूर्व कार्य किया ।

(2) इन आन्दोलनों के माध्यम से राजनीति से आम आदमी को जोड़ने का प्रयास किया । उन्होंने अंग्रेजी के बजाय हिन्दुस्तानी भाषा का प्रयोग, खादी का प्रचलन, महिलाओं को आन्दोलन जोड़ना, भारतीय पूँजीपतियों का सहयोग और अन्तर्राष्ट्रीय जगत को निरन्तर अखबारों के माध्यम से अपने कार्यो से प्रभावित किया ।

(3) राष्ट्रीय आन्दोलन के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक दल कांग्रेस को जनतांत्रिक संगठन बनाया और कांग्रेस की सदस्यता के लिए बनाये गये नियमों का निरूपण किया जो आज भी दल का सदस्य बनाने के लिए आवश्यक नियम माने जाते है ।

(4) इन आन्दोलनों में नेतृत्व देने की एक नई शैली विकसित की जिसमें नेतृत्व सामान्य जनता के भेद को समाप्त किया । वे मेक्स वेबर के करिश्माई नेतृत्व का जीता जागता उदाहरण हैं।

1947 में भारत के स्वतंत्र होने के समय देश के बँटवारे के कारण साम्प्रदायिक दंगे हो रहे थे । 15 अगस्त 1947 को भारत आजादी के जश्न में डूबा था । महात्मा गाँधी आजादी का जश्न न मनाकर बंगाल में नोआखली साम्प्रदायिक दंगे रोकने में लगे हुए थे । 30 जनवरी, 1948 को उनकी हत्या कर दी । उनका जीवन एक संत का जीवन था और उनका यह कहना सही था कि उनका जीवन ही उनका संदेश है उनके कई वक्तव्य दुनिया भर में बार-बार उद्धत किये जाते हैं जैसे किसी भी नीतिगत निर्णय करने के बारे में भ्रम पैदा हो रहा हो तो उसका एकमात्र तरीका मापदण्ड यह है कि वह निर्णय लेने से पूर्व अपनी आँखें बंद कर के सोचे कि क्या इस निर्णय से किसी गरीब की आंख का एक आंसू पोंछ जाएगा? अगर ऐसा है तो वह निर्णय सही है । इसी प्रकार आज पर्यावरण की रक्षा के बारे में चिन्तित लोगों के बारे में उनका मंत्र था कि पृथ्वी के पास सभी मनुष्यों की आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता है लेकिन किसी एक व्यक्ति के लालच को पूर्ण करने का इसमें सामर्थ्य नहीं है । इसलिए विकास की यात्रा का आधार मनुष्य की आवश्यकता होनी चाहिए, लालच नहीं ।

1.3 गाँधी चिन्तन पर प्रभाव

महात्मा गाँधी ने अपना बचपन भारत में बिताया तथा वे वकालात की शिक्षा के लिए इंग्लैण्ड गये थे । उनका कार्यक्षेत्र 20 वर्षो तक दक्षिण अफ्रीका रहा । 1915 में भारत लौटने के पश्चात् अपनी मृत्यु तक वे भारत में रहे और भारत की आजादी के लिए काम करते रहे । अपने जीवन में उन्होंने कई नये अनुभव प्राप्त किये और उनमें अनुभवों से सीखने की क्षमता थी । उन्होंने किसी भी अनुभव को न सीखने के योग्य नहीं माना । उन्होंने न केवल अपने जीवन के अनुभवों से जो कुछ सीखा उसे अपने विचारों में ढ़ाल दिया, अपितु उसे जीवन में भी उतारने की कोशिश की । कर्म और चिन्तन के इस सटीक सम्मिश्रण से उनका चिन्तन अनुभवजन्य और आदर्शवादी सिद्व हुआ । अपने बचपन में उन्होंने किसी भी सामान्य हिन्दू परिवार बच्चों की तरह राम, कृष्ण, महाभारत एव पुराणों की कथाएं सुनी । भारतीय संस्कृतियों के मूल्यों से ओतप्रोत इन कथाओं ने उन्हें प्रेरणा दी । बचपन का प्रभाव था कि वे उम्र भर राम को अपना आदर्श मानते थे और उन्होंने राम नाम को एक अद्भूत आंतरिक शक्ति प्रदान करने वाला प्रकाश पुंज माना।

उनका परिवार एक वैष्णव परिवार था । इसलिए भक्ति और संतों का उन काफी प्रभाव पड़ा । जिसमें नरसिंह मेहता का सुप्रिय भजन " वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीर पराई जानी रे' उनका सर्वाधिक प्रिय था । महात्मा गाँधी अपनी युवावस्था में जैन धर्म से भी काफी प्रभावित हुए और इंग्लैण्ड जाने पर उन्होंने ईसाई धर्म को भी समझने का प्रयास किया । दक्षिण अफ्रीका में उनके यहूदी और अंग्रेज मित्र बने । वहाँ मुस्लिम मित्रों ने भी उनका साथ निभाया । इस प्रकार वे अनेक धर्मो व संस्कृति के माध्यम से विभिन्न व्यक्तियों के सम्पर्क में आये और उनसे कुछ न कुछ बात ग्रहण की।

उनके चिन्तन पर पड़ने वाले प्रभावों को दो भागों में विभक्त कर सकते है - पूर्वी प्रभाव तथा पश्चिमी प्रभाव।

1.3.1.1 पूर्वी प्रभाव

1. पूर्वी धार्मिक प्रभाव :- महात्मा गाँधी के जीवन पर हिन्दू धर्म, जिसमें विशेष रूप से वैष्णव धर्म का प्रभाव पड़ा । उन्होंने सारी उम्र स्वयं को एक हिन्दू मानने पर बल दिया । उनका कहना था कि एक अच्छा हिन्दु ही एक अच्छा मुस्लिम और अच्छा ईसाई हो सकता है और अच्छा धार्मिक व्यक्ति बन सकता है ।
   हिन्दू धर्म में भक्त परम्परा को उन्होंने सबसे अधिक महत्व दिया और उसका प्रभाव उन पर यह था कि उन्होंने अपना व्यवहार भी बनाए रखा और स्वयं अहंकार पर नियन्त्रण रखा । हिन्दू धर्म के अलावा जैन धर्म उनके जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण था । अहिंसा का सबसे अधिक महत्त्व जैन धर्म में ही है । महात्मा गाँधी ने धर्म के अलावा जीवन के सभी पहलुओं में अहिंसा को महत्व दिया है। महात्मा गाँधी के योगदान का विशेष महत्त्व अहिंसा को राजनीति के क्षेत्र में प्रयोग करना था। गाँधी का धर्म नैतिकता से पूर्ण था । उनका अहिंसा के प्रति लगाव जीवन के सभी क्षेत्रों में परिलक्षित होता था । गाँधी जी इस्लाम के समानता के सिद्धान्त से भी प्रभावित थे । वे एक मुस्लिम व्यापारी का मुकदमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका गये थे।
2. पूर्वी गैर धार्मिक प्रभाव: - महात्मा गाँधी अपने समय के कई व्यक्तियों के कार्यो एवं चिन्तन से प्रभावित थे । जिसमें प्रमुखत: गोपाल कृष्ण गोखले का नाम आता है जिन्हें उन्होंने अपना राजनीतिक गुरू माना । महात्मा गाँधी ने गोपाल कृष्ण गोखले की तरह अंग्रेजी कानून का अध्ययन किया और उसमें विशिष्टता प्राप्त की । गोपाल कृष्ण गोखले की तरह उन्होंने माना कि समस्याओं का समाधान जहाँ तक हो सके संवैधानिक तरीकों से किया जाना चाहिए और यदि शासन का विरोध प्रकट करना हो तो संवैधानिक तरीकों से विरोध करना चाहिए जैसे ज्ञापन आदि प्रस्तुत करना, सार्वजनिक सुझाव तथा अखबारों के माध्यम से विचारों को व्यक्त करना इत्यादि शामिल है । इन सभी तरीकों के माध्यम से सरकार से अपनी बात मनवाने का प्रयास किया जाना चाहिए तथा आन्दोलन करने से पूर्व सभी प्रकार के संवैधानिक प्रयास करने चाहिये । महात्मा गाँधी कानून तोड़ने और आन्दोलन करने के बावजूद हमेशा मानते थे कि विरोधी पक्ष से बातचीत करने के दरवाजे हमेशा खुले रखने चाहिए । महात्मा गाँधी गोपाल कृष्ण गोखले के विचारों से प्रभावित थे किन्तु वे गोपाल कृष्ण गोखले से कुछ कदम आगे थे । उन पर उग्रवादी प्रभाव भी पड़ा । वे अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कानून भंग करने को भी तैयार थे । तिलक द्वारा लोकप्रिय बनाया गया स्वदेशी तथा स्वराज के नारों को आत्मसात कर उन्होंने अपने आन्दोलन को सार्थक बनाया । उन्होंने माना कि तिलक द्वारा राजनीति को एक जन आन्दोलन बनाने का प्रयास किया गया जिसने आन्दोलन को सर्व व्यापकता प्रदान की । इस कारण तिलक की मृत्यु के पश्चात् गाँधी भारत में जन आन्दोलन के प्रतीक बन गए ।

1.3.2 पश्चिमी प्रभाव

1. पश्चिमी धार्मिक प्रभाव:- 1888 में इंग्लैंड जाने परे महात्मा गाँधी अंग्रेजी सभ्यता के नजदीक आये और प्रारंभ में उन्होंने अंग्रेजी सभ्यता के अनुसार अपने आपको ढालने का प्रयास किया । लेकिन शीघ्र ही उनका मोह भंग हो गया । ईसा के इस सन्देश कि अगर तुम्हारे दायें गाल पर कोई थप्पड़ मारे तो बायां गाल भी आगे कर दो से गाँधी काफी प्रभावित थे । ईसाई धर्म के सामाजिक सुधार के सन्देश से वे काफी प्रभावित थे। कुछ लेखकों ने उन्हें एक सुधारवादी ईसाई बताया है ।
2. पश्चिमी गैर धार्मिक प्रभाव :- महात्मा गाँधी ने अपनी आत्मकथा में जिन प्रमुख पुस्तकों का उल्लेख किया है, वे तीन पश्चिमी विचारकों द्वारा लिखित है: -

पहली पुस्तक रूसी विचारक टाल्सॅटाय की "दि किंगडम ऑफ गॉड इज विथिन यू" है । इस पुस्तक ने उन्हें प्रेम का सन्देश दिया हैं ।

दूसरी पुस्तक रस्किन की "अनटू दिस लास्ट" है जिसका उन्होंने गुजराती में सर्वोदय नाम से अनुवाद किया । इरा पुस्तक से उन्होंने 3 शिक्षाऐं प्राप्त कीं:

प्रथम, सभी के हित में खुद का हित ।

द्वितीय, एक वकील का कार्य और एक नाई का कार्य समान है क्योंकि प्रत्येक को अपना जीवन यापन करने का समान अधिकार है ।

तृतीय, एक। श्रमिक का जीवन सबसे अच्छा जीवन है ।

तीसरी पुस्तक थी हेनरी डेविड थोरो की "ऐसेज ऑन सिविल डिस ओबिडियेन्स " इस पुस्तक में उन्होंने राज्य का विरोध करने के आन्दोलन का स्वरूप पहचाना तथा कुछ वर्षो तक वे सविनय अवज्ञा के नाम से अपना आन्दोलन चलाते रहे ।

इन महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के अलावा महात्मा गाँधी ने 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में प्रचलित लगभग सभी विचारक तथा पश्चिमी विचारधाराओं का अध्ययन किया और उन पर अपनी स्वतंत्र टीका-टिप्पणी की । उन्होंने समाजवाद, साम्यवाद, लोकतंत्र, उदारवाद इत्यादि सभी पर अपनी टिप्पणियां लिखी । बेन्थम के उपयोगितावाद के वे कटु आलोचक थे । गाँधीजी के अध्ययन का दायरा भी बहुत विस्तृत था तथा उन्होंने अपने जीवन काल में बहुत लिखा भी है । उनके निरन्तर अध्ययनरत रहने का प्रमुख कारण ही उन्होंने सभी विषयों पर अपने विचारों की अभिव्यक्ति की ।

1.4 दार्शनिक विचार

सबसे पहले गोपीनाथ धवन ने महात्मा गाँधी के जीवनकाल में 1944 में राजनीतिक दर्शन पर पहला शोध प्रस्तुत किया, जो बाद में "पोलिटिकल फिलोसोफी ऑफ महात्मा गाँधी के नाम से प्रकाशित हुआ । 50 के दशक में जोन वी बोंदूरॉ ने महात्मा गाँधी के सत्याग्रह की तकनीक को द्वन्द्वात्मिकता के सिद्धान्त से समझने का प्रयास किया और उसकी तुलना मार्क्सवादी द्वन्द्वात्मिकता से की है । 60 के दशक में जब महात्मा गाँधी द्वारा रचित लेखन का भारत सरकार द्वारा संकलन किया गया, तब 1969 में उनके द्वारा लिखित साहित्य को

सम्पूर्ण गाँधी वांड्गमय के रूप में प्रकाशित किया गया । जिसमें 100 ग्रन्थ थे तब सबसे पहली बार शोधकर्ताओं को गाँधी विचारों का संकलन मिला । 1960 के दशक में ही विश्व में आये नये परिवर्तनों रूप से पूँजीवादी प्रभुत्व और आधुनिकता की तानाशाही प्रवृत्ति के विरूद्ध आन्दोलन आरम्भ हुआ तथा नये हुए देशों ने भी अपनी आवाज को बुलन्द करना आरंभ किया । ऐसे समय में गाँधी के विचारों पर का लोगों ध्यान आकर्षित हुआ और उनके विचारों को व्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने की कोशिश की गयी । इसमें अय्यर, बुद्धदेव भट्टाचार्य, बी.एन. गांगुली, रामाश्रयराय इत्यादि प्रमुख है जिन्होंने 70 के दशक में गाँधी को विचारक के रूप में प्रस्तुत किया और उन्हें किसी भी अन्य विचारक के समक्ष प्रबुद्ध व्यवस्थित वैकल्पिक विचार देने वाला दार्शनिक बताया । 80-90 के दशक में गाँधी के विचारों की तुलना समकालीन पश्चिमी विचारधाराओं से की गई । रिचर्ड ऐटेनवेरों ने गाँधी फिल्म से 80 के दशक में गाँधी का महत्व बताया है । जिन लेखकों ने को इस आधुनिक समाज में प्रासंगिक तथा विचारों को समसामयिक का महत्व बताया उनमें प्रमुख है- भीखू, रोनाल्ड टचर्क, थामस पेन्थम दत्त, वी.आर मेहता, नरेश दाधीच, मार्गरेट चटर्जी, डगलस एलन इत्यादि ।

आज गाँधी को एक दार्शनिक के रूप में माना जाता है तथा विद्वतजन उनके विचारों से उत्तर आधुनिक/आधुनिक वैकल्पिक विवाद निवारण, वैकल्पिक आर्थिक सोच, पर्यावरण, नारीवाद इत्यादि के सन्दर्भ में परीक्षण कर रहे हैं।

गाँधी के दर्शन को कुछ लोग जैसे बी.एम दत्ता और धीरेन्द्र मोहन दल वैष्णव दार्शनिक मानते है । गाँधी ईश्वर को मूर्ति रूप में नहीं मानकर उसको विचार और विधि का स्वरूप मानते है । गाँधी मानते है कि ईश्वर को पारिभाषित करना असंभव है, लेकिन हम उनके अस्तित्व को महसूस करते है और केवल उसका ही अस्तित्व है । गाँधी ईश्वर को सत्य के रूप में भी परिभाषित करते है । 1925 में उन्होंने कहा कि ईश्वर और सत्य दोनों एक दूसरे की परिवर्तनीय इकाईयाँ हैं । 1931 में स्वीटजरलैंड में गाँधी ने कहा कि मैं यह चाहूँगा कि ईश्वर सत्य है की अपेक्षा सत्य ईश्वर है कहना अधिक उपयुक्त होगा । क्योंकि अनीश्वरवादी के लिए इसे अपनाना अधिक सुविधाजनक होगा । गाँधी ईश्वर की सत्ता का विवेक से संचालन नहीं करना चाहते थे । यह ब्रहमांड नियमों से चल रहा है और उन नियमों को बनाने और लागू करने का कार्य ईश्वरीय सत्ता के अलावा कोई शक्ति नहीं कर सकती । रोमा रोला उन्हें एक रहस्यवादी मानते हैं क्योंकि गाँधी किसी भी निर्णय को लेने से पूर्व अपने अन्दर की आवाज का हवाला देते थे और मानते थे कि अन्दर की आवाज उन्हें सही रास्ते पर ले जाती थी । महात्मा गाँधी ने अपने जीवन में तप के द्वारा अपने आप व्यक्तित्व को इतना शुद्ध बना लिया था कि उनकी आवाज में ईश्वर की आवाज का आभास होता था । दार्शनिक सिद्धान्त में महात्मा गाँधी सत्य और अहिंसा को सर्वाधिक महत्व देते थे ।

1.4.1 सत्य

महात्मा गाँधी का सिद्धान्त सत्य और अहिंसा पर आधारित है । उनके अनुसार वास्तविकता में केवल सत्य का अस्तित्व हैं । उनके सत्य की अवधारणा सैद्धान्तिक स्तर पर प्लेटो के नजदीक मानी जा सकती है लेकिन यथार्थ में अस्तित्ववाद के नजदीक है । यूनानी

विचारकों ने सत्य को सबसे महत्वपूर्ण अवधारणा माना है और जिसकी परछाई इस दुनिया में यथार्थ के रूप में नजर आती है । उस निरपेक्ष सत्य के आधार पर ही सिद्धान्त का निर्माण किया जाता है और व्यक्ति को उसके जीवन में सत्य तक पहुँचने का प्रयास किया जाना चाहिए । महात्मा गाँधी इस निरपेक्ष सत्य को स्वीकार करते हैं क्योंकि अस्तित्व निरपेक्ष है । लेकिन उस निरपेक्ष सत्य को व्यक्ति के सत्य में मिलने का आधार व्यक्ति की चेतना का सर्वोच्च स्तर को प्राप्त करना है । जब तक ऐसा न हो व्यक्ति के सत्य को सापेक्षवादी सत्य माना जायेगा और हर व्यक्ति का सत्य ही उसका अंतिम सत्य होगा । यह धारणा अस्तित्ववादी धारणा से मिलती जुलती है । निरपेक्ष सत्य को आत्मसात करने के लिए महात्मा गाँधी ने अपने स्व को निरन्तर प्रयोगों के द्वारा तथा तप के माध्यम से उच्च चेतना युक्त बनाया । इसलिए गाँधी ने व्रत उपवास, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह आदि के द्वारा जिससे व्यक्ति की आवाज ईश्वर को अपनाने पर बल दिया है । इस प्रकार वे निरपेक्ष सत्य के पराभौतिक विचार और सापेक्ष सत्य के यथार्थवादी विचार का सम्मिश्रण प्रस्तुत करते है । वे सत्य को केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में ही महत्व नहीं देते है बल्कि राजनीतिक क्षेत्र में भी इसे बनाये रखते थे । उनके अनुसार राजनीति और समाज में किये जाने वाले कार्यो में सत्य परिभाषित होना चाहिये । सत्य के अभाव में मनुष्य उद्देश्यहीन हो जाता है और अपने कार्यो से समाज का हित नहीं कर पाता हैं।

1.4.2 अहिंसा

महात्मा गाँधी की पहचान उनकी अहिंसा की प्रतिबद्धता के कारण है । उन्होंने मानव इतिहास में पहली बार अहिंसा का उपयोग राजनीतिक क्षेत्र में सफलतापूर्वक किया और अहिंसा को एक आधुनिक क्षेत्र बनाकर राजनीति व सामाजिक क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है । स्वयं के और समाज के संघर्ष निवारण के लिए अहिंसा का प्रयोग किया गया जिसे विश्व संघर्ष निवारण के लिए स्वीकार्य और सफल तकनीकी माना जाता है । साधारणतया अहिंसा का अर्थ चोट न पहुँचाना और हत्या न करना माना जाता है और विस्तृत स्वरूप देने पर इसका अर्थ है किसी जीव को मन, वचन और कर्म से दुःख नहीं पहुँचाना है । अहिंसा हिन्दू बौद्ध धर्म और जैन धर्म में किसी न किसी रूप में आवश्यक तत्त्व है । मोक्ष प्राप्त करने के लिए पातंजलि जैसे योग शास्त्रियों ने इसे आवश्यक माना है । जैन धर्म में इसको अत्यधिक महत्त्व दिया है और हिंसा को कई श्रेणियों में जैसे आरम्भ भज और अनारंभ भज यानि जान बूझकर या अनजाने में की जाने वाली हिंसा के रूप में देखा जाता है । जैन धर्म में व्यवहार में भी इसे लागू करने पर बल दिया जाता है । बौद्ध धर्म में प्रत्येक साधू के लिए अहिंसा का पालन करना आवश्यक है । महाभारत में अहिंसा को सर्वाधिक महत्व दिया गया है और क्षमा को वीरों का आभूषण माना है । महात्मा गाँधी ने टॉल्सटॉय की पुस्तक से अहिंसा के महत्व को जाना और बाद में भारतीय परम्परा में अहिंसा के कई उदाहरणों से इसका महत्व समझा । जैसे पौराणिक कथा में भक्त प्रहलाद के उदाहरण में उन्होंने गीता की व्याख्या करते हुए इसे अहिंसक ग्रन्थ के रूप में प्रकाशित किया । महात्मा गाँधी ने 1916 में अहिंसा में नकारात्मक और सकारात्मक भेद प्रस्तुत किया है । उनके अनुसार अहिंसा का अर्थ है किसी भी जीव को शारीरिक या मानसिक रूप में पीड़ा न पहुँचाना । इसके सकारात्मक रूप है - प्रेम और दान । सकारात्मक

रूप अहिंसा की पालना करने पर व्यक्ति को अपने शत्रु से प्रेम करना आवश्यक है तथा ऐसी अहिंसा सत्य और अभय को सम्मिलित करती है । इस प्रकार महात्मा गाँधी की अहिंसा का अर्थ नकारात्मक पक्ष तक सीमित नहीं था, अहिंसा के समारात्मक पक्ष को को अधिक महत्व देते है जिसमें अपने विरोधी को प्रेम करना सम्मिलित है और कारण वे यह मानते थे कि पाप से घृणा करो पापी से नहीं । उनका दृढ़ विश्वास था कि अहिंसा न केवल सार्वभौमिक रूप से लाग की जा सकती है अपितु यह अंतिम रूप से सही सिद्ध होती है तथा इसका उपयोग करने वाला ही अंतिम विजय प्राप्त करता है । उनकी यह मान्यता थी कि मनुष्य मूलत: देवीय स्वरूप होता है, पर उसमें के पशुता अंश मौजूद है और इसलिए हिंसा करना बहु दा मनुष्य का स्वभाव बन जाता है लेकिन वे यह भी मानते थे कि निरन्तर प्रयास से मनुष्य अपने जीवन में बहु त कुछ हद तक अहिंसक बना रह सकता है । सत्य और असत्य, हिंसा और अहिंसा की लड़ाई मनुष्य तथा समाज में निरन्तर चलती रहती है । महात्मा गाँधी के अनुसार अहिंसा तीन तरह की हो सकती है :

1. कायरों की अहिंसा जो दुर्बलता के कारण हिंसा का सहारा नहीं ले सकते ।
2. राजनीतिक तरीके के रूप में अहिंसा का प्रयोग।
3. अहिंसा के प्रति आत्म प्रतिबद्धता जो आत्मानुशासन व आंतरिक आत्मानुभक्ति से आती है ।

गाँधी कायर की अहिंसा को अहिंसा नहीं मानते हैं । राजनीति या सामाजिक क्षेत्र में सफलता के लिए की जाने वाली सर्वश्रेष्ठ अहिंसा नहीं है । जब तक मनुष्य आंतरिक रूप से अहिंसा के प्रति प्रतिबद्ध न हो, सर्वश्रेष्ठ अहिंसा नहीं हो सकती । गाँधी व्यावहारिक अहिंसा को चार क्षेत्रों में इंगित किये 'है :-

1. सत्ता के विरूद्ध अहिंसा का प्रयोग ।
2. आंतरिक उपद्रवों के मध्य अहिंसा का प्रयोग ।
3. बाह्य आक्रमण में अहिंसा का प्रयोग
4. घरेलू क्षेत्र में अहिंसा का प्रयोग ।

1.5 सत्याग्रह

राजनीतिक दर्शन में महात्मा गाँधी की प्रमुख देन थी सत्याग्रह । सत्याग्रह का शाब्दिक अर्थ है सत्य के प्रति आग्रह । सत्य के प्रति यह आग्रह व्यक्ति को शक्तिशाली बनाता है । इस आग्रह को बनाये रखने के लिए एक मात्र साधन है अहिंसा । दक्षिण अफ्रीका में सरकार का प्रतिरोध करते समय गाँधी ने अपने आन्दोलन को निष्क्रिय प्रतिरोध का नाम दिया था । धीरे-धीरे महात्मा गाँधी को यह एहसास हुआ कि उनके द्वारा चलाया गया आन्दोलन निक्रिय शब्द से पूर्णतया नहीं समझा जा सकता क्योंकि उनके आन्दोलन में कुछ विशेषताएं ऐसी थीं जो उसे निष्क्रिय प्रतिरोध से अलग करती थी । महात्मा गाँधी का सविनय अवज्ञा उनके सच्चे भाव और उनके ठोस सिद्धान्त पर आधारित था जिसमें तिरस्कार नहीं था । निष्क्रिय कमजोरों का हथियार माना जाता था । महात्मा गाँधी के जीवन में हिंसा की कोई गुंजाइश नहीं थी । आन्दोलन को अवधारणात्मक पहचान देने के लिए गाँधीजी ने अपने पत्र "इण्डियन ओपिनियन" में पाठकों से

इस बारे में सुझाव माँगें । मगनलाल गाँधी ने "सत्याग्रह" शब्द सुझाया । गाँधीजी ने इसको व्यापक बनाते हुए अपने आन्दोलन का नाम "सत्याग्रह" दिया । यह दो शब्दों से मिलकर बना है - सत् एवं आग्रह । यानि सत्य के प्रति आग्रह । यह आग्रह अहिंसा के बिना संभव नहीं । आज सारी दुनिया में अहिंसक प्रतिरोध को सत्याग्रह के नाम से जाना जाता है । गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में किये गये आन्दोलनों के इतिहास को 'सत्याग्रह का इतिहास' नामक पुस्तक में वर्णित किया है । गाँधीजी सत्याग्रह को एक क्रमिक विकास के रूप में देखते थे । उनके अनुसार व्यक्ति स्वयं को तप के द्वारा उत्कृष्ट बनाने के लिए निरन्तर कोशिश करता है तथा चेतना के उच्च स्तर को प्राप्त करता है । वह निष्क्रिय प्रतिरोध को कमजोर लोगों को हथियार मानते थे और सत्याग्रह को बलवानों का अस्त्र मानते थे । इसमें अहिंसा आवश्यक तत्त्व थी । सत्याग्रह का उद्देश्य सत्य को प्राप्त करना है और उसे किसी भी कीमत पर त्यागा नहीं जा सकता । सत्याग्रह का प्रयोग करने वाला और कानून का विरोध करने वाला हर व्यक्ति परेशानी झेलने को तैयार रहता है । वास्तव में सत्याग्रही कानून की पालना करने वाला होता है और वे उसी कानून के विरोध की बात करते है जो नैतिकता का विरोधी होता है । गाँधी जी के लिए नैतिकता सर्वोच्च थी । सत्याग्रह के व्यावहारिक पक्ष को स्पष्ट करते हुए गाँधी जी मानते थे कि सत्याग्रह करने वाले को अपनी मूल माँगों से आगे नहीं बढ़ना चाहिए । उनका विचार था कि सत्याग्रह से प्राप्त सफलता को बनाये रखने के लिए निरन्तर सत्याग्रही बने रहना आवश्यक है । हेनरी डेविड थोरो के विचारों से प्रभावित होते हुए गाँधीजी मानते थे कि व्यक्ति सबसे पहले है और उसको नैतिक मूल्यों को बनाये रखने के लिए हमेशा संघर्षरत रहना चाहिए । अपने अधिकारों की रक्षा के लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन का प्रयोग करना चाहिए और इसके परिणाम को भुगतने के लिए तैयार रहना चाहिए । गाँधीजी के अनुसार व्यक्तिगत हितों के लिए सत्याग्रह नहीं करना चाहिए । सत्याग्रह का प्रयोग हमेशा जन-हिताय, जन-सुखाय होना चाहिए । सत्याग्रह का प्रयोग करते समय भी महात्मा गाँधी विरोधी पक्ष से निरन्तर बात-चीत करने पर बल देते थे और सभी प्रयासों में विफल होने पर ही सत्याग्रह प्रयुक्त करने की सलाह देते थे । सत्याग्रह आरम्भ करने से पूर्व सत्याग्रही को लोकमत अपने पक्ष में करना चाहिए । यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जिन बुराईयों के विरूद्ध वह संघर्ष करता है वे बुराईयाँ स्वयं में विद्यमान न हो । वह आत्मशुद्धी और सत्याग्रह से अपनी लड़ाई जीत सकता है । उसे हमेशा अपने विरोधी से बात-चीत करने के लिए रास्ता खुला रखना चाहिए । गाँधीजी सत्याग्रही बनने की बहुत सी शर्तें बताते हैं । सत्याग्रह के साथ-साथ रचनात्मक कार्य भी करते रहना चाहिए । सेवा तथा प्रेम की भावना के फलस्वरूप ही सत्याग्रह सफल हो सकता है । सत्याग्रह विनम्रता का प्रतीक है और हिंसा का विकल्प है । आमरण अनशन सत्याग्रही का अंतिम हथियार है । जिसका प्रयोग विशेष परिस्थिति में ही किया जाना चाहिए । गाँधीजी ने सत्याग्रह में विभिन्न अस्त्रों का प्रयोग किया था जिस में असहयोग आन्दोलन सबसे महत्त्वपूर्ण था । वे इसमें हड़ताल, सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक बहिष्कार, धरना, सविनय अवज्ञा, हिजरत, उपवास इत्यादि है । वे सत्याग्रह के सकारात्मक पक्ष को महत्त्व देते थे जिसमें केवल विरोध करना ही नहीं अपितु सकारात्मक कार्यक्रम को बनाये रखना भी आवश्यक है । उन्होंने 15 सूत्री सकारात्मक

कार्यक्रम बनाये थे जिसमें खादी का प्रचार-प्रसार, ग्रामोद्योगों का विकास, ग्राम स्वराज्य की स्थापना, बुनियादी शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, नारी उद्धार, आर्थिक समानता इत्यादि शामिल है ।

भारत में आने के पश्चात् गाँधीजी ने कई सत्याग्रह किये । जिसमें अखिल भारतीय स्तर पर किये गये सत्याग्रहों में रोलेटएक्ट के खिलाफ 1919 में किया गया आन्दोलन, खिलाफत आन्दोलन, असहयोग आन्दोलन 1920,1930 में "सविनय अवज्ञा आन्दोलन" 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रह, 1942 में भारत छोडो आन्दोलन प्रमुख हैं । स्थानीय लोगों के लिए 1917 में चम्पारन, 1918 में अहमदाबाद में श्रमिकों के समर्थन में किया गया, तथा 1924 में त्रेवणकोर का सत्याग्रह आदि प्रमुख है ।

1.6 आर्थिक विचार

गाँधीजी के आर्थिक विचार भी सत्य और अहिंसा से ओत-प्रोत थे । वे यह मानते थे कि आधुनिकता बड़े बड़े उद्योगों तथा मशीनीकरण पर आधारित है और ये हिंसा को बढ़ावा देते है । एक आदर्श समाज की रचना के लिए स्वावलम्बी गाँवो की आवश्यकता हैं । व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखे और नैतिक जीवन व्यतीत करें । उन्होंने ग्राम स्वराज्य की कल्पना में कुटीर उद्योगों को अधिक महत्व दिया है तथा कायिक श्रम पर बल दिया है । गाँधीजी मानते थे कि प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति को दिन में कम से कम दो घण्टे शारीरिक श्रम करना चाहिए तभी वह भोजन पाने का अधिकारी है । वे मानसिक और शारीरिक श्रम की समानता के दृष्टिकोणों को स्वीकार करते है । वे उस पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था के विरूद्ध थे जो भौतिकवादी इच्छाओं की पूर्ति के लिए उद्योगों की स्थापना करती है । गाँधीजी साम्यवादी विचारधारा के भी विरोधी थे क्योंकि उनके अनुसार वह हिंसा पर आधारित विचारधारा है और व्यवहार में तत्कालीन सोवियत संघ की व्यवस्था के आधार पर यह मानते थे कि यह व्यवस्था केन्द्रीयकृत व्यवस्था को बढ़ावा देती है, जिसमें शक्ति का केन्द्रीयकरण होता है । गाँधीजी शक्ति के केन्द्रीयकरण को शोषण का आधार मानते है । उनके अनुसार शक्ति का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और वे इसी भाव को ध्यान में रखकर आर्थिक विकेन्द्रीकरण की वकालात करते थे । उन्होंने पूँजीवादी व साम्यवाद से परे न्यास के सिद्धान्त को अधिक महत्त्व दिया है जिसके अनुसार आर्थिक साधनों पर नियन्त्रण निजी हाथों में होगा । लेकिन वे उसे न्यास मानकर न्यासी के रूप में कार्य करेंगे । पूँजी का उपयोग "सर्वजन हिताय" के लिए करे । राजनीतिक क्षेत्र में उन्होंने उपयोगितावाद के स्थान पर सर्वोदय की वकालात की । जहाँ उपयोगितावाद व्यक्ति के अधिकतम सुख की कल्पना करता है वहीं सर्वोदय सभी के उदय की कल्पना करता है । उपयोगितावाद में सुख की परिभाषा शारीरिक सुख या इन्द्रियजन्य सुख है । जबकि महात्मा गाँधी के सर्वोदय में सबके उदय में इन्द्रियजन्य सुख के बजाय आत्मिक सुख को सम्मिलित किया है । गाँधीजी अपने आदर्श राज्य को राम राज्य की संज्ञा देते थे जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अहिंसा पर आधारित जीवन व्यापन करता है और अपने कर्त्तव्यों को पूरा करता हैं । गाँधीजी का मानना था कि आदर्श समाज एक राज्यविहीन समाज है । जिसमें शक्ति पूर्ण रूप से विकेन्द्रित है और वह स्वावलम्बी गाँवों को शामिल कर बना है जिसमें व्यक्ति का महत्त्व है । लेकिन व्यक्ति का अस्तित्व समाज के बिना संभव नहीं है । उन्होंने व्यक्ति और

समाज के मध्य के सम्बन्धों को " सामुद्रिक वर्तुल" "ओशेनिक सर्किल" के आधार पर समझाया है। जिस प्रकार समुद्र में पत्थर फेंकने पर हजारों की संख्या में लहरों के वर्तुल का निर्माण होता है जिनके आकार आधार अलग-अलग प्रकार है किन्तु जिसका केन्द्र एक ही होता है । उसी प्रकार समाज में कई प्रकार के समूह है, जो वर्तुल के रूप में एक दूसरे से जुड़े है । लेकिन उनका केन्द्र व्यक्ति होता है । समूह व्यक्ति के बिना परिभाषित नहीं होता है । वे प्रजातंत्र की व्यवस्था में विश्वास रखते थे और उदारवादी सिद्धान्त को महत्वपूर्ण मानते थे लेकिन उनकी सोच भारतीय परम्परा के मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित थी । वह अपनी संस्कृति और परम्परा की उदारवादी व्याख्या के पक्षधर थे। आधुनिक समय में भारतीयता के प्रतीक थे । उनकी गणना आज विश्व के सर्वाधिक महानतम विचारकों में की जाती है । वे केवल भारत के प्रतिनिधि ही न होकर विश्व की मानवता के प्रतीक थे और लोकमंगल के साधक-उपासक थे ।

1.7 राजनीतिक विचार

गाँधी स्वयं को एक राजनीतिक विचारक नहीं मानते थे हालांकि उनके दार्शनिक विचारों की पहली व्यवस्थित प्रस्तुति हिन्द स्वराज्य में है । लेकिन उन्होंने कभी भी राजनीतिक गतिविधियों के बारे में अपने विचारों को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं किया । उन्होंने माना है कि वे निरन्तर सत्य के रास्ते पर चलते रहे और उस रास्ते पर उन्हें जो सफलताएं मिली उस आधार पर अपने विचारों को संगठित करते रहे । वे सभी राजनीतिक गतिविधियों को नैतिक दृष्टि से देखते थे । उनके अनुसार कोई भी गतिविधि जो नैतिक दृष्टि से नहीं हो उचित नहीं है । चूँकि वे किसी विशेष राजनीतिक दर्शन से सम्बन्धित नहीं थे इसलिए उनके विचारों में कई बार पारस्परिक विरोध नजर आता है । लेकिन सामान्यत: यह कहा जा सकता कि वे एक राजनीतिक अराजकतावादी थे जो शक्ति के केन्द्रीयकरण के विरोधी थे और राज्य को सक्रिय केन्द्रीयकरण का सबसे बड़ा उदाहरण मानते थे । वे राज्य के बढ़ते स्वरूप और कार्य को भय से देखते थे । उनके अनुसार एक आदर्श समाज की कल्पना में राज्य का कोई स्थान नहीं था । वे आदर्श समाज को रामराज्य की संज्ञा देते थे । वे यह मानते थे कि राज्य हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है और राज्य की बढती शक्ति से सर्वाधिक नुकसान व्यक्ति की अस्मिता को होता है । व्यक्ति के पास आत्मा है राज्य आत्मा विहीन है । गाँधीजी ने कहा था कि ऐसे कानूनों की पालना नहीं करनी चाहिए जो हमारी नैतिक मान्यताओं के विरूद्ध हो । उनके अनुसार राजनीतिक शक्ति अपने आप में एक साध्य नहीं है । राजनीतिक शक्ति का उपयोग समाज के सदस्य को जीवन की सुविधाएं प्रदान करना है उनकी मान्यता थी कि व्यक्ति सम्प्रभू होता है और उसके सम्प्रभुत्व का आधार उसकी नैतिक सत्ता है । गाँधी राज्य और समाज में अन्तर करते थे । उनके अनुसार अगर व्यक्ति समाप्त होता है तो कुछ बाकी नहीं रहेगा । इसलिए व्यक्ति के आधिपत्य को राजनीतिक दर्शन में स्वीकार किया जाना चाहिए । 1916 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था कि वे अराजकतावादी है । गाँधी केवल आदर्शवादी विचारक ही नहीं थे उनका उद्देश्य आदर्श प्राप्त करना था । उन्होंने द्वितीय स्तर के राज्य की बात भी की है । जिसमें राज्य एक उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य होगा तथा लोक शक्ति का विकेन्द्रीकरण होगा । ऐसे राज्य में अधिकतम शक्तियाँ गाँव के स्तर पर पंचायत के पास रहेगी । वह गाँव आदर्श गाँव होगा जो आर्थिक,

सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से स्वायत्त निकाय के रूप में कार्य करेगा । गाँधी के स्वराज्य की कल्पना एक ऐसे देश की कल्पना थी जिसमें सत्ता उस देश के नागरिकों के पास हो तथा वे राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हो तथा जिसमें अपने समाज को बदलने की शक्ति और अधिकार समाज के व्यक्तियों के पास हों । ऐसे राज्य में सरकार व्यक्तियों के प्रति उत्तरदायी हो तथा जिसमें गरीब व्यक्ति का शासन हो । गाँधी के स्वराज की अवधारणा आर्थिक और राजनीति दोनों स्तरों पर स्वतंत्रता को बनाये रखने का समर्थन करती है । गाँधी व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा का भी समर्थन करते हैं । गाँधीवादी अधिकार मूलत: वे अधिकार हैं जिसके उपयोग से व्यक्ति अपने मूल्यों को बनाये रख सके और एक नैतिक समाज की स्थापना कर सके । गाँधी स्वतंत्रता के साथ-साथ समानता और न्याय के सिद्धान्त में विश्वास करते थे । इसमें वे न केवल स्त्री-पुरूष समानता अपितु जातिगत समानता, मानसिक और शारीरिक समानता के भी पक्षधर थे । गाँधी हालांकि प्रजातंत्र में विश्वास करते थे । लेकिन उन्होंने हिन्द स्वराज्य में अंग्रेजी संसदीय प्रणाली की आलोचना की और माना है कि अगर भारत इंग्लैण्ड की प्रणाली को अपनाता है तो यह उसके लिए अच्छा नहीं होगा । गाँधीजी के अनुसार ब्रिटिश संसद के द्वारा कोई भी अच्छा कार्य नहीं किया गया है और वह मंत्रियों के प्रभाव से संचालित होती है अत: वह जनता का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाती है । पश्चिमी प्रजात्रंत का आधार हिंसा है । प्रजातंत्र जो अपने व्यवहार में बिना हिंसा के जीवित नहीं है वह वास्तव में प्रजातंत्र नहीं है । उसमें और फासीवाद में किसी प्रकार का अन्तर नहीं है । बुद्धदेव भट्टाचार्य के अनुसार गाँधी की पश्चिमी प्रजातंत्र की आलोचना तीन प्रमुख कारकों पर आधारित है:

1. पूँजीपतियों द्वारा निर्धन व्यक्तियों का शोषण।
2. पूँजीवाद का विस्तार जो जन सामान्य के शोषण की राह बताता है ।
3. गोरी चमड़ी वालों की रंगभेद नीति।

हालांकि गाँधीजी बोअर युद्ध 1899 में अंग्रेजों की तरफ से हिस्सा लिया था । लेकिन वे युद्ध के खिलाफ थे । प्रथम विश्व युद्ध के आते-आते गाँधी पूर्णतया युद्ध विरोधी बन गये । गाँधीजी ने प्रथम और द्वितीय विश्व युद्ध की निन्दा की और कहा कि हिंसा से किसी समस्या का समाधान नहीं होता है । कोई भी राजनीतिक विचारधारा हो और उसके अनुसार आदर्श समाज का निर्माण मूलत: हिंसा के द्वारा होगा तो वह सही विचारधारा नहीं हो सकती है । गाँधीजी शान्ति के पक्षधर थे पर उनकी शान्ति की अवधारणा कोई स्थिर शान्ति नहीं थी । वे शान्ति को सकारात्मक और परिवर्तनशील प्रक्रिया के रूप में देखते थे । जिसमें समस्या का समाधान अहिंसा के माध्यम से किया जाता हैं । गाँधीजी में दृढ़ विश्वास था कि विश्व की समस्या का समाधान केवल अहिंसा के माध्यम से संभव है । गाँधी को मूलत: सत्ता के विरोध का दार्शनिक माना जाता है । सत्ता का विरोध करने पर गाँधी का नाम सम्मान से लिया जाता है । दुर्भाग्यवश: गाँधी के राजनीतिक विचारों पर आधारित आदर्श समाज के निर्माण की पुरजोर कोशिश नहीं की गई । इसलिए गाँधीवादी आदर्श समाज के अस्तित्व में न आने के कारण उनके राजनीतिक दर्शन के व्यावहारिक पक्ष का परिक्षण नहीं किया जा सका ।

1.8 महात्मा गाँधी का चिन्तन में योगदान

महात्मा गाँधी 20वीं शताब्दी के सबसे महत्वपूर्ण राजनीतिक विचारकों में से एक थे, जिन्होंने राजनीतिक चिन्तन में सर्वकालिक योगदान दिया है, जिसे निम्न प्रकार देख सकते है:

1. गाँधी ने राजनीति का विरोध करने के एक नये साधन 'सत्याग्रह ' की खोज की और उसका सफलतापूर्वक प्रयोग करके भारत को आजादी दिलायी । राज्य सत्ता के विरोध में तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की नीतियों के विरूद्ध होने वाले आन्दोलनों में सत्याग्रह का व्यापक स्तर पर प्रयोग किया जाता।
2. गाँधी के अहिंसा ओर संघर्ष निवारण की तकनीक का समाज के विभिन्न समूहों और स्थितियों में निरन्तर प्रयोग किया जा रहा है । उसे ''वैकल्पिक विवाद निपटारा'' में सफलतापूर्वक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता है । हाल ही में आई भारतीय फिल्म 'लगे रहो मुन्ना भाई" में 'गाँधीगिरी" का इस्तेमाल हु आ है, इसमें गाँधी के सिद्धान्त को व्यक्ति के जीवन में छोटी-छोटी समस्याओं के समाधान हेतु उपयोग में लाने का विवरण प्रस्तुत किया गया है । "गाँधीगिरी' आज लोकप्रिय शब्द बनता जा रहा है जो विरोध प्रकट करने के एक सभ्य तरीके को प्रकट करता है ।
3. गाँधी ने आधुनिक समाज के नकारात्मक पक्ष को जाग्रत किया और उसे बचाने के उपाय सुझाये जिनके कारण उन्हें वैकल्पिक सफलता के विचार देने वाले विचारकों में शामिल किया जाता है ।
4. उनके न्यासिता सिद्धान्त में अहिंसा से वर्ग संघर्ष को समाप्त किये जाने का तरीका सुझाया है । जिसमें हिंसा का उपयोग नहीं करते हु ए समाज में सामाजिक न्याय की स्थापना की जा सके ।
5. उनके पर्यावरण सम्बन्धी विचार ने विकास की पश्चिमी अवधारणा को सशक्त चुनौती दी है और विकास का आधार मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करना बताया है न कि उसके लालच को पूरा करना ।
6. गाँधी ने नैतिकता को मनुष्य की सभी गतिविधियों का आधार माना है और वे बीसवीं शताब्दी में उन नैतिक विचारकों में है जो राजनीति को भी नैतिक दृष्टि से विश्लेषित करना चाहते है ।
7. उन्होंने अहिंसा को राजनीतिक दृष्टि में स्थापित किया और प्लेटो के पश्चात् सत्य को राजनीतिक दर्शन में पुर्नस्थापित किया ।

1.9 सारांश

प्रस्तुत पाठ में महात्मा गाँधी के जीवन और विचारों का अध्ययन किया गया है । इससे हमें यह पता लगता है कि महात्मा गाँधी ने अपना जीवन एक साधारण व्यक्ति के रूप में आरम्भ किया और धीरे-धीरे अपने परिश्रम से एक महान व्यक्ति बनें । उन्होंने बड़ी से बड़ी मुसीबतों में सत्य और ईश्वर का साथ नहीं छोड़ा और सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलते रहे उनके सत्य और विश्वास ने उन्हें महान व्यक्ति बनाया । गाँधी अपने चिन्तन में किसी विशेष

विचारधारा के प्रतिपादक नहीं थे । उन्होंने अपने जीवन में अनुभवों से बहुत कुछ सीखा । वे निरन्तर राजनीति में संलग्न रहने के उपरान्त भी एक अच्छे पाठक थे । खुले मस्तिष्क के होने के कारण उन्होंने अध्ययन और जीवन मूल्यों से बहुत कुछ सीखा और उसे अपनी तरह से विचारों के रूप में प्रस्तुत किया जिसे हम आज गाँधी चिन्तन के नाम से जानते है वे अपने जीवन के प्रत्येक पहलू को नैतिक दृष्टि से देखते थे । वे जीवन के हर क्षेत्र में नैतिकता के पक्षधर थे । इसलिए उन्होंने अपने आर्थिक जीवन और राजनैतिक चिन्तन में भी अहिंसा को प्रमुखता दी है । इस अध्याय को पड़ने से हमें मालूम होता है कि गाँधी न केवल महान व्यक्तित्व के धनी थे वरन् वे एक महान विचारक भी थे ।

1.10 अभ्यास प्रश्न

1. महात्मा गाँधी के चिन्तन पर पड़ने वाले प्रभावों को इंगित कीजिए ।
2. गाँधी चिन्तन में सत्य और अहिंसा का महत्त्व बतलाइये ।
3. महात्मा गाँधी के सत्याग्रह की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए ।

1.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाँधी, एम. के., सत्य के साथ प्रयोग अथवा आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008
2. गाँधी, एम. के., हिन्द स्वराज्य. नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990
3. अय्यर, राघवन, द मोरल एण्ड पोलिटीकल थॉट ऑफ महात्मा गाँधी, ओ.यू.पी., दिल्ली, 1973
4. धवन, गोपी नाथ, दी पोलिटिकल फिलोसोफी ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990
5. शंकधीर, एम.एम., अण्डरस्टेंडिन्ग गाँधी टुडे, दीप एण्ड दीप पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1996.
6. गोस्वामी, के.पी., महात्मा गाँधी : ए क्रोनोलोजी, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसार मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 1994
7. दाधीच, नरेश, गाँधी एवं एक्जेस्टेन्शलिज्म रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1993
8. दास, दीप्ती मोई, गाँधीस डोकट्रीन ऑफ ट्रथ एण्ड नॉन वायलेन्स : ए क्रिटिकल स्टडी, डॉमिनेन्ट पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, 2008

इकाई-2

महात्मा गाँधी (1869-1893)

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य
2.1 जन्म और परिवार का संक्षिप्त परिचय
2.3 पिता करमचन्द गाँधी
2.4 माता पुतलीबाई
2.5 स्कूली शिक्षा की उल्लेखनीय घटनाऐं
2.6 नौकरानी रम्भा की सीख
2.7 कथा और नाटकों से सीख
2.8 जिज्ञासु मन के कुछ प्रयोग
2.9 वकालत पढ़ने हेतु लन्दन जाने का निर्णय और समस्यायें
2.10 लन्दन में विद्यार्थी जीवन
2.11 लन्दन से वापसी और व्यावसायिक जीवन की कठिनाइयाँ
2.12 दक्षिण अफ्रीका के लिए प्रस्थान की परिस्थितियाँ
2.13 सारांश
2.14 अभ्यास प्रश्न
2.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

2.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थी को निम्नलिखित से परिचय कराना है -

- महात्मा गाँधी के जन्म (1869) से दक्षिण अफ्रीका जाने (1893) तक का उनका जीवन-वृत
- इस दौरान महात्मा गाँधी के जीवन की कुछ प्रमुख घटनाऐं
- महात्मा गाँधी के जीवन और दर्शन पर पड़ने वाले प्रमुख प्रभाव
- 1869-1893 के दौरान गाँधीजी के जीवन काल का महत्व

2.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी बीसवीं शताब्दी के सर्वाधिक प्रतिभाशाली व्यक्तित्व में से हैं जिन्होंने न केवल भारत को स्वतंत्र करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी अपितु समस्त विश्व के शोषित व्यक्तियों को राह दिखाया है कि वे कैसे सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलकर स्वयं को शोषण से मुक्त कर सकते हैं । गाँधीजी जैसे महापुरूषों की जीवनी अत्यन्त प्रेरणा प्रदान करने वाला है । उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि हमे इस प्रश्न का उत्तर प्रदान करती है कि गाँधीजी ने जिन मूल्यों को आत्मसात् किए और जन-जन को अपनाने के लिए प्रेरित किया उनके संस्कार उन्हें कहाँ से प्राप्त हुए । 1869 से, 1893 तक का उनका जीवन हमें इस बात की ओर भी इंगित करता है कि कैसे गाँधीजी ने स्वयं के प्रयासों और प्रयोगों से जीवन के सत्य को पहचाना ।

परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त गाँधीजी के जीवन और दर्शन पर कई अन्य प्रभाव पड़े जो या तो व्यक्तियों के रूप में अथवा घटनाओं के रूप में विद्यमान हैं ।

2.2 जन्म और परिवार का संक्षिप्त परिचय

महात्मा गाँधी का जन्म 2 अक्टूबर, 1869 को गुजरात प्रांत के तत्कालीन राजकोट रियासत पोरबन्दर में हुआ था । उनकी माता का नाम पुतलीबाई और पिता का नाम करमचन्द गाँधी था । करमचन्द गाँधी ने प्रत्येक पत्नी के स्वर्गवास होने के कारण पुन: शादी की और इस प्रकार उन्होंने कुल चार शादियां की । उनकी चौथी और आखिरी शादी पुतलीबाई से हुई जिनसे उन्हें 3 पुत्र और 1 पुत्री प्राप्त हुए । उनके 3 पुत्रों में सबसे बड़े पुत्र का नाम लक्ष्मीदास और दूसरे पुत्र का नाम कृष्णदास था । महात्मा गाँधी उनके तीसरे पुत्र थे और उनका नाम मोहनदास रखा गया था और प्यार से उन्हें मोनिया पुकारा जाता था । गाँधी परिवार मोध बनिया जाति के थे तथा जूनागढ़ राज्य के कुटियाना जगह से सम्बन्धित थे । गाँधीजी के पड़दादा, हरजीवन गाँधी, 1777 में पोरबन्दर आए और व्यापार करने लगे । पोरबन्दर में उन्होंने अपना मकान भी बनाया । आर्थिक समृद्धि के साथ उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा भी क्रमश: बढ़ने लगी । हरजीवन गाँधी के पुत्र उत्तमचंद गाँधी, यानि महात्मा गाँधी के दादा, पोरबन्दर के शासक राणा सिंह जी के दीवान नियुक्त हुए । गाँधी परिवार की राजनीतिक प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी । वे सच्चरित्र, ईमानदार, स्वाभिमानी और निर्भीक व्यक्ति थे । अच्छे आर्थिक प्रशासक होने का परिचय देते हुए उन्होंने रियासत की अर्थव्यवस्था सुधारने में महत्वपूर्ण योगदान भी दिया ।

2.3 पिता करमचन्द गाँधी

उत्तमचंद गाँधी के पश्चात् उनके बेटे करमचंद गाँधी की पोरबन्दर का दीवान बनाया गया । करमचंद गाँधी ने भी अपने पिता की भाँति कोई औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं की थी, लेकिन वे व्यावहारिक सहज बुद्धि से लैस थे और उन्हें व्यक्तियों को परखने और राज-कार्य का सही प्रबन्धन करने का हुनर था । उनकी ख्याति एक ईमानदार, प्रतिबद्ध, सक्षम, निष्पक्ष एवं आज्ञाकारी प्रशासक के रूप में थी । वे अपरिग्रह भाव वाले उदार और निर्भीक व्यक्ति थे । 28 साल तक करमचंद गाँधी ने पोरबंदर के राणा विक्रमजीत सिंह के दीवान के रूप में काम किया और तत्पश्चात राजकोट के महाराजा के दीवान की हैसियत से काम करने लगे । उनके घर पर रामायण और गीता का पाठ किया जाता था और अनेक धर्म के लोगों का आवगमन था और धार्मिक चर्चाऐं भी होती थी । यदपि अपने पिता की सेवा के दौरान महात्मा गाँधी इन धार्मिक चर्चाओं के अनेक बार श्रोता बने, परन्तु धर्म और ईश्वर सम्बन्धी महात्मा गाँधी की मान्यतायें उनकी माता पुतलीबाई से काफी प्रभावित थी ।

2.4 माता पुतलीबाई

महात्मा गाँधी की माता पुतलीबाई अत्यन्त धार्मिक प्रवृत्ति एवं दृढ़ निश्चयी महिला थी । केवल दीवान करमचंद की पत्नी होने के कारण ही नहीं बल्कि स्वयं के योग्य, समान्य विषयों की सहज समझ, सज्जन, धार्मिक और निष्ठावान होने तथा राज्य-मामलों के बारे में पर्याप्त

जानकारी रखने के कारण राज-घराने की महिलाओं में उनकी इज्जत थी । अभिमान रहित, सादगीपूर्ण जीवन और सरल स्वभाव की माता पुतलीबाई को घर और परिवार के काम में लगे रहना अधिक सुहाता था । संयुक्त परिवार में रहने वाली पुतलीबाई सब की सेवा में, विशेष रूप से बीमार और बच्चों की आवश्यकताओं को पूरा करने में. लगी रहती थी । वह परिवार में सबसे पहले उठने वाली और सबसे आखिर में सोने वाली सदस्य थी । शारीरिक रूप से वह कमजोर थी परन्तु आत्मिक शक्ति से भरपूर और दृढ़ इच्छा शक्ति वाली महिला थी । अनेक व्रतों और उपवासों की दृढ़ता पूर्वक पालना ने उन्हें आंतरिक रूप से बहुत मजबूत बना दिया था । वह पढ़ी-लिखी नहीं थी और धर्म सम्बन्धी उनका सारा ज्ञान घर पर आयोजित कथा-वाचन, चर्चाओं तथा सतसंग के कारण विकसित था । पढी-लिखी न होने के कारण उनमें अंधविश्वास भी था । इसी कारण अंत्यजों को छूने की मनाही, चन्द्र-ग्रहण को देखने की मनाही, इत्यादि जैसे मान्यताओं को वह स्वयं भी मानती थी और बच्चों से भी मनवाती थी ।यदपि गाँधी के जिज्ञासु मन के द्वारा ऐसे अंधविश्वासी मान्यताओं के बारे में सवाल पूछने पर वह संतोषजनक उत्तर नहीं दे पाती परन्तु उनकी दृढ़ इच्छा शक्ति, असीम प्यार और सेवा भाव ने महात्मा गाँधी को इतना अधिक प्रभावित किया था कि माँ के ऐसे उत्तर के उपरान्त भी उन्हें ही गाँधी ने अपने व्यक्तित्व की शुद्धता- का मूल कारण माना । यरवदा जेल से उन्होंने अपने सचिव महादेव देसाई को पत्र में लिखा था "तुम्हें मेरे अन्दर जो भी शुद्धता दिखाई देती है वह मैने अपने पिता से नही अपनी माता से पाई है.......... उन्होंने मेरे मन पर जो प्रभाव छोडा वह साधुता का प्रभाव था । " कुछ ऐसी ही बात बी. आर. नन्दा. महात्मा गाँधी एक जीवनी में लिखते हैं, " गाँधीजी ने अपनी माता से सेवा का वह उत्साह ही नहीं पाया, जिसकी प्रेरणा से वह अपने आश्रम में कोढ़ियों के घाव धोया करते थे, बल्कि आत्म पीढ़ा द्वारा दूसरों के हृदय को प्रेरित और द्रवित करने की कला भी सीखी........ ।" संक्षेप में महात्मा गाँधी की सोच पर उनकी माता का गहरा प्रभाव था ।

2.5 स्कूली शिक्षा की उल्लेखनीय घटनायें

महात्मा गाँधी बाल्यावस्था में अत्यन्त शर्मीले और भीरू किस्म के लडके थे । अपनी माता के इर्द-गिर्द रहना और घर की चार-दीवारी में परिवार के सदस्यों के मध्य रहना उन्हें सुकून देता था । पोरबंदर में गाँधीजी की पहली औपचारिक शिक्षा प्रारम्भ हुई । परन्तु उनके पिता करमचन्द गाँधी शीघ्र पोरबन्दर छोड कर राजकोट चले गए । तब गाँधी लगभग 7 वर्ष की उम्र के थे । उन्हे राजकोट की प्राथमिक पाठशाला में भरती किया गया । ग्रामशाला से उपनगरीय स्कूल और बाद में आलफ्रेड़ हाई स्कूल से उन्होंने स्कूली शिक्षा पूरी की । यदपि विद्यार्थी जीवन में तीक्ष्ण बुद्धि अथवा स्मरण शक्ति के लिए गाँधीजी पहचाने नही जाते थे, परन्तु स्कूली जीवन में भी अपनी प्रतिष्ठा, सत्यवचन और चरित्र के प्रति जागरूक भी थे । 'अपने शिक्षकों को धोखा देना ठीक नहीं होगा' मानते हुए गाँधी बाल्यावस्था में अपना पाठ नियमित रूप से याद करने का प्रयास करते थे । कभी झूठ नही बोलना; सजग रहकर अपनी प्रतिष्ठा पर कोई आँच न आने देने का निश्चय (बीमार पिता की तामीरदारी के कारण विद्यालय

की खेल घंटे से गैरहाजिर रहने पर प्रधान अध्यापक की डांट और दिए गए स्पष्टीकरण को झूठ ठहराना) तथा किसी भी प्रलोभन अथवा दण्ड के भय से गलत कार्य से पृथक रहने का परिचय (स्कूल इंस्पेक्टर के निरीक्षण के दौरान कक्षा के अध्यापक द्वारा अंग्रेजी में केतली शब्द सही लिखने के लिए नकल करने के सुझाव को अस्वीकार करना) गाँधीजी के विद्यार्थी जीवन की उल्लेखनीय घटनायें थीं । स्कूल से छुट्टी होने पर वे भागकर घर जल्दी पहुँचना चाहते थे ताकि रास्ते में उन्हें किसी से बात नही करना पडे या कोई उनका मजाक नहीं उडा सके । अन्य बच्चों से दोस्ती करने की अपेक्षा वे खुद की पढ़ाई तथा किताब तक स्वयं को सीमित रखना चाहते थे ।

2.6 नौकरानी रम्भा की सीख

गाँधीजी को बचपन में भूत-प्रेत की सोच बहुत सताती थी । इस भय से मुक्ति दिलाने में उनके घर में काम करने वाली नौकरानी रम्भा ने मदद की । रम्भा ने गाँधीजी को 'रामनाम' के अचूक बाण की सीख दी । गाँधीजी लिखते हैं कि ' 'मुझे तो रामनाम से अधिक श्रद्धा रम्भा पर थी, इसलिए बचपन में भूत-प्रेत के भय से बचने के लिए मैंने रामनाम जपना शुरू किया । यह जप बहुत समय तक नहीं चला । पर बचपन में जो बीज बोया गया, वह नष्ट नहीं हुआ । आज रामनाम मेरे लिए अमोघ शक्ति है । मैं मानता हूँ कि उसके मूल में रम्भा बाई का बोया हुआ बीज है । " निजी और सार्वजनिक जीवन में असमंजस की स्थिति अथवा विकट परिस्थितियों में गाँधीजी ने इसी रामनाम' का सहारा लिया और आगे की ओर बढे । 'रामनाम' जपना उनके आत्मिक शक्ति का एक आधार-स्तंभ बना और इस जाप ने उन्हें अन्दर से मजबूत बनाया ।

2.7 कथा और नाटकों से सीख

गाँधीजी अपनी आत्मकथा `सत्य के प्रयोग' में लिखते हैं कि बचपन में उन्हें दो नाटकों ने अत्यन्त प्रभावित किया । ये नाटक `श्रवण पितृभक्ति' और 'हरिश्चन्द्र' थे । अपनी आत्मकथा में गाँधीजी लिखते हैं कि `श्रवण पितृभक्ति' पुस्तक और नायक श्रवण द्वारा अपने माता-पिता को काँवर में बैठाकर यात्रा पर ले जाने वाली तस्वीर ने उनपर गहरा प्रभाव छोडा । उनके मन में यह बात आई कि उन्हें भी श्रवण के समान बनना चाहिए । माँ पुतली बाई के अलावा गाँधीजी को निस्वार्थ भाव से पर-सेवा की प्रेरणा देने वाला यह दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव था । गाँधीजी ने `हरिश्चन्द्र' नाटक से हर प्रकार की विपत्तियों को सहते हुए भी सत्य की राह पर सदैव चलने की सीख ली । उनके मन में यह प्रश्न उठा कि क्यों नही सब व्यक्ति हरिश्चन्द्र जैसे सत्यवादी बन जाते । ईश्वर भक्त प्रहलाद की कहानी से भी गाँधीजी मुग्ध थे । अत्यन्त यातनाओं को सहने के बाद भी भक्त प्रीलाद इस बात को सत्य मानते थे कि ईश्वर की शक्ति से बढ़ कर कोई भी-दूसरी शक्ति नहीं है । भक्त प्रहलाद की इसी बात के कारण गाँधीजी ने उसे पहला सत्याग्रही कहा ।

2.8 जिज्ञासु मन के कुछ प्रयोग

जैसा कि प्राय: देखने को मिलता है, व्यक्ति बाल्यावस्था से निकल कर युवा अवस्था में जब प्रवेश करता है तो मन में बहुत से शंकायें होती है और प्रश्न उठते हैं । इनके समाधान ढूँढने के प्रयास में युवा अवस्था का जोश और उत्साह उसे नए प्रयोग करने और नए रास्तों की ओर कदम बढ़ाने के लिए प्रेरित करती हैं । वैसे भी अपनी जीवनी को गाँधीजी ने `सत्य के साथ मेरे प्रयोग अथवा आत्मकथा' शीर्षक दिया है । इस किताब में गाँधीजी ने बिना किसी राग-लपेट के उनकी किशोर अवस्था के कुछ संस्मरण बतायें हैं और उनसे प्राप्त निष्कर्षो अथवा सीख के बारे में भी लिखा हैं । भले वह परिवार अथवा घर से सम्बन्धित बात हो या मित्र के प्रभाव में घर के बाहर किये गये प्रयोग से सम्बन्धित बात हो या उनके सार्वजनिक जीवन की घठना हो, संक्षेप में यहाँ यह कहना उचित होगा कि गाँधीजी ने इन प्रयोगों से जीवन के मौलिक सत्य को पहचानने का प्रयास किया और पहचानने के बाद मूल्यों के रूप में इनकी अभिव्यक्ति को जीवन पर्यन्त आत्मसात् किया । उपर्युक्त प्रयोगों से प्राप्त अनुभवजन्य सत्य गाँधीजी के सम्पूर्ण जीवन में देखने को मिलता है । इनसे प्राप्त सीख जो गाँधीजी ने आत्मसात किए वे व्यक्ति के लिए प्रेरणा प्रदान करने और सदगुणी जावन जीने का मार्ग प्रशस्त करने का कार्य करते हैं । अत: गाँधीजी से जब यह अनुरोध किया गया था कि वे दुनिया को अपना संदेश दें तो उन्होंने बहुत सठीक कहा था कि "मेरा जीवन ही मेरा संदेश है ।"

2.9 वकालत पढ्ने हेतु लन्दन जाने का निर्णय और समस्यायें

1887 में गाँधीजी ने मैट्रिक परीक्षा उर्त्तीण कर भावनगर के समालदास कॉलेज में बी.ए. पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया । यहाँ बी.ए. का पाठ्यक्रम तीन वर्ष का था । यहाँ अंग्रेजी में व्याख्यान दिए जाते थे इसलिए गाँधीजी को वहाँ कक्षाओं में व्याख्यान समझने में दिक्कत होती थी । परीक्षा में अंक भी बहुत कम प्राप्त हुए। इसलिए वे प्रथम टर्म समाप्त होने के पश्चात् राजकोट लौट आये । इस समय उनके पारिवारिक सलाहकार माउजी दवे ने सलाह दी कि बदलते समय को देखते हुए बी.ए. करना बहुत उपयोगी नहीं होगा क्योंकि स्नातक करने में 4-5 वर्ष तो लग ही जाते हैं और उसके बाद भी गाँधीजी को अपने पिता की गद्दी मिल जाएगी यह निश्चित नही है ।उनका मानना था कि यदि केवल बी.ए. करने पर गाँधीजी को अपने पिता की गद्दी मिल भी जाए तो उचित शिक्षा प्राप्त किये बिना वे सहीं ढंग से इसे सम्भाल नहीं पायेंगे । अत: उन्होंने गाँधीजी के परिवार को यह परामर्श दिया कि यदि वे चाहते हैं कि गाँधीजी को दीवान का पद मिले और उसे वह सही ढंग से संभाल सकें तो गाँधीजी को कानून की पढाई के लिए लंदन भेजा जाए । इस सलाह से गाँधी परिवार के मुखिया, उनके बड़े भाई, लक्ष्मीदास ने इससे सहमति जताई और गाँधीजी भी प्रसन्न हुए। परन्तु इस प्रस्ताव की क्रियान्विति में कई समस्याऐं आई । सर्वप्रथम, परिवार के अन्य सदस्यों में इस बात पर सहमति नहीं बन पाई । धन का अभाव भी एक बड़ी समस्या थी । प्रचलित धर्म सम्बन्धी यह मान्यता कि विदेश जाना पाप है उन्हें जाति विरोध और कोप के समक्ष भी प्रस्तुत कर देता । युवा मोहनदास गाँधी ने एक के बाद एक सभी अवरोधों को पार किया । माता पुतलीबाई के संदेहों को भी दूर किया

और उनके कहने पर अपने चाचा की सहमति प्राप्त करने के लिए पोरबंदर भी गये । यद्यपि गाँधीजी के विदेश जाने में उन्हें आपत्ति तो थी परन्तु अन्त में उन्होंने कहा कि यदि गाँधीजी की माता पुतलीबाई उस प्रस्ताव को स्वीकृति देंगी तो वे किसी प्रकार की आपत्ति नहीं करेंगे । पोरबंदर में गाँधीजी ब्रिटिश साम्राज्य के प्रशासक सर फ्रैडरिक लेले से वित्तीय सहायता हेतु भी मिले, लेकिन लेले ने पहले बी.ए. करने और बाद में कानून के अध्ययन के लिए लंदन जाने की बात कर वित्तीय सहायता देने से मना कर दिया । गाँधीजी ने मन में अपनी पत्नी के गहनें बेच कर पैसों की व्यवस्था करने की भी सोची । पोरबंदर से राजकोट लौटकर गाँधीजी ने सारी बात परिवार के समक्ष प्रस्तुत की और पत्नी के गहनें बेच कर पैसों की व्यवस्था करने की पेशकश की । परन्तु गाँधीजी के बड़े भाई ने पैसों की व्यवस्था करने का आश्वासन दिया । माँ पुतलीबाई के मन में विदेश जाकर रहने पर शराब पीने, पर स्त्रीगमन और मांस खाने जैसे व्यसनों में फसने सम्बन्धी कुछ शंकायें थी जिसके कारण वह गाँधीजी को लन्दन भेजना नहीं चाहती थी । गाँधीजी द्वारा इन व्यसनों से स्वयं को दूर रखने का आश्वासन भी माँ पुतलीबाई को तत्काल उन्हें लन्दन भेजने के लिए सहमत नहीं कर सका । अन्त में उन्होंने परिवार के धार्मिक सलाहकार बेचारजी स्वामी से बात करने की बात कही । जैन साधु बेचारजी स्वामी के समक्ष गाँधीजी ने इंग्लैण्ड में शराब, परस्त्रीगमन और मांस के निषेध की शपथ ग्रहण कर जब माँ को विश्वास दिलाया तब पुतलीबाई गाँधीजी को लन्दन भेजने के लिए सहमत हुई । लन्दन जाने के लिए 9 अगस्त, 1888 को गांधीजी बड़े भाई लक्ष्मणदास के साथ बाम्बे की यात्रा के लिए रवाना हो गये ।

बम्बई में उन्हें एक और बाधा का सामना करना पड़ा । हिंद महासागर में तूफानों के समाचार ने गाँधीजी के बड़े भाई लक्ष्मणदास के मन में अपने भाई की सुरक्षा की चिंताओं उत्पन्न कर। दी । इसलिए उन्होंने मौसम सुधरने तक इंतजार करना उचित समझा और क्योंकि वे स्वयं लंबे समय तक बम्बई में नहीं रूक सकते थे इसलिए गाँधीजी को अपने एक मित्र के यहाँ छोड़कर, साथ ले गये धन को उनकी पत्नी के भाई के पास संभलाकर और कुछ मित्रों से आवश्यकतानुसार गाँधीजी की मदद् करने का आग्रह करके वे वापस राजकोट लौट गए ।

एक और बड़ी बाधा का सामना गाँधीजी को तब करना पड़ा जब स्वजातीय बुजुर्गों ने धर्म के नाम पर गाँधीजी द्वारा लन्दन जाने के प्रस्ताव पर विचार कर निर्णय सुनाने के लिए बैठक बुलाई । इसमें गाँधीजी को भी बुलाया गया । गाँधीजी के दलीलों को अस्वीकार किया गया और कहा गया कि सभा उन्हें विदेश जाने की इजाजत नहीं दे सकती । जब गाँधीजी ने अपने लंदन जाने के निश्चय पर पुनःविचार करने से इनकार किया तो जातीय सभा के निर्णय की अवमानना के नाम पर पर उन्हें जाति से बाहर करने का निर्णय सुनाया गया और यह भी निर्णय लिया गया कि जो भी उनकी सहायता करेगा अथवा उन्हें विदा करने जाएगा उन पर सवा रूपया का दण्ड लगाया जाऐगा । जब गाँधी को पता लगा कि 4 सितम्बर को जाने वाले जहाज में जूनागढ़ के वकील त्रम्बकरॉय मजूमदार भी इंग्लैण्ड जा रहे हैं तो गाँधी ने भी उनके साथ जाने का निर्णय लिया। बड़े भाई की अनुमात भी ले ली । लेकिन आखिरी वक्त पर जिस सम्बंधी के यहाँ धम सम्भालने के लिए रखा था उसने जाति पंचों के कोप के भय से धन देने

से मना कर दिया गया । आखिर में परिवार के मित्रों ने धन उधार दिया और भी कुछ आवश्यक वस्तुऐं उपलब्ध करवाई । 4 सितम्बर को गाँधी जी इंग्लैण्ड के लिए रवाना हो गए।

2.10 लन्दन में विद्यार्थी जीवन

गाँधीजी 29 सितम्बर 1888 को लंदन पहुँचे । विदेश का अपरिचित स्थान और संस्कृति, खान-पान का अन्तर और आवास की समस्या ने इस प्रवास के प्रारम्भिक दिनों में गाँधीजी को खूब परेशान किया । भारत से जाने से पूर्व गाँधीजी के पास लंदन में डाँक्टर प्रांजीवन मेहता, दलपतराम शुक्ल, युवराज रंजीतसिंह और दादाभाई नौरोजी के नाम सिफारिशी पत्र थे । डाँक्टर प्रांजीवन मेहता ने ब्रिटेन में रहने, तौर तरीके सीखने और किफायती आवास उपलब्ध कराने में उनकी खूब मदद की।

धीरे-धीरे गाँधीजी अंग्रेजों के रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, आदि से परिचित हाने लगे । वे भी अंग्रेज सभ्य पुरूष बनने की कोशिश में ध्यान लगाने और पैसा खर्च करने लगे । वे नृत्य, वायलिन वादन और वक्तृत्व कला सीखने में तथा अंग्रेजों द्वारा पहने जाने वाले कपड़े खरीदने पर पैसा खर्च करने लगे । लगभग 3 महीनों तक गाँधीजी का यह अंग्रेज सभ्य पुरूष बनने का अभ्यान चलता रहा । बेल की किताब "स्टेण्डर्ड एलोक्यूशनिस्ट" पढ़ने के दौरान उनके मन में कुछ मौलिक सवाल उठे, जैसे ‘उन्हे कौन सा इंग्लैण्ड में अपना समस्त जीवन व्यापन करना है?' ‘लच्छेदार भषण सीखकर वे क्या करेंगे?’ 'नाच सीखना उन्हें कैसे सभ्य पुरूष बना सकता है?' वायलिन वादन तो वे स्वदेश में भी सीख सकते हैं।‘ ‘वे तो विद्यार्थी हैं और उन्हें तो शिक्षा अर्जन करना चाहिए।' ‘उन्हें तो अपने पेशे से सम्बन्ध रखने वाली तैयारी करनी चाहिए।‘ 'यदि सदाचार के आधार पर उन्हें सभ्य समझा जाए तो ठीक है अन्यथा उन्हें सभ्य बनने की यह महत्वकांक्षा छोड़ देनी चाहिए।‘ आगे चल कर उन्होंने यह निश्चित कर लिया कि वे सादा खान-पान और रहन-सहन वाला जीवन व्यापन करेंगे । पढ़ाई में ज्यादा ध्यान लगाने का उन्होंने निर्णय लिया । उन्होंने लंदन यूनिवर्सिटी से मैट्रिक करने का निश्चय किया । इसकी परीक्षा के प्रथम प्रयास में गाँधी अनुत्तीर्ण रहे, लेकिन दूसरे प्रयास में उत्तीर्ण हुए । पूर्ण विवेक और संयम से किए गये ऐसे प्रयास के बारे में गाँधीजी अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि “पाठक यह न माने कि सादगी से मेरा जीवन नीरस बन गया होगा । उलटे, इन फेरफारों के कारण मेरी आन्तरिक और बाह्य स्थिति के बीच एकता पैदा हुई ।कौटुम्बिक स्थिति के साथ मेरे रहन सहन का मेल बैठा, जीवन अधिक सारमय बना और मेरे आत्मानन्द का पार न रहा।"

शाकाहारी खान-पान के सम्बन्ध में उन्हें कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । अपनी माँ को लंदन जाने से पूर्व गाँधीजी ने मांस और मदिरा से दूर रहने का वचन दिया था । अनेक परेशानियों का सामना करने पर भी गाँधीजी ने अपने माँ को दिए हुए वचन को नहीं तोड़ा । किसी वक्त भूखा रहकर, कभी अपर्याप्त खाकर और कभी लंदन में शाकाहारी भोजनालयों की खोज में दूर-दूर तक पैदल चलकर आखिरकार उन्होंने एक शाकाहारी भोजनालय ढूँढ निकाला । यहीं उन्हें हेनरी साल्ट द्वारा रचित पुस्तक ‘ए प्ली फॉर वेजीटेरियनिज्म’ भी खरीदने को मिली । उन्होंने इस किताब का अध्ययन किया । इसके प्रभाव के बारे में लिखते हुए गाँधीजी कहते हैं

कि इसने उनको खाने पर खर्च कम करने और शाकाहारितावाद के पक्ष में वैज्ञानिक और नैतिक तर्क समझने की प्रेरणा प्रदान की । अपनी जीवनी, 'सत्य के साथ मेरे प्रयोग अथवा आत्मकथा' में गाँधीजी लिखते हैं कि "इस पुस्तक को पढ़ने के दिन से मैं स्वेच्छापूर्वक, अथवा विचारपूर्वक अन्नाहार में विश्वास करने लगा । माता के निकट की गयी प्रतिज्ञा अब मुझे विशेष आन्द देने लगी" उन्होंने साल्ट जैसे अन्य लोगों जो शाकाहार क समर्थक थे उनके लिखे गये विचारों का अध्ययन किया। उन्होंने लंदन के सभी रेस्टोरेंटो का पता ढूँढा निकाला, शाकाहार की पत्रिकायें खरीदी और लंदन की वेजिटेरियन सोसायटी की सदस्यता ग्रहण की और शाकाहारिता के प्रचार के प्रयास से सक्रिय रूप से जुड़े ।

इसी दौरान गाँधीजी ने सार्वजनिक मामलों के प्रति अपनी रूचि भी बढ़ाई । लंदन से प्रकाशित कई समाचार पत्रों जैसे डैली न्यूज, डैली टेलीग्राफ ओर पालमाल गजट उन्होंने रोज पढ़ना प्रारम्भ किया । इस दौरान गाँधीजी ने इंग्लैण्ड की सामाजिक व राजनीतिक घटनाओं तथा विचारधाराओं के प्रति अपनी जानकारी भी बढ़ायी । वे भारतीय मामलों के प्रति भी जागरूक रहे । नौरोजी और डब्ल्यू. सी. बनर्जी द्वारा स्थापित लंदन इण्डियन सोसायटी तथा अंजुमन-ए-ईस्लाम की बैठकों में वे भाग लेने लगे ।इसके अतिरिक्त भारतीय विद्यार्थियों को मदद करने वाले दो संगठनों 'द नेशनल इण्डियन एसोसियशन इन एड ऑफ एजूकेशन इन इण्डिया' और 'द नॉर्थब्रूक इण्डियन सोसायटी' के कार्यो से भी गाँधीजी ने अपने आप को जोड़ा।

शाकाहारियों के साथ-साथ थियोसोफिकल सोसायटी ने भी युवा गाँधीजी का स्वागत किया और उसे आध्यात्मिक पोषण प्रदान किया । गाँधीजी पहली बार 1889 में थियोसोफी दर्शन के सम्पर्क में आये । थियोसोफिकल सोसायटी की सह-संस्थापक ओर मुख्य प्रवक्ता मेडम ब्लेवाटस्की उस समय लंदन में थी जब गाँधीजी कानून की पढ़ाई के लिए लंदन आए हुए थे । थियोसोफिकल सोसायटी के माध्यम से गाँधीजी ने हिंदू और बुद्ध दर्शन के बारे में अपने ज्ञान का विस्तार किया । थियोसोफस्टों के सम्पर्क में गाँधीजी ने सर एडविन अरनॉल्ड द्वारा गीता का अनुवाद 'द सोंग सेलेस्टियल' और 'द लाइट आफ एशिया' पढ़ी । इसी सम्पर्क ने उन्हें नामी भारतीय ग्रन्थ जैसे भगवत गीता को उनके मूल संस्कृति स्वरूप में अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया । गाँधी ने ब्लावॉटस्की की 'ए की टू थियोसोफी के प्रभाव पर टिप्पणी करते हुए कहा कि ' 'उससे हिंदू धर्म की पुस्तकें पढ़ने की इच्छा पैदा हुई और पादरियों के मुँह से सुना हुआ वह खयाल दिल से निकल गया कि हिंदू धर्म अंधविश्वासों से ही भरा हुआ है।"

इन्हीं दिनों गाँधीजी को उनके एक ईसाई मित्र ने ईसाई धर्म को सही समझने के लिए बाइबल पढ़ने की सलाह दी । बाइबल के ' यू टेस्टामेंट ' से गाँधीजी को अत्यंत प्रभावित किया । गीता, बाइबल और ' द लाइट ऑफ एशिया ' में महात्मा बुद्ध के चरित्र के प्रभाव में गाँधीजी अपनी आत्मकथा में लिखते हैं कि "मन को जँच गई कि त्याग में धर्म है । " एक अन्य मित्र ने उन्हें लुई कारलाइल की ' हीरोज एण्ड हीरों वशिर्प' पढ़ने को कहा । इस किताब के पैगम्बर मुहम्मद सम्बन्धी पाठ पढ़कर वे पैगम्बर मुहम्मद की महानता, वीरता और तपश्चर्या गुण से प्रभावित हुए । गाँधीजी ने ब्रेडलॉ की किताब पढ़ी ताकि नास्तिकता के बारे में जान सकें। वे इससे बिलकुल भी प्रभावित नही हुए। एनी बेसेंट की किताब 'हाउ आइ बिकेम ए थियोसोफिस्ट'

उन्हे अच्छा लगा । गाँधीजी ब्रिटिश थियोसोफिल सोसायटी के अध्यक्ष ओर उपाध्यक्ष एडवर्ड मेटलैण्ड ओर एन्ना किंग्स फोर्ड से भी मिले । मेटलैण्ड ने गाँधी को ' द परफैक्ट के ' तथा 'द न्यू गॉसपेल ऑफ इन्टरप्रटेशन ' नामक पुस्तकें भेजी । दोनों किताबें गाँधीजी को पंसद आयीं और दोनों में गाँधीजी को हिंदूवाद का समर्थन प्रतीत होता दिखा ।

गाँधीजी इंग्लैण्ड में अपनी कानून की पढ़ाई के बारे में गम्भीर हुए । उन दिनों कानून पढ्ने गए ज्यादातर भारतीय विद्यार्थी पाठ्यपुस्तकों का खर्चा बचाकर नोट्स और ट्यूटरों की सहायता लेते थे । उनके द्वारा पाठ्यपुस्तकों की पूर्णतया अवहेलना की जाती थी । सामान्य भारतीय विद्यार्थी की उपर्युक्त प्रवृति से हटकर गाँधीजी की मान्यता थी कि 'नोट्स' और ट्यूशन पढ़ने से विद्यार्थी को केवल सतही ज्ञान प्राप्त होता है । ऐसे छात्र चाही गई विषय वस्तु से परे कभी नहीं जाते हैं और परीक्षा के तुरंत बाद वे सब भूल जाते हैं जो उन्होंने सीखा हो । उन्होंने निश्चय किया कि वे न केवल पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन करेंगे अपितु स्वाध्याय का मार्ग चुनेंगे । इसलिए उन्होंने कानून की कुछ पाठ्यपुस्तकें खरीदी और अध्ययन करना प्रारम्म किया । उन्होंने गाईड टू लंदन नाम की पुस्तिका में विद्यार्थियों के लिए कानून के अध्ययन के लिए उपयोगी पुस्तकों की सूची प्रस्तुत की है जिसमें डब्लू.ए.हन्टर की इंट्रोडॉक्शन टू द रोमन लॉ तथा सेंडर्स की द इंसिट्यूटस ऑफ जस्टिनियन, विद् इगंलिश इंट्रोडॉक्शन, ट्राँसलेशन एवं नोटस् जैसे किताबों का उल्लेख किया गया है । उन्होंने इंग्लैण्ड के 'सामान्य विधि', दीवानी कानून, फौजदारी कानून ओर 'इक्विटी' की पाठ्यपुस्तकों के सम्बन्ध में कुछ दपयोगी किताबों का उल्लेख किया है । जोशुआ विलियमस की प्रंसीपल्स ऑफ द लॉ ऑफ रियल प्रोपर्टी गुडईव की पर्सनल प्रोपर्टी, विलियम डगलस एडवर्डस् की ए कम्पेंडियम ऑफ लॉ आफ प्रोपर्टी इन लैण्ड तथा गुडईव की द मार्डन लॉ आफ रियल प्रोपर्टी' तथा मार्डन लॉ आफ पर्सनल प्रोपर्टी, सामान्य विधि की परीक्षाओं के लिए जॉन इन्द्रमॉएर की पुस्तक प्रंसीपल्स ऑफ कॉमन लॉ, हर्बर्ट ब्रूम की पुस्तक कॉमन लॉ तथा इक्विटी की परीक्षा के लिए एडमण्ड एच. टी. स्नेल की पुस्तक द प्रिंसीपल्स ऑफ इक्विटी इंटेंडेड फॉर द यूज ऑफ स्टूडेटस एण्ड द प्रोफेशनल्स और फ्रेडरिक डी व्हाईट एवं ऑवन डी. ट्यूडॉर की पुस्तक लीडिंग केसस इन इक्विटी' का उल्लेख गाँधीजी ने गाईड टू लंदन नाम की पुस्तिका में किया है।

दिसम्बर 1890 में बार की कानूनी परीक्षा आयोजित हुई । लगभग 9 महीनों के कठोर परिश्रम ने गाँधीजी को सफलता दिलायी । 10 जून 1891 को वे बैरिस्टर कहलाए गए । 11 जून 1891 को ढाई शिलिंग देकर इंगलैण्ड के हाई कोर्ट में गाँधीजी ने अपना नाम दर्ज करवाया और 12 जून 1891 को भारत जानी वाली जहाज में भारत के लिए रवाना हुए ।

2.11 लन्दन से वापसी और व्यवसायिक जीवन की कठिनाइयाँ

गाँधीजी ने कानून की पढ़ाई तो पूर्ण कर ली परन्तु वकालत कैसे करें इसका उन्हें कोई अनुभव नही था । दक्षता का अभाव उनके लिए एक बड़ी समस्या बन गई । कानून के अध्ययन में पड़े गए धर्म सिद्धान्त को व्यवहारिक पेशे में कैसे लागू किया जाए यह उन्हें समझ नहीं आ रहा था । भारत में हिन्दू कानून और इस्लामी कानून का उन्हें तनिक भी ज्ञान नहीं था क्योंकि इनका अध्ययन उन्होंने लंदन में कानून में अध्ययन के दौरान नहीं पढ़ा था । अपनी

परेशानी को दूर करने के संबंध में उन्होंने फिरोजशाह मेहता और दादाभाई नौरोजी जैसे नामी वकीलों से सलाह लेने की सोची परन्तु मन में संशय के कारण इस विचार को त्याग दिया। अन्त में फ्रेडरिक पिंकेट से मिले । उन्होंने गाँधीजी को हिंदुस्तान के बारे में अपनी सामान्य जानकारी बढ़ाने को कहा और लेवेटर और शेमलपेनिक की मुख सामुद्रिक-विद्या (फिजियोग्नॉमी) किताब पढ़ने को कहा । गाँधी ने यह किताब पढ़ी पर उन्हें यह नीरस और कम लाभप्रद लगा । परिवार की अपेक्षायें उनसे बहुत अधिक थीं। मित्रों ने सलाह दी की वे बम्बई जाकर हाइकोर्ट की वकालत का अनुभव प्राप्त करें तथा हिन्दुस्तान के कानून का अध्ययन करें । कोई मुकदमा मिल सके इस बाबत प्रयास भी करने की सलाह दी गई।

गाँधी बम्बई पहुँचे । वहाँ कानूनी पढ़ाई भी शुरू की और वकालत करने का निर्णय भी लिया । परन्तु बढ़ते खर्च और आमदनी का कोई स्रोत न होने के कारण तथा स्वयं में आत्मविश्वास की कमी के कारण बम्बई में वकालत करने का प्रयास उनके लिए बड़ी पीडा बन गई ।

अंततः उन्हें एक मुकदमा मिला। ममीबाई का मुकदमा गाँधीजी के जिन्दगी का पहला मुकदमा था। स्माल कॉज कोर्ट (छिओटी अदालती) में प्रस्तुत इस मुकदमे में गाँधीजी को प्रतिवादी की तरफ से होने के कारण जिरह करनी थी । गाँधीजी के अनुसार मुकदमा आसान था और एक दिन से ज्यादा चलने वाला नही था । परन्तु जैसे ही जिरह के लिए गाँधी खड़े हुए उनके पैर कॉपने लगे और सिर चकराने लगा । वह कोई सवाल पूछ नहीं पाए और उनके आँखों के सामने अंधेरा छा गया । वह बैठ गए और बाद में जिस दलाल के माध्यम से मुकदमा प्राप्त हुआ था उससे उन्होंने कहा कि मुकदमा किसी और को दिलवा दिया जाए । उन्होंने प्राप्त फीस भी लैटा दिया । उन्होंने निश्चिय किया कि जब तक वे पूरी हिम्मत नहीं बटोर लेंगे वे कोई नया मुकदमा नहीं लेंगे । दक्षिण अफ्रीका जाने तक वे कभी उस घटना के बाद अदालत नहीं गए । एक और मुकदमा उनके पास आया । उन्हें पोरबन्दर के ही एक गरीब मुसलमान की जमीन जब्त हो जाने के सम्बन्ध में अर्जी-दावा तैयार करना था । अर्जी-दावा तैयार कर उन्होंने उसे मित्रों को दिखाया और जब उसे उनके द्वारा ठीक बताया गया तो गाँधीजी को यह विश्वास होने लगा कि वह अर्जी-दावा लिखने में दक्ष हैं । परन्तु अर्जी-दावा लिखने से मुम्बई में उनका गुजारा नहीं हो सकता था । लन्दन में रहकर अंग्रेजी उन्होंने सीख ही ली थी और मैट्रिक भी पास कर ली थी । इसलिए गाँधीजी किसी स्कूल में अंग्रेजी शिक्षक बनकर अपना गुजारा करन की सोचने लगे परन्तु बी.ए. पास नहीं होने के कारण वह यह काम नहीं कर सके । चिन्ताग्रस्त गाँधीजी और उनके बड़े भाई ने निर्णय लिया कि बम्बई में ज्यादा दिन रहना निरर्थक होगा और राजकोट जाकर नए सिरे से प्रयास करने का निर्णय लिया गया । यों लगमग छः महीने बम्बई में रहकर जब गुजारे का कोई साधन उन्हें प्राप्त न हो सका, तब वह अपना सामान समेट कर राजकोट चले आ।

राजकोट में उनके बड़े भाई वकील थे तो गाँधीजी को उम्मीद थी कि उन्हें अर्जी-दावे लिखने का कुछ-न-कुछ काम मिल ही जाएगा जिससे घर खर्च निकल सकेगा । वैसे भी उनका मानना था कि राजकोट में अपने ही घर में होने के कारण खर्चा भी कम ही होगा । गाँधीजी ने वहाँ अलग दफ्तर खोला और औसतन हर महिने लगभग 300 रुपये कमाने लगे । अर्जी-दावा

लिखने के आगे और कुछ नहीं कर पा रहे थे । अंग्रेज अधिकारियों के अहंकार; उनके द्वारा भारतीयों का अपमान और मन-मर्जी से कार्य सम्पादन यह हिन्दुस्तान में ब्रिटिश सरकार की आम प्रकृति अन गई थी । गाँधीजी भी इससे अछूते नहीं रहे।

2.12 दक्षिण अफ्रीका के लिए प्रस्थान की परिस्थितियाँ

तभी गाँधीजी के बड़े भाई को पोरबन्दर की एक फर्म दादा अब्दुला एण्ड कम्पनी का पत्र आया जिसमें उनसे निवेदन किया गया था कि दक्षिण अफ्रीका में उक्त फर्म का मुकदमा लम्बे समय से चल रहा है और वहाँ के नामी वकील-बेरिस्टर मुकदम में उनकी पैरवी कर रहें हैं। परन्तु इन वकीलों-बेरिस्टरों को फर्म का मुकदमा अछी तरह समझाने के लिए यदि गाँधी जा सकते हैं तो फर्म और गाँधी दोनों को फायदा होगा । फर्म के साझी से गाँधीजी और उनके भाई मिले, मुकदमें के औपचारिक जानकारी, कार्य, मेहनताना इत्यादि की बात हुई और गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका जाने का निर्णय लिया । अप्रेल, 1893 में गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका के लिए रवाना हुए । अपनी आत्मकथा में वह लिखते है ".......... और 1893 के अप्रेल महिने में उमंगों से भरा मैं दक्षिण अफ्रीका में अपना भाग्य आजमाने के लिए रवाना हो गया । "

2.13 सारांश

1869 से 1893 गांधीजी के जीवन के प्रारम्भिक वर्ष थे ।बाल्यावस्था में सदगुणी परिवार और अत्यधिक धार्मिक प्रकृति की माँ के कारण गाँधीजी को अच्छे संस्कार मिले । युवा अवस्था के उनके प्रयोग और निष्कर्ष उनके साधारण से विलक्षण की ओर उद्भव को प्रस्तुत करता है । लंदन का उनका विद्यार्थी जीवन भी उनकी विलक्षणवादी प्रतिभा का चित्रण और आध्यात्मिक विकास को प्रस्तुत करता है । बाल्यावस्था से ही गाँधीजी अपने चारित्रिक उत्कर्ष के प्रति कितने सजग थे और विभिन्न प्रयासों से उन्होंने अपने अध्यात्मिक व्यक्तित्व को कैसे विकसित किया, सह सब 1869 से 1893 तक के गाँधी जीवन के अध्ययन से हमें ज्ञात होता है । गाँधीजी का यह जीवन काल उनके वैयक्तिक जीवन के संघर्षों की ओर तो इंगित करता ही है परन्तु उसके कई ज्यादा महत्वपूर्ण पक्ष इसका यह है कि कैसे कोई साधारण व्यक्ति भी सजग प्रयास, प्रतिज्ञा और परिश्रम से मानव जीवन में प्राय: आने वाली बाधाओं को दूर कर सकता है इस बात की हमें सीख देता है । गाँधीजी के जीवन का 1669 से 1893 समय-काल हमें मानव जीवन के सत्य को उसके द्वारा अभिव्यक्त मूल्यों के साथ पहचान कर आत्मसात करने की प्रेरणा प्रदान करता है ।

2.14 अभ्यास प्रश्न

1. 1869- 1893 तक के गाँधी जीवन और संघर्ष पर प्रकाश डालिए ।
2. 1869- 1893 काल में गाँधीजी पर पड़ने वाले प्रभावों का वर्णन कीजिए ।
3. लंदन में गाँधीजी के विद्यार्थी जीवन और संघर्ष पर प्रकाश डालिए ।
4. लंदन में कानून की पढ़ाई पश्चात भारत लौटने पर गाँधीजी के जीवन और संघर्ष पर प्रकाश डालिए ।

2.15 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गाँधी, एम. के. सत्य के साथ प्रयोग अथवा आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008,
2. नंदा, बी. आर. महात्मा.गाँधी ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
3. रॉथरमण्ड, दैतमर, महात्मा गाँधी: एन एस्से इन पॉलिटिकल बायोग्राफी, मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली 1991
4. डोक जे. जे. ए पेट्रियोट इन साऊथ अफ्रीका, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2005
5. शीन विनसेंट (अनुवादित) गाँधीजी. एक महात्मा की संक्षिप्त जीवनी, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2006
6. क्रिपलानी, कृष्णा, गाँधी: ऐ लाइफ, एन. बी. टी. नई दिल्ली, 2008
7. क्रिपलानी, कूनूर, महात्मा गाँधी: अपॉसल ऑफ नानवायलेंस रूपा एण्ड कं. नई दिल्ली, 2003
8. रोलाँ, रोमी (अनुवादित), महात्मा गाँधी : द मेन हू बिकेम वन विथ द यूनिवर्सल बीयिन्ग, द स्वार्थमोर प्रेस लि. लंदन, 1924
9. फिशर, लूई, द लायफ ऑफ महात्मा गाँधी, ग्रनेडा पब्लिशिंग लि. लंदन, व १982
10. उपाध्याय, जे. एम. महात्मा गाँधी एस. ए. स्टूडेन्ट, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसार मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2005
11. हंट, जेम्स डी. गाँधी इन लंदन, प्रोमिला एण्ड कं, नई दिल्ली, 1978

इकाई - 3

गाँधी जीवन और दर्शन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 जीवन परिचय
3.3 पृष्ठभूमि
3.4 गाँधीजी का दर्शन
3.5 गाँधीवादी प्रविधि
3.5.1 सत्य
3.5.2 अहिंसा
3.5.3 सत्याग्रह
3.6 समाजिक विचार
3.7 राजनीतिक विचार
3.8 आर्थिक विचार
3.9 राष्ट्रवाद व अन्तर्राष्ट्रवाद पर गाँधीजी के विचार
3.10 गाँधीजी के दर्शन का महत्व
3.11 सारांश
3.12 अभ्यास प्रश्न
3.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ्ने के बाद आप समझ सकते है:

- गाँधी जीवन के बारे में ।
- गाँधी जीवन की पृष्ठभूमि के बारे में ।
- गाँधीवादी पद्धतियों और दर्शन के बारे में ।

3.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी मूलत: एक धार्मिक, मानवतावादी, कर्मयोगी और अन्तःप्रेरणा से कार्य करने वाले व्यक्ति थे, यद्‌यपि परिस्थितिवश उन्हें राजनीतिक क्षेत्र में आना पड़ा, पर जब वे एक बार राजनीतिक क्षेत्र में आ गए, फिर उन्होंने अपनी पूरी प्रतिभा को उसमें लगाया तथा अपनी सात्विक प्रवृति, परिश्रम, व्यवहारिक ज्ञान तथा अपनी सहृदयता से राजनीति तथा उसके उद्देश्य को बहुत ऊँचा उठाया। उनका मूल मन्त्र राजनीति को पवित्र करना, उसे आध्यात्म व नैतिकतायुक्त बनाना, मानव मात्र के हृदय में प्रेम व अंहिसा का प्रयास करके विश्व में मातृत्व

भावना को फैलाना, व्यक्ति की सच्ची स्वतन्त्रता की पुनर्स्थापना करना तथा पुरूषार्थ के महत्व को सिखाना और उसकी प्रतिष्ठा करना था।

गाँधीजी ने स्वयं किसी वाद के प्रचलन की बात कभी नहीं की थी । वे अपने विचारों को पूर्ण भी नहीं मानते थे । उन्होंनें अपने विचारों को कोई विशेष सिद्धान्त या वाद न कहकर किसी विशेष सिद्धान्त या वाद पर आधारित नहीं माना है और अपने विचारों को केवल 'सत्य के प्रयोग' कहा है । उनके विचारों एवं कार्यो का आधार कोई विशेष सिद्धान्त नहीं रहा । उन्होंने सदैव अपने मस्तिष्क को खुला रखने की चेष्टा की । वास्तव में उनका जीवन एक "अन्तहीन प्रयोग' था । गाँधी जी ने स्वयं मार्च 1936 में सर्व सेवा संघ के सदस्यों से कहा था - "गाँधीवाद नाम की कोई वस्तु नहीं है और मैं अपने पीछे कोई सम्प्रदाय नहीं छोड़ना चाहता। मैं यह दावा कभी नहीं करता कि मैने कोई नया सिद्धान्त चलाया है । मैंने केवल अपने निजी ढंग से मूलभूत सच्चाइयों का अपने नित्यप्रति के जीवन और समस्याओं में प्रयोग करने की चेष्टा की है । जो मत मैंने बनाये हैं और जिन परिणामों पर मैं पहुँचा हूँ, वे अन्तिम नहीं है । मैं उन्हें कल बदल सकता हूँ । मुझे दुनिया को कुछ सिखाना नहीं है । सच्चाई और अहिंसा उतने ही पुराने हैं, जितने ये पहाड़ । मैंने दोनों का उपयोग इतनी विस्तृत सीमा में करने की चेष्टा की है, जितनी मैं कर सकता था..." गाँधीजी के विचार इस प्रकार किसी विशेष वाद के रूप में नहीं हैं, फिर भी सत्य एवं अंहिसा के अटल सिद्धान्तों को उन्होंनें मनुष्य के जीवन की व्यक्तिगत, सामाजिक, नैतिक एवं सांसारिक अवस्थाओं में प्रयोग करके और उसके आधार पर विभिन्न सामाजिक, राजनीतिक या व्यक्तिगत समस्याओं के विषय में उन्होंनें जो विचार प्रकट किए हैं, वे बड़े व्यवस्थित हैं तथा यही कारण है कि उन्हीं को हम गाँधीवाद कहकर पुकारते हैं।

3.2 जीवन परिचय

महात्मा गाँधी का पूरा नाम मोहन दास करमचन्द गाँधी था । उनका जन्म 2 अक्टूबर 1869 में सौराष्ट्र (काठियावाड़) के पोरबन्दर नामक स्थान पर हुआ था । गाँधी परिवार इस क्षेत्र का प्रतिष्ठित परिवार था । गाँधीजी के दादा उत्तमचन्द गाँधी पोरबन्दर रियासत के दिवान थे । इसी पद को केवल 25 वर्ष की उस में गाँधीजी के पिता करमचन्द गाँधी ने प्राप्त किया था । गाँधीजी के जीवन तथा प्रारम्भिक चरित्र पर परिवार के वातावरण तथा माता का बड़ा प्रभाव पड़ा ।

गाँधीजी ने 12 वर्ष की आयु में राजकोट के एलफर्ड हाईस्कूल में प्रवेश किया । इसी वर्ष इनका विवाह कस्तूरबा से हो गया । 1887 में इन्होनें हाई स्कूल पास किया । गाँधीजी ने कहा है कि इसी समय उनके जीवन पर 'श्रवण पितृ भक्ति' तथा 'हरिशचन्द्र' नाटक का बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंनें यह निश्चय किया कि उन्हें भी अपने को श्रवण कुमार और हरिशचन्द्र जैसा बनाना है ।

हाईस्कूल के बाद उच्च अध्ययन के लिए गाँधीजी के चाचा ने उनको इंग्लैण्ड भेजने का निश्चय किया । फलत: 4 सितम्बर, 1888 को वे जहाज द्वारा लन्दन को गये । इंग्लैण्ड में वे दादाभाई नारौजी व अन्य कई भारतीय विद्वानों के संरक्षण में रहे । इसी समय उन्हें

एरनोल्ड द्वारा अनुवादित श्रीमद भागवत गीता का अंग्रेजी रूपान्तर 'दी सोंग सेलेस्टियल' तथा 'लाइट आफ एशिया' के अध्ययन का अवसर मिला तथा गीता इनके जीवन की सहचरी बन गई।

इंग्लैण्ड में 11 जून, 1891 को उन्हें वकालत की परीक्षा में उत्तीर्ण घोषित किया गया और दूसरे ही दिन उन्हें हाईकोर्ट के लिए पंजीकृत कर लिया गया । पर भारत में जाग्रत हो रही राजनीतिक चेतना व उथल-पुथल की ओर गाँधीजी का ध्यान आकृष्ट हो चुका था । अत: 12 जून को वे राजकोट के लिए रवाना हो गये ।

अप्रैल 1893 में दादा अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी के निमन्त्रण पर गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका गए, वहाँ उन्हें रस्किन के 'अण्टु दिस लास्ट' तथा टॉलस्टाम के 'दी किंगडम ऑफ गोड इज विदिन यू' पढ़ने का अवसर मिला । अहिंसा व शांतिपूर्ण असहयोग के संबंध में उनकी मान्यताओं को इन ग्रन्थों से बहुत अधिक बल मिला। सत्य, अंहिसा व सत्याग्रह का अनन्त प्रयोग जो उनका मृत्युपर्यन्त चलता रहा। महात्मा गाँधी, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की रक्षा के लिए संघर्ष करते रहे ।

सन् 1915 में भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम की परिस्थितियों ने गाँधीजी को सक्रिय राजनीति की ओर आकृष्ट किया। सन् 1916 में गोखले के परम शिष्यत्व में गाँधी जी ने 'लखनऊ पैक्ट' के आधार पर हिन्दू मुसलमालों के मध्य समझौता करवाया तथा 'स्वेदेशी व स्वराज्य' को अपना मूलमन्त्र बनाया ।

1919 के जलियावाला बाग, रौलेट एक्ट तथा अंग्रेजी शासन के अन्य अमानवीय कृत्यों ने गाँधीजी को अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ करने को बाध्य किया । फलत: 1920-21 में सम्पूर्ण देश गाँधीजी के नेतृत्व में आ गया । इसी प्रकार का एक आन्दोलन उन्होंने सन् 1930-32 में भी संचालित किया, जिसे सविनय अवज्ञा आन्दोलन का नाम दिया गया था। कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने लन्दन में सितम्बर, 1931 में हुई द्वितीय गोलमेज परिषद में भी भाग लिया। आंग्ल शासन के गलत कानूनों की अवज्ञा करने के प्रतीक स्वरूप उन्होंनें (मार्च-अप्रैल, 1930 में) अपना इतिहास प्रसिद्ध दाण्डी कूच किया तथा दाण्डी पर 5 अप्रैल, 1930 को नमक बनाकर नमक कानून को भंग किया ।

गाँधीजी ने समय-समय पर कांग्रेस में भी सुधार करके उसे सशक्त बनाया। अक्टूबर में गाँधी जी ने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी किया। 1942 में उन्होंने भारत छोडो आन्दोलन का प्रारम्भ करने का निर्णय लिया। उन्हें गिरफ्तार किया गया और कारावास में रखा गया । इसी बीच 12 फरवरी, 1944 को जब वे कारावास में थे, उनकी पत्नी कस्तूरबा की मृत्यु हो गई ।

देश की तात्कालिन परिस्थितियों में गाँधी जी को देश की पूर्ण स्वतन्त्रता के लिए कार्य करने को बाध्य किया। उनका दृढ़ विश्वास था कि विद्यमान सम्पूर्ण कठिनाइयां ब्रिटिश शासन के कारण थी तथा पूर्ण स्वतन्त्रता को वे अपना एकमात्र उपचार समझते थे। उनकी स्वतन्त्रता की कल्पना सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए थी, जिसके अर्थ को स्पष्ट करते हुए उन्होंनें व 15 जुलाई 1946 को हरिजन में लिखा था कि "स्वतन्त्रता का अभिप्राय सम्पूर्ण भारत की

स्वतन्त्रता से है - जिसमें भारतीय देशी रियासतें, फ्रांसीसी व पुर्तगालियों के अधीन क्षेत्र सभी सम्मिलित हैं... भारतीय स्वतन्त्रता नीचे से प्रारम्भ होनी चाहिए, जिससे वर्तमान देशी शासकों को भी जनता की इच्छा के अनुसार चलने के लिए बाध्य होना पडे। "अंग्रेजों की ओर से जब भारत विभाजन का प्रस्ताव आया, तो उन्होंने स्पष्ट कहा था कि भारत का विभाजन किसी भी तरह मान्य नहीं होगा। उन्होंनें तो इस सम्बन्ध में यहां तक कहा था कि विभाजन उनके मृत शरीर पर ही हो सकता है। किन्तु अन्त में कांग्रेस को भारत का विभाजन स्वीकार करना ही पड़ा।

स्वतन्त्रता के दिन सम्पूर्ण दिन गाँधीजी में प्रार्थना व मौन व्रत रखा। वे एक ऐसे भारत का निर्माण करना चाहते थे, जो पूर्णत: अहिंसा व आदर्शो सर्वोदयी समाज के लिए समर्पित हो । किन्तु स्वतन्त्रता के कुछ ही समय बाद वे अपने स्वप्न को अधूरा लेकर शुक्रवार 30 जनवरी 1948 की संध्या को दिल्ली के बिड़ला भवन में प्रार्थना स्थल की ओर जाते हुए नाथूराम विनायक गौडसे की गोली का शिकार होकर अपने पार्थिव शरीर को छोड़कर चले गए।

3.3 पृष्ठभूमि

3.3.1 पारिवारिक जीवन

गाँधीजी का धार्मिक दृष्टिकोण उनके पारिवारिक जीवन से प्रभावित हुआ । वे अपनी माता के सादगीपूर्ण जीवन से अत्यन्त प्रभावित हुए तथा इसी प्रभाव के कारण इंग्लैण्ड में भी वे सादगी एवं सात्विक जीवन व्यतीत कर सके। वैष्णव मतावलम्बी होने के कारण उन्हें अपनी माता के साथ प्रतिदिन मन्दिर भी जाना होता था। इससे उनके हृदय में ईश्वर के प्रति दृढ़ आस्था उत्पन्न हुई। उन्हें भूत-प्रेत के भय से बचने के लिए 'राम-नाम' लेने के लिए उनकी नौकरानी रम्भा कहा करती थी । अत: अपनी मृत्यु प्रयन्त वे 'राम' का विस्मरण नहीं कर सके।

3.3.2 हिन्दू धर्म ग्रन्थ

पारिवारिक जीवन में ही वे रामायण तथा महाभारत से भी परिचित हुए। वो पिता की रूग्णावस्था में उन्हें नियमित रामायण सुनाया करते थे । वे रामायण से इतने अधिक प्रभावित थे कि इसे भक्ति की एक सर्वोत्तम पुस्तक मानते थे। 'भगवद्गीता' के सम्पर्क में गाँधीजी सर्वप्रथम अपने इंग्लैण्ड के अध्ययन काल में (1888-91) में आए वहाँ उन्होंने सर एडविन अरनाल्ड द्वारा अनुवादित गीता को पढ़ा। वे गीता को 'आध्यात्मिक सन्दर्भ ग्रन्थ' मानते थे । उन्होंनें यह दावा किया कि गीता वास्तव में अहिंसा की शिक्षा देती है और सिखती है कि मनुष्य को काम करने का अधिकार है, पर उसे उसके परिणाम पर कोई अधिकार नहीं है, "कर्मण्येवाधिकारस्ते ना फलेषु कदाचन्" । गाँधीजी ने अपने जीवन के बाद के वर्षा में किसी भी अन्य स्रोत की अपेक्षा गीता से ही सर्वाधिक प्रेरणा ली है । इस सम्बन्ध में 28 जुलाई 1925 को कलकत्ता क्रिश्चियन मिश्नरी को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था कि "जब शंकाये मुझे परेशान करती हैं" मेरे चेहरे पर जब कभी निराशा दिखाई देती है, जब पूरे क्षितिज पर मुझे

प्रकाश की एक भी किरण दिखाई नहीं देती, तो मैं भगवद्गीता की ओर मुड़ता हूँ और सांत्वना के लिए एक श्लोक ढूंढ लेता हूँ तथा विकट दुःखों के बीच में भी मैं मुस्कराने लगता हूँ।"

पतंजलि के योग सूत्र के पंचयमों से भी उन्होंनें अहिंसा की शिक्षा ग्रहण की। योगसूत्र को वे आध्यात्मिक विकास के अनुशासन का नियम मानते थे। जैन तथा बौद्ध साहित्य और हरिश्चन्द्र तथा श्रवण कुमार के नाटकों का उनके चिन्तन व जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। इन्हें उन्होंने अपने जीवन के आदर्श के रूप में माना। अस्तेय (चोरी न करना), सत्य (झूठ न बोलना) ब्रहमचर्य, अपरिग्रह तथा न्याय सिद्धान्त आदि की चर्चा उनके दर्शन में हमें गाँधीजी पर उपर्युक्त के प्रभाव के कारण ही मिलती है ।

3.3.3 ईसाई धर्म

गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका के प्रवाज़ काल में ईसाइयत तथा इस्लाम ग्रन्थों का भी अध्ययन किया, तथा उनसे वे धर्म के सच्चे स्वरूप को समझने की ओर और भी अधिक प्रेरित हो सके । 'सर्मन ऑन द माउण्ट' (ईसाइयों की धर्म पुस्तक बाइबिल में दी हुई ईसा मसीह की शिक्षा) का उन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा । जब उन्होंनें इस पहले-पहल पढ़ा तो यह उनके हृदय में स्थान पा गया वे ईसा की इन शिक्षाओं को कभी नहीं भूले कि "बुराई को अच्छाई से जीतना चाहिए", "यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर थप्पड़ मारे, तो उसके सामने दूसरा गाल भी कर दो", "अपने शत्रुओं को भी प्यार करो", "तुमसे जो घृणा करता है उसके साथ नेकी करों"। अहिंसक प्रतिरोध का सर्वोच्च उदाहरण गाँधीजी को ईसा मसीह के इन अन्तिम शब्दों में मिला - "भगवान उन्हें क्षमा कर दीजिए क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या कर रहे हैं"।

3.3.4 इस्लाम धर्म

इस्लाम से भी गाँधीजी ने अंहिसा की शिक्षा ली। उन्होंनें इसमें दयालुता, शान्ति, प्रेम और विचारशीलता का सन्देश पाया। गाँधीजी जानते थे कि 'इस्लाम शब्द का मतलब ही शान्ति, सुरक्षा और मुक्ति" है तथा कुरान की एक महत्त्वपूर्ण शिक्षा है' "कि धर्म में जोर जबरदस्ती नहीं होनी चाहिए।"

3.3.5 विविध विचारक

गाँधीजी की नैतिक व राजनीतिक विचारधारा पर लाओत्से, कन्फ्यूशियस व कार्लायल का भी गहरा प्रभाव पड़ा। ईसा के कई शताब्दी पूर्व लाओत्से ने निरअहमं भाव की शिक्षा देते हुए कहा था - "जो मेरे प्रति अच्छे हैं, मैं उनके लिए अच्छा हूँ जो मेरे प्रति अच्छे नहीं हैं, उनके प्रति भी मैं अच्छा हूँ। इस प्रकार सभी अच्छे होते जायेंगे। जो मेरे प्रति सच्चे हैं, मैं उनके लिए सच्चा हूँ और जो मेरे प्रति सच्चे नहीं है, उनके प्रति भी मैं सच्चा हूँ। इस प्रकार सभी सच्चे होते जायेंगे" । इससे गाँधीजी ने शत्रु के प्रति सद्भाव रखने की प्रेरणा ली । कन्फ्यूशियस से उन्होंनें दूसरों के प्रति वैसा ही व्यवहार करने की शिक्षा ली जैसे व्यवहार कोई दूसरों से अपने प्रति चाहता हो ।

धर्म निरपेक्षता सम्बन्धी विचारकों में थोरो, रस्किन और टॉलस्टॉय ने गाँधी को सबसे अधिक प्रभावित किया । राजनीतिक चिन्तन में थोरो का प्रत्यक्ष प्रभाव गाँधीजी के सविनय अवज्ञा और करबन्दी आन्दोलनों पर पड़ा। दक्षिण अफ्रीका में गाँधीजी ने जो सत्याग्रह चलाया उसकी तकनीकी व कार्याविधि पर थोरो के निबन्ध एस्से ऑन सिविल डिसओबाडियन्स का प्रभाव पड़ा। वे थोरो के इस विचार से पूर्णत: सहमत थे कि "जन हित करने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओं के साथ अधिकतम् सहयोग किया जाना चाहिए"।

गाँधीजी ने रस्किन की पुस्तक अन्टू दिस लास्ट तथा क्राउन ऑफ वाइल्ड ओलिव्स से शारीरिक श्रम का आदर करना सीखा। रस्किन की इन पुस्तकों का उन पर जो प्रभाव पड़ा उसका विवेचन उन्होंनें अपनी आत्मकथा के एक अध्याय "दी मेजिक स्पेल ऑफ ए बुक" में किया है । सर्वहित (सर्वोदय) में ही स्वहित निहित होता है, एक वकील के काम का तथा एक नाई के काम का मूल्य सामाजिक दृष्टि से समान है, क्योंकि दोनों को आजीविका कमाने का अधिकार है तथा श्रमिकों अर्थात कृषकों, मजदूरों व हस्तोद्योग शिल्पियों का जीवन ही सच्चा जीवन है, ये वे प्रमुख विचार हैं, जो उन्हें रस्किन के साहित्य से प्राप्त हुए तथा जिन्होनें उनके जीवन को बड़े व्यापक रूप से प्रभावित किया।

गाँधीजी के जीवन व दर्शन पर टॉलस्टॉय ने, थोरो व रस्किन की अपेक्षा, अधिक प्रभावित किया। गाँधीजी के सचिव एवं उनके जीवन चरित्र लेखक श्री प्यारेलाल ने लिखा है कि "जीवन के बारे में गाँधीजी के सम्पूर्ण दृष्टिकोण को टॉलस्टॉय ने बदल दिया । कला, धर्म, अर्थशास्त्र, पुरूष और महिलाओं के पारस्परिक सम्बन्ध तथा राजनीति के बारे में गाँधीजी के विचारों पर टॉलस्टॉय की गहरी छाप पड़ी है। "

टॉलस्टॉय की पुस्तक द किगंडम ऑफ बोड इस विदिन यू ने अंहिसा के विषय में गाँधी जी की शंकाओं को दूर कर उन्हें पक्का अहिंसावादी बनाया । टॉलस्टॉय के दार्शनिक अराजकतावाद के दर्शन गाँधीजी के विचारों में स्पष्टत: कर सकते है । रोम्याँरोला ने अपनी पुस्तक "महात्मा गाँधी" में यह मत प्रतिपादित किया कि यूरोपीय व पश्चिमी सभ्यता के प्रति जिस आलोचनात्मक दृष्टिकोण के दर्शन हमें गाँधीजी में दृष्टिगत होता है, उस पर टॉलस्टॉय का ही प्रभाव प्रतीत होता है। फिर भी गाँधीजी ने टॉलस्टॉय का अन्धानुकरण नहीं किया है। गाँधीजी का अंहिसा का दृष्टिकोण टॉलस्टॉय से कहीं अधिक आगे है। क्योंकि गाँधीजी ने अहिंसा को मन वचन व कर्म तीनों से स्वीकार किया है ।

इनके अलावा प्लेटो, थॉमस पेन, रालेन्स, हेन्दरसन, हक्सले, मेजिनी एवं एडवर्ड कारपेन्टर आदि यूरोपीय व अमरीकन विचारकों का भी गाँधीजी ने गहन अध्ययन किया तथा उनके उत्तम विचारों को अपने चिन्तन, जीवन तथा दर्शन में उपयुक्त स्थान दिया ।

3.4 गाँधीजी का दर्शन

गाँधीजी की मान्यता थी कि धर्म विहीन राजनीति अनुचित है । गाँधीजी ने राजनीति में मैकियावलीवाद का जोरदार विरोध करते हुए घोषण की कि "धर्म के बिना राजनीति पाप है, क्योंकि वह आत्मा का हनन करती है ।" उनका विश्वास था कि यदि राजनीति में घृणा, अपवित्रता और दोष विद्यमान है तो उसका एक महत्त्वपूर्ण कारण यह भी है कि ईश्वर से

भयभीत होने वाले सदाचारी, निस्वार्थी, सच्चे तथा धर्म प्रधान व्यक्ति इसमें भाग नहीं लेते । राजनीति को यदि विशुद्ध बनना है, तो इसमें धार्मिक व्यक्तियों कार' बाहुल्य होना चाहिए ।

राजनीति में धर्म को प्रविष्ट कराना गाँधीजी का प्रथम उद्देश्य

उक्त विचार के कारण ही राजनीति में धर्म के प्रवेश किये जाने को गाँधीजी ने अपना प्रथम उद्देश्य समझा । 'यंग इण्डिया' में प्रकाशित लेखों में गाँधीजी ने लिखा है कि "सार्वजनिक जीवन क्या है, इस बात को मैने जब से समझा है, तब से मेरे कहे हुए प्रत्येक शब्द और मेरे द्वारा किए गए प्रत्येक कार्य के पीछे धार्मिक चेतना तथा धार्मिक प्रयोजन रहा है"। किसी अन्य प्रसंग में उन्होंने कहा था कि 'बहुत से धार्मिक व्यक्ति जो मुझे मिले, वे वस्तुत: राजनीतिज्ञ हैं, पर मेरा वेश राजनीतिज्ञ का होते हुए भी मैं हृदय से धार्मिक हूँ ।" उनका मत था कि "आज राजनीतिक हमें सर्प पाश की तरह लपेटे हुए है, जिसमें से व्यक्ति को निकलना असम्भव है, चाहे वह कितना भी प्रयत्न क्यों न करे। मैं उस सांप से जूझन चाहता हूँ । मैं राजनीति में धर्म को प्रविष्ट कराने का प्रयत्न कर रहा हूँ।'' स्पष्टत: गाँधीजी ने धार्मिक कर्तव्य समझकर ही राजनीति में प्रवेश करने की प्रेरणा ली।

देश की स्वतन्त्रता राजनीति में गाँधीजी के प्रवेश का दूसरा उद्देश्य

उनकी धार्मिक मान्यता थी कि देश के प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह पराधीनता से मुक्ति प्राप्त करने के लिए आगे आए देश की आजादी के लिए प्रयत्न करे तथा सामाजिक बुराइयों, शोषण, व भेदभाव को मिटाने के लिए कार्य करे समाज सुधार की लगन न उन्हें सम्भवत: एक ओर देश के स्वतन्त्रता संग्राम की और खींचा तो दूसरी ओर उनके विचारों की धार्मिक पृष्ठभूमि ने उन्हें राजनीति को धर्मयुक्त बनाने के लिए प्रेरित किया।

ईश्वर एवं धर्म गाँधीजी के जीवन आधार

गाँधीजी ने धर्म एवं ईश्वर की विशद विवेचना की है । धर्म से उनका आशय किसी 'मत' या 'धर्म विशेष' से नहीं है । वे एक सर्वव्यापी ईश्वर में विश्वास रखते थे । (सत्य के प्रति मेरे प्रयोग में) उन्होंने ईश्वर 'एक अनिर्वनीय, निगूढ़, रहस्यमय सत्ता है, जो प्रत्येक वस्तु में व्याप्त है। मैं उसे देख तो नहीं सकता, परन्तु उसकी अनुभूति होती है परन्तु जिसका प्रमाण नहीं मिलता, क्योंकि वह समस्त इन्द्रियगोचर पदार्थो से बिल्कुल भिन्न है । वह बाह्य प्रमाणों द्वारा नहीं; उन लोगों के लोकोत्तर व्यवहार एवं चरित्र द्वारा सिद्ध होती है, जो अपने अन्दर भगवान की वास्तविक सत्ता की अनुभूति करते हैं । "

ईश्वर के विषय में उनका कहना था कि "ईश्वर सत्य है" वे केवल यही नहीं कहते थे कि 'ईश्वर सत्य है' बल्कि यह भी कहते थे कि 'सत्य ही ईश्वर है' उनके अनुसार ईश्वर की प्राप्ति मन वचन तथा कर्म द्वारा सत्य प्रेम व अंहिसा के पालन से हो सकती है । उन्होंनें कहा था - "बिना अंहिसा के सत्य की खोज तथा प्राप्ति असम्भव है । दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । एक साधन है तो दूसरा साध्य', जो कोई भी इन सिद्धान्तों का अनुसरण करता है, वह एक धार्मिक तथा आध्यत्मिक व्यक्ति है, वह ईश्वर के नजदीक है, स्पष्टत: गाँधीजी के अनुसार ईश्वर एवं धर्म हृदय की ही वस्तुएं हैं ।

धर्म सत्य तथा अंहिसा पर आधारित एक नैतिक जीवन पद्धति है- धर्म के अर्थ को स्पष्ट करते हुए गाँधीजी ने उसे सृष्टि की नैतिक व्यवस्था के क्रमिक विकास से सम्बद्ध किया है । उनका मत है कि "धर्म यान्त्रिक सिद्धान्तों का समूह, वरन् सत्य और अहिंसा पर आधारित एक नैतिक जीवन पद्धति है । " जैसा धवन ने कहा है, गाँधीजी के अनुसार 'धर्म एक सजीव भावना है, जिसका विकास समाज के विकास के अनुसार होता है । धर्म का कार्य सामाजिक व्यवस्था को सामंजस्यपूर्ण बनाये रखना तथा व्यक्ति की आत्मा का मार्गदर्शन इस प्रकार करना है कि उसे अपनी अन्तर्निहित शक्तियों को प्राप्त करने की शिक्षा मिल सके । " इस आधार पर कोई भी नैतिक जीवन धर्मरहित नहीं हो सकता, उनके लिए नैतिकता धर्म तथा नीति एक दूसरे के पर्याय हैं । अपनी आत्मकथा में उन्होंनें लिखा है कि "आदर्श नैतिकता व धर्म एक ही वस्तु के अनेक नाम हैं । धर्म के बिना नैतिक जीवन बालू पर बने मकान जैसा होता है तथा नैतिकता के बिना धर्म बजने वाले पीतल जैसा होता है । जो केवल शोर करने तथा सर फोड़ने का काम कर सकता है । वे रूढ़ियों पर आधारित किसी धर्म में बंधे नहीं थे । सर्वश्रेष्ठ धर्म के विषय में उन्होंने कहा था कि 'जिस धर्म को मैं अन्य सभी धर्मो से अच्छा समझता हूँ वह हिन्दू धर्म नहीं; अपितु वह धर्म है जो हिन्दू से भी आगे की वस्तु है, जो मनुष्य की प्रकृति को बदल देता है, जो आन्तरिक सत्य से उसका अभेद सम्बन्ध स्थापित करता है, और जो सदाशुद्धि करता है । वह मानव प्रकृति का स्थायी तत्त्व है । जो अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति को प्राप्त करने के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने में नहीं झिझकता और जो आत्मा को उस समय तक चैन नहीं लेने देता जब तक उसे आत्म प्राप्ति नहीं हो जाती, जब तक वह अपने सृष्टा को नहीं जान लेता और उसके साथ तादात्म्य स्थापित नहीं कर लेता । " गाँधीजी के अनुसार इस प्रकार धर्म वह है जो व्यक्ति को व्यक्तितत्व की पूर्णता प्रदान करता है तथा जिसका आभास हमें केवल उसके जीवन के ढंग से ही होता है।

जीवन में मन-वचन-कर्म से सत्य व अहिंसा का प्रयोग

राजनीति का संचालन सत्य व अंहिसा के आधार पर ही किया जाय एवं राजनीति में हिंसा का प्रयोग क्यों नहीं किया जाए, इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने अनेक तर्क प्रस्तुत किए हैं । उनकी मान्यता थी कि :

1. ईश्वर एवं जीवमात्र एक है, अत: जो व्यक्ति ईश्वर में विश्वास रखता है, वह दूसरों के विरूद्ध हिंसात्मक साधन अपनाने पर कभी जोर नहीं दे सकता।
2. गाँधीजी के अनुसार अच्छे साधन के प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता आवश्यक है। प्रथम की पवित्रता से द्वितीय के औचित्य का निर्धारण होता है। राजनीतिक उद्देश्यों की सिद्धि भी सही ढंग से पवित्र साधनों से ही हो सकती है। अंहिसात्मक साधन राजनीति को उत्कृष्ट एवं नैतिक बना सकते हैं।
3. व्यक्ति की स्वतन्त्रता सर्वोच्च सामाजिक हित है। समाज व राज्य का निर्माण इसी की रक्षा के लिए हुआ है। यदि नवीन सामाजिक व्यवस्था की स्थापना हिंसात्मक साधनों द्वारा की गई, तो वहां व्यक्ति स्वतन्त्र नहीं रह सकेगा ।

इस प्रकार गाँधीजी ने राजनीति उद्देश्यों की सिद्धि के लिए अंहिसात्मक एवं नैतिक साधनों पर बल देकर राजनीति को आध्यात्मिक बनाया।

3.5 गांधीवादी प्रविधि

गाँधीजी ने माना कि अच्छे साध्य के लिए साधनों की पवित्रता आवश्यक है ।अच्छे परिणामों की प्राप्ति के लिए अच्छे व नैतिक साधनों के प्रयोग पर गाँधीजी ने इसलिए बल दिया । उनके मतानुसार अच्छे उद्देश्यों की प्राप्ति अच्छे साधनों से ही सम्भव है । इस रूप में उनके मतानुसार साधन व साध्य अभिन्न होते हैं । उनका कहना है कि “साधन एक बीज की तरह है तथा उद्देश्य पेड़ की तरह’। अत: जिस प्रकार बीज के अनुसार पेड़ होता है उसी प्रकार साधन के अनुसार ही उद्देश्य की सिद्धि होती है ।

साधनों की पवित्रता में इतना अटूट विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिए यह स्वाभाविक था कि अपने द्वारा निर्धारित उद्देश्य की सिद्धि के लिए वह ऐसे साधन चुने जिनकी पवित्रता अग्नि जैसी हो और यही कारण था कि उन्होंनें अपने प्रत्येक उद्देश्य की सिद्धि के लिए सत्य व अहिंसा के साधनों का प्रयोग किया। आलंकारिक भाषा में हम कह सकते हैं कि साधनों की पवित्रता को आधार बना कर अपने गन्तव्य की प्राप्ति के लिए गाँधीजी ने एक ऐसे रथ का निर्माण किया, जिसके पहिए अहिंसा तथा सत्याग्रह (सत्य के आग्रह) रहे और जिसका वाहक सत्य रहा।

गाँधीवादी प्रविधि के तीन स्तम्भ है, जिनका विवेचन निम्न प्रकार किया जा सकता है:

3.5.1 सत्य

सत्य ही जीवन का आधरभूत सिद्धान्त

सत्य गाँधीजी के जीवन तथा दर्शन का ध्रुवतारा या सर्वोच्च लक्ष्य है जिसकी प्राप्ति के लिए वे सर्वदा प्राणोत्सर्ग करने के लिए तत्पर थे। गाँधीजी के अनुसार सत्य के दो रूप होते हैं। सत्य का पहला रूप सापेक्ष सत्य या स्थूल सत्य का है, जिसका साक्षात्कार मनुष्य को देश काल व परिस्थितियो के अनुसार होता है। सत्य का दूसरा रूप निरपेक्ष सत्य या सूक्ष्म सत्य होता है जो पूर्ण, सर्वव्यापक, असीमित व काल तथा दिक् से परे है । पूर्ण सत्य का अर्थ गाँधीजी ईश्वर के अर्थ में ग्रहण करते थे। उनका मत था कि वास्तविक अस्तित्व को निर्धारित करने वाली शक्ति ईश्वर की शक्ति है अर्थात ईश्वर ही सत्य है। वास्तविकता को कोई अस्वीकार नही कर सकता और प्रत्येक वास्तविकता में विध्यमान सत्य की पहचान अन्तत: ईश्वर की अनुभूति कराता है । इसलिए वे यह कहा करते थे कि सत्य ही ईश्वर है । उनके अनुसार पूर्ण सत्य में पूर्ण ऐश्वर्य व 'पूर्ण आनन्द होता है । इसीलिये ईश्वर को ‘सत् चित् आनन्द' कहा जाता है । गाँधीजी का सत्याग्रह का दर्शन इसी मान्यता पर आधारित है ।

गाँधीजी की यह मान्यता है कि पूर्ण एवं सर्वव्यापक सत्य का साक्षात्कार नश्वर शरीर के माध्यम से नहीं हो सकता, इसे केवल अनुभव किया जा सकता है । अत: वे सत्य के व्यावहारिक स्वरूप पर अधिक बल देते हैं और कहते हैं कि उसका पालन एक साधारण व्यक्ति भी कर सकता है । उनका मत है कि मन-वचन तथा कर्म से सच्चाई का पालन करना, जो

कुछ भी शान्तिपूर्वक सोचने के बाद हमें न्यायोचित, धर्मनिहित एवं युक्तियुक्त मालूम हो, जिसे अन्त: करण अपने प्रतिकूल न समझे, उसे ही करना सत्य है।

मन-वचन तथा कर्म द्वारा सत्य का आचरण ही पूर्ण सत्यप्राप्ति का एकमात्र मार्ग

गाँधीजी का विश्वास था कि इस प्रकार व्यावहारिक सत्य का पालन करने से व्यक्ति शनैः-शनै: सूक्ष्म या अमूर्त सत्य को भी प्राप्त कर सकता है। इस प्रकार प्रत्येक कार्य में सत्य को ग्रहण कर उस पर चलने का निश्चय कर, सत्य वचनों का आचरण कर, सत्य कर्म पर प्रवृत्त होने से हम अन्त में ईश्वर का भी साक्षात्कार कर सकते हैं।

स्पष्टत: गाँधीजी की सत्य सम्बन्धी धारणा में केवल सत्य बोलना ही पर्याप्त नही, अपितु इसके साथ सत्य विचार तथा सत्य कर्म भी परमावश्यक है। गाँधीजी के अनुसार सत्य का दायरा असीमित हैं। उसके क्षेत्र में जीवन के सभी कार्यकलाप सम्मिलित है और राजनीति भी इससे पृथक नहीं है । गाँधी का विचार है कि सत्य के मार्ग का अनुसरण या उसकी खोज केवल व्यक्तिगत सीमा में रहकर सम्भव नहीं है । उसका अनुसरण सबकी सेवा करते हुए ही सम्भव है । जीवन के सभी क्षेत्रों में सत्य का अनुसरण या उसकी खोज केवल व्यक्तिगत सीमा में रहकर सम्भव नहीं है । उसका अनुसरण सबकी सेवा करते हुए ही सम्भव है । जीवन के सभी क्षेत्रों में सत्य का अनुसरण एक नए सुधार का एक अथक प्रयास है, इसके लिए एक सत्यव्रती को अपना सब कुछ न्यौछावर करना पड़ता है । यदि वह ऐसा करने में असमर्थ रहता है, तो इसका तात्पर्य होता है । कि वह अपने सत्य मार्ग से च्युत हो गया है । अपनी आत्मा से विमुख हो गया है और वह वास्तविकता से दूर भागने वाला हो गया है अथवा यों कहना चाहिए कि उसका नैतिक पतन हो गया है और वह सत्य की और उन्मुख हो गया है ।

3.5.2 अहिंसा

गाँधीजी के आधार मनुष्य स्वभावत: अहिंसाप्रिय है और वह हिंसावान केवल परिस्थितिवश होता है । यही कारण है कि मनुष्य जाति बढ़ती ही जाती है । अन्यथा यदि मनुष्य स्वाभावत: हिंसक होता और सदा उसकी हिंसक वृत्ति ही कम करती तो मनुष्य जाति नष्ट हो गई होती । वे यह मानते थे कि संसार में हिसा का अस्तित्व नहीं है, पर ऐसा होते हुए भी वे अहिंसा को मानव जगत का मूल नियम व संचालन शक्ति मानते थे तथा उनका विश्वास था कि अहिंसा पर ही चल कर मानव समाज ऊपर उठ सकता है।

सत्य व अहिंसा का अन्तर्सम्बन्ध

गाँधीजी की सम्पूर्ण विचारधारा की आधारशिला सत्य व अहिंसा है । गाँधीवाद इस रूप में सत्य की साधना का विज्ञान व अहिंसा एवं सत्य के साक्षात्कार का साधन है । किन्तु इन दोनों में से गाँधीजी सत्य को अहिंसा से उच्चतर स्थान देते है । उनके अनुसार सत्य के लिए अहिंसा का त्याग किया जा सकता है । किन्तु अहिंसा के लिए सत्य का त्याग नहीं किया जा सकता है ।

सत्याग्रह सत्य व अहिंसा के लिए प्रेमपूर्ण आग्रह है

सत्याग्रह का अर्थ है - सत्य के लिए आग्रह जीवन में सर्वत्र सत्य की प्रतिष्ठा करना ही गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रह है तथा इसलिए व्यक्तिगत तथा सामाजिक दोनो ही प्रकार के

जीवन में अधर्म व अन्याय का अहिंसात्मक विरोध उसके अन्तर्गत आता है । जैसा सत्याग्रह करना है तथा नकारात्मक रूप से उसका अर्थ जो कुछ असत्य है, उसका विरोध करना भी होता है । अन्याय व अनाचार के निराकरण के लिए हिंसा पर आधारित अन्याय व अनाचारपूर्ण उपायों का प्रयोग गाँधीजी के अनुसार विहित नहीं था । अत: इसके लिए उन्होंने सत्य व अहिंसा पर आधारित शान्तिपूर्ण किन्तु सक्रिय विरोध का ढंग अपनाया तथा उसी को उन्होंनें सत्य व अहिंसा पर आधारित शान्तिपूर्ण किन्तु सक्रिय विरोध का ढंग अपनाया तथा उसी को उन्होंने सत्याग्रह का नाम दिया । वे सत्याग्रह को ईश्वरीय एवं सत्याग्रही के हृदय में ईश्वरांश या ईश्वर का निवास मानते थे । उनके अनुसार सत्याग्रही ईश्वरत्व के उस श्रेष्ठ तत्व को, जो कुसंस्कार, कुसंगत कुचाल, कुचिन्तन तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण नीचे दब जाता है, उस मूर्च्छित देवत्व या ईश्वरत्व को सत्याग्रह के द्वारा जाग्रत करने का प्रयत्न करता है । कष्ट तथा सहिष्णुता सत्याग्रह के अनिवार्य अंग है । जिसमें सत्याग्रही स्वयं कष्ट उठाकर अपने व्यक्तित्व बल से, प्रेमपूर्वक आनाचार करने वाले को इस बात का आभास कराता है कि उसके कार्य अनैतिक हैं । अत्याचारी, आक्रामक या विद्रोही द्वारा किए जाने वाले उत्पीड़न का वह प्रबल विरोध करता है, पर वह उस पर क्रोध नहीं करता वह स्वयं किसी प्रकार की लालसा नहीं रखता और न असफल होने पर मन मैला करता है । इसके विपरीत वह उल्टे विपक्षी के प्रति आदर भाव रखता है ।

3.5.3 सत्याग्रह

गाँधीजी ने समय-समय पर सत्याग्रह की अनेक प्रणालियों का प्रयोग किया है । किशोरीलाल मशरूवाला ने इसी तथ्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "सत्याग्रह जितनी रीतियों से हो सकता है, उन सबको गिनाया नहीं जा सकता" । असत्य व अत्याचार के सत्य व अहिंसापूर्ण विरोध के विविध ढंगों में स्पष्ट अन्तर करना कठिन है, क्योंकि सभी वस्तुत: सत्याग्रह के ही विविध रूप हैं । यदि विचारपूर्वक देखा जाए, तो सत्य व न्याय के लिए आग्रह करना अथवा असत्य व अन्याय का विरोध करना या उनका साथ न देना अथवा अन्यायपूर्ण नियमों की अवज्ञा करना आदि सब इसी एक बात के विविध पहलू हैं कि सत्य व अहिंसापूर्ण ढंग से सत्य को विजयी बनाया जाए । अफ्रीका में निक्रिय विरोध द्वारा भी उस सत्य व अन्याय का शान्तिपूर्ण विरोध किया गया था, जो वहां की सरकार के कानूनों में निहित था सन् 1920-21 के असहयोग आन्दोलन द्वारा, सन् 1930-31 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन द्वारा व सन् 41-42 के सत्याग्रह द्वारा भी तत्कालीन भारतीय सरकार द्वारा किये जाने वाले अन्याय व अत्याचार का ही सत्य व अहिंसापूर्ण ढंग से विरोध किया गया था । इस प्रकार इन सब में तात्विक दृष्टि से कोई सुस्पष्ट भेद नहीं है, तथापि इनके विषय में यह कहा जा सकता है कि निष्क्रिय विरोध से असहयोग, असहयोग से सविनय अवज्ञा तथा सविनय अवज्ञा से विशुद्ध सत्याग्रह अधिकाधिक प्रभावशाली है और उन पर चलने के लिए उत्तरोत्तर अधिकाधिक संयम की साधना की आवश्यकता पड़ती है ।

सत्याग्रह की कुछ प्रविधियां निम्न प्रकार हैं:

1. असहयोग

प्रतिपक्षी से अपना निजी या सार्वजनिक सहयोग हटा लेना ही असहयोग है। यह सत्याग्रह का एक स्थूल साधन है, जिसका प्रयोग वहीं सम्भव है, जहाँ पहले सहयोग की स्थिति रही हो, जब हमें अनुभव होता है कि परपक्ष जो अन्याय कर सकता है, उसके मूल में हमारी शक्ति है, तब हमें चाहिए। कि हम अपना सहयोग उस पक्ष से हटा लें ।

गाँधीजी का विचार था कि अत्याचार एवं शोषण केवल तभी पनपता है, जब अज्ञान, भय अथवा निर्बलता के कारण लोग अपने पर किए जाने वाले अत्याचार या शोषण के प्रति इच्छा या अनिच्छा से सहयोग करते हैं । अत: उनका विश्वास था कि ऐसी स्थिति में यदि सब लोग अत्याचारी या अत्याचार पूर्ण प्रणाली से पूर्णतया सहयोग करना बन्द कर दें, तो अन्त में वह प्रणाली स्वत: समाप्त हो जाएगी । यह बात मनमानी करने वाले किसी व्यक्ति या किन्हीं व्यक्तियों, शोषक समुदायों या समूहों तथा सरकारों सम्बन्ध में भी लागू की जा सकती है । असहयोग के कई सहयोगी उपाय है यथा:

(क) बहिष्कार :- जिस प्रकार कलंकित या भ्रष्ट व्यक्तियों का समाज द्वारा बहिष्कार किया जाता है उसी प्रकार अवांछनीय शासन, सरकारी सेवाओं, उत्सवों, वस्तुओं आदि के प्रयोग का बहिष्कार करना असहयोग का एक साधन है । बहिष्कारात्मक असहयोग का प्रयोग ऐसे व्यक्तियों अथवा ऐसी संस्थाओं के विरूद्ध अधिक प्रभावी सिद्ध होता है । जो जनमत की अवहेलना करते हुए मनमानी करते हैं, स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान सन् 1920 में गाँधीजी ने स्कूलों, कॉलेजों, सरकारी नौकरियों, अदालतों, चिकित्सालयों तथा वाहनों आदि के बहिष्कार करने का कार्यक्रम चलाया था ।

(ख) धरना :- धरना असहयोग किसी व्यवसायी, सरकार या व्यक्ति के विरूद्ध प्रयोग में लाया जा सकता है तथा उसका उद्देश्य अनैतिक व्यापार तथा अनुचित सरकारी आदेश को रोकना हो सकता है । गाँधीजी ने असहयोग आन्दोलन के दौरान विदेशी वस्त्रों, शराब आदि के व्यापार को रोकने हेतु धरना असहयोग का प्रयोग किया था।

इसमें यह स्मरणीय है कि धरना किसी पर दबाव डालने के लिए नहीं करना चाहिए । वरन् उसे प्रभावित करने के लिए किया जाना चाहिए । धरना केवल समझाने-बुझाने के रूप में होना चाहिए । किसी एक स्थान पर बैठकर आने-जाने वालों को रोककर या घेराव के रूप में धरने को गाँधीजी निन्दनीय समझते थे । धमकी, विपक्षी के पुतले जलाना या भूख हड़ताल आदि जैसे कार्य गाँधीवादी धरने के अन्तर्गत नहीं आते । धरना आत्मबल व अहिंसा पर आधारित होना चाहिए ।

(ग) हड़ताल :- काम बन्द करने का साधारणत: हड़ताल कहते हैं पर इसका उद्देश्य काम कराने वाले को किसी प्रकार की हानि पहुँचाना नहीं होता, वरन् इसका उद्देश्य उसके मस्तिष्क को इस प्रकार प्रभावित करना होता है कि वह अपनी नीति व कार्यो का अनौचित्य समझा सके । गाँधीजी के अनुसार (1) हड़ताल जल्दी-जल्दी नहीं की जानी चाहिए अन्यथा यह निष्प्रभावी हो जाती है । (2) हड़ताल पूर्णत: स्वेच्छापूर्ण तथा सौहार्दपूर्ण वातावरण में होनी चाहिए और वह पूर्णत: अहिंसात्मक होनी चाहिए । हड़ताल

असहयोग की अन्तिम एवं तीव्रतम स्थिति है । अत: इसका प्रयोग तभी किया जाना चाहिए, जब अन्य सभी असहयोग के ढंग निकल सिद्ध हो जाये ।

2. सविनय अवज्ञा

सविनय अवज्ञा सत्याग्रह की उच्चतर सीढ़ी है । गाँधीजी ने इसे सबसे अधिक प्रभावशाली एवं सशस्त्र क्रान्ति का रक्तहीन रूप' कहा है । अनैतिक कानूनों एवं आदेशों को समाप्त कराने का यह सबसे अधिक उत्कृष्ट ढंग है । इस सम्बन्ध में गॉधीजी ने 'सविनय' शब्द पर अधिक जोर दिया है और कहा है कि अवज्ञा किसी भी दशा में हिंसात्मक नहीं होनी चाहिए । गाँधीजी के अनुसार सविनय अवज्ञा विपक्षी के प्रति हृदय से आदर रखते हुए संयत ढंग से की जानी चाहिए । उसका प्रयोग उच्च उद्देश्यों की सिद्धि होनी चाहिए । वह ठोस सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए तथा उसके पीछे घृणा, रूात्रुता या स्वार्थ की भावना नहीं होनी चाहिए ।

सविनय अवज्ञा का अर्थ अन्यायपूर्ण कृत्य या कानून को आदरपूर्वक न मानना होता है । इसके लिए अवज्ञा हेतु कानूनों का चयन बहुत सावधानी से करना चाहिए । किस कानून की अवज्ञा किस सीमा तक करनी है, इसका निर्णय भी सत्याग्रही को न्याय- बुद्धि, आत्मबल व निष्ठा के आधार पर करना चाहिए । सन् व 1930- 1931 में गाँधी जी ने जो आन्दोलन चलाया था, उसे उन्होंनें सविनय अवज्ञा आन्दोलन ही कहा था ।

3. हिजरत

स्थायी निवास स्थान को छोड़कर अन्यत्र चले जाना हिजरत कहलाता है । गाँधीजी ने घर छोड़ने की सम्मति उन लोगों को दी थी, जो अपने स्थान पर आत्म सम्मान से न रह सकने के कारण दुःख अनुभव करते हों तथा जिनमें अन्य प्रकार के सत्याग्रह करने की शक्ति साहस व आत्मबल की कमी हो । गाँधीजी का विचार था कि उन लोगों को जो अहिंसापूर्ण ढंग से अपनी रक्षा नहीं कर सकते, हिजरत के उपाय का सहारा लेना चाहिए और उन्हें अन्यत्र चले जाना चाहिए। गाँधीजी ने 1928 में बारदोली के सत्यग्रहियों को 1939 में लम्बड़ी जूनागढ़ और बिट्ठलगढ़ बिट्ठलगढ़ के सत्याग्रहियों को तथा 1935 में केंथा के हरिजनों को भी अपना घर छोड़कर अन्यत्र जाने की सम्मति दी थी ।

4. उपवास

सत्याग्रह का सबसे शक्तिशाली रूप, जिसे गाँधीजी ने 'अग्निबाण' कहा था, अनशन या उपवास है। उपवास उनके अनुसार सत्याग्रह का एक अमोघ अस्त्र है जो कभी असफल नहीं होता । गाँधीजी के अनुसार अनशन को भूख हड़ताल नहीं समझा जाना चाहिए, क्योंकि उसका उद्देश्य विपक्षी पर एक प्रकार का दबाव डालना होता है, जबकि अनशन का उद्देश्य आत्मशुद्धि होता है । गाँधीजी का दावा है कि “शुद्ध अनशन, मस्तिष्क एवं आत्मा को शुद्ध करता है यह शरीर को कष्ट देकर आत्मा को बन्धनमुक्त करता है ।" गाँधीजी लिखते हैं कि 'अनशन प्रार्थना होती है या प्रार्थना की तैयारी, बशर्ते कि अनशन आध्यात्मिक हो अनशन टूटे हृदय की प्रार्थना होती है" गाँधीजी के प्रत्येक उपवास में तीव्र हृदय मंथन, ईश्वरापेण तथा दूसरों पर दबाव डालने के स्थान पर आत्म-प्रायश्चित का भाव रहता था ।

गाँधीजी की मान्यता थी कि ईश्वरीय प्रेरणा से किया गया अनशन ही उचित होता है । गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रह के अस्त्र का प्रयोग किसी नीति के रूप में अथवा काम चलाऊ ढंग से नहीं किया जाना चाहिए, वरन् इसका प्रयोग व्यक्ति द्वारा तभी किया जाना चाहिए जब ऐसा करने के लिए उसे ईश्वरीय प्रेरणा मिले तथा उनका मत था कि इस प्रकार किया गया अनशन कभी बेकार नहीं जाता । राजकोट अनशन के अवसर पर लिखते हुए गाँधीजी ने कहा था । 'मुझे आपने एक भी ऐसे अनशन का स्मरण नहीं, जो व्यर्थ रहा हो, यही नहीं, मुझे अपने सभी अनशनों में अमूल्य शान्ति एवं अनन्त आनन्द का अनुभव होता रहा है । मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूँ कि ईश्वर की प्रेरणा के बिना किया गया अनशन अपने को व्यर्थ में भूखों मारना है । जिसने मुझे अनशन करने की प्रेरणा दी, वह ही मुझे उसे सहन करने की शक्ति भी देगा । यदि परमात्मा चाहता हैं कि मैं कुछ और जीवित रहकर अपना मिशन पूरा करूं तो भले कोई अनशन चाहे वह कितना लम्बा क्यों न हो, मेरे शरीर का अन्त नहीं कर सकता ।"

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट होता है कि अनशन रूपी सत्याग्रह के लिए मनुष्य उच्चकोटि की पवित्रता आत्मविश्वास, संयम. नम्रता तथा ईश्वर मे अटल विश्वास होना आवश्यक है । जब इसका प्रयोग उचित रूप में उचित उद्देश्य के लिए होता है, तो वह पतित व्यक्ति में भी खलबली मचा देता है। ये ऐसा अहिंसात्मक दबाव होता है, जिससे दुष्टतम व क्रूरतम शक्तियां भी नतमस्तक हो जाती हैं, क्योंकि यह उन लोगों के हृदयों को स्पर्श कर उन्हें द्रवीभूत कर देता है । विशेष परिस्थितियों में गाँधीजी आमरण अनशन को भी सत्याग्रह का अंग मानते थे, पर वे ऐसे किसी उपवास के विरूद्ध थे, जो किसी खीझ, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष वश था किसी स्वार्थ की पूर्ति के लिए किया जाए । वे ऐसे अनशनों की कड़ी भर्त्सना करते थे।

अहिंसापूर्ण सत्याग्रह एवं विदेशी आक्रमण

गाँधीजी के अनुसार जो अहिंसक हैं, वे प्रत्याक्रमण के बारे में कभी नही सोचते । उनके मतानुसार आक्रमणकारियों के विरूद्ध भी प्रतिरोध अहिंसात्मक होना चाहिए जो दो प्रकार से हो सकता है

(1) अहिंसा में विश्वास करने वाली जनता को चाहिए कि वह प्रत्याक्रमण की बात कभी न सोचे । इसके परिणामस्वरूप आक्रमणकारी देश में आ सकते हैं । पर उसके बाद उन्हें देशवासियों द्वारा किसी भी प्रकार का सहयोग नहीं दिया जाना चाहिए । सहयोग के अभाव में आक्रामक स्वत: लौट जाएंगे ।

(2) अहिंसात्मक ढंग के कार्य करने में शिक्षित जनता को आक्रमणकारियों के सम्मुख, उनकी तोपों के उन्मुख स्वयं को सहर्ष बलिदान हेतु प्रस्तुत कर देना चाहिए । आक्रमणकारियों का भी हृदय होता है । उन स्त्री पुरूष बच्चों की कभी न समाप्त होने वाली पंक्तियों का दृश्य जो आक्रमणकारी के समक्ष आत्मसमर्पण की अपेक्षा आत्मदान अधिक पसन्द करते हैं, अन्त में आक्रमणकारियों के कठोर-क्रूर हृदय को भी पिघला देगा।

3.6 सामाजिक विचार

अपने समकालीन समाज के दाषों की गाँधीजी ने आलोचना ही नहीं की अपितु एक वैकल्पिक व्यवस्था का भी प्रतिपादन किया । गाँधीजी के सामाजिक विचारों की विवेचना निम्नलिखित बिन्दुओं के आधर पर की जा सकती है :

जातीय भेदभाव का अनस्तित्व :

गाँधी जी की कल्पना के समाज में ऊँच-नीच तथा जाति-पांति पर आधारित भेदभाव नहीं होगा । उसमें न कोई अस्पृष्य है और न कोई सवर्ण । इस प्रसंग में उनका विचार था कि अस्पृश्यता भारतीय समाज का कलंक है और उनकी कल्पना के समाज में इसके लिए कोई स्थान नहीं हो सकता ।

धार्मिक सहिष्णुता :

गाँधीवादी समाज में सब धर्मो की स्थिति समानता की होगी विविध धर्मो के अनुयायी अपने-अपने धर्मो का पालन करने के लिए स्वतन्त्र होगें ।

वर्ण व्यवस्था :

गाँधीवादी समाज में वर्ण व्यवस्था मान्य होगी पर उसका आधार जाति न होकर कर्म होगा । ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र सब वर्ण अपना अपना कार्य वंश परम्परा से करेंगे, पर वर्ण के आधार पर लोगों के साथ कोई भेदभाव न किया जा सकेगा ।

स्त्री पुरूष का समान सम्मान :

गाँधीजी की कल्पना के समाज में स्त्री-पुरूष दोनों का सम्मान प्राप्त होगा और उनके अधिकार समान होंगे । पर स्त्रियों का कार्यक्षेत्र मुख्यत: गृहस्थी ही होगी।

गौवध निषेध :

गाँधीजी गो वंश की रक्षा को धार्मिक व आर्थिक दोनों दृष्टियों से आवश्यक मानते थे । इसलिए अपने आदर्श समाज में उन्होंनें गौवध का निषेध किया है ।

मद्‌य निषेध :

गाँधीजी का विचार था कि मादक पदार्थो का सेवन मनुष्य का चारित्रिक पतन करता है । अत: उनके अनुसार समाज में मादक वस्तुओं का न तो कोई उत्पादन होना चाहिए और न बिक्री ।

निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा :

गाँधीजी के अनुसार प्रत्येक बालक को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा देना समाज का कर्त्तव्य है इसके लिए उनका सुझाव था कि मौहल्ले-मौहल्ले व गाँव-गाँव में बुनियादी पाठशालाएँ हों, जो प्राथमिक शिक्षा सबको निःशुल्क दें ।

3.7 राजनीतिक विचार

जिस अर्थ में राजनीति का प्रयोग साधारणत: किया जाता है, उससे गाँधीजी को वस्तुत: कोई प्रयोजन नहीं था । गाँधीजी मूलत: धार्मिक व्यक्ति थे और उन्होंने राजनीति के क्षेत्र में जो कुछ किया. वह भी धार्मिक साधना के अन्तर्गत ही किया । भारतीय परम्परा के सन्त होने के

नाते वे भागवत् भक्त थे और मनुष्य जाति की सेवा को ही भगवान की सच्ची सेवा समझते थे । मनुष्य जाति की सेवा करने के लिए वे राजनीति के क्षेत्र में आये । उन्होंनें 'हरिजन' में लिखा था, "मेरे देशवासी मेरे सबसे निकट के पड़ोसी हैं । वे । इतने असहाय, निरूपाय व निर्जीव हो गए हैं कि मुझे उनकी सेवा में लग जाना आवश्यक है । यदि मै समझता कि भगवान मुझे हिमालय की कन्दरा में मिलेंगे, तो मैं तुरन्त वहां चला जाता । पर मैं जानता हूँ कि मानव समूह से पष्थक उन्हें मैं नहीं पा सकता।" इससे यह स्पष्ट है कि गाँधीजी ने मानव जाति सेवा को ईश्वर की प्राप्ति का एक साधन के रूप में ग्रहण किया और उन्होंनें राजनीति में भाग इसलिए लिया ताकि राजनीति के माध्यम से जन-सेवा करके वे ईश्वर की प्राप्ति कर सके । गाँधीजी की राजनीतिक सक्रियता वस्तुत: उनकी ईश्वर प्राप्ति की साधना का महत्वपूर्ण अंग था। उन्होंनें कहा था कि "मेरा उद्देश्य पूर्णत: धार्मिक रहा है । मैं यदि अपने अपने को मानव समाज से न मिला देता तो मैं धार्मिक जीवन व्यतीत नहीं कर सकता था और ऐसा मैं तब तक नहीं कर सकता था, जब तक मैं राजनीति में भाग न लेता।"

ईश्वर की प्राप्ति की साधना का अंग मात्र होने के कारण उनकी राजनीति वह राजनीति नहीं थी, जिसे साधारणत: राजनीति कहा जाता है । उनकी राजनीति छल कपटपूर्ण राजनीति मे होकर धर्म पर आधारित राजनीति थी । धर्म से पृथक के राजनीति को वे मृत्यु जाल मानते थे क्योंकि वह आत्मा का हनन करती है । उनके अनुसार, "वे लोग जो यह कहते हैं कि धर्म का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है, धर्म का अर्थ नहीं जानते।" इस प्रकार गाँधीजी छल, कपट व अस्वस्थ कूटनीति पर आधारित राजनीति के प्रचलित रूप को बुरा समझते थे और उसमें धर्म का समावेश कर उसे आध्यत्मिक बनाने के पक्षपाती थे।

राज्य के सम्बन्ध में गाँधीजी के विचार

गाँधीजी मूलत: अराजकतावादी है । गाँधी जी का मत है कि राज्य व राजकीय शक्ति की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि मनुष्य अपूर्ण है । यदि मानव जीवन इतना पूर्ण हो जाए कि वह स्वयं संचालित हो सके तो फिर राज्य व राजकीय शक्ति को समाज की कोई आवश्यकता न रहे । गाँधीजी के विचार के अनुसार ऐसी स्थिति होगी, क्योंकि उस दशा में एक ऐसी विवेकपूर्ण अराजकता स्थापित हो जायेगी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के हित साधन में बाधा न डालते हुए, स्वयं अपना शासक बन जायेगा गाँधीजी के मतानुसार वह समाज, जिसमें राज्य व राजनीतिक शक्ति का अभाव होगा और व्यक्तियों के सम्बन्ध सत्य व अहिंसा पर आधारित होंगे; आदर्श समाज होगा; क्योंकि ऐसी ही सामाजिक स्थिति में मनुष्य। वास्तविक रूप से स्वतन्त्रता होगा । गाँधीजी के अनुसार स्वतन्त्रता व समाज का अर्थ है व्यक्ति की बाह्य अर्थात् सरकारी नियन्त्रण से मुक्ति । उनका कहना था कि यदि व्यक्ति अधिकांश बातों के लिए राज्य व सरकार पर ही निर्भर रहा, तो वह वास्तविक स्वतन्त्रता व स्वराज नहीं हैं । उनके अनुसार आत्मनिर्भरता ही स्वतन्त्रता का मूल है । इस प्रकार गाँधीजी के अनुसार समाज की आदर्श दशा वहीं होगी, जिसमें व्यक्तियों के पारस्परिक सत्य व अहिंसा के आधार पर स्वयं संचालित होंगे ।

गाँधीजी केवल विचार जगत के व्यक्ति नहीं थे । वे जगत की वास्तविकताओं का सदा ध्यान रखते थे । इस सम्बन्ध में भी उन्हें आदर्श के साथ-साथ यर्थाथ का भी ध्यान रहता था । वे यह मानते थे कि वास्तविक मानव जीवन में पूर्ण अराजकता की व्यवस्था स्थापित होना सम्भव नहीं है । अत: व्यक्तिवादियों की तरह वे यह मानते थे कि एक आवश्यक बुराई के रूप मे राज्य व सरकार का बना रहना आवश्यक है: उन्होंनें कहा था कि "राज्य की शक्तियों में वृद्धि को मैं बड़ी आशंका से देखता हूँ । ऊपर से जान पड़ता है कि बढ़ती हुई राज्य की शक्ति शोषण को रोककर लोगों का भला कर रही है, पर वास्तव में इससे मानव जाति बड़ी हानि होती है । क्योंकि व्यक्ति का व्यक्तित्व, जो सभी प्रकार की उन्नति का मूल है, नष्ट हो जाता है। "व्यक्ति के व्यक्तित्त्व के पूर्ण विकास के लिए आवश्यक है कि वह अधिक से अधिक राज्य के नियन्त्रण से मुक्त हो ।

राज्य व्यक्ति-हित का साधन मात्र है :

गाँधीजी के अनुसार अपने वर्तमान रूप में राज्य केन्द्रीयकृत व संगठित हिंसा का प्रतीक है । जितनी अधिक शक्ति उसके हाथ में रहती है, वह व्यक्ति के स्वाभाविक विकास में उतना ही बाधक सिद्ध होता है । अत: यदि व्यक्ति को अपने स्वाभाविक विकास का अवसर मिलता है और उसके लिये वे परिस्थितियां सुलभ होती हैं, जिनमें वह जीवन के चरम उद्देश्य की प्राप्ति कर सके, तो यह आवश्यक है कि सामाजिक व्यवस्था प्रधानत: सत्य व अहिंसा पर आधारित हो तथा राजकीय शक्ति (जिसका आधार हिंसा है) का प्रयोग न्यूनतम हो । इस प्रकार महात्मा गाँधी की राज्य के स्वरूप की कल्पना उन सब कल्पनाओं से भिन्न है, जो किसी प्रकार व्यक्ति के नैतिक व्यक्तित्व व उसकी नैतिक शक्ति की तुलना में राज्य के व्यक्तित्व व उसकी शक्ति को अधिक महत्त्व देती हो । वे न तो राज्य के स्वरूप सम्बन्धी इस आदर्शवादी कल्पना में विश्वास करते हैं कि राज्य मनुष्य की सामाजिकता व उसकी नैतिकता का उत्कृष्टतम रूप है और न इस एकत्ववादी विचार के समर्थक हैं कि वह मनुष्य समाज की सर्वोत्तम सत्ताधारी संस्था है, उनके अनुसार राज्य की स्थिति व्यक्ति के जीवन के चरम उद्देश्य की प्राप्ति का एक साधन मात्र है ।

राज्य में शक्तियों का अत्यधिक केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए :

गाँधीजी के अनुसार राज्य में समाज की सब शक्तियों का केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए। क्योंकि शक्ति का जितना अधिक केन्द्रीकरण होता है, उतना ही उसका दुरूपयोग होता है । गाँधीजी की कल्पना के समाज में राज्य को राज्य को स्वयं पर्याप्त व स्वशासित ग्रामों की इकाइयों का संघ होना चाहिए और उसमें सत्ता का विकेन्द्रीकरण अधिक से अधिक होना चाहिए।

राज्य का उद्देश्य व कार्य सर्वोदय :

गाँधीजी के मतानुसार राज्य का उद्देश्य सर्वोदय अर्थात सभी की सर्वांगीण उन्नति है । उनके अनुसार वह किसी वर्ग विशेष के हितों का साधन नहीं हो सकता । गाँधीजी की कल्पना के राज्य में ऐसा कोई वर्ग नहीं होना चाहिए जिसे जीवन की आवश्यक वस्तुएं सुलभ न हों । इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने लिखा है, "मेरा स्वराज्य का स्वप्न गरीबों के स्वराज्य का है । उन्हें

भी जीवन की आवश्यक वस्तुएं उसी प्रकार प्राप्त होनी चाहिए । सुखी जीवन के लिए राजाओं जैसे वे धनिकों व राजाओं को होती है । पर इसका यह तात्पर्य नहीं है कि उनके लिए राजाओं जैसे महल होने चाहिए । सुखी जीवन के लिए महल आवश्यक नहीं है । मैं या आप उसमें रास्ता ही भूल जाएंगे, पर जीवन की साधारण सुविधाएं धनिकों की भांति ही सबको सुलभ नहीं होगी, तब तक स्वराज्य पूर्ण स्वराज्य नहीं हो सकता । "

शासन के विकेन्द्रीकरण पर आधारित स्वशासित ग्रामों का संघ:

राष्ट्र के स्तर पर गाँधीजी का आध्यात्मिक प्रजातन्त्र स्वयं पर्याप्त तथा स्वयं संचालित ग्रामों के एक ऐच्छिक संघ के रूप में होगा । अहिंसा तथा उसी से उत्पन्न अन्य सिद्धान्तों का पूर्णरूप से अनुकरण करने के कारण गाँवों का प्रत्येक नागरिक स्वयं अपना शासक होगा । वह इस प्रकार व्यवहार करेगा कि अपने पड़ोसी के लिए कभी बोझ न सिद्ध हो । इस प्रकार के ग्राम एक संघ या समूह का निर्माण करेंगे, जिनमें ऐच्छिक सहयोग ही शान्ति एवं सम्मानित जीवन की शर्त होगी । उसमें लोग अहिंसा के ऊंचे स्तर पर पहुँचे हुए होंगे और पूर्ण आत्म संयम के आधार पर सत्य का ज्ञान सत्य का ज्ञान रखते हुए सादगी और त्याग का जीवन व्यतीत करेंगे।

शक्ति व सत्ता का प्रभाव पंचायतों से संघ की ओर:

गाँधीजी का विश्वास था कि इस प्रकार के विकेन्द्रित शासन में जहां प्रत्येक ग्राम आत्मनिर्भर तथा स्वशासी होगा, शासन की आवश्यकता केवल उसी सीमा तक होगा, जिस सीमा तक उसकी आवश्यकता ऐसे व्यक्तियों की अवांछनीय हिंसात्मक प्रवृत्तियों को रोकने के लिए होगा, जो नैतिकता तथा आत्मनियन्त्रण के आवश्यक स्तर पर नहीं पहुँच सके हैं उक्त प्रकार की ग्रामीण इकाइयों को एक सूत्र में समन्वित करने हेतु गाँधीजी ने एक केन्द्रीय सत्ता के पास उनके मतानुसार आदेश देने व नियन्त्रण करने के अधिकार नहीं होंगे । शासन व शान्ति की मुख्य इकाइयाँ उक्त प्रकार के ग्रामों की ग्राम पंचायतें होगी । ग्राम पंचायतों की सत्ता केन्द्र से प्राप्त नहीं होगी, वरन् ग्राम पंचायतों से सत्ता ऊपर की ओर प्रभावित होगी । इस प्रकार के शासन का संचालन गाँधीजी के अनुसार पूर्णत: अहिंसात्मक ढंग से होगा तथा शक्ति की अपेक्षा वह अनुनय-विनय पर अधिक आधारित होगा।

गाँधीवादी पंचायती राज:

गाँधीजी ने अपनी विकेन्द्रीकरण की योजना में एक ऐसी पंचायती राज-व्यवस्था का निरूपण करने के प्रयास किया है । जिसकी शासन-व्यवस्था में शासन की मूल इकाई पंचायत होगी । ग्राम पंचायत का संगठन एक या कुछ गाँवों को मिलाकर जाएगा । पंचायत में पाँच व्यक्ति होंगे, जो गाँव की जनता द्वारा प्रत्यक्ष चुनावों से सर्वसम्मति द्वारा चने जाएंगे । ग्राम पंचायत को अपने श्रेष्ठ के सम्पूर्ण कार्य के सम्पादन का अन्तिम अधिकार होगा । इनमें ग्राम पंचायतों के प्रतिनिधियों के द्वारा चुनाव से निर्वाचित प्रतिनिधि होंगे! । इसी प्रकार प्रान्तीय व केन्द्रीय पंचायत का गठन किया जाएगा । यद्यपि गाँधीजी ने इनके संगठन व अधिकारों की कोई स्पष्ट रूपरेखा प्रस्तुत नहीं की।

3.8 अर्थ व्यवस्था

अंधाधुन औद्योगीकरण का विरोध व रोटी व श्रम की महत्ता

गाँधीजी आधुनिक जटिल आर्थिक व्यवस्था को मानवकल्याण की दृष्टि से उपयोगी नहीं समझते थे । वे मशीनों की सहायता से चलने वाले विशालकाय उद्योगों वाली अर्थव्यस्था के स्थान पर कुटीर उद्योगों पर आधारित अपेक्षाकृत सरल अर्थव्यस्था की ओर लौटने की बात कहते थे, जिससे मानव शक्ति का उपयोग आधिकाधिक हो । गाँधीजी का मत था कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका के लिए कुछ न कुछ शारीरिक परिश्रम करना अवश्य करना चाहिए । गाँधीजी इस प्रकार के परिश्रम को 'रोटी के श्रम' की संज्ञा देते थे और कहते थे कि बिना रोटी का श्रम किए जो लोग अपना पेट भरते है, वे चोर-समान हैं । गांधीजी शारीरिक परिश्रम को प्रकृति का नियम मानते थे, क्योंकि इसके बिना मनुष्य को भूख ही नहीं लगती । वे लोग, जो शारीरिक परिश्रम नहीं करते और खेलकूद कसरत आदि जैसे उपायों द्वारा भूख उत्पन्न करते हैं, कृत्रिम व्यवस्था का सहारा लेते हैं । उनका मानना था कि अपनी आवश्यकता की वस्तुओं के उत्पादन के लिए व्यक्ति नित्य-प्रति कुछ न कुछ शारीरिक श्रम अवश्य करें, अन्यथा वह पेट भरने का अधिकारी नहीं है ।

बौद्धिक श्रम गाँधीजी के अनुसार व्यक्ति को भोजन पाने का अधिकारी नहीं बनाता । वह केवल बुद्धि की भूख पूरी करता है । शरीर की भूख पूरी करने के लिए शारीरिक परिश्रम करना आवश्यक है । बौद्धिक श्रम करने वालों के लिए तो गाँधीजी का कहना था कि उन्हें किसी वेतन या पारिश्रमिक की आशा ही नहीं करनी चाहिए । वरन् उन्हें अपना श्रम समाज के हित के लिए निःशुल्क करना चाहिए । गाँधीजी के मतानुसार आदर्श परिश्रम तो वही है, जो पृथ्वी में से कुछ उपजाने में लगे पर उन लोगों के लिए, जिन्हें नगर आदि में रहने के कारण इस प्रकार का श्रम करने की सुविधा नहीं है, गाँधी जी का कहना था कि वे लोग चरखा द्वारा सूत की कताई या अन्य किसी दस्तकारी द्वारा शारीरिक परिश्रम कर सकते हैं और पेट भरने के अधिकारी हो सकते हैं । शारीरिक परिश्रम गाँधीजी के अनुसार आर्थिक व स्वास्थ्य की दृष्टि से ही आवश्यक नहीं है, क्योंकि कठिन परिश्रम करने वालों को व्यर्थ की खुराफातें प्राय: नहीं सूझतीं।

उत्पादन में कुटीर उद्योग की प्रधानता

शारीरिक परिश्रम की इतनी उपयोगिता मानने वाले गाँधीजी के लिए यह स्वाभाविक था कि वे आधुनिक औद्योगिकता एवं मशीनों द्वारा बड़े पैमाने पर केन्द्रीभूत उत्पादन आदि को मनुष्य जाति क़े लिए एक अभिशाप माने । उनका मत था कि बड़े पैमाने पर उत्पादन की प्रणाली द्वारा ही संसार में व्यक्ति का व्यक्ति द्वारा व राष्ट्र का अन्य राष्ट्र द्वारा शोषण सम्भव हुआ है । भारत जैसे अधिक ही हानिकारक मानते थे । अत: उनका कहना था कि उत्पादन का विकेन्द्रीकरण होना चाहिए तथा जहाँ तक सम्भव हो, उत्पादन मनुष्यों के हस्तकौशल व पशुओं के श्रम द्वारा संचालित कुटीर उद्योगों के माध्यम से होना चाहिए। उत्पादन का उद्देश्य आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए, लाभार्जन नहीं। भारत जैसे देश के लिए तो कुटीर उद्योगों का प्रचलन वे अत्यन्त लाभकारी समझते थे, क्योंकि इसके द्वारा मनुष्य की वस्त्र सम्बन्धी एक मुख्य आवश्यकता की पूर्ति होती है और इससे करोड़ों लोग जीविका कमा सकते हैं । पर इसके अतिरिक्त आटे की पिसाई, चावल कूटना, गुड़ बनाना, मधुमक्खियों को पालना, तेल पेरना, रस्सी बाटना, टोकरियां बनाना, खिलौने व मिट्टी के बर्तन व ईट बनाना

आदि अनेक ऐसे कुटीर उद्योग हैं, जिन्हें मशीनों के आविष्कार के कारण लोग छोड़ते जा रहे हैं । अत: उनका विचार था कि यदि उन्हें प्रोत्साहित किया जाए, तो उत्पादन व बेकारी दोनो की समस्या सरलतापूर्वक हल हो सकती है । पर इससे यह नहीं समझा जाना चाहिए कि गाँधीजी मशीनों व मशीनों द्वारा संचालित बड़े-बड़े उद्योगों के पूर्णत: विरूद्ध थे या वे मशीनों का प्रयोग बिल्कुल बन्द कर देना चाहते थे, वे ऐसी मशीनों के प्रयोग को नहीं चाहते थे जो या विनाशकारी हो या शोषण को प्रोत्साहन देने वाली हों । उदाहरणार्थ तोप, बन्दूक, मशीनगन व बम आदि विनाशकारी हैं । इसलिए गाँधीजी का मत था कि वे सर्वथा त्याज्य हैं । इसी प्रकार बड़े-बड़े कारखानों में प्रयुक्त होने वाली वे मशीनें, जो श्रमिकों का शोषण करने में पूँजीपतियों की सहायता करती है त्याज्य है । पर रेल, जहाज, सिलाई मशीन, हल, चरखा, फावड़ा आदि जैसी मशीनों का प्रयोग विहित है, क्योंकि वे मनुष्य के लिए आवश्यकता की वस्तुओं का उत्पादन करने में सहायक होती हैं । यदि बड़े कारखानों का रखना आवश्यक ही हो, तो गाँधीजी का मत था कि वे राज्य द्वारा संचालित होने चाहिए, जिससे उनके द्वारा लाभ के लिए उत्पादन व शोषण न होने पाए । मशीनों के प्रयोग के विषय में उनका सिद्धान्त यह था कि जो मशीन सर्वसाधारण के हितसाधन में काम आती है । उसका प्रयोग विहित है । वे गृह उद्योगों में काम आने वाली मशीनों के प्रयोग व उनके सुधार के समर्थक थे, पर कहते थे कि "यान्त्रिक शक्ति से चलने वाली मशीनों का व्यवहार करके लाखों लोगों को बेकार कर देना मेरी दृष्टि में अपराध है।“

3.9 राष्ट्रवाद व अन्तर्राष्ट्रवाद पर गाँधीजी के विचार

गाँधीजी भारत के राष्ट्रपिता कहे जाते है । वे भारतीय राष्ट्रीयता के कर्णधार थे । पर उनकी राष्ट्रीयता संकुचित राष्ट्रीयता न थी । गाँधीजी सब प्राणियों को एक ही ईश्वर की सन्तान मानते थे । अत: उनके लिए यह स्वाभाविक था कि वे सब राष्ट्रों के मनुष्यों को भाई-भाई मानते । अत: गाँधीजी सदा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के सिद्धान्त पर चले और अपने राष्ट्रप्रेम को कभी संकुचित न होने दिया । उनका कहना था कि "भारत में उत्पन्न होने और उसकी संस्कृति का उत्तराधिकारी होने के कारण मैं भारत की सेवा सर्वोत्तम रूप से कर सकता हूँ । उसकी सेवा पर मेरा सर्वप्रथम अधिकार है। पर मेरी देश भक्ति संकुचित नहीं हैं। मैं किसी अन्य राष्ट्र को कोई हानि नहीं पहुंचाना चाहता। सबको सच्चा लाभ पहुँचाना चाहता हूँ । मेरे अनुसार भारतीय स्वतन्त्रता कभी भी संसार के भय के कारण नहीं बनेगी।"

गाँधीजी वस्तुत: एक सच्चे देशभक्त एवं राष्ट्रवादी थे । किन्तु उनके राष्ट्रवाद को तब तक ठीक से नहीं समझा जा सकता जब तक यह ध्यान न रखा जाय कि मूलत: वे एक ऐसे अन्तर्राष्ट्रवादी थे जो सम्पूर्ण विश्व की आध्यात्मिक एकता में विश्वास रखते थे । उन्होंनें एक फ्रांसीसी के पत्र में कहा था - “मेरी राष्ट्रीयता गहरी अन्तर्राष्ट्रीयता है।“

गाँधीजी देश की स्वतन्त्रता चाहते थे एवं इसके लिए उन्होंनें प्रयास भी किए । किन्तु उनके ये प्रयास संकुचित या देशी दायरे तक सीमित नहीं थे । वे अपने देश की स्वतन्त्रता भी इसलिए चाहते थे कि विश्व के अन्य देश भी स्वतन्त्र भारत से कुछ सीख सकें तथा स्वतन्त्र भारत के साधनों का उपयोग मानवता के लिए किया जा सके । गाँधीजी का विचार था कि

"जिस प्रकार देश भक्ति की भावना हमें यह सिखाती है कि व्यक्ति जिले के लिए, जिला प्रान्त के लिए और प्रान्त देश के लिए न्यौछावर हो जाए उसी प्रकार देश को आवश्यकता पड़ने पर विश्व की भलाई के लिए न्यौछावर-होने के लिए तैयार होना चाहिए।

गाँधीजी का विचार था कि राष्ट्रवाद कभी भी बुराई नहीं होती वरन् बुराई होती संकुचित भावना जिसमें अधिकांश आधुनिक राष्ट्र त्रस्त हैं । गाँधीजी का राष्ट्रवाद सेवा एवं आत्म बलिदान के आधारों पर अवस्थित था। अत: उससे अन्य किसी राष्ट्र को कोई भय नहीं हो सकता था । जहाँ सहयोग, निर्माण एवं मानवतावाद राष्ट्रीयता के मूल सिद्धान्त हो, वहां राष्ट्रवाद एक विश्व एवं विश्व सरकार का निर्माण ही हो सकता है । क्योंकि ऐसा राष्ट्रवाद मानवतावादी होगा और उसमें प्रजातिवाद का कोई स्थान नहीं होगा।

गाँधीजी का यह दृढ़ विश्वास था कि "राष्ट्रवादी हुए बिना अन्तर्राष्ट्रवादी होना पूर्णत: असम्भव है । अन्तर्राष्ट्रवाद तभी सम्भव हो सकता है, जबकि राष्ट्रवाद एक यर्थाथ बन जाय, विभिन्न देशों के लोग संगठित होकर एक हो जाएं और एक व्यक्ति के रूप में काम करने लगें।"

गाँधीजी का सुझाव इस सम्बन्ध में यह था कि विश्व के स्वतन्त्र राष्ट्रों के आधार पर विश्व सरकार बनाई जानी चाहिए, जिसमें सहयोगी राष्ट्रों के प्रतिनिधि शासक के रूप में करें। उनका विचार था कि ऐसी सरकार सत्य एवं अहिंसा पर आधारित होनी चाहिए तथा भारत को इसकी स्थापना के लिए अपने प्रयास करने चाहिए । गाँधीजी ने एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय अहिंसक सेना की स्थापना पर भी बल दिया था, जो सैनिक रूप से संगठित न हो, पर जो सुधारक पुलिस के रूप में कार्य करे।

3.10 गाँधीजी के दर्शन के विभिन्न पक्ष

गाँधीजी के दर्शन के विभिन्न पक्ष में जो कुछ कहा जा सकता है, उसे निम्न प्रकार रखा जा सकता है:

गाँधीजी ने विश्व में नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना की:

महात्मा गाँधी जिस समय सार्वजनिक क्षेत्र में आये उस समय देश व विश्व का सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक वातावरण दूषित था । व्यक्तिगत जीवन में तो अनैतिक साधनों का प्रयोग खुले और व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता था । नैतिकता के नियम केवल व्यक्तिगत जीवन के नियम हैं, अधिक से अधिक लोग केवल इसे मानने को तो तैयार थे, परन्तु सार्वजनिक जीवन को वे नैतिक नियमों से परे समझते थे । गाँधीजी ने अपने विचारों व कार्यो से संसार को यह बताया कि नैतिकता का प्रयोग व्यक्तिगत जीवन में ही नहीं सार्वजनिक जीवन में भी अच्छे परिणामों के साथ किया जा सकता है । उन्होंनें इस बात से विश्व को अवगत कराया और यह करके दिखाया कि कोई भी कार्य ऐसा नहीं है, जो अच्छे साधनों से सिद्ध न किया जा सके। अच्छे साध्य के लिए यदि बुरा साधन अपनाया जाय, तो साध्य भी अच्छा नहीं रहता । अत: किसी अच्छे साध्य की सिद्धि के लिए आवश्यक है कि साधन भी अच्छा हो । इस सम्बन्ध में गाँधीजी ने विश्व के समक्ष यह महत्वपूर्ण तथ्य रखा कि 'साधन बीज और साध्य वृक्ष होता है । अत: जो सम्बन्ध बीच और वृक्ष में होता है । वही सम्बन्ध

साधन और साध्य में होता है । किसी भी शैतान की उपासना करके ईश्वर की उपासना का फल प्राप्त नहीं कर सकता।"

गाँधीजी ने राजनीति का आध्यात्मीकरण किया :

गाँधीजी से पहले राजनीति के क्षेत्र में मैकियावलीवाद का बोलबाला था । बस क्षेत्र में प्रचालित मान्यता यह थी कि अच्छे या बुरे जिस भी साधन से साध्य की सिद्धि हो जाए, वही साधन अच्छा है । साध्य से ही साधन का औचित्य होता है, यह राजनीतिक क्रिया-कलाप का आधार माना जाता था। पर गाँधीजी ने इसका सक्रिय खण्डन किया और यह बताया कि जीवन के सभी क्षेत्रों में जिसमें राजनीति का क्षेत्र भी सम्मिलित है, साधनों की पवित्रता बरती जानी चाहिए । उन्होंनें यह केवल कहा ही नहीं, करके भी दिखाया और अपने द्वारा निर्धारित राजनीतिक उद्देश्यों की सिद्धि सत्य व अहिंसा जैसे नैतिक साधनों से दिखाई, यद्यपि कुछ उद्देश्यों की सिद्धि में वे असफल रहे, कई बार उनका सत्याग्रह वांछित उद्देश्य को सिद्धि न सका तथा विपक्षियों का हृदय परिवर्तन न हो सका। तथापि यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय, तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि सत्याग्रह की वे असफलताएं केवल अस्थायी असफलताएं ही थी, क्योंकि गाँधीजी द्वारा संचालित भारत के स्वाधीनता संग्राम का अन्त जिस प्रकार हुआ, उससे यह पूर्णतया सिद्ध हो जाता है कि सत्य के लिए अहिंसा-पूर्वक आग्रह से निर्दयी से निर्दयी प्रतिपक्ष पर विजय प्राप्त की जाती है और बड़ी से बड़ी राजनीतिक समस्या का समाधान निकल सकता है।

गाँधीजी ने धर्म का लौकिकीकरण किया :

धर्म का लौकिकीकरण भी गाँधीजी की एक महत्वपूर्ण देन है । गाँधीजी ने धर्म के प्रचलन के सम्बन्ध में इस दोषपूर्ण स्थिति को देखा कि धर्म का सम्बन्ध लोग केवल परलोक सुधार से ही समझते हैं तथा धर्म के तथाकथित संरक्षकों ने उसके अर्थ ऐसे प्रचारित कर रखे हैं, जो धर्मान्धता से पूर्ण तथा ऐसे हैं, जो सत्य की कसौटी पर खरे नहीं उतर सकते तथा उन पर चलने से व्यक्ति का कल्याण नहीं हो सकता । अत: गाँधीजी ने धर्म के ऐसे रूढ़िवादी रूप का विरोध किया तथा धर्मान्धता के विरूद्ध लोगों को शिक्षित किया । उन्होंनें इस महत्वपूर्ण तथ्य को लोगों के सामने रखा कि धर्म केवल परलोक सुधार की वस्तु नहीं है, वरन् वह इस लोक में व्यवहार मे लाने की वस्तु है तथा उस पर चलकर ही व्यक्ति का इहलौकिक व पारलौकिक दोनों प्रकार का कल्याण हो सकता है। धर्म के नाम पर जो कुछ भी कहा जाय उसकी पालना अविवेकी तरह नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंनें स्वयं कहा था कि 'हिन्दू धर्म ग्रन्थों में विश्वासी होने के कारण मेरे लिए यह आवश्यक नहीं कि मैं उसके प्रत्येक शब्द व प्रत्येक वाक्य को ईश्वर प्रेरित समझूं । चाहे कितना ही विद्वतापूर्ण क्यों न हो, मैं उनके ऐसे किसी भी अर्थ में अपने को बंधा हुआ नहीं मान सकता जो विवेक नैतिक भावना के विरूद्ध हो।"

इसी प्रकार गाँधीजी ने धर्म को व्यापक व व्यावहारिक बनाकर उसे सांसारिक बनाया तथा यही कारण है कि गाँधीजी ने राजनीति का आध्यात्मीकरण तथा धर्म का लौकिकीकरण किया तथा जैसा डी. राधाकृष्ण ने कहा है, "उस नैतिक व आध्यत्मिक क्रान्ति के महान देवता

के रूप में गाँधीजी सदा स्मरण किए जाएंगे, जिसके बिना इस पथभ्रष्ट विश्व को शान्ति प्राप्त नहीं हो सकती । "

गाँधीजी ने व्यक्ति की महत्ता एवं मानवीय शक्तियों के प्रति विश्वास को पुनर्जागृत किया:

विश्व के लिए गाँधीजी की एक अन्य देन यह है कि उन्होंनें व्यक्ति की महत्ता तथा शक्तियों के प्रति विश्वास पुन: जागृत किया। औद्योगीकरण के बाद से समाज व राज्य का जो रूप बना था, उसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व नगण्य हो गया था । पश्चिम की औद्योगिक सभ्यता ने जो आघात व्यक्ति के व्यक्तित्व को पहुँचाया है, उसके कारण मनुष्य विशाल व महाकाय सामाजिक व राजनीतिक यन्त्र का एक पुर्जा बनकर रह गया है। व्यक्ति के बारे में नकारात्मक सोच कि वह आसुरी अधिक व दैवीकीय कम है तथा उसके लिए क्या हितकर है, इसका निर्णय वह स्वयं नहीं कर सकता, ऐसे विचार व्यापक रूप से मान्य हो गए हैं । गाँधीजी ने इसके विपरीत यह अमूल्य विचार संसार को दिया कि व्यक्ति समाज व राज्य के लिए नहीं है वरन् समाज व राज्य व्यक्ति के लिए है । उसके व्यक्तित्व को उचित महत्व प्राप्त होने पर ही सच्चा लोकतन्त्र स्थापित हो सकता है तथा विश्व का कल्याण हो सकता हैं ।

गाँधीजी ने राजनीतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता का भी प्रतिपादन किया:

गाँधीजी की एक अन्य महत्त्वपूर्ण देन यह है कि उन्होंने राजनीतिक स्वतन्त्रता का भी प्रतिपादन किया । उन्होंनें विश्व को यह विचार दिया कि सामाजिक व आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं है । इसी प्रसंग में उन्होंने उत्पादन के सिलसिले में 'रोटी का श्रम' के उस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जिसे आर्थिक स्वतन्त्रता के प्रबल समर्थक साम्यवाद की इस मान्यता का ही एक रूपान्तरण कहा जा सकता है कि 'जो काम नहीं करेगा वह खाएगा भी नहीं' तथा वितरण के सिलसिले में उन्होंनें अपरिग्रह व प्रन्यास के ऐसे सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जिन पर यदि मनुष्य ईमानदारी से चल सके, तो सम्पत्ति के वितरण की समस्या का समाधान बिना किसी पारस्परिक कटुता के हो सकता है ।

3.11 सारांश

गाँधीजी के चिन्तन की एक सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि वे साधन की पवित्रता पर बल देते हैं। महात्मा गाँधी के शब्दों में, 'यदि साधन अपवित्र है, तो पवित्र से पवित्र साध्य को भी सिद्ध नहीं किया जा सकता।'' गाँधीवाद के इस सिद्धान्त को ही स्वीकार कर लिया जाय तो इतना निश्चित है कि विश्व का अधिकांश समस्याओं का समाधान हो सकता है । आज के आणविक युग में यदि व्यक्ति जीवित रहना चाहता है तो उसे शस्त्रीकरण की दौड़ समाप्त करके सत्य, प्रेम और अहिंसा के सिद्धान्तों को अपनाना होगा, अन्यथा तृतीय विश्व युद्ध की विभीषिका से न बचा जा सकेगा। यदि राजनीति व्यवहार नैतिक सिद्धान्तों की पवित्रता पर आधारित हो, तो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व की अनेक समस्याओं का समाधान सरलता से हो सकता है । अत: श्रीमन नारायन के शब्दों में यह कहा जा सकता है "आज के मानव के दु:खों को दूर करने वाली एकमात्र रामबाण औषधि गाँधीवाद है ।''

3.12 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधीजी के जीवन पर एक लेख लिखिए ।
2. गाँधीजी के दार्शनिक विचारों की सेक्षेप में विवेचना कीजिए।
3. सत्याग्रह सम्बन्धी गाँधीजी के विचारों का परीक्षण कीजिए ।
4. चिन्तन के क्षेत्र में महात्मा गाँधी के योगदान की विवेचना कीजिए ।

3.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गाँधी, एम. के. सत्य के साथ प्रयोग अथवा आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008
2. सिंह, रामजी गाँधी दर्शन मीमांसा, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1986
3. धवन, गोपी नाथ, दी पोलिटिकल फिलोसोफी ऑफ महात्मा गाँधी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1990
4. शंकधीर, एम.एम., अण्डरस्टेंडिन्ग गाँधी टुडे, दीप एण्ड दीप पब्लिशिंग, नई दिल्ली, 1998
5. अययर, राघवन, द मोरल एण्ड पोलिटीकल थॉट ऑफ महात्मा गाँधी, ओ.यू.पी., दिल्ली, 1973
6. कुमार, रविन्द्र गाँधीवादी दर्शन, नया विश्व नए पड़ाव कल्याण पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2008
7. रविन्द्र कुमार, महात्मा गाँधी और अहिंसा, कल्याण पब्लिकेशंस, दिल्ली, 1981

इकाई - 4

दक्षिणी अफ्रीका में महात्मा गाँधी (1893-1906)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 दक्षिण अफ्रीका की अवस्था
4.3 दक्षिण अफ्रीका की तत्कालीन परिस्थितियाँ
4.4 गाँधी के जीवन का बदलाव बिन्दु
4.5 वास्तविक संघर्ष
4.6 द नाटाल इण्डियन काँग्रेस का निर्माण
4.7 तीन पौंड कर के विरूद्ध संघर्ष: सफल कदम की शुरूआत
4.8 1896 में स्वदेश वापसी
4.9 हरा पर्चा (ग्रीन पम्फलेट)
4.10 तूफान का प्रभाव
4.11 बोअर युद्ध (1899-1902)
4.12 एक बार पुन: भारत आगमन
4.13 भारतीयों के लिए और अधिक मुश्किलें
4.14 साप्ताहिक समाचार पत्र 'इण्डियन ओपीनियन' का जन्म
4.15 ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा
4.16 सत्याग्रह का जन्म
4.17 फीनिक्स बस्ती (उपनिवेश)
4.18 सारांश
4.19 अभ्यास प्रश्न
4.20 संदर्भ ग्रंथ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप निम्नांकित जान सकेंगे-

- गाँधी दक्षिण अफ्रीका क्यों गयें ?
- दक्षिण अफ्रीका में नस्लभेद के विरूद्ध संघर्ष के विभिन्न पहलु
- उन परिस्थितियाँ को जिनमें सत्याग्रह का जन्म हु आ, तथा
- दक्षिण अफ्रीकी सत्याग्रह की उपलब्धियाँ ।

4.1 प्रस्तावना

इंग्लैण्ड में अपनी कानून की पढाई पूर्ण करने के बाद 1891 में गाँधी स्वदेश लौट आये । उनका 1891 से 1893 के मध्य का काल भ्रम और बैचेनी भरा रहा क्यों कि वे स्वयं को अदालत में सुस्थापित कर नहीं पाए थे । नवीन परिस्थितियों से वे स्वयं का तालमेल बनाने

में कठिनाई महसूस कर रहे थे । ऐसे में, दक्षिण अफ्रीका जाकर के दादा अब्दुल्ला को कानूनी परेशानियों में सहायता का प्रस्ताव उनके लिये एक अच्छी राहत बनी। आरंभ में वे केवल एक वर्ष के लिए दक्षिण अफ्रीका गये थे किन्तु उन्होंने वहाँ 20 वर्ष गुजारे जिसमें से 11 वर्ष नाटाल में व्यतीत हुए । ये उनके महात्मा के रूप में विकसित होने के वर्ष थे । पीटर मरिटजवर्ग ही वह स्थान था जहाँ वे प्रथम श्रेणी के डिब्बे से बाहर फेंके गये थे और काँग्रेस से नाटाल में भारतीयों की दुर्दशा के बारे में सजग हुए । वहाँ के चर्च स्ट्रीट माल में एक शानदार मूर्ति इस घटना की यादगार के रूप में है। वास्तव में, यह पीटर मरिट्जवर्ग ही था जहाँ से कि गाँधी ने उनकी निष्क्रिय प्रतिरोध, सरलता और सेवा का दर्शन आरंभ किया। उन्होंने 1904 में डरबन के बाहर फीनिक्स में एक आश्रम की स्थापना की और दक्षिणी अफ्रीकी युद्ध के दौरान उत्तरी नाटाल में स्ट्रैचर वाहक इनके सदस्य बने । सन् 1915 में उनकी पत्नी और बच्चों के साथ भारत वापसी से पूर्व वे दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीयों के जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला चुके थे।

4.2 दक्षिण अफ्रीका की अवस्था

जब गाँधी दक्षिण अफ्रीका गये तब वे एक लन्दन से लौटे युवा वकील मात्र थे जिन्हें मुकदमों से निपटने का कोई अनुभव नहीं था, तथापि वे वहाँ पर वकीलों की मदद करते थे । वहाँ पहुँचकर उन्होंने अनेक बार अपमान तथा अवहेलना (यंत्रणा) का सामना किया । उनके पास प्रथम श्रेणी का रेल यात्रा टिकट होने के बावजूद उने तृतीय श्रेणी के डिब्बे में चले जाने का कहा गया । जब उन्होंने मना किया तो उन्हें उनके सामान सहित ट्रेन से बाहर फेंक दिया गया । इसके अलावा और भी कई अवसरो पर उन्हें अपमान और अवमानना झेलनी पड़ी । चुपचाप इन अपमानजनक घटनाओं से दुःखी होते रहने का बजाय गाँधी के प्रतिरोध का और परिस्थितियों में सुधार का रास्ता चुना। इस तरह सत्याग्रह का जन्म हुआ।

4.3 दक्षिण अफ्रीका की तत्कालीन परिस्थितियाँ

उस समय दक्षिण अफ्रीका निम्न चार कॉलोनियों (उपनिवेशों) में विभाजित था -

1. नाटाल
2. ऑरेन्ज फ्री स्टेट, डच के अधीन
3. ट्रांसवाल, यह भी डच के अधीन था, और
4. केप कॉलोनी, ब्रिटिश के अधीन

भारतीय को हर स्तर पर भेदभाव का सामना करना पड़ता था । चाहे वह बस, रेल अथवा किसी भी परिवहन साधन में चढ़ना हो । यहाँ तक कि कुछ अवसरों पर, उन्हें घर से बाहर निकलने तक की मनाही थी, (कुछ विशेष सड़कों पर) वे प्रथम श्रेणी में कहीं भी यात्रा नहीं कर सकते थे और उन्हें 'कुली' और 'सामीज' के नाम से पुकारा जाता था । दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर उन्हें अनेक कठिनाइयों और परेशानियों से जुझना पडा और उनको बार बडें अपमान भी सहने पड़े किन्तु इन सबके उनके जीवन और कार्य शैली को बदल दिया।

4.4 गाँधी के जीवन का बदलाव बिन्दु

अनेक लोग पीटर मरिट्जवर्ग स्टेशन की घटना को गाँधी के एक सामान्य व्यक्ति से एक महान नेता में परिवर्तन का आरंभिक बिन्दु मानते है । गाँधी डरबन से प्रिटोरिया तक प्रथम श्रेणी रेलयात्रा टिकट लेकर सफर कर रहे थे, किन्तु जब प्रात: करीब 9 बजे रेल पीटर मरिट्जवर्ग, नाटाल की राजधानी पहुँची तो जिस डिब्बे में गाँधी यात्रा कर रहे थे उस में एक यात्री चढ़ा और नापसंदगी जाहिर की कि गाँधी एक 'काली' चमडीवाला था । वह बाहर गया तथा एक या दो अधिकारियों के साथ लौटा । गाँधी को हुक्म दिया गया कि वे प्रथम श्रेणी के डिब्बे से बाहर चले जाएँ और आगे बेन कम्पार्टमेन्ट में यात्रा करे । जब उन्होंने इस अन्यायपूर्ण आदेश का मानने से इन्कार कर दिया तो एक कान्स्टेबल (सिपाही) ने उन्हें उनके सामान सहित डिब्बे से बाहर धकेल दिया । रेल धुँआ उड़ाती हुई चली गई उन्हें पूरी रात अंधेरे प्रतीक्षालय में ठठुरता हुआ छोड़ गई ।

गाँधी के जीवन में यह भविष्य को गहराई से प्रभावित करने वाली एक और ऐतिहासिक घटना बनी । यही उन्हें अपने कर्तव्य का भाव हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि अगर संभव हो तो इस तरह के अन्याय को वे जड़ से उखाड़ फेकेंगे और इस प्रक्रिया में कष्ट भी सहेंगे ।

चार्ल्सटाउन में अभी एक और अपमान उनकी प्रतीक्षा मे था । वहाँ पहुंचने के बाद वे एक बग्घी (कोचवान द्वारा हॉकी जाने वाली घोड़ागाडी) मे जाहन्सबर्ग जाने के लिए रवाना हुए । यहाँ भी उन्हें अन्दर के बजाय बाहर कोचवान के पास बैठने को कहा गया । इसके बाद उन्हें पायदान पर बैठने को कहा गया । गाँधी के इन्कार करने पर उन्हें शारीरिक रूप से प्रताड़ित किया गया । कुछ समय पश्चात एक सहयात्री ने गाँधी को उस प्रहार से बचाया । यह दूसरा बड़ा अपमान था जिसने उनकी जीवन -दृष्टि को बदल दिया ।

4.5 वास्तविक संघर्ष

जिस मुकद्दमें के सिलसिले में गाँधी दक्षिण अफ्रीका गये थे वह शीघ्र ही पूरा हो गया । इसलिए वे वापस डरबन लौट गये और घर वापसी की तैयारी करने लगे । दादा अब्दुल्ला द्वारा गाँधी के सम्मान में आयोजित विदाई पार्टी में गाँधी को 'नाटाल' 'मरकरी' की एक प्रति देखने का अवसर प्राप्त हुआ जिसमें उन्होंने पाया कि नाटाल विधान सभा भारतीयों को मताधिकार से वंचित करने पर गंभीरता से विचार कर रही थी । उन्होंने उस रिपोर्ट को पढ़कर सुनाया और संभवत: उनके सामने आने वाली परिस्थितियों की यथा संभव अच्छी व्याख्या की । उन्होंने सलाह दी कि उनके अधिकारों पर इस आक्रमण का तीव्र प्रतिरोध करना चाहिए । सभी सहमत तो हुए किन्तु उन्होंने स्वत: इस संघर्ष के प्रति अपनी अक्षमता व्यक्त की और गाँधी से वहाँ कुछ और अधिक समय रूकने की इच्छा प्रकट की । उनके आग्रह के फलस्वरूप उन्होंने करीब एक माह और रूकने की सहमति दे दी ।

विदाई पार्टी शीघ्र ही कार्य समिति में रूपान्तरित हो गई । बड़ी संख्या में स्वयं सेवकों की सूची बन गई । भारतीयों ने इस बहुत कठोर बिल (विधेयक) के प्रति कोई विरोध प्रकट नहीं किया था, अत: मीटिंग में गाँधी ने स्थिति को विस्तार से समझाया । पहला काम उन्होंने स्पीकर को एक तार भेज कर विधेयक पर आगे बहस को स्थगित करने का अनुरोध करने का

किया । इसी प्रकार का एक तार उन्होंने प्रीमियर, सर जॉन रोबिन्सन और एक अन्य इ इस्कोम्बे को दादा अब्दुल्ला के मित्र के रूप में भिजवाया । स्पीकर ने त्वरित उत्तर की बहस को दो दिनों के लिए स्थगित कर दिया है । इसने उनके हृदयों के लिए स्थगित कर दिया है । इसने गाँधी और उनके समर्थको के प्रयासों के बावजूद विधेयक पारित हो गया।

इस घटना का वर्णन करने की पीछे निहित उद्देश्य यह है कि हालांकि उसका परिणाम अवश्यभावी था, किन्तु आन्दोलन ने समुदाय में नव जीवन व नये मायने फूंक दिये थे और इस आस्था के साथ लोटे कि समुदाय एक और अविभाज्य है और यह कि यह (उनका कर्तव्य है कि जैसे वे व्यापारिक अधिकारों के लिये लड़ते वैसे ही अपने राजनैतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना होगा । एक पखवाड़े के भीतर दस हजार से अधिक हस्ताक्षर एकत्र किये गये। पूरे प्रोविन्स से इतनी अधिक संख्या में हस्ताक्षर एकत्र करना कोई छोटा काम नहीं था, विशेषकर जब कि इस कार्य में लगे लोग नितान्त अनुभवहीन थे । अंततः याचिका दायर की गई । प्रचार और वितरण के लिए एक हजार प्रतियाँ छपाई गई । इस ने भारतीय जनता को पहली बार नाटाल की गंभीर व दयनीय स्थिति से परिचित कराया । उन्होंने इसकी प्रतियाँ सभी अखबारों और परिचित प्रकाशकों को भेजी।

अपने अग्रलेख में दी टाइम्स ऑफ इण्डिया अखबार ने भारतीयों की मांग का प्रबल समर्थन किया। इसकी प्रतियाँ जर्नल्स और प्रकाशकों को इंग्लैण्ड में भेजी गई जो विभिन्न टाइम्स ने भी उनके दावे का समर्थन किया और वे (भारतीय) उम्मीद करने लगे कि विधेयक 'वीटो' कर दिया जावेगा। इस स्थिति में, गॉधी के लिए नाटाल छोड़ना असंभव हो गया । उनके भारतीय मित्रों ने उन्हें चारों और से घेर लिया ओर........ उन्हें स्थाई रूप से यही रहने का आग्रह करने लगे । यद्यपि गाँधी ने अपनी कठिनाइयाँ बताई कि वे जनता के खर्च पर नहीं ठहरेगे । अतः उन्होंने यह महसूस किया कि उन्हें स्वतंत्र घर व्यवस्था करनी चाहिये । इसी क्रम में उन्होंने नाटाल के उच्चतम न्यायालय में एक वकील के रूप में प्रवेश हेतु आवेदन किया । दी नाटाल लॉ सोसाइटी ने उनके आवेदन का विरोध मात्र एक आधार पर किया कि कानून इस पर विचार नहीं करता कि एक 'काला' वकीलों की सूची में शामिल हो । प्रसिद्ध वकील स्व. इस्कॉम्बे जो कि एनोर्टी- जनरल थे और बाद में नाटाल के प्रीमियर बने, उनके परामर्शदाता थे । तात्कालीन प्रथा यह थी कि प्रमुख वकील इस तरह आवेदन निःशुल्क प्रस्तुत करते थे, मि. इस्कॉम्बे ने वैसा ही किया । वे गाँधी के वियोजकों के भी वरिष्ठ परार्मशदाता थे । सीनियर कोर्ट ने लॉ-सोसाइटी की आपत्ति को बदल दिया तथा गाँधी के आवेदन को स्वीकृति प्रदान कर दी । इस तरह ली सोसायटी के विरोध ने उन्हें ओर प्रमुख स्थिति में ला दिया । दूसरी और दक्षिण अफ्रीका के समाचार पत्रों ने लॉ-सोसायटी की खिल्ली उड़ाई और कुछ ने तो गाँधी को बधाई भी दी । परिणामतः अहिंसा की शक्ति परिणाम/ प्रदर्शित करने लगी और इसमें गाँधी का विश्वास मजबूत हुआ ।

4.6 द नाटाल इण्डियन काँग्रेस का निर्माण

मताधिकार से वंचित करने से संबंधित याचिका भेजना ही अपने आप में पर्याप्त नहीं था । लगातार आन्दोलन करना आवश्यक था, उपनिवेशों के स्टेट सेक्रेटरी पर प्रभाव उत्पन्न

करने हेतु। इस उद्देश्य लिए एक स्थाई संगठन का अस्तित्व में आना जरूरी माना गया । इसलिए गाँधी ने सेठ अब्दुला और अन्य मित्रों से मश्विरा किया और उन सभी ने अन्याय और शोषण का अहिंसक प्रतिरोध में विश्वास रखने वाले स्थाई प्रकृति के जन संगठन बनाने का निश्चय किया ।

इसी क्रम में. अपने तर्को को स्पष्टत: रखते हुए उन्होंने संगठन का नाम 'नाटाल इण्डियन काँग्रेस' रखा और 22 मई 1894 को 'नाटाल इण्डियन' काँग्रेस अस्तित्व में आई ।

4.7 तीन पौंड कर के विरूद्ध संघर्ष: सफल कदम की शुरूआत

सन् 1894 में नाटाल सरकार ने उपेक्षित भारतीयों पर 25 पौंड सालाना का कर लगाने का निर्णय किया । इस प्रस्ताव ने गाँधी को चकित कर दिया । उन्होंने इस मसले को काँग्रेस के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत किया जिसने तुरन्त आवश्यक विरोध करने का प्रस्ताव पारित कर दिया । इसमें गाँधी ने कर की उत्पत्ति की संक्षेप में व्याख्या की ।

उन्होंने अनेक लोगों के साथ इस कर के विरूद्ध आक्रामक अभियान चलाया । अगर नाटाल भारतीय काँग्रेस उस विषय पर चुप रहती तो वायसराय 25 पौंड का कर लाने का भी अनुमोदन कर देते है । 25 से 3 पौड की करों में कमी संभवतया केवल काँग्रेस के विरोध के कारण हुई । इसके अलावा यह भी संभव है कि काँग्रेस के विरोध के बिना ही अनुचित समझा और इसे 3 पौड तक घटा दिया । कुछ भी हो, यह भारतीय सरकार की ओर से विश्वास भंग था । भारत के कल्याण के ट्रस्टी के रूप में वायसरॉय को कभी इस तरह के अमानवीय कर का अनुमोदन नहीं करना चाहिए था । 25 से 3 पौंड कर घटाने को काँग्रेस एक बड़ी उपलब्धि के रूप में नहीं ले सकी । उन्हें अभी भी इस का मलाल था कि वे हाशिये पर पटक दिये भारतीयों के हितो की पूर्णत: रक्षा नहीं कर सके । हमेशा से उनका निश्चय था कि वे कर अदायगी से मुक्ति पायेगें किन्तु यह सपना 20 वर्ष बाद साकार हुआ । और जब यह साकार हुआ, तो यह न केवल नाटाल के भारतीयों के अपितु दक्षिण अफ्रीका के समस्त भारतीयों के परिश्रम से हुआ।

हालाँकि, अंत में सत्य की जीत हुई । भारतीयों के दुःख उस सत्य के अभिव्यक्ति थे । यह जीत नहीं होती अगर उनका अटूट विश्वास, विराट धैर्य और अविराम प्रयत्न न रहे होते । अगर समुदाय ने संघर्ष छोड दिया होता, अगर काँग्रेस ने अभियान बंद कर दिया होता और कर को अपरिहार्य मानकर समर्पण किया होता तो यह घृणास्पद, आरोपित वसूला कर अपेक्षित भारतीयों से आज तक भी वसूला गाँधी को अहिंसा के संघर्ष को जारी रखने हेतु अधिक सामर्थ्य प्रदान की।

4.8 1896 में स्वदेश वापसी

गाँधी ने नाटाल में अधिकतर राजनैतिक कार्यो को करते हुए करीब 2 वर्ष गुजारे । उन्होंने अनुभव किया कि अगर उन्हें दक्षिण अफ्रीका में रहने की अवधि बढ़ानी है तो उन्हें अपने परिवार का भारत से लाना होगा । इस वक्त तक उनकी प्रेक्टिस अच्छी तरह से जम चुकी थी और लोग उनकी उपस्थिति की जरूरत को महसूस करने लगे थे । स्वदेश वापसी का अन्य उद्देश्य भारत जाकर वहाँ कुछ सार्वजनिक कार्य करके जनमत को शिक्षित करना तथा

दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के प्रति रूचि उत्पन्न करना भी था । दक्षिण अफ्रीका के भारतीय नहीं चाहते है कि गाँधी भारत वापस जाएँ । फिर भी उन्होंने नरम कर गाँधी को वापस भारत जाने दिया किन्तु इस शर्त पर कि जब उनकी दक्षिण अफ्रीका में उपस्थिति जरूरी होगी वे वापस लौट आयेगे ।

गाँधी अपनी संक्षिप्त भारत-यात्रा के लिए 5 जून 1896 को दक्षिण अफ्रीका से रवाना हुए । भारत में उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीयों की दुर्दशा के बारे में जनमत का ध्यान आकर्षित किया। उनकी यात्रा के दौरान वे प्रसिद्ध भारतीय नेताओं से भी मिले। गाँधी ने गोखले को उनका मार्गदर्शक स्वीकार किया । वे अपने कार्य हेतु अनेक लोगों की सहानुभूति और प्रोत्साहन प्राप्त करने में विशेष सफल रहे ।

4.9 हरा पर्चा (ग्रीन पम्फलेट)

इलाहाबाद से वे बिना बम्बई रूके सीधे राजकोट गये और दक्षिण अफ्रीका की स्थिति के बारे में एक पर्चा लिखने की तैयारी में जुट गये पर्चे को लिखने और प्रकाशित कराने में करीब एक माह लग गया । इस पर हरा आवरण था और बाद में इस 'हरित पर्चे' के नाम से जाना गया । इसमें उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की निम्नतर तस्वीर खींच दी । पूर्व में वर्णित दो पर्चो की तुलना में इस पर्चे की भाषा अधिक संतुलित, मध्यम स्तर की उपयोग की गई थी । क्योंकि वे जानते थे कि दूरी से सुनी गई बाते जैसी के है, उसकी तुलना में बड़ी लगती हे । इसकी दस हजार प्रतियाँ छपाई गई और भारत में सभी अखबारों और हर पार्टी के नेताओं को भेजी गई । पायोनियर ने सबसे पहले इस पर सम्पादकीय लिखा । इस लेख का एक संक्षिप्त सार इंग्लैण्ड में रायटर को भेजा गया और उस संक्षिप्त सार का भी संक्षिप्त रूप रायटर के लन्दन ऑफिस द्वारा नाटाल तार द्वारा भेजा गया । यह तार छापे की तीन पंक्तियों में अधिक लम्बा नहीं था । वह भी गाँधी के शब्दों में नहीं था, वह लघु था, किन्तु नाटाल में भारतीयों को बढ़ा-चढ़ा कर कहा गया था । इन पर्चो को पोस्ट करने के लिये तैयार करना कोई छोटा काम न था । यह खर्चीला तो था ही, यदि पैक करने आदि के लिए वैतनिक सहायक रखा जाता । किन्तु उन्होंने एक सरल योजना काम में ली । उन्होंने अपने आस-पास के स्थानीय बच्चों को एकत्र किया और सुबह के दो घण्टे जब उन्हें स्कूल नहीं जाना हो, श्रमदान करने को कहा । बच्चे स्वेच्छा से तैयार हो गये । उन्होंने उनको आशीष देने का वादा किया और अपने उपयोग के लिए हुए, संग्रहित डाक टिकट इनाम के रूप में दिये । उन्होंने शीघ्र ही कार्य समाप्त कर लिया । यह उनका छोटे बच्चों को स्वयं सेवकों के रूप में लेने का पहला प्रयोग था ।

लेकिन इसी बीच, कलकत्ता में, उन्हें डरबन से पार्लियामेंट के आगामी सत्र की सूचना देने वाला एक तार मिला। दिसम्बर के आरंभ में दूसरी बार उन्होंने दक्षिण अफ्रीका की ओर पत्नी रूख किया, इस बार अपनी पत्नी दो बेटों और उनकी विधवा बहन के एक मात्र पुत्र के साथ एक अन्य स्टीम शिप (भाप चालित जलयान) नादेरी भी उसी समय डरबन के लिए समुद्री यात्रा पर रवाना हुआ । कम्पनी के एजेन्ट थे दादा अब्दुल्ला एण्ड कम्पनी । इन नावों में सवार यात्रियों की कुल संख्या करीब आठ सौ होगी, जिनमें से आधे ट्रान्सवाल के लिए अनुबंधित थे।

4.10 तूफान का प्रभाव

दोनों जहाज डरबन करीब 18 दिसम्बर को पहुंचे बगैर चिकित्सकीय जांच कराये किसी भी यात्री को दक्षिण अफ्रीका के किसी भी बंदरगाह पर उतरने की अनुमति नहीं दी गई । उस समय बम्बई में प्लेग फैल चुका था और इसलिए देरी करने के चिकित्सकीय कारण की वकालत की गई । किन्तु मुख्य कारण था रायटर के ऑफिस द्वारा भेजे गये 'हर पर्चे' का लिप्तरण । गौरे लोग प्रतिदिन डरावनी बैठके किया करते थे । वे हर प्रकार की धमकियाँ देते थे और समय-समय पर दादा अब्दुल्ला और कम्पनी तक को प्रलोभन देते थे । अगर दोनो जहाज वापस भेज दिये जाते तो वे क्षति पूर्ति के रूप में धन (हर्जाना) भी देने को तैयार थे । लेकिन दादा अब्दुल्ला और कम्पनी धमकियों से डरे हुए थे । वस्तुत: गाँधी वास्तविक निशाना थे और उनके खिलाफ दो आरोप थे -

1. जब वे भारत में थे तो उनकी नाटाल के गौरों की निंदा प्रस्ताव मे लिप्तता।
2. नाटाल में भारतीयों की भरमार कर देना, जिन्हें कि वे दो जहाज भरकर वहाँ बसने के लिये विशेषकर लाये थे ।

हालाँकि, स्थानीय पत्रकारों की मदद से वे दोनो जहाजों में सवार लोगो के विरुद्ध विरोध को शांत कर सके थे, गाँधी और उनके परिवार के सदस्यों को दक्षिण अफ्रीका में उतरने की अनुमति नहीं दी गई थी । लेकिन बाद में केवल उनको परिवार बिना गाँधी के, उतर पाया । गाँधी को अंधेरा होने के बाद उतरने को कहा गया ताकि श्वेत उनको किसी तरह से हानि नहीं पहुंचा सकें । अत एवं गाँधी, जहाज से उसी समय बाहर निकल आये और जब दोनो सड़क पर थे श्वेतों द्वारा बुरी तरह निर्दयतापूर्वक पीटे गये । उनका हर और ठोकरों से, सडे अण्डों से, पत्थरों व ईटों की वर्षा से स्वागत हुआ। पुलिस सुपरिटेंडेट की पत्नी, जो गाँधी को जानती थी, वहाँ से गुजरी । वास्तव में उसने उन्हें छुडाया । बाद में, पुलिस को मि. रूस्तमजी के घर ले गई जहाँ पुन: श्वेतो की भीड ने घर पर पत्थरों से हमला कर दिया । उस समय पुलिस सुपरिन्टेडेंट मि. अलेक्लेन्डर ने गाँधी को छद्मवेश में घर से निकल जाने की सलाह दी । इस तरह एक ही दिन उनको दो परस्पर विरोधी स्थितियों से सामना हुआ। लेकिन गाँधी ने विषम परिस्थितियों का सामना आत्म विश्वास से किया और दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के प्रति अन्याय, शोषण और भेदभाव को जड़ से उखाड़ने का निश्चय कर लिया । इसी तरह, दिसम्बर 1896 में उन्होंने बल पूर्वक कहा कि भारतीयों को हर उस कानून के पास होने का प्रतिरोध करना चाहिए जो उसकी उपनिवेश में प्रवेश करने की स्वतन्त्रता को प्रतिबंधित करता हो । 1896 तक वे पूरी तरह आश्वस्त हो चुके थे कि कानून दोषयुक्त हो सकता है और इस स्थिति में उनका प्रतिरोध जरूरी हैं । गाँधी ने कहा कि ब्रिटिश इण्डिया के बाहर भारतीयों की स्थिति और दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की "कानूनी अशक्तता" के मसले आवश्यक रूप से सुझाये जाएँ । अपने समर्थन हेतु गाँधी ने अपने भारतीय मित्रों को भारत में संवैधानिक आन्दोलन आरंभ करने की अपील की । उन्होंने दिनांक 15 मार्च 1897 को एक विशालकाय मेमोरियल का मसौदा तैयार किया जो मि. चेम्बरलैन, उपनिवेशों के लिए प्रिंसीपल सेक्रेटरी ऑफ,, स्टेट, लन्दन

को संबोधित था, और जो दक्षिण अफ्रीका सरकार की सामान्य नीति और भेदभावपूर्ण कानून को विरोध करते हुए था । 1896 और 1897 के बीच गाँधी ने नाटाल में कई बिलों के विरूद्ध प्रतिरोध अभियान आरंभ किया जैसे दी कवारेन्टाइन बिल (छूत की बीमारी वाले व्यक्ति को दूसरों से दूर रखने की अवधि का विधेयक) दी इमिग्रेशन रेरिट्रक्शन बिल (अप्रवास रोधी विधेयक) दी ट्रेड लाइसेंस बिल (व्यापार लाइसेंस बिल) और दी बिल रिलेटेड टू अनकान्वेन्टेड इडियन्स ।

वे तब डीलर्स लाईसेन्सिंग एक्ट जो नाटाल सरकार द्वारा 31 दिसम्बर 1898 को लाग किया गया था, की याचिका कार्यवाही में लग गये । उन्होंने एक सुस्पष्ट याचिका तैयार की जिसमें एक्ट के सही न्यायिक व्याख्या प्राप्त करने के उद्देश्य निहित थे । यचिकाकर्त्ताओं ने उन्हें उनके एवं अन्य अधिकारों से वंचित करने का विरोध किया ।

दिनांक 31 जुलाई, 1899 को संबोधित थी, गाँधी ने कहा कि डीलर्स लाइसेन्स एक्ट नं. 18,1897 में नाटाल सरकार वास्तव में "बुरी" "निरकुश" और अन-ब्रिटिश" थी और उसे "ब्रिटिश उपनिवेशो में नागरिकों के आरंभिक अधिकारों पर एक सम्पूर्ण अतिक्रमण" की संज्ञा दी।

जब गाँधी को भारत से लौटने पर उन पर हमला करने वालों पर मुकदमा चलाने के लिए कहा गया तो उन्होंने मना कर दिया और कहा कि उनका ध्यान यह आश्वस्त करने की और है कि भारतीय जो ब्रिटिश साम्राज्य का बड़ा भाग हैं वे अपने आत्म-सम्मान और अधिकारों की रक्षा करना चाहते है और किसी को भी चोट पहुंचाये बिना और यूरोपियन्स को तो सबसे आखिर में ।

इस प्रकार सत्याग्रह का मूल 1896 में देखा जा सकता है " हरे पर्चे" उन्होंने संकेत दिया था कि दक्षिण अफ्रीका में उनका तरीका "घृणा को प्रेम में जीतना" था । उन्होंने सत्याग्रह के अन्य आवश्यक पहलुओं जैसे-विरोधी को क्षमा करना, उसके प्रति स्नेह प्रगट करना, उनके हाथों हो रही बुराई को धैर्यपूर्वक सहन करना, आदि को विस्तार से कहा था । गाँधी आशावान थे कि अगर भारतीय इस अहिंसक तरीके से प्रयास करेंगे तो विजयी होंगे।

उनके ट्रान्सवाल सरकार के विरूद्ध साहसिक संघर्ष से बहुत पूर्व जो 1906 में हुआ था, गाँधी ने नकली घमण्ड के विरूद्ध याचिका दायर की, आन्दोलन किया और सुरक्षा की । उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों का संगठित किया और उन्हें एक व्यक्ति समूह में रूप खड़ा किया और उनकी समस्याओं के लिए संघर्ष किया। यह सर्वविदित है कि ये सारे विरोध प्रदर्शन और गतिविधियाँ अहिंसक और मानवीय तरीके से संचालित किए गये।

सत्याग्रह का उद्भव एक प्रतिनिधि मण्डल द्वारा 11 सितम्बर 1906 को जोहान्सवर्ग में ट्रान्सवाल के कानून के विरोध हेतु प्रार्थना से हुआ । इस समय तक उन्होंने "निष्क्रिय विरोध" पदबंध को छोड़ दिया था और अपने आन्दोलन को सत्याग्रह अहिंसा पर आधारित सत्य और प्रेम से उत्पन्न बल, कहा और जोर दिया कि नृशंस बल की भारतीय आन्दोलन में किसी भी सूरत में कोई जगह नहीं थी । गाँधी ने स्पष्ट कर दिया कि सत्याग्रह पूर्वाधारित योजना नहीं बल्कि स्वत: स्फूर्त और बिना इच्छा से आया था।

4.11 बोअर युद्ध (1899-1902)

बोअर (डच किसानों) और ब्रिटिश के मध्य दक्षिण अफ्रीका पर आधिपत्य के लिए अंतहीन-संघर्ष 1899 में बोअर युद्ध के रूप में सामने आया । बोअर युद्ध में गाँधी ने भारतीयों के बारे में 'कायरता' की बुरी धारणा को दुरुस्त करने का एक अवसर देखा । भारतीयों पर आरोप था कि वे दक्षिण अफ्रीका सिर्फ धन झपटने के लिए ही आये है तथा ब्रिटिश पर महज एक बोझ है । जैसे कृमि लकड़ी में रहकर उसे खाकर खोखला कर देते है दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों को समझा जाता था कि वे उन पर अपनी सेहत बना रहे है । अगर उनके घर पर आक्रमण होगें अथवा अगर उनके देश में घुसपैठ होगी तो उन्हें भारतीय जरा सी भी सहायता नहीं देगें । ऐसी स्थिति में ब्रिटिश को न केवल शत्रु के विरूद्ध स्वयं की सुरक्षा करनी होगी बल्कि उसी समय भारतीयों की भी सुरक्षा करनी होगी । गाँधी के लिए भारतीयों ने इस आरोप पर सावधानी पूर्वक विचार किया । सभी ने महसूस किया कि यह उनके लिए एक स्वर्णिम अवसर है कि ये आधारहीन है । अत: भारतीय समुदाय की और से गाँधी ने सहायता की पेशकश की । प्रथम दृष्टया (पहली बार) जो इसे अवमानना की तरह अस्वीकार कर दिया गया किन्तु बाद में ब्रिटिश के लिए हालात खराब होने लगे, गाँधी का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया और उन्होंने एक इण्डियन एबुलेन्स कॉर्पस संगठित की । सम्पूर्ण विचार गाँधी के अनुसार यह सिद्ध करना था कि क्वीन्स एम्सप्रेस के अन्य विषयों के साथ ही दक्षिण अफ्रीका में उसके भारतीय भी उनके कर्तव्य निर्वहन के लिए तैयार है- रणभूमि में स्वायत्ता की रक्षा। युद्ध की समाप्ति पर उन्हें और 36 स्वयं सेवकों को विजय में योगदान के पुरस्कार स्वरूप ब्रिटिश सरकार से उन्होंने एवं अन्य 36 स्वयं सेवकों ने 'युद्ध पदक' प्राप्त किए।

4.12 एक बार पुन: भारत आगमन

जब बोअर युद्ध समाप्त हो गया, गाँधी ने महसूस किया कि अब श्वेत भारतीयों के साथ थे और राजनीतिक परिदृश्य में भी परिवर्तन था और उन्होंने आशा की कि श्वेतों की नापसंदगी समय गुजरने के साथ विलीन होती जाएगी । अत: एव इस घटनाक्रम क बाद उन्होंने भारत लौटने का निश्चय किया । इसलिए उन्होंने दक्षिण अफ्रीका के लोगों से वापसी की अनुमति मांगी । उन्हें जाने की अनुमति मिल गई किन्तु पुन: उसी वादे के साथ कि जब भी उनकी सेवाओं की उन्हें जरूरत होगी उन्हें दक्षिण अफ्रीका जाना होगा । और उन्होंने उनकी शर्त पर दक्षिण अफ्रीका आना होगा । और उन्होंने उनकी शर्तें मान ली । उनके सम्मान में एक पार्टी का आयोजन किया गया । लेकिन इस पार्टी में उन्हें और उनके परिवार के सदस्यों को मूल्यवान उपहार दिये जो कि गाँधी के अनुसार उनके लिए उपयोगी नहीं थे । इसलिये उन्होंने उनको एक ट्रस्ट को देने अथवा वापस करने का निश्चय किया । चूंकि गाँधी इन सब वस्तुओं के पक्ष में नहीं थे, सर्वप्रथम उन्होंने अपने दो बेटों का मानस बदला फिर उनके माध्यम से उनकी पत्नी का। गाँधी ने समस्त वस्तुएँ लौटा दी और सब को बेच दिया और आभूषणों के विक्रय से एकत्रित धनराशि नाटाल इण्डियन काँग्रेस को सौंप दिया।

गाँधी 1901 के नवम्बर माह तक भारत लौटे, यह उनके लिए भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के कलकत्ता में निश्चित एक सत्र में प्रथम बार भाग लेने के लिए सही समय था । वे दक्षिण अफीका के भारतीयों के दावों के समर्थन में एक प्रस्ताव काँग्रेस द्वारा पारित करा सके । गोपाल कृष्ण गोखले गाँधी के समर्पण, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा और संयम से गहरे प्रभावित हुए उनके बीच एक मजबूत दोस्ती विकसित हुई । गाँधी ने बम्बई में जमने के लिए मुश्किल से एक मकान लिया और कानूनी प्रेक्टिस शुरू कर दी । दिसम्बर 1902 में उन्हें पुन: दक्षिण अफ्रीका बुला लिया गया क्योंकि मि. जोसेफ चैम्बरलेन सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर कॉलोनीज दक्षिण अफ्रीका की यात्रा पर आने वाले थे । गाँधी ने अपने परिवार को पीछे छोड कर केवल अपने कुटुम्ब से चार युवा सदस्यों को लेकर नाटाल कि लिए प्रस्थान किया । बाद में इन चार व्यक्तियों ने उनके जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की और संघर्षों को अहिंसक तरीके से सुलझाने में उनका सहयोग असाधारण रहा ।

4.13 भारतीयों के लिए और अधिक मुश्किलें

जब गाँधी दक्षिण अफ्रीका पहुँचे तो यह जान कर आश्चर्यचकित रह गये कि ट्रॉन्सवाल और ऑरेन्ज फ्री स्टेट के प्रभारी अधिकारी ने भारतीय क्रेताओं को जमीन के स्थानान्तरण के कानूनी दस्तावेज रजिस्टर करने के लिए इन्कार कर दिया था । यह निश्चय किया गया कि भारतीयों का प्रतिनिधि मण्डल मि. चैम्बरलेन की प्रतीक्षा करेगा और उन्हें इस दुःख स्थिति से अवगत करायेगा । प्रतिनिधि मण्डल को हालांकि कुछ भी हासिल नहीं हुआ क्योकि मि. चैम्बरलेन भारतीयों की सहायता करने में अपनी अक्षमता प्रगट की । बोअर युद्ध के बाद ट्रान्सवाल मे स्थितियाँ बहुत बदल गई थी । बिना परमिट के कोई व्यक्ति स्टेट में प्रविष्ट नहीं हो सकता था, यद्यपि यूरोपियन आसानी से परमिट पा सकते थे और किसी की मदद से गाँधी भी एक परमिट प्राप्त कर सके थे । उन्होंने अपने आपको ट्रॉन्सवाल सुप्रीम कोर्ट का एटार्नी के रूप में सदस्य बनाया और जोहन्सबर्ग में ऑफिस जमा लिया जो उनकी समस्त गतिविधियों को केन्द्र बना।

ट्रान्सवाल सरकार ने एक एशियाटिक विभाग आरंभ किया जो भारतीयों के मामले देखता था। इस विभाग के अनुसार अगर मजदूर मजदूर ही बने रहना चाहते थे तो यह ठीक था, लेकिन अगर वे श्वेतों के बराबर समानता चाहते थे तो वास्तविक समस्या उठ सकती थी । और गाँधी की नियति समानता के लिये संघर्ष करनी थी । यह एक लम्बा संघर्ष था जिसने गाँधी के निजी और राजनैतिक जीवन का पूर्ण रूपान्तरण कर दिया ओर नवीन मूल्यों की खोज और प्राप्ति की और ले गया ।

4.14 साप्ताहिक समाचार पत्र 'इण्डियन ओपीनियन' का जन्म

1904 में सार्जेन्ट मदनजीत ने ' द इण्डियन ओपीनियन' को आरंभ करने के प्रस्ताव के साथ सम्पर्क किया और उनकी सलाह चाही । वह पहले से ही प्रेस चला रहा था और गाँधी ने उसके प्रस्ताव का अनुमोदन कर दिया । अखबार 1904 में आरंभ हुआ और सार्जेन्ट मदनजीत इसके पहले सम्पादक बने । आरंभ में यह गुजराती हिन्दी, तमिल और अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ लेकिन बाद में तमिल और हिन्दी संस्करण रोक दिया गया । यह अखबार गाँधी

के लिए स्व-नियंत्रण का प्रशिक्षण था और मित्रों के लिए एक माध्यम जिसके द्वारा वे उनके विचारों के सम्पर्क में रहते थे । आलोचकों को इसमें आपत्ति कर सके, ऐसा बहुत थोडा सा मिला । वस्तुत: इण्डियन ओपीनियन की शैली ने आलोचकों को अपने पैन पर नियंत्रण रखने को विवश कर दिया । सत्याग्रह इण्डियन ओपीनियन के बिना संभवतया असंभव होगा । पाठकों ने इसे सत्याग्रह आन्दोलन और दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की वास्तविक स्थिति के विश्वसनीय विवरण की तरह से देखा । यह उनके लिए सारे पत्र व्यवहार को पढ़ना, आत्मसात करना और उत्तर देना एक सूक्ष्म शिक्षण था । यह समुदाय का श्रवणीय विचार था जो उनसे पत्राचार के माध्यम से हुआ था । इसने उन्हें एक पत्रकार की जिम्मेदारियों को पूर्णत: समझने और आगामी अभियान को क्रियाशील, गरिमामय और अप्ररोध्य बनाने और अपने समुदाय को आश्वस्त करने में मदद की । इण्डियन ओपीनियन की लोकप्रियता निम्नांकित तथ्यों पर आधारित थी ।यह एक खुली किताब थी हर किसी के लिए जो समुदाय की शक्ति और कमजोरी को मापना चाहता था चाहे वे मित्र हो शत्रु अथवा तटस्थ । यह भारतीय समुदाय के समकालीन इतिहास का एक विश्वस्त दर्पण था । यह ने केवल गाँधी अपितु सम्पूर्ण भारतीय समुदाय की आवाज था।

4.15 ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा

जब सत्याग्रह आरंभ होना था, 1906 के करीब, अंतिम निर्णय हो सका। गाँधी को इसके आगमन का कोई विचार नहीं था । वे जोहान्सबर्ग में प्रेक्टिस (वकालत) कर रहे थे, उस समय नाटाल में जलु 'विद्रोह' का समय था, जो कि बोअर युद्ध के तत्काल बाद आया था । उन्होंने महसूस किया कि इस अवसर पर उन्हें उनकी सेवाओं की नाटाल सरकार को पेशकश करनी चाहिये । उनकी पेशकश स्वीकार कर ली लेकिन उनके कार्य ने उन्हें स्व नियंत्रण की दिशा में गंभीरता पूर्वक सोचने में लगा रखा था ।

इसलिए उन्होंने जोहान्सबर्ग घर के सदस्यों को अलग-अलग कर दिया जिससे वे 'विद्रोह' के दौरान सेवा कर सकें । अपनी सेवाओं की पेशकश के एक माह के भीतर ही उन्हें घर छोडना पड़ा जिसे उन्होंने सावधानी से सजाया था । वे अपनी पत्नी और बच्चों को फीनिक्स ले गये और नाटाल की सेनाओं के साथ इण्डियन एम्बुलेन्स कार्य को जोड़ दिया । पूरी तरह विचार-विमर्श और परिपक्व चर्चा के बाद उन्होंने 1906 प्रतिज्ञा की । तब तक उन्होंने अपनी सोच को अपनी पत्नी से भी नहीं बांटा था उनसे केवल प्रतिज्ञा लेते समय सलाह ली थी । उन्हें कोई आपत्ति नहीं थी । गाँधी ने आहार संबंधी प्रयोगों का भी ध्यानपूर्वक अवलोकन किया और निष्कर्ष निकाला कि ब्रह्मचारी का भोजन सीमित, सादा मिर्च, मसाल रहित और अगर संभव हो तो कच्चा (बिना पकाया हुआ) होना चाहिए । उनके लिए ब्रह्मचर्य का मतलब भावनाओं का नियंत्रण शब्दों और कार्यो (कथनी और करनी) में भी होना चाहिये।

दिन-प्रतिदिन उन्होंने उपर कही बातों के नियंत्रण की अधिकाधिक आवश्यकता को समझा । उनके अनुसार बह्मचर्य अहिंसा का ध्यानपूर्वक निरीक्षण और उसका अभ्यास करने में इच्छाशक्ति को मजबूत बनाने में सहायक था।

4.16 सत्याग्रह का जन्म

जोहान्सबर्ग की कुछ घटनाएँ ऐसी थी जो अपने आप में गाँधी के इस स्व-शुद्धिकरण को आकार प्रदान करने वाली थी, जैसे कि सत्याग्रह को । वे यह नहीं देख सके थे कि उनके जीवन की समस्त मुख्य घटनाएँ ब्रहमचर्य की प्रतिज्ञा में समाहित हो रही थी और गुप्त रूप से उन्हें इसके लिए तैयार कर रही थी । सत्याग्रह कहलाने वाला सिद्धान्त उसके नाम के आविष्कार से पूर्व ही अस्तित्व में आ चुका था । वास्तव में इसके जन्म के बारे में वे स्वय नहीं कह सकते थे कि यह क्या होगा । 'निष्क्रिय प्रतिरोध' को वे 'सत्याग्रह' कहने लगे । जब उन्होंने पाया कि 'निष्क्रिय प्रतिरोध' कमजोर का हथियार माना जाता है, और घृणा इसका लक्षण है और अंतत: यह हिंसा में परिणित होता है, उन्होंने इन सभी कथनों को शांति करना स्थापित करने, भारतीय आन्दोलन की प्रकृति और अर्थ को स्पष्ट करने में प्रयुक्त करना पड़ा । यह स्पष्ट था कि नया शब्द भारतीयों द्वारा उनके संघर्ष को गरिमा देने के लिए गढ़ा जाना था । गाँधी तत्काल कोई नया नाम नहीं दे सके अत: इण्डियन ओपीनियन के द्वारा उस पाठक को एक नाम मात्र के इनाम की पेशकश की गई जो इस विषय में श्रेष्ठतम सुझाव दे । परिणामस्वरूप मगनलाल गाँधी ने 'सत्याग्रह' नाम दिया । जिसे बाद में गाँधी ने 'सत्याग्रह में परिवर्तित कर दिया।

4.17 फीनिक्स बस्ती (उपनिवेश)

जॉन रस्किन के 'अनटू दिस लास्ट' पढ़ने के बाद 1904 के नवम्बर-दिसम्बर में गाँधी ने एक बगीचा खरीदा था जिसमें संतरे, आम, अमरूद और शहतूत के पेड़ थे, केवल 2 या 3 एकड़ खेती के लिए थी । लगभग 80 एकड़ एवं बहुत उपजाऊ काली मिट्टी वाला यह जमीन गाँधीजी ने 1000 पाउण्ड में खरीदी थी और योजना को अमली जामा पहना रहे थे । बाद में गाँधी ने इसमें इण्डियन ओपीनियन प्रेस भी जोड़ दी । वस्तुत: इस आश्रम में हर व्यक्ति सरल जीवन जीता था और जॉन रस्किन की किताब के प्रारूप पर पूर्णत: आधारित था, अर्थात् स्वरोजगार और शारीरिक श्रम अहिंसा को प्रोत्साहित करना तथा इसे जीवन शैली में ढ़ालना । उनके स्व-अनुशासन के प्रयोग जारी थे । क्रमश: वे एक सामान्य मानव से एक महान नेता और एक महात्मा के रूप में प्रगति कर रहे थे ।

4.18 सारांश

सारांश में, यहाँ यह कहा जा सकता है कि गाँधी दक्षिण अफ्रीका एक वर्ष के लिये आये थे किन्तु उनकी नियति कुछ और (विशेष) ही थी । उन्होंने अपने जीवन के कीमती 21 साल दक्षिण अफ्रीका में व्यतीत किये । उनका वास्तव में महात्मा के रूप में निर्माण इस रणभूमि से हुआ और यहीं से उन्होंने सत्याग्रह की जादुई शक्ति की खोज की । दक्षिण अफ्रीका उनके लिए एक सजीव प्रयोगशाला थी जहाँ अहिंसक विरोध की उनकी तकनीक का प्रयोग और परिवर्तनों के साथ उसमें उत्तरोत्तर सुधार हुआ और दुनिया को दिखा दिया कि यह विवादों को सुलझाने का एक प्रभावी तरीका है।

4.19 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी दक्षिण अफ्रीका क्यों गये?
2. सत्याग्रह की परिभाषा दीजिये । इसके अर्थ और लक्षणों की विवेचना करो । किस तरह इसका दक्षिण अफ्रीका में जन्म और विकास हुआ?
3. दक्षिण अफ्रीका में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों और अखबारों के नामों की सूची और उनके उद्देश्य लिखिए ।
4. दक्षिण अफ्रीका में नस्ल भेदभाव के विरूद्ध गाँधी के संघर्ष पर लघु टिप्पणी लिखिए ।

4.20 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गाँधी, एम. के. सत्य के साथ प्रयोग अथवा आत्मकथा, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008
2. गाँधी, एम. के. सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अनु. वी.जी. देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972
3. नंदा, बी. आर. महात्मा गाँधी: ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
4. डोक जे. जे. ए पेट्रियोट इन साऊथ अफ्रीका, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2005
5. क्रिपलानी, कृष्णा, गाँधी: ऐ लाइफ, एन. बी. टी. नई दिल्ली, 2008

इकाई - 5

दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

5.3 मार्टिज़बर्ग की घटना एवं गाँधी की प्रतिक्रिया

5.4 नेंटल में गाँधी की भूमिका

5.5 ट्रान्सवाल में गाँधी की भूमिका

5.6 दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण में गाँधी की भूमिका

5.7 सारांश

5.8 अभ्यास प्रश्न

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

5.0 उद्देश्य

इस इकाई में आप जान पायेंगे-

- दक्षिण अफ्रीका में अश्वेत लोगों की अन्यायपूर्ण स्थिति,
- अश्वेतों और गाँधी के साथ होने वाले अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें,
- इन घटनाओं पर गाँधीजी की प्रतिक्रिया,
- दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण के बाद गाँधीजी की भूमिका ।

5.1 प्रस्तावना

गाँधीजी ने अपने जीवनकाल के दक्षिण अफ्रीकी दौरे में बिताये गये वर्षों (1893-1914) में विरोध करने के अपने तरीके विकसित किये । अपने विरोध करने के तरीके को उन्होंने सत्याग्रह नाम दिया । बाद में इसका उपयोग न केवल भारत के स्वतंत्रता आंदोलन में हुआ अपितु विश्व के अनेक हिस्सों में समाज के शोषित व दलित वर्गो द्वारा अपनी वैयक्तिकता व स्वतंत्रता की दृढ़ता से माँग करने के लिये भी किया गया ।

5.2 अश्वेतों की प्रतिकूल व अन्यायपूर्ण स्थिति

जब गाँधी दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये थे, उन्हें नयी जगह पर मिलने वाली बाधाओं व अपमान का कोई अंदेशा नहीं था । उस समय दक्षिण अफ्रीका में सामान्य स्थितियाँ अश्वेत व्यक्ति के लिए प्रतिकूल थीं । अश्वेत व्यक्ति पर श्वेत व्यक्ति का प्रभुत्व सामान्य बात समझी जाती थी । अल्पसंख्यक होने के बावजूद, श्वेत लोगों के दिमाग में प्रजातीय श्रेष्ठता की भावना भरी थी । उनकी बेरोकटोक राजनीतिक शक्ति व उनके द्वारा की जा रही लूटपाट ने उनकी इस भावना को और हवा दी । उनके व्यवहार में घमंड व अश्वेतों के प्रति नफरत झलकती थी । अश्वेतों के प्रति नफरत की भावना तब और बढ गई जब श्वेतों ने सोचा कि

संसाधनों से परिपूर्ण दक्षिण अफ्रीका उपमहाद्वीप में अश्वेत अपनी संख्या के बल पर श्वेतों को उनकी लाभदायक स्थिति में हानि पहुंचा सकते है । अपने आप को इस देश से बाहर निकाले जाने की संभावनाओं को ध्वस्त करने के लिये श्वेतों ने अश्वेतों को अपना आज्ञापालक व आश्रित बनाने की योजना बनाई । इसी साधन से वे इस संसाधनों से परिपूर्ण उपमहाद्वीप में अपने शासन को जारी रख सकते थे । इस उद्देश्य को ध्यान मैं रखते हुये तथा वहां के विधिक अधिकारियों के सहयोग से अनेक ऐसे कानून लागू कर दिये जिससे अश्वेतों पर मुश्किलों का पहाड़ टूट पडा । अधिवास तथा नागरिक जीवन, कानून व प्रशासन, शिक्षा, अर्थव्यवस्था, व्यापार, स्वास्थ्य, जीवन, आजादी व सम्पत्ति इन सभी मामलों में प्रजातीय पहचान के आधार पर लोगों को अलग-थलग करने की नीति का पालन किया जाने लगा । अश्वेतों को अल्पसंख्यक श्वेतों के पूर्णत: अधीन करने के उद्देश्य से उन्हें किसी भी कानून का उल्लंघन किये जाने पर कड़ा से कड़ा दण्ड दिया जाने लगा।

यद्यपि ये कानून मूल अफ्रीकी अश्वेतों के लिये बनाये गये थे तथापि बाद में इनका उपयोग दक्षिण अफ्रीका में रह रहे अन्य अश्वेतों पर भी किया जाने लगा । इन अश्वेतों में भारतीय मूल के अनुबंधित व स्वतन्त्र मजदूर, कुछ व्यापारी व उनके सहायक शामिल थे । उद्योग स्थलों व खनन क्षेत्रों में काम करने वाले ये अनुबंधित मजदूर अर्थ-गुलामी का जीवन जी रहे थे । दुर्व्यवहार के कारण अपना मालिक बदलना इनके लिये बहुत मुश्किल था । अपने अनुबन्ध के निर्धारित वर्षा के बाद अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने पर तो इनकी मुश्किलें और बढ़ जाती थी । कुछ भारतीयों ने जब व्यापार व वाणिज्य में मामूली सफलता हासिल की तो यूरोपीय व्यापारी उनसे ईर्ष्या करने लगे । उन्होंने पुरजोर माँग उठाई कि अपने अनुबन्ध का नवीनीकरण न कराने वाले भारतीयों को वापिस उनके देश भेज दिया जावे । मताधिकार छीनने के प्रयास भी किये गये । लाइसेंस नीति लागू होने से भारतीयों तथा अन्य गैर-यूरोपीय व्यापारियों के लिये व्यापार करना मुश्किल तथा महँगा हो गया । इसी प्रकार यूरोपीय भाषा परीक्षा उत्तीर्ण करने की अनिवार्यता लागू करके दक्षिण अफ्रीका आने की इच्छा रखने वाले अनेक व्यापारियों के रास्ते को प्रबलता से रोक दिया गया ।

कानूनी बाधाओं के अतिरिक्त भारतीयों को अनेक सामाजिक अशक्तताओं का सामना भी करना पडा । उनके बारे में अपमानजनक टिप्पणियां की जाने लगी । यहां तक कि उन्हें फुटपाथ पर चलने व रात नौ बजे बाद घर से बाहर रहने पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया । रेलगाड़ियों में उन्हें अलग डिब्बों में यात्रा करनी पड़ती थी तथा ट्रान्सवाल जैसे राज्यों में उनके लिये प्रथम व द्वितीय दर्जे की रेलवे टिकिट ही जारी नहीं की जाती थी । श्वेत यात्री द्वारा विरोध किये जाने पर उन्हें बेहद अपमानजनक रूप से बाहर फेंका जा सकता था । यात्री डिब्बों में तो कभी-कभी उन्हें पावदान पर खडे होकर यात्रा करने पर मजबूर किया जाता था । यूरोपीय होटलों में उनके लिये ठहरने व भोजन की सुविधा उपलब्ध नहीं थी। ऑरेन्ज फ्री स्टेट के श्वेत उपनिवेशिकों ने भारतीयों को किसी भी प्रकार का व्यापार करने से रोकते हुए उन्हें अपने राज्य से बाहर कर दिया । ट्रान्सवाल जैसे अन्य राज्यों में उनके लिये रहने व व्यापार करने के लिये अलग स्थान (गेटो) निर्धारित कर दिये गये जहां न्यूनतम नागरिक सुविधायें उपलब्ध थी।

फिर भी विदेशी धरती पर साधनहीन अल्पसंख्यकों के रूप में रहते हुये जीवनयापन की बाध्यताओं के कारण भारतीयों ने इस अपमान को सहन किया तथा इन सभी बाधाओं पर उदासीन रहने का भाव विकसित किया । अपमान सहते हुए भी उन्होंने केवल अपनी दैनिक आय पर ही ध्यान दिया।

5.3 मार्टिज़बर्ग की घटना एवं गाँधी की प्रतिक्रिया

दक्षिण अफ्रीका में गाँधी अपने प्रवास के दौरान अनेक प्रकार की अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पडा । डरबन में अपने प्रवास के प्रथम सप्ताह में ही उन्होंने अनुभव कर लिया कि किस प्रकार भारतीयों को अपमानित किया जाता है तथा उनके लिये अनेक प्रकार की बाधायें उत्पन्न की जाती है । किन्तु मार्टिज़बर्ग की घटना से तो उनका माथा ही ठनक गया । सही टिकिट होते हुए भी ट्रेन के प्रथम दर्जे के डिब्बे से उन्हें सामान सहित बाहर फेंक दिया गया और कड़ाके की सर्दी में काँपते हुए उन्हें प्रतीक्षालय में रात बितानी पड़ी । उन्होंने उसी रात तय किया कि वे इस अपमानजनक स्थिति के मूक दर्शक बने नहीं रह सकते । उन्होंने निश्चय किया कि न केवल अपने व्यक्तिगत सम्मान के लिये अपितु अपने अन्य अश्वेत साथियों के लिये भी वे इसका विरोध करेंगें व आंदोलन चलायेंगे । बुराई के आगे समर्पण करने के बजाय कष्ट सहते हुए विरोध करने के निर्णय से यह स्पष्ट होता है कि गाँधीजी लोगों को आजादी दिलाने के लिये इस विधि का रचनात्मक उपयोग करने का इरादा रखते थे । प्रेसिडेन्ट स्ट्रीट के फुटपाथ पर लात मार कर भगा दिये जाने की घटना से भी यह स्पष्ट होता था कि वे बदला लेने की भावना रखने के स्थान पर बुराई करने वाले को माफ करने की भावना रखते थे । इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में आगमन के प्रारम्भिक दिनों में ही सत्याग्रह की कुछ मूल आवश्यकताओं को निर्धारित करते हुए उन्होंने व्यवहार में लाना शुरू कर दिया था।

स्वयं व अपने देशवासियों द्वारा बर्दाश्त किये जा रहे इस प्रजातीय कलंक का उन्मूलन करने की ठानने के बाद गाँधीजी ने समय बर्बाद नहीं किया । दक्षिण अफ्रीका में ईसाइयों से तो इनका सम्पर्क था ही, उन्होंने भारतीय समुदाय के लोगों से भी सम्पर्क साधना शुरू किया । प्रिटोरिया में आने के एक सप्ताह के अन्दर ही उन्होंने वहां रह रहे समस्त भारतीयों की बैठक आहूत की तथा उन्हें अपनी निःशक्तताओं के प्रति जागरूक किया । इस बैठक में गांधीजी ने अपने जीवन का प्रथम भाषण दिया । उन्होंने व्यापारिक व्यवहार में भी सत्यता की आवश्यकता पर बल दिया, जीवन में स्वच्छता के नियमों की पालना पर बल दिया और जाति, धर्म, क्षेत्रीयता के भेदों को भूलकर तथा संगठित होकर जीवन को बेहतर बनाने का प्रयास करने की बात कही । उन्होंने एक संघ का गठन करने का भी सुझाव दिया ताकि भारतीय समुदाय द्वारा सहन की जा रही मुश्किलों के सम्बन्ध में सम्बन्धित अधिकारियों से प्रभावशाली तरीके से बात की जा सके । यह भी प्रस्तावित किया गया कि संघ के सदस्यों की नियमित बैठकें हों और गाँधीजी ने ऐसे संघ को अधिकतम सहयोग का आश्वासन दिया । ऐसे बैठकों के माध्यम से प्रिटोरिया में रह रहे समस्त भारतीयों से गाँधी का परिचय हुआ और विचारों के आदान-प्रदान से भारतीय समुदाय की स्थिति के बारे में विस्तृत जानकारी लेने के बाद गाँधी ब्रिटिश ऐजेन्ट से मिले जो भारतीय समुदाय के प्रति सहानुभूति रखते थे तथा उन्होंने गाँधी को विश्वास दिलाया

कि वह अपने सामर्थ्य के अनुसार यथासंभव मदद करेंगे जिस मुकदमें के सिलसिले में गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका गये थे उसे समाप्त करने के बाद वे भारत के लिये प्रस्थान करने की तैयारी कर रहे थे । विदाई पार्टी के दिन नेटल मरर्क्यूरि नावक समाचार पत्र में उनकी नजर एक समाचार पर पडी जिसमें नेटल विधानसभा में भारतीयों से मताधिकार छीनने सम्बन्धी उठाये जा रहे कदमों का जिक्र था । गाँधीजी के अनुसार भारतीयों के पास जो थोड़े बहु त अधिकार थे, यह कदम इन अधिकारों के लिए ताबूत की पहली कील के समान था । उन्होंने वहां उपस्थित साथियों को इस विधेयक के निहितार्थ को समझाया तथा उन्हें संभावित अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में जागरूक किया । इस पर साथी लोगों ने गाँधीजी से वहीं रूकने का आग्रह किया तथा सम्बन्धित विधेयक व इसके दुर्भावनापूर्ण इरादों का विरोध करने के लिये उन्हें नेतृत्व प्रदान करने को कहा।

विधेयक का विरोध करने का निर्णय लेने के बाद सुनियोजित विरोध करने के लिये स्वयं सेवकों को नामांकित किया गया । सरकार में शामिल प्रमुख लोगों को तार भेज कर यह निवेदन किया गया कि विधानसभा में विधेयक पर चर्चा स्थगित की जाये । याचिकायें तैयार की गई व उन पर भारतीय समुदाय के लोगों के हस्ताक्षर प्राप्त किये गये । इसे विधानसभा के लिये प्रेषित किया गया तथा एक प्रति प्रेस को भी भेजी गई ताकि विधेयक पर संभावित निर्णय को प्रभावित किया जा सके । इन प्रयासों के बावजूद विधानसभा में विधेयक पारित हो गया । यद्यपि प्रारम्भिक गतिविधियों का कोई अनुकूल प्रभाव नहीं पडा तथापि इस आंदोलन ने भारतीय समुदाय में नई जान फूँक दी, उन्हें अपनी मुश्किलों व अन्यायपूर्ण स्थिति के प्रति जागरूक किया गया । साथ ही वे अपने राजनीतिक अधिकारों के लिये लड़ने के लिये दृढ़तापूर्वक एक जुट हो गये । उपनिवेशी राज्यों के राज्य सचिव लार्ड रिपन के पास एक विस्तृत याचिका प्रस्तुत करने का निश्चिय किया गया । याचिका में गाँधी ने भारतीयों के मताधिकार को सैद्धान्तिक व समीचीन बताते हु ए समर्थन किया । तर्क था कि नेटल में रह रहे भारतीयों के लिये नेटल में मताधिकार उतना ही औचित्यपूर्ण है जितना कि भारत में । साथ ही उन्होंने कहा कि नेटल में भारतीय आबादी का केवल एक छोटा सा हिस्सा ही मताधिकार का उपयोग करने में सक्षम है, इसे बनाये रखना समीचीन होगा । याचिका पर लगभग दस हजार हस्ताक्षर लिये गये तथा उसे प्रसारित व वितरित किया गया । इसने भारतीय जनता को नेटल में उनकी स्थिति से पहली बार कराया । इसकी प्रतियाँ इंग्लैण्ड तथा भारत के समाचार पत्रों व प्रचारकों को भी भेजी गई । इन के माध्यम से गाँधीजी ने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओ के प्रति जन सहानुभूति निर्मित करने का प्रयास ताकि उनके सम्मिलित प्रयास से नेटल के प्राधिकारियों को प्रभावित किया जा सके कि वे भारतीयों की मांगें स्वीकार कर उनकी परिवेदनाओं को कम कर सकें।

गाँधीजी को इस बात का एहसास होने लगा कि निकट भविष्य में उनके लिये नेटल छोड़ना असम्भव होगा । अत: उन्होंने अपने करीबी मित्रों व भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विमर्श कर वहीं बस जाने की योजना बनाई । कुछ मुश्किल जरूर आई किन्तु वह सर्वोच्च न्यायालय में वकील की हैसियत से प्रवेश पाने में सफल हु ए।

5.4 नेटल में गांधी की भूमिका

गाँधीजी ने शीघ्र ही यह समझ लिया कि किसी भी सतत् गतिविधि के लिये एक स्थायी संस्था का होना अपरिहार्य हैं । अत: उन्होंने भारतीय समुदाय के प्रमुख लोगों से विचार विमर्श कर मई 1894 में नेटल इंडियन कांग्रेस का गठन किया । इसकी नियमित बैठकों में नेटल सरकार का विरोध करने सम्बन्धी योजनाओं पर चर्चा की जाती थी । साथ ही आन्तरिक सुधार के प्रश्न पर भी चर्चा की जाती थी । बैठकों में घरेलू साफ-सफाई, व्यक्तिगत स्वास्थ्य, घर व दुकानों के अलग-अलग भवन होने की आवश्यकता जैसे विषयों पर व्याख्यान, चर्चाएं व सलाह मशविरा होने लगे । युवा भारतीय जो अपनी मातृभूमि के विषय में कम जानकारी रखते थे उनके लिये नेटल भारतीय शैक्षिक संघ का गठन किया गया। उनमें मातृभूमि के साथ साथ भारतीय समुदाय के विभिन्न वर्गो के प्रति प्रेम की भावना विकसित की गई । यद्यपि सरकार की ओर से कांग्रेस पर अनेक प्रहार किये गये तथापि कांग्रेस ने उनका डट कर सामना किया । गाँधीजी अतिशयोक्ति में विश्वास नहीं दखते थे तथा उन्होंने अपनी हर आलोचना का पूर्वाग्रहमुक्त उनमें सुधार करते थे । विचार की कार्यविधि में गलतियां हो सकती है और नेटल भारतीय कांग्रेस ने आलोचकों के तर्को को स्वीकार किया । इसमें खुलापन था व आत्म निरीक्षण के लिये तत्परता थी और उन्नति के नये शिखरों को छूने की अपनी क्षमता पर भरोसा था । जहां संभव हो समानता व आत्मसम्मान की शर्तों पर यूरोपियन्स का सहयोग किया गया । 1896 में गाँधीजी अपने परिवार को लेने भारत आये । यहां उन्होंने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों की दयनीय स्थिति पर लोगों को अवगत कराया । वे गोखले, फिरोजशाह मेहता, बदरूद्दीन, रानाडे, तिलक जैसे प्रमुख नेताओं से मिले । सभी ने दक्षिण अफ्रीका में उनके कार्यो की प्रशंसा की व हर प्रकार की मदद का आश्वासन दिया।

जनवरी 1897 में नेटल संसद की बैठक होनी थी । इसकी सूचना का तार जब गाँधीजी को मिला तो उन्हें भारत में अपना काम बीच में ही छोड़ना पडा । 1896 में वे दक्षिण अफ्रीका के लिये रवाना हुये । समाचार पत्रों में गाँधीजी द्वारा नेटल के श्वेतों के विरूद्ध कार्यवाही की मिथ्या रिपोर्ट छपी । उन्होंने यह अफवाह फैलाई कि गाँधी दो जहाजों में लोगों को लेकर नेटल आ रहें है ताकि नेटल में की भरमार हो सके । इससे यूरोपियन्स के मन में गाँधी के प्रति नफरत व शत्रुता की भावना में बढ़ोत्तरी हो गई । उन्होंने गाँधी के डरबन पहुंचने से रोकने के हर संभव प्रयास किये और जब वे इसमें सफल नहीं हुए उन्होंनें उन्हें जान से मारने का प्रयास किया जब वे रूस्तम जी के घर जा रहे थे । बाद में वे उनके घर पर जमा हुये ताकि वे उन्हें मार सकें । लेकिन गाँधीजी ने अपने आक्रमणकारियों के विरूद्ध काई शिकायत मन में नहीं रखी और उनपर मुकदमा चलाने से भी इन्कार कर दिया । बदला न लेने की भावना में उनकी नैतिक परिपक्वता झलकी । पापियों को सजा देने के बजाय उन्हें उनकी अज्ञानता के लिये माफ करना गाँधी जी अधिक श्रेष्ठ समझते थे ।

जब बोर युद्ध छिड़ा तब बहस का प्रमुख विषय था कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहा भारतीय समुदाय ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में मदद करें अथवा नहीं । प्रारम्भ में भारतीय समुदाय इसके तैयार नहीं था । इस पर उनकी आलोचना भी हुई । उन्हें 'धन के भूखे' 'ब्रिटिश लोगों पर

बोझ' 'दीमक' 'कृतघ्न' आदि कहा गया । गाँधी युद्ध में ब्रिटिश सरकार का सहयोग करने के पक्ष में थे । इसके लिये उन्होंने अपने साथियों को विश्वास में भी लिया । उनके अनुसार राष्ट्र पर मंडरा रहे खतरों में व्यक्ति उदासीन रहे तो यह कोई सम्मानजनक स्थिति नहीं हैं । विशेषत: युद्ध की स्थिति में तो ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिये । उनका तर्क था कि ब्रिटिश लोग भारतीयों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं - यह उदासीनता का कोई आधार नहीं है बल्कि ब्रिटिश नागरिकता के बल पर उन्होंने जो कुछ भी हासिल किया है अब ब्रिटिश साम्राज्य की संकट की स्थिति में उसे चुकाने का अवसर उन्हें प्राप्त हुआ है । साथ ही गाँधी का यह भी मानना था कि इससे उनपर लगाये गये दुर्भावनापूर्ण मिथ्या आरोपों को भी झुठलाया जा सकता है तथा उनके द्वारा अधिक आजादी व खुशहाली के लिये किये जा रहे प्रयासों को भी बल मिलेगा ।

तत्पश्चात् भारतीय समुदाय ने सेना में अपनी सेवायें देने का प्रस्ताव दिया । गाँधी ने अपनी निष्ठा का प्रमाण देने के लिये ब्रिटिश सेना के लिये इंडियन एंबुलेंस कोर का गठन किया । यद्यपि प्रारम्भ में भारतीयों के प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया गया तथापि जब युद्ध में हानि बढती गई और भारतीयों ने अपना प्रस्ताव दोहराया तो अन्तत: एम्बुलेंस कोर का गठन करने के लिये कहा गया जो घायल व मृत सैनिकों को बेस कैम्प ले जा सके । विपरीत व जोखिम भरी स्थितियों के बावजूद भारतीयों ने अच्छी सेवायें दी तथा इसके लिये उनकी प्रशंसा भी की गई । गाँधी को आशा थी कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के सद कार्यो के कारण उनका सम्मान बढ़ेगा और ब्रिटिश भी प्रभावित होकर उनकी परिवेदनाओं को कम करने का प्रयास करेगा । इसी आशा के साथ गाँधीजी ने घर लौटने की योजना बनाई ।

वह 1901 में भारत लौटे तथा बम्बई में उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की । बम्बई में मुश्किल से तीन या चार माह ही गुजरे थे कि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे उनके साथियों ने उन्हें तार भेजकर बुला लिया । गाँधी ने बम्बई में अपना काम समेटा व 1902 के अन्त में दक्षिण अफ्रीका रवाना हो गये ।

दक्षिण अफ्रीका पहुंचने पर गाँधीजी ने महसूस किया कि वहां भारतीयों की स्थिति बद से बदतर हो गई थी । बोर युद्ध के दौरान भारतीयों द्वारा ब्रिटिश को दिये गये सहयोग के कारण गाँधीजी ने आशा की थी कि भारतीयों की स्थिति सुधरेगी । किन्तु यह आशा धराशायी हो गई । भारतीयों व्यापारियों से प्रतिस्पर्धा से आक्रांत व जातीय पूर्वाग्रह से ग्रस्त प्राधिकारियों ने दृढ़ निश्चिय कर लिया कि दक्षिण अफ्रीका को श्वेत अल्पसंख्यकों के अधीन ही रखा जायेगा । अत: उन्होंने आने वाले भारतीयों को तो रोक ही दिया, दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों में रह रहे भारतीयों का जीवन और कष्टकारी बना दिया । उन्हें आशा थी कि इससे भारतीय अपने देश लौटने के लिये मजबूर होगें तथा जो बचे रहेंगे वे गुलामी का जीवन व्यतीत करेंगे । दक्षिण अफ्रीका में रह रहे एशिया के लोगों के लिये एक अलग एशियाटिक विभाग का गठन किया गया। इस विभाग के प्राधिकारी मौका मिलते ही भारतीयों का अपमान करने से नहीं चूकते थे और तो और इस विभाग में भ्रष्टाचार भी व्यापक स्तर पर फैला हुआ था।

5.5 ट्रान्सवाल में गाँधी की भूमिका

इस दौरान लार्ड चैम्बरलेन ने दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों में आने की योजना बनाई । जब वह नेटल गए तब गाँधीजी भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व मंडल के साथ उनसे मिले व

अपनी परिवेदनायें प्रस्तुत की । लार्ड चैम्बरलेन ने बडे सब्र से उन्हें सुना और नेटल सरकार से बातचीत करके यथासंभव मदद करने का वादा किया । लेकिन नेटल सरकार ने भारतीयों के प्रति वैमनस्य को देखते हुये तथा ब्रिटेन सरकार की दक्षिण अफ्रीकी उपनिवेशों की सरकारों के प्रति तुष्टीकरण की नीति के रहते, गाँधी जी को किसी परिवर्तन की उम्मीद कम ही थी । फिर भी उन्होंने भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं को व्यक्त कर उपलब्ध संवैधानिक साधनों से उनका निदान खोजने की मांग की । तत्पश्चात उन्होंनें ट्रांसवाल के भारतीय समुदाय के एक प्रतिनिधि मण्डल को लार्ड चैम्बरलेन से मिलने भेजा । लेकिन ट्रांसवाल सरकार ने न केवल उन्हें चैम्बरलेन से मिलने से रोका अपितु उनका अपमान भी किया । गाँधी के अपमान के कारण भारतीय बिना लार्ड चैम्बरलेन से मिले लौटना चाहता था किन्तु गाँधीजी ने उन्हें किसी अन्य व्यक्ति के नेतृत्व में लार्ड चैम्बरलेन से मिलने के लिये समझाया और अपनी समस्याओं के बारे में ज्ञापन देने को कहा । इसी प्रकार भारतीय समुदाय के प्रतिनिधि मण्डल के प्रतिष्ठित व्यक्तियों व अधिकारियों से मिल इण्डियन ओपिनियन नामक समाचार पत्र भी दक्षिण अफ्रीका में शुरू किया । इस पत्र के माध्यम से उन्होंने भारतीय समुदाय परिवेदानायें व्यक्त की व भारतीयों के प्रति सहानुभूति का वातावरण निर्मित करने का प्रयास किया।

इसी बीच एक महत्वपूर्ण घटना घटी । ट्रांसवाल ऑरेन्ज फ्री स्टेट में ब्रिटिश, शासन स्थापित होने के बाद एक समिति का गठन किया गया ब्रिटिश सरकार के प्रति पूर्वाग्रह युक्त कानूनों की सूची बनाने का दायित्व दिया गया । भारत विरोधी कानूनों की सूची की बात इसमें नहीं थी । विडम्बना यह हो गई कि ब्रिटिश विरोधी कानूनों की सूची बनाने के लिये गठित समिति ने भारत विरोधी अधिनियमों की सूची भी प्रस्तुत कर दी । इसे एक पुस्तक के रूप में प्रकाशित किया गया जो भारतीय समुदाय के विरूद्ध उपयोग में लाने हेतु एक सुलभ साधन हो गया । तब से एशियाई समुदाय के प्रति अन्यायपूर्ण कानूनों को एशियाटिक विभाग ने अधिक सख्ती से लागू किया । गाँधीजी का भ्रष्ट अधिकारियों से कोई व्यक्तिगत विद्वेष नहीं था । लेकिन उन्हें उनके काम करने का तरीका पंसद नहीं था और उन्होंने उनकी निंदा भी की । फिर भी ये प्राधिकारी अपने पक्ष में जो कुछ भी कहते गाँधी जी उन्हें धैर्य से सुनते थे ।

शीघ्र ही ट्रांसवाल सरकार ने एशियाई लोगों के प्रवासन को रोकने की योजना बनाई । भारतीय बाशिंदों के पुनः पंजीकरण की योजना बनी । नये पंजीकरण कार्ड में धारक के हस्ताक्षर या अंगूठे के निशान लिये जाने थे । इसके साथ ही धारक का फोटो भी लगाना था । इस मामले में भारतीय समुदाय सरकार से सहयोग करने के लिये सहमत ही नहीं हुआ था कि ट्रांसवाल सरकार ने 1906 में विधानसभा में एशियाटिक बिल नामक एक कुख्यात विधेयक पेश किया । यह विधेयक ट्रांसवाल में भारतीयों के अस्तित्व को ही संकट में डालने वाला था तथा कठोर पंजीकरण प्रक्रिया द्वारा उन्हें अपमानित करने का इरादा रखता था। विधेयक के प्रावधानों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि यह न केवल भारतीयों का अपितु उनकी मातृभूमि का भी अपमान है । परिणामत: उन्होंने भारतीयों से इस विधेयक का विरोध करने तथा अपना सम्मान बनाये रखने की बात कही । साथ ही उनका विचार था कि दक्षिण अफ्रीका में भारतीय समुदाय ने ऐसा कोई अपराध नहीं किया था जिसके लिए उनके साथ ऐसा दुर्व्यवहार हो । गाँधी के अनुसार भारतीयों के साथ अन्याय हो रहा है और इसलिए उन्हें एशियाटिक बिल का विरोध करना चाहिये।

पुराने अम्पायर थियेटर में एक बैठक आयोजित की गई जिसमें लगभग तीन हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया । वे सभी ट्रांसवाल के विभिन्न क्षेत्रों से थे । जो थोड़े बहुत प्रस्ताव पारित हुए उनमें सबसे प्रमुख वह प्रस्ताव था जिसके अनुसार भारतीयों ने यह निर्णय लिया कि इस विधेयक के कानून बनने पर इसकी अनुपालना नहीं की जायेगी तथा इसका विरोध व अवहेलना करने पर जो भी परिणाम हों उन्हें भुगता जायेगा । एक पुराने साथी सेठ हाजी हबीब ने इस कानून का विरोध करने के लिये ईश्वर के नाम की शपथ लेने की बात कही । इससे प्रेरित होकर गाँधीजी ने उपस्थित सभी साथियों से इस प्रकार की शपथ लेने के लिये कहा । लेकिन इससे पहले उन्होंने इस प्रकार की शपथ का आशय भली भांति समझ लेने को कहा । उन्होंने उनसे कहा कि वे आत्मनिरीक्षण करें तथा यदि उनकी अन्तरात्मा उन्हें विधेयक का विरोध करने लायक साहस व बल दे तभी वे ईश्वर के नाम की शपथ लें । नेताओं से भी उन्होंने कहा कि वे भी शपथ लेने से पूर्व यह सुनिश्चित कर लें कि उनमें भी अडिग रहने की तत्परता व क्षमता है । साथ ही स्थानीय प्राधिकारियों से मिल कर अपनी परिवेदानायें प्रस्तुत कर उनका निदान पाने के प्रयास भी जारी रहे। 'इंडियन ओपिनियन' में एशियाटिक अध्यादेश के विभिन्न आपत्ति जनक प्रावधानों को उजागर करने सम्बन्धी लेख छापे गये, इसके अन्यायपूर्ण अमानवीय व अनैतिक आधार की निंदा की गई तथा भारतीय समुदाय के विरोध के औचित्य को सिद्ध करने का प्रयास भी किया गया ।

प्रारम्भ में इस आंदोलन को 'निष्क्रिय' प्रतिरोध की संज्ञा दी गई किन्तु बाद में इसे अनुपयुक्त समझा गया और 'इण्डियन ओपिनियन' में आंदोलन के लिये उपयुक्त नाम सुझाने के लिये एक खुली प्रतियोगिता रखी गई । मदनलाल गाँधी ने 'सत्याग्रह' नाम सुझाया जिसका अर्थ है 'अच्छे कार्य के लिये दृढ़ता' । गाँधी जी ने इस शब्द में सुधार करते हुए इसे 'सत्याग्रह' कर दिया ।

भारतीय समुदाय के विरोध के बावजूद ट्रांसवाल विधानसभा ने विधेयक पारित कर ही दिया । तब भी गाँधीजी व उनके साथी आशान्वित थे कि ब्रिटिश सम्राट इस विधेयक पर अपनी सहमति नहीं देगें । इस आशा के साथ उन्होंने अपना एक प्रतिनिधि मण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि ब्रिटेन के प्रभावशाली लोगों को आवश्यक जानकारी दी जा सके । इंग्लैण्ड जाने के लिये गाँधी व एच.ओ.अली को चुना गया । गाँधी ने अपनी यात्रा के दो उद्देश्य घोषित किये:

(i) उपनिवेशों के राज्य सचिव लार्ड एल्गिन से निवेदन करना कि सम्राट पंजीकरण अधिनियम को स्वीकृत न करें ।

(ii) बड़े स्तर पर अवैध भारतीय अप्रवासन के आरोपों की जांच करने हेतु एक आयोग की नियुक्ति की मांग करना । इन्हीं आरोपों को बहाना बनाकर पंजीकरण अधिनियम लाया गया था।

एक ज्ञापन तैयार कर लार्ड एलिग्न को दिया गया । गाँधी व अली भारत के लिये राज्य सचिव श्री मोरली से तथा कुछ प्रमुख ब्रिटिश जैसे सर लेपल ग्रिफिन, सर डब्ल्यू, डब्ल्यू हंटर, रेडमंड आदि से मिले । दादाभाई नौरोजी से भी सम्पर्क किया गया और उनके माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ब्रिटिश समिति से सम्पर्क किया गया। कुछ निष्पक्ष व विख्यात एंग्लो इण्डियन्स का सहयोग भी मांगा गया। यह भी तय किया गया कि एक स्थायी समिति

बनाई जाये जिसमें वे सब जो भारतीय मुद्दों के संदर्भ में सहयोग कर सकें एक ही छतरी के नीचे आ जाये । इस प्रकार दक्षिण अफ्रीकी ब्रिटिश भारतीय समिति का गठन हुआ। इंग्लैण्ड में प्रतिनिधि मण्डल ने लोक जीवन के महत्वपूर्ण लोगों को बडी संख्या में परिपत्र व पर्चे भेजे।

इंग्लैण्ड में छः सप्ताह ठहरने के बाद गाँधीजी दक्षिण अफ्रीका लौटे । लौटते समय उन्हें समाचार मिला कि लार्ड एल्गिन ने घोषणा की है कि वह ब्रिटिश सम्राट को सलाह देंगे कि वे एशियाटिक अध्यादेश पर जल्दबाजी में हस्ताक्षर न करें । भारतीय खुशी से फूले नहीं समा रहे थे किन्तु यह खुशी एक बुलबुले की तरह थी जो फूट गई । दक्षिण अफ्रीका का एक प्रसिद्ध अधिवक्ता व ट्रांसवाल उपनिवेश का प्रतिनिधि रिचर्ड सोलमन लार्ड एलिग्न से मिले । लार्ड एल्गिन ने उसे बताया कि जब तक ट्रांसवाल ब्रिटेन का उपनिवेश बना रहेगा सम्बन्धित बिल पर सम्राट की सहमति नहीं मिलेगी किन्तु जब ट्रांसवाल को जिम्मेदार सरकार का दर्जा मिल जायेगा और वह सरकार इस विधेयक को पारित कर देता है तो सम्राट उस पर हस्ताक्षर कर देंगे । इस प्रकार लार्ड एल्गिन ने दिखावे के तौर पर भारतीयों से मित्रता व समर्थन का नाटक किया पर वास्तव में उन्होंने ट्रांसवाल सरकार का समर्थन किया और जिस बिल को उसने स्वयं वीटो किया था उसी बिल को पारित करने के लिये प्रोत्साहित किया । गाँधीजी ने इस कार्य को मुंह में राम बगल में छुरी माना । किन्तु इन सभी निराशाजनक स्थितियों के बावजूद गाँधी जी अभी भी ब्रिटिश शासन को न्यायपूर्ण ही मानते थे । जिसमें बातचीत के जरिये परिवेदनाओं का निदान किया जा सकता था ।

लार्ड एल्गिन की सर रिचर्ड सोलमोन को दी गई सलाह से प्रोत्साहित होकर ट्रांसवाल की नई विधानसभा ने एशियाटिक पंजीकरण अधिनियम पारित कर दिया । तारीखों में परिवर्तन के अलावा इसमें सारे प्रावधान पुराने बिल के समान ही थे । नये बिल को 21 मार्च 1907 को आयोजित एक ही बैठक में पारित कर दिया गया और इसे 1 जुलाई 1907 से लागू घोषित किया गया । भारतीयों को पंजीकरण के लिये 31 जुलाई 1907 तक का समय दिया गया ।

अब चूंकि परिवेदनाओं का निदान संवैधानिक तरीकों से तो नहीं हो पा रहा था, सत्याग्रह संघर्ष आवश्यक हो गया था, सत्याग्रह संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिये एक अलग एजेन्सी की आवश्यकता महसूस की गई । अतः निष्क्रिय प्रतिरोध संघ की स्थापना की गई । अन्ततः जब पंजीकरण हेतु परमिट दफ्तर खोले गये तो यह निश्चित किया गया कि इन दफ्तरों में धरना दिया जायेगा । परमिट दफ्तरों की ओर जाने वाली सडकों पर स्वयंसेवक खडे किये गये जो पंजीकरण कराये जाने वाले भारतीयों को पंजीकरण न करवाने के लिये निवेदन करेंगे । साथ ही उन्हें यह भी हिदायत दी गई कि जो भारतीय निवेदन के बावजूद पंजीकरण करवाना ही चाहते हैं उन्हें जोर जबरदस्ती से न रोका जाये । इसके स्थान पर स्वयंसेवक पर्चे बाँटे थे जिनमें काले अधिनियम से होने वाली हानि का वर्णन था । गाँधी ने बल दिया कि वे प्रत्येक व्यक्ति के साथ सम्मानजनक व्यवहार करे चाहे वह सरकारी प्राधिकारी ही क्यों न हो । ऐसे व्यवहार करते वक्त प्राधिकारी यदि उनके साथ दुर्व्यवहार भी करें तो उसे भी गाँधी ने चुपचाप सहने को कहा । इस दौरान 'इंडियन ओपिनियन' के माध्यम से भारतीय समुदाय तथा उसके कठिन संघर्ष के बारे में महत्वपूर्ण समाचार दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैण्ड व भारत की जनता तक पहुंचते रहे । सत्याग्रह के संदर्भ में किसी के विचार चाहे जो भी रहे हों 'इंडियन ओपिनियन'

एक खुली किताब की तरह था जिससे वह भारतीय समुदाय की कमजोरी व ताकत का आकलन कर सकता था । आंदोलन में खुलापन को आवश्यक माना गया।

गाँधीजी ने कहा कि आंदोलन में गोपनीयता का कोई स्थान नहीं है और कोई गलत काम नहीं किया जाएगा और इसमें दोहरेपन या धूर्तता का कोई स्थान नहीं होगा । कमजोरी तथा उन्मूलन करना गाँधी ने आवश्यक माना और सही ढंग से पहचानने तथा दूर करने पर बल दिया गया। जब प्राधिकारियों ने देखा कि इण्डियन ओपिनियन की यह नीति हे तो उनके लिये यह पत्र भारतीय समुदाय के तत्कालीन इतिहास का सच्चा दर्पण बन गया ।

जैसे ही पंजीकरण की अन्तिम तिथि समीप आ रही थी, जिन्होंने पंजीकरण नहीं करवाया था उनके पास कोर्ट के आदेश आने लगे और उन्हें एक सप्ताह या एक पखवाडे में देश छोड़ने का आदेश दिया गया । जब इन आदेशों की पालना नहीं हुई तो प्राधिकारियों ने दोषियों को जेल में डालना शुरू किया । जब जेल सत्याग्रहियों से भरने लगे और सत्याग्रही अपने निश्चय पर अटल रहे कि वे इस अधिनियम को कदापि स्वीकार नहीं करेंगे तो ऐसी स्थिति में सरकार थोड़ा झुकी और भारतीय समुदाय के साथ बातचीत के जरिये समझौता करने का प्रयास किया गया।

अलबर्ट कार्टराइट जो 'ट्रांसवाल लीडर' नाम के समाचार-पत्र के सम्पादक थे, उन्हें सरकार व भारतीय समुदाय के बीच मध्यस्थ बना दिया गया । अन्ततः गाँधीजी व जनरल स्मट्स मिले तथा एक समझौता फार्मूला पर सहमत हुये जिसके अनुसार स्मट्स ने वादा किया कि जैसे ही अधिकांश भारतीय स्वैच्छिक पंजीकरण करवा लेंगे काले अधिनियम को जनरल बोथा की सरकार वापिस ले लेगी । जनरल स्मट्स ने विश्वास दिलाया कि ऐसे प्रत्येक पंजीकरण को वैद्य घोषित किया जायेगा।

गाँधीजी का तर्क था कि सरकार बिना वहां की प्रजा के सहयोग के उन पर नियंत्रण नहीं कर सकती । गाँधीजी का तर्क था कि एक सत्याग्रही कानून की पालना करके जो सहयोग करता है वह सजा के डर से नहीं अपितु यह सोच कर करता है कि इसमें जनहित निहित है । भारतीयों ने। स्वेच्छा से अपना पंजीकरण इस आशा एवं विश्वास से कराया था कि ऐसा करने पर काला अधिनियम वापिस लिया जायेगा । लेकिन जनरल स्मट्स की कार्यवाही ने उनकी आशाओं पर पानी फेर दिया । उसने न केवल अधिनियम को संवैधानिक अपितु विधानमण्डल में ऐसे प्रस्ताव भी रखे जिससे ट्रांसवाल में नये आने वाले सभी भारतीयों के लिये अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार पंजीकरण आवश्यक कर दिया गया।

गाँधीजी ने फिर एक बार नई स्थिति पर चर्चा करने के लिये अपने भारतीय साथियों के साथ बैठक आयोजित की । उन्होंने जनरल स्मट्स को पत्र लिखा, कुछ प्रभावशाली अंग्रेजो से चर्चा की, नवीनतम स्थिति पर 'इंडियन ओपिनियन' में धारावाहिक लेख लिखे गए और भारतीयों की ओर से सरकार को याचिकायें पेश की गई । जब इन संवैधानिक साधनों से अपेक्षित परिणाम नहीं निकले तो उन्होंने सरकार को अंतिम चेतावनी दी कि वे सभी भारतीयों के पंजीकरण प्रमाण पत्रों को एकत्रित कर उनकी होली जला देगें यदि अमुक तारीख तक एशियाटिक अधिनियम वापिस नहीं लिया जाता । यह भी घोषित कर दिया गया कि ऐसा करने के जो भी परिणाम होगें वे भुगतने के लिये तैयार है ।

जब अंतिम चेतावनी की तिथि निकल गई फिर एक बैठक आयोजित की गई और सभी पंजीकरण प्रमाणपत्र को एकत्रित किया गया तथा बैठक स्थल के एक कोने में उनकी होली जला दी गई । यह बैठक 16 अगस्त 1907 को जाहन्सबर्ग में स्थित हमीदिया मस्जिद में आयोजित हुई । यह भी निश्चित हुआ कि सत्याग्रह संघर्ष में ट्रांसवाल अप्रवासी प्रतिबन्ध विधेयक का विरोध भी शामिल किया जायेगा जिसमें उन सभी अप्रवासियों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था जो शिक्षा परीक्षा तो उत्तीर्ण कर चुके थे किन्तु एशियाटिक अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण के लिये अयोग्य थे । यह अधिनियम भारतीय समुदाय के अधिकारों पर एक नया कुठाराघात था तथा इसे भी उसी मंशा से बनाया गया था जिससे एशियाटिक अधिनियम को बनाया गया । लेकिन गाँधीजी अपने कुछ साथियों के दृष्टिकोण से सहमत नहीं थे जो मांग कर रहे थे कि ट्रांसवाल के सभी भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध समान व्यवहार किया जाये । कुछ साथियों का सुझाव था कि दक्षिण अफ्रीका के सभी भारतीयों को संघटित कर सभी उप निवेशों में भारत विरोधी विधानों के विरूद्ध एक साथ सत्याग्रह अभियान चलाया जाये । गाँधीजी इसके भी पक्ष में नहीं थे । गाँधी ने सत्याग्रह संघर्ष में अवसरवादिता की निंदा की और इस बात पर बल दिया कि सत्याग्रह आंदोलन जिस मुद्दे को लेकर शुरू किया जाये, उस पर बने रहना चाहिये । फिर भी उन्होंने ऐसे किसी मुद्दे को शामिल करने का रास्ता खुला रखा जो विरोधियों द्वारा संघर्ष के दौरान नई मुश्किलें पैदा करने के प्रयासों से उपजे हों । ट्रांसवाल अप्रवासन प्रतिबन्ध विधेयक करने के लिये, यह तय किया गया कि ट्रांसवाल में भारतीय एक एक करके या समूह में प्रवेश करेंगे व नये कानून का उल्लंघन करेगें । दाउद सेठ के नेतृत्व वाला समूह जब ट्रांसवाल में प्रवेश कर रहा था तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया तथा सभी को मजिस्ट्रेट के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। मजिस्ट्रेट ने सभी को आदेश दिया कि वे एक सप्ताह के अन्दर ट्रांसवाल छोड दें । आदेश की पालना करने के बजाये समूह प्रिटोरिया की ओर बढ़ा जहां उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया । वहां उन्हें यह सजा सुनाई गई कि या तो वे पचास पाउंड का जुर्माना भरें या तीन माह का कठोर कारावास भुगते । समूह ने खुशी खुशी जेल जाने का रास्ता चुना । बिना लाइसेंस के फेरी लगाकर या ट्रांसवाल में प्रवेश करने पर अपना पंजीकरण प्रमाण पत्र न दिखा कर नेटल के भारतीयों ने ट्रांसवाल के साथियों का साथ दिया । जेल भरे जाने लगे और भारतीय कैदियों को परेशान करने के हर संभव प्रयास किये गये । जब सरकार ने देखा कि गिरफ्तारी की धमकी से भारतीय हतोत्साहित नहीं हो रहे हैं और उनका ट्रांसवाल में आना या बिना लाइसेंस के फेरी लगाना जारी है, तो सरकार ने भारतीयों को अपने देश भेजना शुरू किया । इससे भारत में हंगामें की स्थिति हो गई और भारतीय सरकार ने कानून बनाकर अनुबंधित मजदूरों को नेटल की ओर देशांतरण पर रोक लगा दी । अन्ततः ट्रांसवाल सरकार को मजबूरन सत्याग्रहियों को भेजना बंद करना पडा । यद्यपि जेल में हालात बड़े विकट व कठोर हो गये थे, तथापि सत्याग्रहियों ने इनको साहस और दृढ़ निश्चय से सहन किया । किन्तु जैसे ही संघर्ष खिंचता चला गया, सरकार यह जान चुकी थी गिरफ्तारी या निर्वासन से सत्याग्रहियों के उत्साह को भंग नहीं किया जा सकता । भारतीय भी इस स्थिति में नहीं थे कि वे मजबूत लड़ाई लड़ सकें । सरकार कुछ मामले अदालत में ले गई थी जो वह हार गई । उधर भारतीय थके हुए थे व उत्साहहीन थे।

5.6 दक्षिण अफ्रीका संघ के निर्माण में गाँधी की भूमिका

दक्षिण अफ्रीकी संघ के निर्माण के प्रयास जारी थे । भारतीयों ने एक प्रतिनिधिमण्डल इंग्लैण्ड भेजा ताकि दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीयों के मूल अधिकारों की प्राप्ति व सुरक्षा की मांग की जा सके । जुलाई 1909 में गाँधी एक बार फिर लंदन आये ताकि ट्रांसवाल विधानमण्डल के सम्बन्ध में दबाव डलवाया जा सके । लेकिन इस बार वे पूर्व की तरह आशावादी नहीं थे । प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के अंदेशे के कारण उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में चल रहे सत्याग्रह संघर्ष पर ही भरोसा किया । लंदन में प्रतिनिधिमण्डल ने लार्ड एम्प्टिहल समिति के निर्देशन में कार्य किया ।

गाँधी के लिये राहें आसान नहीं थी । एक तरफ तो उच्च प्राधिकारियों को' प्रभावित करना टेढ़ी खीर था । दूसरी तरफ उनपर ऐसे आरोप भी लग रहे थे कि दक्षिण अफ्रीकी आंदोलन को भारत में काम कर रही क्रांतिकारी व राजद्रोही आर्थिक सहयोग दे रहे हैं । अपनी स्थिति स्पष्ट करने के लिये बुलाये जाने पर गाँधी ने कहा, "माफ करें, मै यहां ऐसे किसी भारतीय को नहीं जानता हूँ, न तो दाक्षिण अफ्रीका में न भारत में, जो मुझसे अधिक सतत् व निर्भीक रूप से राजद्रोह के विरूद्ध हो । मेरा धर्म यह कहता है कि मेरा राजद्रोह से कोई वास्ता नहीं, चाहे इसके लिये मेरी जान ही क्यों न चली जाये । अधिकांश भारतीयों व एंग्लो इण्डियन्स ने बम फैंकने और हिंसक गतिविधियों की निन्दा की है । ट्रांसवाल का आंदोलन जिससे मैने अपना नाम जोड़ रखा है, ऐसे किसी भी तरीके के स्पष्ट रूप से खिलाफ है । निष्क्रिय प्रतिरोध का परीक्षण ही यही है कि स्वयं कष्ट सह लें पर दूसरों को कष्ट न दें । अत: भारत में या अन्य कहीं से किसी राजद्रोह वाले दल से एक पैसा भी लेने का प्रश्न ही नहीं है । अगर लेने का प्रस्ताव भी होता तो सिद्धान्त: हम उसे अस्वीकृत कर देते।" भारत मे हिंसा करने वाले दल को दक्षिण अफ्रीकी भारतीय आंदोलन के माध्यम से गाँधी दिखलाना चाहते थे कि ऐसे दल गलत राह पर हैं। हिंसा पर भरोसा रख कर उन्हें कुछ भी हासिल नहीं होने वाला। इन सभी कठिन प्रयासों के बावजूद गाँधी की प्रतिनिधिमण्डल की लंदन में सफलता के सम्बन्ध में निराशा सही साबित हुई।

भारतीय प्रतिनिधिमण्डल की असफलता के बारे में गाँधी द्वारा की गई भविष्यवाणी आधारहीन नहीं थी । ब्रिटेन में उनके कटु अनुभव, बढती मोहभंग की स्थिति व स्वयं के आध्यात्मिक विकास के कारण उन्हें आधुनिक सभ्यता की बुराईयां स्पष्ट नजर आने लगी थी । वे मानते थे कि ब्रिटेन आधुनिक सभ्यता के कुचक्र में फंस चुका है । अब वह अपने ओपनिवेशक हितों को नहीं छोड़ सकता। उससे खुलेपन, व मानवीयता की अपेक्षा करना बेकार है।

गाँधी द्वारा आधुनिक सभ्यता पर प्रहार उनकी पुस्तक 'हिन्द स्वराज या होम रूल' के रूप में सामने आया । यह पुस्तक उन्होंने 1909 में लंदन से दक्षिण अफ्रीका जाते समय जहाज में लिखी । इसमें उनका निष्कर्ष था कि भारत अंग्रेजों के पैरों के नीचे नहीं अपितु आधुनिक सभ्यता के पैरो के नीचे कुचला जा रहा है । इस प्रकार यह मानते हुये कि भारतीय स्वतंत्रता का वास्तविक शत्रु आधुनिक सभ्यता है, गाँधी ने आधुनिक सभ्यता से जुडी समस्त वस्तुओं को

त्यागने की वकालत की । उनका मानना था कि भारत से ब्रिटिश को भगा देने मात्र से तत्कालीन भारत की बीमारियों से निजात नहीं मिलेगी । गाँधी ने माना कि आधुनिक सभ्यता के सांस्कृतिक खतरे से प्रभावपूर्ण तरीके से निपटने के लिये एक ही तरीका हैं - भारतीयों में व्यक्तिगत नवजीवन का संचार जिसका अर्थ हे भारतीय परम्परा के आध्यात्मिक मूल्यों को आत्मसात करना। ऐसी विधि से ही भारत अपनी खोई हुई आभा व वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है। ब्रिटिश दासता से भारत को मुक्त कराने का हिंसा या ऐसा कोई और रास्ता नहीं हो सकता।

इस दौरान दक्षिण अफ्रीकी संघ अस्तित्व में आया और 1913 में एक नया संकट उत्पन्न हो गया । दक्षिण अफ्रीका के सेर्वोच्य न्यायालय ने सर्ल केस में निर्णय देते हुए केवल ईसाई विवाह को ही दक्षिण अफ्रीका में वैध करार दिया । किसी भी अन्य पारम्परिक पद्धति से हुए विवाह को दक्षिण अफ्रीका में अमान्य कर दिया गया । परिणामस्वरूप, गैर ईसाई परम्परा से विवाहित महिलायों को अवैध पत्नी का दर्जा दे दिया गया । जिससे उनके बच्चों का पैतृक सम्पत्ति पर अधिकार समाप्त कर दिया गया । गाँधी ने सरकार को पत्र लिखकर पूछा कि क्या वह सर्ल के फैसले के अनुसार ही चलेगी या कानून में संशोधन करके भारत में वैधानिक माने जाने वाले वैधानिक पद्धतियों को भी मान्यता प्रदान करने का इरादा रखती है । शीघ्र ही भारतीय समुदाय ने एक बैठक आयोजित की जिसमें यह चर्चा रखी कि फैसले के विरूद्ध अपील की जाये अथवा नहीं । यह तय हुआ कि दावा करने का विचार फिलहाल छोड दिया जाये । क्योंकि स्पष्ट प्रतीत होता था कि सरकार ऐसे अपमानजनक मामलें में पीडित पक्ष का साथ नहीं देगी । सत्याग्रह अभियान ने एक बार फिर जोर पकडा । अब महिलायें भी इस संघर्ष में शामिल हुई । उन्होंने बिना अनुमति ट्रांसवाल में प्रवेश किया । लेकिन सरकार ने भी जानबूझ कर उन्हें गिरफ्तार नहीं किया । तब उन्होंने नारेबाजी शुरू की । तब भी सरकार ने उनकी उपेक्षा की । उसे आशा थी कि इससे आंदोलन कमजोर पड जायेगा । इस चुनौती का सामना करने के लिये यह तय किया गया कि फिनिक्स में बचे हुये सदस्य जिनमें अधिकांश महिलायें थी, ट्रांसवाल में प्रवेश करेगें व गिरफ्तारी देगें । साथ ही वे महिलायें जो ट्रांसवाल प्रवेश कर चुकी है पर गिरफ्तार नहीं हुई, वे अब नेटल में प्रवेश करेगी और न्यूकासल कोयला खदान में जायेंगी और यदि तब भी गिरफ्तार नहीं होती है तो वे अनुबंधित भारतीय मजदूरों को हड़ताल पर जाने के लिये निवेदन करेंगी । जब फिनिक्स सदस्य सीमा पार कर रहे थे और उन्होंने पुलिस को अपनी पहचान बताने से मना कर दिया तब उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और अदालत ने उन्हें तीन माह का कठोर कारावास की सजा सुनाई। इस दोरान महिला दल ने नेटल में प्रवेश किया और न्यूकासल जाकर मजदूरों से हड़ताल पर जाने की अपील की। जैसे ही महिलाओं ने सरकार की ज्यादतियों की करूण गाथा सुनाई, मजदूर प्रभावित हो गये व उन्होंने हड़ताल पर जाने का निश्चय कर लिया । महिलाओं की गिरफ्तारी व बाद में जेल में उनके साथ हुये जुल्मों की खबरों ने दक्षिण अफ्रीका व भारत में रह रहे भारतीयों के दिलों में आहत कर दिया।

न्यूकासल कोयला खान मजदूरों ने अपना काम छोडा व सत्याग्रह संघर्ष में शामिल होने का निश्चय किया । उन्होंने अपने मालिकों के जुल्मों को भी बहादुरी से सहा । गाँधी न्यूकासल

पहुंचे और उन्हें सलाह दी की वे अपनी बेडियों से मुक्त हों और सत्याग्रह संघर्ष में भाग लें । यह योजना बनी कि सत्याग्रहियों की सेना जिसमें लगभग पाँच हजार कार्यकर्ता होगें; ट्रांसवाल सीमा को पार करेगी । जब इस कूच की तैयारी चल रही थी, गाँधी को खदान मालिकों की ओर से मामला सुलझाने के लिये मिलने का निमंत्रण मिला । अत: वे डरबन के लिये रवाना हुये । उन्होंने उनसे कहा कि वे अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके सरकार से कहे कि तीन पाउंड टैक्स वापिस ले लें । लेकिन इस मुलाकात के कोई उल्लेखनीय लाभ नहीं मिलें । अन्तत: सैनिकों की कूच शुरू हुई । गाँधी ने समस्या हल करने के बहुत प्रयास किये किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ । उन्हें दो बार गिरफ्तार किया गया लेकिन दोनों बार उन्हें जमानत पर छोड़ दिया गया । गाँधी जैसे व्यक्ति की गिरफ्तारी से भी सत्याग्रहियों का उत्साह कम नहीं हुआ । उनके अहिंसा व दृढ़ निश्चय ने सरकार को मजबूर किया कि वह उन्हें रोकने क लिये कार्यवाही करें अन्यथा अपना असफलता के लिये अंग्रेज जनता के सामने अपमानित होना पडेगा । छत्तीस मील की आठ दिन लम्बी चलने वाली कूच के चौथे दिन गाँधी को तीसरी बार गिरफ्तार कर लिया गया।

इस दौरान कूच कर रहे सत्याग्रहियों को गिरफ्तार करने की तैयारियां भी चल रही थी। उन पर मुकदमें चलाये गये व उन्हें जेल भेजा गया । कोयला खदान क्षेत्रों को बाहरी जेल घोषित कर दिया गया । और गिरफ्तार सत्याग्रहियों को उनमें काम करने के लिये मजबूर किया गया । काम करने से मना करने वालों पर जुल्म ढाये गये । इन जुल्मों के समाचार प्रेस व जेल के बाहर लोगों द्वारा दूर दूर तक पहुंचाये गये । भारत में दक्षिण अफ्रीका की समस्या सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया । वायसराय लार्ड हार्डिंग्स ने सरकार की कार्यविधि की कडी आलोचना की और सत्याग्रहियों को उचित ठहराया। अन्य अनुबन्धित भारतीय मजदूरों ने जब आपने भाई-बिन्दुओं के साथ अमानवीय व्यवहार की बातें सुनी तो उन्होंने भी सत्याग्रह संघर्ष में कूद पड़ने का निश्चय किया । अब सरकार ने भारतीयों को काम पर लौटने के लिये मजबूर करने के लिये बल प्रयोग करने की ठान ली।

इससे सरकार के विरूद्ध जनमत और प्रबल हो गया । हर तरफ से दबाव पडने पर अन्तत: यह निश्चित हुआ कि तीन सदस्य आयोग नियुक्त होगा जो भारतीय मांगों पर विचार करेगा और गतिरोध समाप्त करने के लिये उपयुक्त सुझाव देगा । इस समिति में भारतीय तो एक भी नहीं था पर सा ही तीन में से दो व्यक्ति तो भारत विरोधी विचार रखने के लिये कुख्यात थे । अत: भारतीय समिति ने सरकार के सम्मुख अपना विरोध दर्ज कराया और तो और अधिकांश सत्याग्रही तो अभी भी जेल में थे और उनकी रिहाई की भी मांग की गई । लेकिन जब सरकार ने इन मामलों पर ध्यान नहीं दिया तो गाँधी अपनी योजनानुसार आगे बढ़े।

गाँधी ने एक बार फिर सत्याग्रह कूच की तैयारियां शुरू की । इस दौरान संघीय रेल्वे के यूरोपियन कर्मचारियों ने हड़ताल पर जाने की योजना बनाई। जब गाँधी से कहा गया कि भारत कूच उसी समय शुरू करें जब रेले की हड़ताल हो, उन्होंने इस प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया । उन्होंने कहा कि सत्याग्रह आंदोलन सरकार को परेशान करने वाले किसी समूह के साथ नहीं हैं ऐसी विनम्रता व अहिंसा से युक्त श्रेष्ठ कार्यो के कारण तथा अन्य दबावों के रहते अन्तत: गतिरोध निवारण के लिये अनुकूल तैयार हो गया। जनरल स्मट्स व गाँधी के बीच चली वार्ताओं के दौर में एक अन्तरिम समझौता हुआ जिसमें यह सहमति हुई कि सरकार केद

सत्याग्रहियों के विरूद्ध मामलें समाप्त कर देगी और भारतीयों की समस्याओं के सम्बन्ध में गठित आयोग के सुझावों के मामलें में आवश्यक कार्यवाही करेगी जिससे भारतीय की परिवेदनाओं के निराकरण के सम्बन्ध में कुछ किया जाये । इधर सत्याग्रही अपना आंदोलन करेगें और आयोग के मूल प्रस्तावित सदस्यों को स्वीकार करेगें तथा उसके कार्य में कोई रूकावट पैदा करेगें।

आयोग ने अपनी जाँच पूरी की । अन्य बातों के अतिरिक्त उसने तीन पाऊंड टैक्स समाप्त करने, भारतीय परम्परा से हुये विवाह को मान्यता देने, व कुछ अन्य लाभ देने की बात कही । इस के जारी होने के कुछ समय बाद ही, संसद में इंडियन रिलीफ बिल प्रस्तुत हुआ । इसमें तीन पाऊंड, विवाह, मूल निवास आदि के सम्बन्ध में भारतीय समुदाय की परिवेदनाओं को कम करने की बात थी । मामलें, जो इंडियन रिलीफ बिल के अन्तर्गत नहीं आये उनका निराकरण जनरल स्मट्स व गाँधी के हुये पत्र व्यवहार से कर लिया गया । इस प्रकार सत्याग्रह का महान संघर्ष आठ वर्षो में समाप्त हुआ गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका छोड़कर भारत आने का निश्चय किया । वे 18 जुलाई 1914 को दक्षिण अफ्रीका रवाना हुये तथा लंदन होते हुये 9 जनवरी 1915 को भारत पहुंचे ।

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका में गाँधी की सक्रियता यह बतलाती है कि किस प्रकार गाँधी ने सुव्यवस्थित तरीके से भारतीय समुदाय की समस्याओं का हल खोजा । उन्होंने भारतीय से सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास किया तथा नेटल भारतीय कांग्रेस का गठन कर इसकी नियमित बैठकें आयोजित की । इससे भारतीय समुदाय में यह जागृति आई कि किस प्रकार जन प्राधिकारी उनके साथ अन्यायपूर्ण, अमानवनीय व उपेक्षापूर्ण व्यवहार करते है । साथ ही हम यह भी देखते है कि किस प्रकार गाँधी ने एक मंच बनाने में मदद की जहां से दक्षिण अफ्रीका के उपनिवेशों की सरकारों द्वारा अपनाई जा रही प्रजातीय नीतियों के विरोध व असंतोष के स्वर दिया जा सके । इन प्रयासों से दक्षिण अफ्रीका में रह रहे भारतीय समुदाय के भिन्न-भिन्न तत्वों को एकीकृत करने में भी मदद मिली । भारतीय समुदाय के बाहर के व्यक्तियों से सम्पर्क का उपयोग उन्होंने इस प्रकार किया कि प्राधिकारियों से भारतीय समुदाय की शिकायतों को कम हेतु कुछ अनुकूल निर्णय करवायें। साथ ही उन्होंने भारतीय समुदाय के विरोध को औचित्यपूर्ण सिद्ध हुये उनके लिये सहानुभूति बटोरने का प्रयास भी किया। उनके ऐसे निकटस्थ व दीर्घकालीन सम्पर्क में सफलता के दो कारण थे- उनका व्यक्तिगत चरित्र व वकालत के व्यवसाय में उनके द्वारा सीखे गये सबक । प्यारेलाल लिखते है "वकालत करते हुए गाँधीजी ने मानव स्वभाव के बेहतर पक्ष को जाना और लोगों के दिलों में प्रवेश करने की कला सीखी । इसने उन्हें सच्चे समझौते के अर्थ और श्रेष्ठता के बारे में सिखाया। गाँधी के हाथों में यह व्यवसाय पारस्परिक तालमेल का एक शक्तिशाली हथियार बन गया और इसका सामुदायिक सेवा लिये श्रेष्ठ उपयोग हुआ। उन्होंने कभी भी अपने कानूनी ज्ञान का विजय हासिल करने के लिये उपयोग नहीं किया अपितु वे तो समानता व न्याय के आधार पर दोनों पक्षों को साथ मिलाने का प्रयास करते थे।"

इस प्रकार दक्षिण अफ्रीका जाने से पूर्व गाँधीजी को अश्वेत व्यक्ति के जीवन से जुड़े प्रजातीय कलंक के बारे में जानकारी नहीं थी । अपने आगमन के कुछ ही दिनों के अन्दर उन्हें

अनेक अपमानजनक स्थितियों का सामना करना पड़ा । इन अपमानजनक स्थितियों के अनुभवों से उनका दृढ़निश्चय बढ़ा कि उन्हें हटाना है । यह काम उन्हें स्वयं के लिये नहीं अपितु पूरे भारतीय समुदाय के हित में करना था जो इन अपमानों का शिकार था । अच्छी वकालत चल रही थी, स्वयं के भौतिक उन्नयन के प्रयास चल रहे थे किन्तु गाँधी इनसे उपर उठ कर जन सक्रियता के क्षेत्र में आ गये जहां उन्होंने सामान्य व्यक्तिव व भारतीयों के सम्मान की रक्षा कार्य के लिये कार्य किया । बाद में उन्होंने परहितार्थ कार्य किये जिनमें कई वर्गो के लोग उनके साथ जुड़े । उनका मानना था कि भारतीयों को स्वयं भी पूर्णत: दोषमुक्त बनना होगा - आत्मा व शरीर की चिन्ताओं से ऊपर उठकर उन्हें सामाजिक हित व आध्यात्मिकता के बारे में सोचना होगा ।

5.7 सारांश

जैसे गाँधी आध्यामिक उद्विकास की दिशा में आगे बढे और प्रजातिवाद के विरूद्ध संघर्ष में शामिल होते गये, उनके राजनीतिक दर्शन का क्षेत्र भी परिपक्व होता गया । उन्होंने प्रजातिय पूर्वाग्रह की नैतिक आधार पर निंदा की और जनकार्यकर्त्ता के रूप में दक्षिण अफ्रीका की स्थानीय सरकारों के विषय में खुल कर अपने विचार प्रकट किये । उन्होंने उनकी भेदवावपूर्ण व अन्यायपूर्ण नीतियों की आलोचना की और उन्होंने इस बुराई के विरूद्ध भारतीय समुदाय को इकट्ठा करने का प्रयास किया । उन्होंने परिवेदनायें व्यक्त करने व उनके निराकरण मांगने के लिये उपलब्ध साधनों का भरपूर प्रयोग किया । चूंकि स्थानीय सरकारें अड़ियल थी, गाँधी के नेतृत्व में भारतीय समुदाय व स्थानीय सरकारों के बीच आमना सामना अपरिहार्य था । इस झगडे का परिणाम सत्याग्रह के जन्म के रूप में हुआ। सत्याग्रह का दर्शन व प्रविधि महात्मा गाँधी द्वारा इस संसार को दिया गया महत्वपूर्ण योगदान है ।

5.8 अभ्यास प्रश्न

1. दक्षिण अफ्रीका में अश्वेतों द्वारा झेली गई अन्यायपूर्ण स्थितियों के बारे में लिखें ।
2. गाँधीजी के साथ हुये अन्यायपूर्ण व्यवहार की विभिन्न घटनायें लिखें ।
3. दुर्व्यवहार की घटनाओं पर गाँधीजी ने किस प्रकार प्रतिक्रिया व्यक्त की? उल्लेख कीजिए
4. दक्षिण अफ्रीकी संघ के गठन के बाद गाँधीजी की भूमिका व सक्रियता के बारे में चर्चा कीजिये।

5.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. एम.के.गाँधी, सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अनु. वी.जी. देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972
2. नंदा, बी. आर. महात्मा.गाँधी : ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
3. प्यारेलाल, महात्मा गाँधी: दी अर्ली फेस, भाग- 1, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1965

4. डोक, जे. जे. ए पेट्रियोट इन साऊथ अफ्रीका, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2005
5. रॉथरमण्ड, दैतमर, महात्मा गाँधी: एन एस्से इन पॉलिटिकल बायोग्राफी, मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1991
6. क्रिपलानी, कृष्णा, गाँधी: ऐ लाइफ, एन. बी. टी. नई दिल्ली, 2008
7. फिशर, लुई, द लायफ ऑफ महात्मा गाँधी, ग्रनेडा पब्लिशिंग लि. लंदन, 1982
8. कृष्णन, अनीता, गाँधीयन सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अल्का पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008

इकाई-6

भारत में गांधी (1915 -1948)

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 चम्पारण सत्याग्रह

6.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति

6.2.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

6.2.3 चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

6.3 खेड़ा सत्याग्रह

6.3.1 कारण

6.3.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

6.3.3 महत्त्व

6.4 अहमदाबाद मिल सत्याग्रह

6.4.1 कारण

6.4.2 गाँधी का योगदान

6.4.3 महत्व

6.5 रोलट सत्याग्रह

6.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति

6.5.2 महत्व

6.6 असहयोग आंदोलन

6.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति

6.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम

6.6.3 आंदोलन में गाँधी की भूमिका व कार्ययोजना

6.6.4 आंदोलन का महत्व

6.7 बारदोली सत्याग्रह

6.7.1 बारदोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण

6.7.2 बारदोली सत्याग्रह की प्रगति

6.7.3 गाँधी की कार्ययोजना

6.7.4 सत्याग्रह की प्रगति

6.7.5 सत्याग्रह का महत्व

6.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

6.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण

6.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

6.8.3 आंदोलन का महत्व

6.8.4 सविनय अवज्ञा आंदोलन का पुनरूत्थान व प्रगति
6.9 वाइकोम सत्याग्रह
6.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्देश्य
6.9.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति
6.9.3 वाइकोम सत्याग्रह में गाँधी का नेतृत्व
6.9.4 सत्याग्रह का महत्व
6.10 भारत छोड़ो आंदोलन
6.10.1 भारत छोड़ो आंदोलन के कारण
6.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की भूमिका
6.10.3 आंदोलन का महत्व
6.11.3 भारत छोड़ो आन्दोलन पश्चात् से जनवरी, 1948 तक
6.11.1 भारतीय स्वतंत्रता, ब्रिटिश शासन की नीति और गाँधीजी
6.11.2 1942 की हिंसात्मक गतिविधियाँ एवं गाँधीजी
6.11.3 भारत का विभाजन और गाँधीजी
6.11.4 साम्प्रदायिकता और गाँधीजी
6.12 सारांश
6.13 अभ्यास प्रश्न
6.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात गाँधी द्वारा भारत में सम्पन्न किये गये विभिन्न सत्याग्रह के बारे में निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकेगे :-

- चम्पारण सत्याग्रह के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- खेडा सत्याग्रह के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- अहमदाबाद सत्याग्रह कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- रोलट सत्याग्रह के कारण, प्रगति, महत्व व उसमें गाँधी की भूमिका
- असहयोग आन्दोलन कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- बारदोली सत्याग्रह कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य
- सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कारण गाँधी के विचार एवं कार्य
- वायकम सत्याग्रह कारण गाँधी के विचार एवं कार्य
- भारत छोड़ो आन्दोलन के कारण, गाँधी के विचार एवं कार्य

6.1 प्रस्तावना

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय मूल के लोगों की समस्याओं का समाधान करके गाँधी 9 जनवरी 1915 को भारत लौटे । पहुँचने के पश्चात् जब वे अपने राजनीतिक गुरू गोखले से मिले तो उन्होंने गाँधी को कहा कि वे सक्रिय भारतीय राजनीति में आने से पूर्व अपने आप को भारतीय समस्याओं और परिस्थितियों से भली-भाँति परिचित कर लें । गाँधी ने अत: एक साल

के लिए अपने आप को इस ध्येय के लिए समर्पित कर दिया । उन्होंने भारत का भ्रमण किया और अनेक लोग, जनप्रतिनिधि, विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं में कार्यरत लोगों से मिले । उन्होंने अहमदाबाद में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की तथा अनेक समारोह में भाग लिया परन्तु गोखले को दिए हुए वचनानुसार विवादास्पद राजनीतिक विचारों पर चुप्पी साथी । एक साल का समय जैसे-जैसे समाप्त होने को आया तो गाँधी ने भी अपनी चुप्पी तोड़ी और राजनीतिक विषयों पर अपना मत सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत करने लगे । अपने आप को सार्वजनिक कार्य के लिए समर्पित करने का मौका गाँधी को 1916 में चम्पारन समस्या ने प्रदान किया।

6.2 चम्पारण सत्याग्रह

6.2.1 चम्पारण समस्या की प्रकृति।

बिहार स्थित चम्पारन जिला में कृषकों को नील की खेती से सम्बन्धित अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। 19वीं शताब्दी के प्रारम्भ में चम्पारन में नील की खेती तथा उद्योग का प्रारम्भ हुआ । यूरोपीय उत्पादक जो नील उद्योग से जुड़े थे उनके दबाव में आकर वहाँ 'तीन कथिया व्यवस्था ' को अपनाया गया जिसमें कृषकों को अनिवार्य रूप से अपने खेत में कम से कम 20 प्रतिशत कृषि उत्पादन के लिए रखना था । नील उद्योग से जुड़े यूरोपीय लोग अथवा उनके प्रतिनिधि कृषकों द्वारा नील को बहुत सस्ते दाम में खरीदते थे और भारतीय कृषकों का अनेक तरीके से शोषण करते थे जिसमें अक्सर सरकार की मदद भी मिलती थी । जैसे-जैसे प्राकृतिक नील को अप्राकृतिक नील ने हटाना प्रारम्भ तो यूरोपीय लोग जो इस उद्योग से जुड़े हुए थे उन्होंने इस तरह की परिस्थिति में भी अपने स्वार्थपूर्ति हेतु भारतीय कृषकों का नए-नए प्रकार से शोषण करना प्रारम्भ किया । कुल मिलाकर भारतीय कृषकों की स्थिति बहुत ही खराब थी ।

तभी राजकुमार शुक्ला नाम के एक अमीर ब्राह्मण कृषक जो चम्परण निवासी गाँधी के पास आए और उनसे चम्पारण चलकर दक्षिण अफ्रीका की तरज पर चम्पारण के कृषकों की समस्याओं को दूर करने की गुहार की । इस तरह गाँधी ने बिहार के चम्पारण जिले में भारत लौटने के बाद अपना सर्वप्रथम सक्रिय सार्वजनिक कार्य प्रारम्भ किया ।

6.2.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

बिहार पहुँचते ही गाँधी तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने में जुट गए । पटना से मुज़फ्फरपुर पहुँचकर गाँधी संभागीय आयुक्त मॉरशीद से मिले और चम्पारण आने का अपना मकसद सहयोग की अपेक्षा की । परन्तु मॉरशीद का मानना था कि गाँधी नील समस्या के हल में कोई सकारात्मक दे सकते हैं अपितु उन्होंने तो गाँधी के नेक इरादों को भी शक किया और जिला मजिस्ट्रेट हेकॉक को लिखकर अनुरोध किया कि गाँधी को चम्पारण छोड़ने के न्यायिक आदेश जारी किया जाय । गाँधी ने सत्याग्रह करके ऐसे आदेश का पालन करने से इनकार किया और वायसराय महोदय के निजी सचिव को पत्र लिखकर चम्पारण समस्या, इसमें उनके स्वयं के कार्य और अधिकारियों का नाकारात्मक दृष्टिकोण के बारे में स्पष्ट किया । चम्पारण छोड़ने के

आदेश से इनकार करने से गाँधी को पता था कि उन्हें गिरफ्तार किया जा सकता है या फिर उन्हें वहाँ से दूर किया जा सकते हैं । मजिस्ट्रेट के सामने गाँधी ने चम्पारण छोड़ने के सरकारी की अवहेलना करने का कारण स्पष्ट किया और मजिस्ट्रेट ने अपना निर्णय सरकार से वार्ता करने के पश्चात् सुनाने की बात कही।

बिहार के सरकार को इस दौरान यह आभास हुआ कि जिला स्तर पर शासन ने गाँधी के संदर्भ में गलत निर्णय लिए हैं । अत: उसने गाँधी के खिलाफ किए जाने वाले उक्त कार्यवाही समाप्त करने तथा उनके उपयुक्त सहयोग प्रदान करने के आदेश दिए । गाँधी को भी चेतावनी दी गई कि वे सावधानीपूर्वक कृषकों एवं जनता को उकसाए बिना तथा शांति को भंग किए बिना अपना कार्य करें ।

गाँधी ने पुन: जाँच कार्य प्रारम्भ किया और शीघ्र ही वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि चम्पारण में कृषकों का शोषण किया जा रहा है और उनकी स्थिति काफी दयनीय है । नील के साथ किसी प्रकार का समझौता कर चम्पारण समस्या का निराकरण करने के गाँधी का प्रयास साकार नहीं हो सका । क्रमश: उन्हें यह आभास हुआ कि नील उत्पादक गरीब कृषकों के आधारभूत माँगों को भी करने के लिए तैयार नहीं हैं और इस कारण कोई भी व्यक्तिगत प्रयास चम्पारण समस्या का निदान में सफल नहीं हो सकता । इसलिए गाँधी ने सरकर के हस्तक्षेप से इस समस्या का निराकरण करने के लिए प्रयास प्रारम्भ किया । उन्होंने सम्भागीय, भारत सरकार का भी पत्र लिखकर चम्पारण समस्या की जानकारी दी । सरकार से उन्होंने जाँच आयोग भारत सरकार ने बिहार सरकार को जाँच समिति गठित करने के आदेश दिए तथा गाँधी को भी समिति में सदस्य बनने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया । बिहार सरकार ने क्रमश: चम्पारण जाँच समिति का गठन किया।

समिति के जाँच के दौरान गाँधी ने चम्पारण के कृषकों की समस्याओं तथा उनके अधिकारों के हनन तथा नील उत्पादकों के अन्यायपूर्ण और शोषणात्मक व्यवहार के तथ्यात्मक प्रस्तुति कर आग्रह किया कि कृषकों को उनके आधारभूत अधिकार और सुविधाएँ वापिस मिलने चाहिए और इसके लिए न्यायोचित कार्यवाही की जानी चाहिए । समिति ने अन्त में निर्णय लिया कि चम्पारण में अपनष्ट जाने वाले 'तीन काथिया' व्यवस्था को तुरन्त समाप्त कर देना चाहिए और गरीब किसानों से जो गैर कानूनी वसूली नील उत्पादकों द्वारा किया जा रहा था उसे भी समाप्त कर दिया जाए और किए गए वसूली का 25 प्रतिशत पुन: कृषकों को लौटाया जाए । समिति की सिफारिश को कानून के माध्यम से लागू करने का प्रयास किया गया ।

चम्पारण सत्याग्रह का महत्व

इस सत्याग्रह में भारत में सार्वजनिक जीवन के क्षेत्र में गाँधी के सत्याग्रह का प्रारम्भ हुआ। भारत में नेता के प्रति ब्रिटिश सरकार की उदासीनता देख उन्हें काफी दुख हुआ। उनके इस कार्य से भारत में उनकी लोकप्रियता को और बढ़ावा मिला तथा अनेक शुभ सम्बोधन उन्हें प्राप्त हुआ। कांग्रेस के पटल पर भी उनके इस प्रयासों को सराया गया और तालियों से स्वागत किया गया । एक महत्वपूर्ण बात यह भी थी कि इस कार्य में गाँधी ने बिना किसी संस्थागत मदद से समस्या का निराकरण अपने ही ढंग से करने में सफलता प्राप्त की । इसने उनका आत्मविश्वास बढ़ाने का कार्य किया और आने वाले सार्वजनिक जीवन में सत्याग्रह का प्रयोग

करने के लिए प्रेरित किया । स्वतंत्रता आन्दोलन के चलते सत्याग्रह और गाँधी ने नए प्रयोग द्वारा प्राप्त के लिए क्रमश: निषप्रभावी होते हुए उदारवादी और उग्रवादी तरीकों का विकल्प प्रस्तुत कर भारतीयों की उम्मीद जगाने का भी कार्य किया । ब्रिटिश सरकार का गाँधी के साथ सम्बन्ध को प्रभावित करने में भी इस सत्याग्रह ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । सरकार ने तत्पश्चात काफी सोच समझकर सावधानीपूर्वक ही गाँधी के विरूद्ध कार्य करने के लिए कदम बढ़ाने का निर्णय किया । इस सत्याग्रह के माध्यम से गाँधी अपने अन्तरंग अनुयायी और साथी बनाने में सफल हुए जिनके सहयोग एवं समर्थन ने उन्हें स्वंतत्रता आन्दोलन में काफी सम्बल प्रदान किया ।

6.3 खेड़ा सत्याग्रह

6.3.1 कारण

इस सत्याग्रह का केन्द्रीय विषय 1917-18 में फसल की स्थिति कृषि उत्पादन से सम्बन्धित था । अत्यधिक वर्षा ने खरीफ फसलों को काफी नुकसान पहुँचाया था। यद्यपि रवि खेती ने किसानों से इस नुकसान की भरपाई करने में काफी मदद पहुँचाई थी । गुजरात के खेड़ा जिले में रबि फसल में से बहुत कम लाभ प्राप्त हुआ । महामारियों के फैलने से लोगों की परेशानियाँ और बढ़ी । मुसीबतों से सूझते हुए खेड़ा के लोगों ने स्थानीय अधिकारियों में कर अदायगी में रियायत देने का आग्रह किया ।

6.3.2 गाँधी के विचार एवं कार्य

गाँधी के अनुसार स्थानीय अधिकारियों ने कर आँकलन गलत किया था । उन्होंने यह भी कहा कि जनता को जब विपरीत परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तो ऐसी अवस्था में यह उनका कानूनी अधिकार है कि उन्हें इस प्रकार की रियायत मिल सके । जब स्थानीय सरकार उनके तथा खेड़ा की जनता की बात मानने के लिए तैयार नहीं हुए तो उन्होंने सरकार को कर नहीं देने के लिए जनता को प्रेरित किया और कहा यदि ऐसे सभ्य तरीके से किया जाए तो यह कार्य गैर कानूनी नहीं माना जा सकता है।

4 फरवरी, 1918 को मुम्बई के एक सार्वजनिक मीटिंग में उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने का संकेत दिया । सरकार से उन्होंने सत्याग्रह प्रारम्भ करने से पूर्व इस विवाद के निस्तारण के लिए सरकार से आग्रह किया परन्तु असफल हुए । स्वयं उन्होंने तथ्यों को जानने का प्रयास किया और जब वे आश्वस्त हुए कि खेड़ा कृषकों के समस्या वास्तव में सही है तो उन्होंने सरकार से आग्रह किया कि वह कर वसूली फिलहाल स्थगित कर दे और एक स्वतंत्रता जाँच आयोग गठित कर तथ्यों को जानने का प्रयास करे । परन्तु सरकार ने गाँधी के इस सुझाव को भी अस्वीकार किया तभी गाँधी ने 22 मार्च 1918 से सत्याग्रह प्रारम्भ करने का निर्णय किया ।

सत्याग्रह का प्रारम्भ इस शपथ से हुआ कि खेड़ा के कृषक निर्धारित कर की अदायगी नहीं करेंगे और शान्तिपूर्वक सरकार द्वारा किए जाने वाले कार्यवाही को सहेंगे । गाँधी ने खेडा कृषकों के लिए जनसमर्थन प्राप्त करने का प्रयास किया । अखबारों, विभिन्न मंचों एवं भ्रमण

के माध्यम से गाँधी ने इस सत्याग्रह को प्रभावी बनाने का प्रयास किया । आन्तरिक स्तर पर उन्होंने सत्याग्रह के विभिन्न सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक पक्ष पर अपने वक्तव्यों और कार्यों से सम्बल प्रदान करने का प्रयास किया । प्रथम विश्वयुद्ध की समस्याओं से प्रभावित ब्रिटिश सरकार भारत की जनता के विरूद्ध टकराव की स्थिति को त्याग कर युद्ध में सहयोग प्राप्त करने का इच्छुक था । इसलिए उसने प्रान्तीय सरकार को आदेश दिया कि वह इस सम्बन्ध में राज्य के हितों को ध्यान में रखते हुए समस्या का निदान करने के लिए आवश्यक कार्यवाही करे । क्रमानुसार निर्देश जिला प्रशासन तक पहुँचा और जिला कलक्टर महोदय ने कुछ रियायतों की घोषणा की तथा अधिकारियों को निर्देश दिया कि कर वसूली करते वक्त कृषकों के साथ सहानुभूतिपूर्वक कार्य करें।

6.4 अहमदाबाद सत्याग्रह

6.4.1 कारण

अहमदाबाद के मिलों में काम करने वाले मजदूरों को दिए जाने वाला महंगाई भत्ता इस विवाद का केन्द्रीय विषय था । अगस्त 1917 में प्लेग जैसे महामारी के दौरान मजदूरों को मिलों में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए मिलों के मालिकों ने मजदूरों को बोनस प्रदान किया था । 1918 में स्थिति के सामान्य होने पर मालिकों ने यह बोनस बन्द करने का निर्णय किया । मजदूरों का कहना था कि विश्वयुद्ध की बढ़ती सम्भावनाओं के कारण सभी आवश्यक वस्तुओं की कीमत दुगनी से भी ज्यादा हो गई है और इसलिए जो बोनस उन्हें मिल रहा था उसका 50 प्रतिशत राशि श्रमिकों को महंगाई भत्ता के रूप में दिया जाए ।

6.4.2 गाँधी का योगदान

गाँधी अब तक न केवल गुजरात में अपितु सम्पूर्ण भारत के महत्वपूर्ण कार्यकर्ता के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुके थे । अम्बालाल साराभाई नाम के प्रसिद्ध उद्योगपति गाँधी से मिले और उनसे अनुरोध किया कि वे मजदूरों और अहमदाबाद मिल मालिकों के मध्य उत्पन्न विवाद को समाप्त करने में मदद करें । गाँधी ने सहमति व्यक्त करते हुए जाँच कार्य प्रारम्भ किया । वह मिल मालिक एवं मिलों में कार्य करने वाले श्रमिकों के प्रतिनिधियों से मिले और दोनों पक्ष के लोगों को अधिग्रहण समिति को विवाद सौंपने और निस्तारण करने के लिए तैयार किया । जहाँ गाँधी शंकरलाल बेकर एवं वल्लबभाई पटेल मजदूरों का प्रतिनिधित्व इस बोर्ड में कर रहे थे वहीं अम्बालाल साराभाई, जगाभाई दलपतभाई और चन्दूलाल मालिकों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे ।

अधिग्रहण समिति का कार्य प्रारम्भ ही हुआ था कि कुछ मिलों के मजदूरों ने हड़ताल पर जाने का निर्णय लिया । मिल मालिक ऐसे निर्णय से बहुत नाराज हुए और उन्होंने यह निर्णय कि वे अधिग्रहण समिति के निर्णय को स्वीकार नहीं करेंगे । 22 फरवरी 1918 से मिल मालिकों ने मिलों तालाबन्दी करना प्रारम्भ किया । उन्होंने यह भी निर्णय लिया कि वे उन सभी श्रमिकों की सेवाएँ कर देंगे जो 20 प्रतिशत अतिरिक्त वेतनभत्ता लेकर काम पर पुन: नोट कर नहीं आते हैं । 12 मार्च 1918 को जब मिल मालिकों ने तालाबन्दी समाप्त कर मिलों को

चालू करने का प्रयास किया तो मजदूरों ने उसी दिन से अपना असन्तोष व्यक्त करने के लिए हड़ताल पर जाने का निर्णय किया ।

गाँधी ने जाँच के पश्चात् पाया कि 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि श्रमिकों के लिए न्याय सम्मत मांग है, और उन्हें इस न्यूनतम न्याय सम्मत वृद्धि के लिए ही मांग करना चाहिए । यहाँ मांग श्रमिकों को गाँधी द्वारा दिलाए गए शपथ का मूल तत्व बन गया । जब मिल मालिकों ने इस मांग को अस्वीकार किया तो गाँधी श्रमिकों का नेतृत्व करते हुए उनसे सत्याग्रह करने को कहा । गाँधी श्रमिकों के घर-घर जाकर उन्हें सत्याग्रह के लिए तैयार किया । सार्वजनिक मंच एवं अपने लेखन के माध्यम से भी गाँधी ने श्रमिकों को इस संदर्भ के लिए जागत किया । अहमदाबाद की सड़कों में श्रमिकों का जुलूस निकाला गया । सत्याग्रह का शपथ प्रत्येक दिन के बैठकों में दोहराया गया और संघर्ष की प्रगति सम्बन्धित सूचनाओं को प्रसारित किया गया । बैठकों में उत्पन्न होने वाले समस्याओं के बारे में भी विचार-विमर्श किया गया । गाँधी ने श्रमिकों को हड़ताल के दौरान कोई वैकल्पिक काम ढूँढ कर रोजी-रोटी कमाने का परामर्श दिया । श्रमिकों को स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के बारे में भी गाँधी ने उपदेश दिए।

कुछ समय बाद जब कुछ श्रमिकों ने अपने आप को हड़ताल में सहयोग करने के लिए असमर्थ पाया तो उन्होंने 20 प्रतिशत महंगाई भत्ता पर ही मिलों में लौटकर कार्य करना चाहा तो गाँधी काफी क्षुब्ध हुए । उन्होंने श्रमिकों से पुन: अपील करते हुए कहा कि वे अपने मूल मांगों पर अड़े रहे और सत्याग्रह जारी रखें।

15 मार्च, व 1918 को गाँधी ने एलान किया कि वे तब तक उपवास रखेंगे जब तक कि सभी श्रमिक मिलों में जाना बन्द नहीं करते । उनके उपवास के तीसरे दिन मिल मालिकों का नेतृत्व कर रहे अम्बालाल साराभाई ने मालिकों की तरफ से श्रमिकों को 35 प्रतिशत वेतन वृद्धि देने का प्रस्ताव रखा और गाँधी को उनकी मदद करने के लिए आग्रह किया ।

समस्या के निदान के लिए अधिग्रहण समिति स्थापित करने के लिए गाँधी ने अपनी स्वीकृति प्रदान की । गुजरात महाविद्यालय के उपप्राचार्य प्रोफेसर आनन्दशंकर ध्रुव को अधिग्रहण अधिकारी के रूप में दोनों पक्ष द्वारा स्वीकार किया गया और तीन महीने के अन्दर अपने निर्णय सुनाने का आग्रह किया । गाँधी ने अपना उपवास समाप्त करने की घोषणा की और श्रमिकों ने गाँधी को कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए मिठाईयाँ बाँटी ।

6.4.3 महत्त्व

अहमदाबाद सत्याग्रह से गाँधी को गुजरात में और अधिक सम्बल प्राप्त हुआ । जहाँ खेड़ा ने उन्हें एक सशक्त देहाती और कृषक आधार प्रदान किया वही अहमदाबाद ने उन्हें एक सशक्त शहरी और श्रमिक आधार प्रदान किया । मिल मालिकों को भी समस्या रवे संतोषजनक निदान प्राप्त हुआ और उनके तथा गाँधी के सम्बन्धों में किसी प्रकार की कड़वाहट भी उत्पन्न नहीं हुई । श्रमिकों एवं उद्योगों के क्षेत्र में भी सत्याग्रह के माध्यम से समस्याओं का निराकरण हो सकता है यह इस सत्याग्रह द्वारा सिद्ध हो गया । अहमदाबाद सत्याग्रह में उनके द्वारा अपनाया गया उपवास भविष्य में सार्वजनिक राजनीतिक आन्दोलन में भूख हड़ताल का द्योतक था ।

6.5 रोलट सत्याग्रह

ब्रिटेन पर प्रथम विश्व युद्ध का दबाव व भारत के प्रति उसकी नीति ने गाँधी को राष्ट्रीय स्तर का नेता बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । युद्ध मे उलझा ब्रिटेन भारत पर अपनी पकड़ मजबूत करने का मार्ग खोज रहा था क्योंकि यह उसका सर्वाधिक सम्पन्न उपनिवेश था । अपनी स्थिति को मजबूत करने के लिये उन्होंने दमनात्मक समझौते' की नीति का पालन किया । इस प्रकार एक तरफ तो वे भारतीयों के बढ़ते असंतोष के कारण सत्ता हस्तांतरण की योजना बना रहे थे व साथ ही इस तरीके से भारतीयों मे अपने ऐसे समर्थको को आकर्षित कर रहे थे जो उनके शासन को स्थायित्व दे सके । दूसरी तरफ वे उन भारतीयों के विरूद्ध दमनात्मक नीति अपना रहे थे जो उनकी सत्ता को चुनौती दे रहे थे ।

6.5.1 सत्याग्रह के कारण व प्रगति

दमनात्मक तरीकों के माध्यम से रोलट अधिनियम ने भारत में ब्रिटिश शासन के सुदृढ़ीकरण की दिशा मे एक कदम और आगे बढाया । रोलत विधेयक के माध्यम से सरकार अपराध व विद्रोह पर नियन्त्रण करना चाहती थी । सरकार ने इस विधेयक का यह कहते हुए पक्ष लिया कि यह तो एक निरोधात्मक कार्यवाही है जिसका उपयोग तभी होगा जब गवर्नर जनरल यह समझेंगे कि भारत के अमुक भाग में क्रान्तिकारी गतिविधियों से प्रशासन को खतरा है । अंग्रेजो ने यह भी दावा किया कि इस अधिनियम का दुरूपयोग रोकने के लिये एक जाँच अधिकारी नियुक्त किया जायेगा जो लोगों के विरूद्ध इस प्रकार के आदेशों की जाँच करेगा । तथापि भारतीय इसे स्वतन्त्रता, न्याय व नागरिकों के मूलभूत अधिकारों के सिद्धान्तों के विरूद्ध मानतें थे । वे यह भी मानते थे कि ब्रिटिश सरकार युद्ध से पूर्व किये गये वादों से पीछे हट रही व तथा वह भारत को वास्तव में स्व-शासन देने की इच्छा नहीं रखती है ।

सभी तत्कालीन राजनेताओं ने सरकार के इस कार्य की सर्वसम्मति से निंदा की । लेकिन विरोध करने के पारम्परिक तरीकों की सीमाओं के कारण वे ब्रिटिश सरकार की दमनात्मक कार्यवाही का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना करने की रणनीति नहीं बना सके । इरा राजनीतिक गतिरोध को दूर करने के लिये गाँधी ने 'सत्याग्रह' को अपनाने की बात कही ।

रोलट विधेयक के सम्बन्ध में सरकार की कार्यवाही से गाँधी जी बेहद आहत थे । उन्होंने माना कि यह विधेयक न केवल न्याय विरूद्ध है अपितु ब्रिटिश प्रशासन की दमनात्मक नीति प्रमाण है । ऐसे स्वेच्छाचारी व तानाशाह शासन का विरोध करना भारतीयों के लिये खुली चुनौती है । ऐसा हुए उन्होंने सरकार को चेतावनी दी कि यदि वह इस क्रूर विधेयक की दिशा में आगे बढ़ी तो एक बड़ा आंदोलन आंदोलन किया जायेगा ।

24 फरवरी 1991 को 'सत्याग्रह प्रतिज्ञा' तैयार की गई । इसमें रोलेट विधेयक को अनुचित व स्वतन्त्रता व न्याय के सिद्धान्तों के विरूद्ध मानते हुए इसे व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों को छीनने वाला माना गया । अत: गाँधी ने कहा कि यदि यह विधेयक कानून बन जाता है तो इसका सविनय उल्लंघन किया जायेगा और ऐसा तब तक किया जायेगा जब तक कि इसे वापिस नहीं ले लिया जाता । इस में यह भी कहा गया कि विरोधकर्त्ता सत्य और

अहिंसा का पालन करेंगे । यह विधेयक यदि अधिनियम बन जाता है तो गाँधी ने सत्याग्रह और सविनय अवज्ञा प्रारम्भ करने का इरादा भी व्यक्त किया।

उन्होंने सरकार से रोलट विधेयक पर पुनर्विचार करने की अपील की । मार्च के महीने में प्रेस, बैठकों, पर्चो आदि के माध्यम से रोलट विधेयक व इसके अनुचित पक्षों के बारे में विस्तृत प्रसार किया गया । एक सत्याग्रह सभा की स्थापना की गई और आंदोलन चलाने के लिये इसका बम्बई रखा गया । एक सत्याग्रह समिति भी नियुक्त की गई जिसका कार्य सविनय अवज्ञा हेतु कानूनों चयन करना था । 30 मार्च 1991 को एक हड़ताल का आह्वान किया गया । बाद में इसे 6 अप्रेल 1919 के स्थगित कार दिया गया । गाँधी ने इस दिवस को 'अपमान व प्रार्थना दिवस' के रूप में मनाने की अपील की । साथ ही प्रत्येक सत्याग्रही के लिये आवश्यक था कि वह 24 घंटे का उपवास रखकर सविनय अवज्ञा के अनुशासन बनाये । वे जो इस प्रतिज्ञा या उपवास के लिये तैयार नहीं थे उन्हें भी इसमें भाग लेने की इस शर्त पर दी गई कि वे सत्य' पालन की शपथ लेगें तथा किसी भी परिस्थिति में हिंसा का सहारा नहीं लेगें ।

दुर्भाग्य से सूचना के प्रभावी प्रसार की कमी के कारण दिल्ली के कुछ इलाकों में 30 मार्च को ही हड़ताल कर दी गई । सड़कों पर प्रदर्शन हुए व दुकानें बंद करा दी गई । हिंसा व की घटनायें हुई । पुलिस ने गोलीबारी की व कुछ लोगों की जानें गई । गाँधी ने सरकारी कार्यवाही की निंदा की और सत्याग्रहियों को यह निर्देश दिए कि वे हर स्थिति में सत्य का पालन करेगें व शांति और व्यवस्था बनाये रखेगें । भारत के अन्य इलाकों में 6 अप्रेल को हड़ताल की गई । बम्बई में गाँधी ने एक बड़ी सभा को सम्बोधित किया और सत्याग्रह के अनेक पक्ष पर विस्तार से चर्चा की । अनेक पत्र पत्रिकाओं, जन सम्बोधनों व प्रेस विज्ञप्तियों के माध्यम से गांधी ने सत्याग्रहियों को अनेक दिशा निर्देश दिये।

बम्बई की सत्याग्रह सभा ने प्रतिबन्धित साहित्य व समाचार पत्रों के पंजीकरण से सम्बन्धित कानूनों का उल्लंघन करने सम्बन्धी निर्देश जारी किये । प्रचार के लिये गाँधी के 'हिन्द स्वराज' 'सर्वोदय या यूनिवर्सल डॉन' 'स्टोरी ऑफ अ सत्याग्रही' तथा 'लाईफ एंड एड्रेस ऑफ मुस्तफा कमाल पाशा' को चुना गया । गाँधी के 'सत्याग्रह' का प्रथम संस्करण बिना पंजीकरण के ही जारी हुआ । गाँधी जी ने पत्रिकाओं में अपने लेख की एक श्रृंखला के माध्यम से लोगों को स्वदेशी की अवधारणा के बारे में बताया तथा साम्प्रदायिक सौहार्द बनाये रखने पर बल दिया । उन्होंने यह भी बतलाया कि चुनिंदा कानूनों को किस प्रकार सविनय, साहसपूर्वक व अहिसंक रूप से उल्लंघन किया जाये।

गाँधी ने दिल्ली जाने का निश्चय किया ताकि वे वहाँ जाकर 30 मार्च की घटना के शिकार लोगों को शांत कर सकें व उनके प्रति सहानुभूति व्यक्त कर सके । अप्रेल 1919 को दिल्ली जाते समय ही उन्हें आदेश मिला जिसमें उनके पंजाब व दिल्ली जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया । जब गाँधी ने आदेश मानने से इंकार किया तो उन्हें गिरफ्तार कर बम्बई भेज दिया गया जहां उन्हें छोड़ दिया गया।

गाँधी की गिरफ्तारी का समाचार आग की तरह फैला । उनकी गिरफ्तारी का विरोध करने के लिये 10 अप्रेल को पूरे भरत में हड़ताल करने की योजना बनाई गई । लेकिन इस

हड़ताल में अहमदाबाद, अमृतसर जैसे कुछ स्थानों पर आगजनी, उपद्रव व हिंसा की घटनायें हुई । कुछ यूरोपीय लोगों को मार दिया गया तथा सरकारी सम्पत्ति को क्षति पहुंचायी । पुलिस ने जब गोलीबारी की तो कुछ भारतीयों को जान गंवानी पड़ी । पंजाब में गाँधी की गिरफ्तारी व पंजाब के दो प्रमुख नेताओं डॉ. सत्यपाल व डॉ. किचलु की गिरफ्तारी व निर्वासन की कार्यवाही एक साथ हुई । इन गिरफ्तारियों का व मिकेल ओ डायर के सैनिक शासन की दमनकारी कार्यवाहियों का विरोध करने के लिये लोगों ने प्रदर्शन किये व जुलूस निकाले । जन विद्रोह, पुलिस गोलाबारी व कई यूरोपियन्स के मारे जाने की घटनायें हुई । अमृतसर के जलियांवाला बाग में लगभग दस हजार लोग एकत्रित हुए । वे अपने नेताओं की गिरफ्तारी व ओ डायर के निरंकुश शासन का विरोध कर रहे थे । ब्रिगेडियर जनरल डायर, जिसकी कमाण्ड में सेना की टुकडी ने जनहिंसा को सफलतापूर्वक कुचला था, ने सभा को तितर बितर करने की ठानी । वह अपने सेना के साथ बाग तक गया और बिना चेतावनी के उसने गोलाबारी शुरू कर दी । इस भयावह कार्यवाही के परिणामों ने भारतीयों को हिला कर रख दिया । इसी प्रकार बम्बई, वीरम्गम व नदियाड़ मे भी उपद्रव हुए । पत्थरबाजी, सार्वजनिक भवनों को जलाने व टेलीफोन की लाइने काटने की घटनाये भी हुई ।

सत्याग्रह की हिंसात्मक घटनाओं से आहत गाँधी ने 18 अप्रेल 1919 को 'सत्याग्रह' स्थगित कर दिया । उन्होंने सत्याग्रह के प्रयास को एक बड़ी गलती माना व तीन दिन के प्रायश्चित उपवास की घोषणा की । उन्होंने सत्याग्रहियों को भी उपवास रखने व अपना अपराध स्वीकार कराने की सलाह दी । उन्होंने महसूस किया कि लोग सत्याग्रह के लिये अभी उचित रूप रमे तैयार नहीं है । उन्होंने निश्चय किया कि भविष्य में ऐसा आंदोलन चलाने के पूर्व वे एक ऐसे स्वयंसेवकों का दल बनायेंगे जो सुप्रशिक्षित होगें, निर्मल मन के होगें तथा सत्याग्रह के मूल भाव को समझते होगें । इस प्रर उन्होंने स्वयंसेवकों का दल बनाया और लोगों को सत्याग्रह का अर्थ और उसके प्रयोग के बारे में प्रशिक्षित किया।

रोलट सत्याग्रह बीच में ही समाप्त कर दिये जाने के कारण अपने स्वाभाविक परिणाम तक नहीं पहुँच सका व अपने उद्धेश्यों को प्राप्त नहीं कर सका । किन्तु सत्याग्रह के माध्यम से लोगों की तीव्र प्रतिक्रिया को देखते हुए सरकार ने दूसरे रोलत विधेयक का विचार त्याग दिया व सामान्य आपराधिक कानून में स्थायी परिवर्तन लाना चाहा । रोलत सत्याग्रह गाँधी के सत्याग्रह के आदर्श सिद्वान्तों से विचलित हो गया । इन घटनाक्रमों से गाँधी बेहद आहत हुए तथा उन्होंने रोलट सत्याग्रह चलाने में अपनी गलती स्वीकार की।

6.5.2 महत्व

रोलट सत्याग्रह ने भारत में गाँधी की राजनीतिक प्रगति में महत्वपूर्ण निभाई । उन्होंने स्वयं को अखिल भारतीय स्तर के एक सशक्त नेता के रूप में स्थापित किया । उन्होंने 'सत्याग्रह' के माध्यम से राजनीतिक स्तर पर बने गतिरोध को दूर करने का एक अलग तरीका बतलाया भारतीयों की आकांक्षाओं व ब्रिटिश सरकार के अडियलपन को देखते हुए यथोचित था । निरकुंश सत्ता के की तकनीक के रूप में गाँधी के निर्देशन में 'सत्याग्रह' अनेक स्थानीय

परिवेदनाओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम बन गया तथा साम्राज्यवादी सरकार से सभ्य व्यवहार की अपेक्षा के साथ एक साथ जुड़ गये।

सत्याग्रह के दौरान घटी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं ने गाँधी के अखिल भारतीय नेतृत्व की खामियों को उजागर किया । अपनी शक्ति व कमजोरियों के प्रति सजग रहते हुए गाँधी ने राजनीति में सक्रिय व प्रत्यक्ष भूमिका निभाने का निश्चय किया ताकि वे भारत को अपने आदर्शो के अनुरूप लक्ष्यों की ओर ले जा सकें । अमृतसर में आयोजित कांग्रेस में गाँधी की मन: स्थिति स्पष्ट हुई । उन्होंने स्वयं कि अमृतसर में कांग्रेस में उनकी भागीदारी कांग्रेस राजनीति में उनका वास्तविक प्रवेश है । इस प्रकार वे र केवल कांग्रेस के मंच पर अपितु भारत के नेतृत्व के स्पष्ट भागीदार बन गये।

6.6 असहयोग आन्दोलन

6.6.1 आंदोलन के कारण व प्रगति

रोलट सत्याग्रह के बाद गाँधी ने भारतीय राजनीति में प्रत्यक्ष व सक्रिय भूमिका निभाई 1 दिसम्बर 1919 के शाही घोषणा व सुधार अधिनियम को शासन व शासित के बीच एक नये युग का सूत्रपात माना गया । रोलट सत्याग्रह को समाप्त करने में यह भी गाँधी के लिये एक प्रेरक कारक था । इससे गाँधी के मन में आशा की किरण जगी और उन्होंने माना कि भारत में ब्रिटिश शासक ब्रिटेन की व्यवस्था के स्वाभाविक आदर्शो के अनुरूप कार्य करेगें । यही आशा उनके ब्रिटिश शासन के प्रति निष्ठा के मूल मे थी । इसीलिये उन्होंने शाही घोषणा व सुधारों को ब्रिटिश आदर्शो के अनुरूप माना और उन्होंने अपेक्षा की कि भारतीय संदर्भ में ब्रिटिश शासक भारतीयों के साथ न्याय करेंगे । उन्होंने भारतीयों से कहा कि वे सुधारों को सफल तनाने में सरकार का सहयोग करें और साथ साथ अपनी अपूर्त आकांक्षाओं को प्राप्त करने की दिशा में कठोर परिश्रम भी करें।

लेकिन अंग्रेजो ने गाँधी की आशाओं को फिर से झूठा साबित किया । वे मुसलमानों को किया गया वादा भी न निभा सके जिसमें उन्होंने तुर्की साम्राज्य के संदर्भ में व वहाँ के शासक जिसे खलीफा या मुसलमानों के धार्मिक नेता के रूप में मान्यता के संदर्भ में था । साथ ही हण्टर आयोग की रिपोर्ट जिसमें पंजाब में अपराध के दोषी प्राधिकारियों को बरी किया गया था तथा भारतीयों को स्वराज देने की माँग के संदर्भ मे की गई प्रार्थनाओं व विरोधों को मानते हुए भारतीय आकांक्षाओं के अनुरूप एक सरकार की भूमिका निभाने मे असफल होने पर गाँधी की आशायें धूमिल हो गई । इन घटनाओं ने अंग्रेजो के लोकतान्त्रिक आदर्शो में विश्वास होने के दावो को खोखला साबित किया । साथ ही न्यायोचित्त व व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सिद्धान्तों का घोर उल्लंघन परिलक्षित हुआ । वे केवल ब्रिटिश के निजि औपनिवेशक हितो को स्थायी रखना चाहते थे व भारत मे अपना एकछत्र राज्य बनाये रखना चाहते थे क्योंकि यह उनके औपनिवेशिक हितों की रक्षा के लिये अपरिहार्य बन चुका था ।

भारत मे खिलाफत समस्या अंग्रेजों द्वारा भारतीय मुसलमानों से किये गये वादे से पीछे हटने के कारण हुई । मुसलमानों ने विश्व युद्ध में ब्रिटेन का साथ इस वादे के साथ किया था कि मुसलमान धार्मिक प्रमुख या खलीफा, जो तुर्की शासक भी था, के साथ अच्छा व्यवहार

होगा । किन्तु हस्ताक्षरित युद्ध विराम की शर्तों के अनुसार खलीफा की शक्तियों को काफी कम कर दिया गया और तुर्की साम्राज्य में भारी कटौती भी की गई ।

तुर्की मामले में की गई कार्यवाही को मुस्लिम समुदाय ने वादाखिलाफी तो माना ही पर साथ ही यह लार्ड एक्विथ व लियोर्ड जार्ज जैसे जिम्मेदार ब्रिटिश राजनेताओं की पूर्व में की गई खुली घोषणाओं और वादों को भी झूठा साबित करती है । एक साथी नागरिक के रूप में गाँधी ने भी मुसलमानों के विचारों से सहमति व्यक्त की । उन्होंने अंग्रेजो द्वारा खिलाफत मामले में की गई कार्यवाही को अनुचित माना और सरकार से कहा कि खिलाफत के संदर्भ में मुसलमानों की परिवेदनाओं का उचित समाधान निकालें।

खिलाफत मामले के संदर्भ में परिवेदनाओं के निराकरण के प्रयासों को संस्थागत करते हुए केन्द्रीय खिलाफत समिति का गठन किया गया जिसका मुख्यालय बम्बई रखा गया । प्रारम्भिक अवस्था में इसकी गतिविधियाँ सुविचारित व नरम रही । मुसलमानों की आकांक्षाओं व खतरों को व्यक्त करने के लिये यदा-कदा सभायें हुई । 19 मार्च 1919 को बम्बई खिलाफत समिति ने संकेन्द्रित कार्ययोजना के अनुसार कार्य करने का प्रस्ताव पारित किया । इसने पूरे भारत में बड़े आंदोलन चलाये । इसके लिये उसने उत्तर भारत के अतिवादी सर्व-इस्लामिस्ट से सहयोग प्राप्त किया । 21 सितम्बर को लखनउ में अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन का आयोजन हुआ । इस सम्मेलन में सबसे महत्वपूर्ण निर्णय यह हुआ कि 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस के रूप में मनाया जायेगा ।

इस दौरान गाँधी ने खिलाफत मामले में हिन्दुओं व मुसलमानों को संघटित करने का प्रयास किया । उन्होंने कुछ हिन्दु व मुसलमान नेताओं से निकट सम्पर्क बनाने का प्रयास किया, बम्बई में खिलाफत सभा को सम्बोधित किया और लखनऊ सभा में 17 अक्टूबर 1919 को खिलाफत दिवस मनाने की घोषणा का स्वागत किया । उन्होंने इस सुझाव को विस्तार देते हुए हिन्दुओं व मुसलमानों से कहा कि इस दिवस पर वे प्रार्थना उपवास व हड़ताल का आयोजन करें । केन्द्रीय प्रान्त व बम्बई, मद्रास तथा बंगाल की प्रेसीडेन्सी में बडी संख्या में हिन्दु व मुसलमान संघटित हुए ताकि इस दिवस को सफल बनाया जा सके । दिल्ली जैसे कुछ स्थानो पर हिन्दु मुस्लिम भाईचारे के अदभूत द्दश्य देखने को मिले ।

नवम्बर में दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय खिलाफत सम्मेलन में खिलाफत आंदोलन को विशेष बल मिला । सम्मेलन में उग्र खिलाफत समर्थको का नियन्त्रण था । सम्मेलन में पारित एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव के अनुसार यदि सरकार खिलाफत मामले में उपेक्षा का व्यवहार जारी रखती है तो वे सरकार के साथ असहयोग करेगें । असहयोग के प्रश्न पर विचार करने के लिये एक उपसमिति का गठन किया गया । अपने भाषण में गाँधी ने इस विचार का समर्थन किया । दिसम्बर 1919 के अन्त में दोनों अलि बिन्दुओं व मौलाना अब्दुल कलाम आजाद को रिहा कर दिया गया । खिलाफत मामले में अपने उग्र विचारों के कारण वे यू.पी. व बंगाल जैसे प्रान्तो के उग्र खिलाफत समर्थकों के नजदीक आये । उदारवादियों ने खिलाफत आंदोलन पर धीरे-धीरे अपना नियन्त्रण खो दिया । यूपी. के उग्र प्रतिनिधि, उलेमा व पत्रकार अब नेतृत्व करने लगे । इस परिवर्तन के साथ आंदोलन प्रादेशिक केन्द्र से बढ़कर छोटे कस्बों व गाँवों तक फैल गया ।

दिसम्बर 1919 के अन्त में दूसरा खिलाफत सम्मेलन अमृतसर में आयोजित हुआ। इसमें कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों ने भाग लिया । यहाँ यह प्रस्ताव पारित हुआ कि वायसराय के सम्मुख एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जायेगा जो खिलाफत संबंधित मांग उनके समक्ष प्रस्तुत करेगा । वायसराय ने मुस्लिम भावनाओं के प्रति सहानुभूति व्यक्त की । यद्यपि उन्होंने इस मामले में अपनी ओर से प्रयास करने का आश्वासन दिया तथापि उन्होंने शांति सम्मेलन के बारे में संकेत दिया कि यह खिलाफत आंदोलनकारियों की सभी मांगो को स्वीकार करने में समर्थ नहीं है । गाँधी ने ऐसे अस्पष्ट आश्वासनों की निंदा की । उन्होंने कहा कि भारतीय केवल सर्वोत्तम प्रयासों के आश्वासन मात्र नहीं चाहते । वे चाहते है कि उनसे शासक उनकी भावनाओं को समझे और उनकी परिवेदनाओं के निराकरण व उनकी आकांक्षाओं को पूरा करने के पूरे पूरे प्रयास किए जाए।

खिलाफत पर अगला अखिल भारतीय सम्मेलन बम्बई में 15 से 17 फरवरी 1920 तक हुआ। उग्र वर्ग की ओर से दबाव था कि ब्रिटिश माल का बहिष्कार किया जाये व सरकार से सहयोग वापिस लिया जाये । कुछ उग्रवादी तो इतने हताश हो गये कि उन्हें लगा कि खिलाफत समस्या का हल नरम विरोध से सम्भव नहीं है । उन्होंने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध कठोर कदम उठाने की माँग की । इस प्रकार बंगाल खिलाफत समिति ने एक और खिलाफत दिवस मनाने का प्रस्ताव पारित किया । कुछ ने मुसलमानों से अंग्रेजो के प्रति निष्ठा त्यागने की बात कही, दूसरों ने अंग्रेजो के विरूद्ध जिहाद या धर्मयुद्ध छेड़ने की बात कही । 7 मार्च 1920 को गाँधी ने खिलाफत परिवेदनाओं के निराकरण के सम्बन्ध में अपनी योजना प्रस्तुत की । उन्होंने 19 मार्च 1920 को खिलाफत दिवस मनाने का सुझाव दिया और उस दिन हड़ताल करने की वकालत की । उन्होंने उस दिन हिंसा से दूर रहने पर विशेष बल दिया । उन्होंने बहिष्कार करने या मिश्र जैसे अन्य प्रश्नों को इस आंदोलन में मिलाने से बचने की बात कही । सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने कहा कि यदि दूसरे खिलाफत दिवस के बाद भी यदि उनकी मांगे नहीं मानी जाती है तब वे असहयोग का सहारा ले । उन्होंने क्रमिक असहयोग का सुझाव दिया यह सुझाव भी दिया गया कि भारतीय पहले अपनी उपाधियां व पुरस्कार लौटायेंगे तत्पश्चात् कोर्ट की सदस्यता व राजकीय सेवा से त्याग पत्र दे और अन्ततः कर चुकाने से मना करें।

14 मई 1920 को शांति समझौते के प्रकाशन ने उग्रवादी खिलाफत आंदोलनकारियों की इस आशंका को सही साबित किया कि खिलाफत मामले में नरम विरोध निष्फल ही साबित होगा और खिलाफत परिवेदनाओं के निराकरण के लिये कठोर कदम उठाना अत्यावश्यक है । शांति शर्तों को गाँधी ने भारतीय मुसलमानों पर कुठराघात बताया । साथ ही न्याय पाने के लिये उन्होंने असहयोग की वकालत की । केन्द्रीय खिलाफत समिति ने वायसराय के पास फिर एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा जिसने यह संदेश दिया कि शांति शर्तें भारतीय मुसलमानों को स्वीकार्य नहीं है और यह चेतावनी भी दी कि यदि शांति शर्तों में संशोधन मही किया गया तो मुसलमान हिन्दुओं के साथ मिलाकर 1 अगस्त 1920 से असहयोग आंदोलन चलायेंगे ।

जून 1920 में पंजाब में आम असन्तोष व जलियाँवाला बाग नरसंहार के कारणों की जाँच से सम्बन्धित अधिकारिक रिपोर्ट साम्राज्यवादी सरकार ने प्रकाशित की । अब तक गाँधी

पंजाब मामले को खिलाफत मामले में मिलाने के पक्ष में नहीं था । उन्होंने अन्य नेताओं को भी ऐसे मामलों को खिलाफत के साथ जोडने से रोका था । अन्य नेताओं के समान मैंकल ओ डायर के नेतृत्व में दमनकारी सैनिक शासन व पंजाब में हिंसात्मक घटनाओं को देखकर गाँधी भी द्रवित थे । लेकिन अन्य राष्ट्रीय नेताओं के विपरीत गाँधी ने सैनिक शासन में की जा रही कार्यवाहियो पर कभी टिप्पणी नहीं की । बिना प्रमाण राजकीय कार्यो की आलोचना करने के स्थान पर गाँधी ने पंजाब में दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं की अधिकारिक जाँच की मांग करते हुए बार-बार अभियान चलाये । जब सरकार ने पंजाब की घटनाओं की जांच के लिये हण्टर समिति की नियुक्ति की घोषणा की तो गाँधी उत्साहित हुए । कुछ भारतीयों में असंतोष था क्योंकि वे इसके सदस्यगण से असंतुष्ट थे और कुछ भारतीयों की मांग थी कि यह आयोग राजशाही कमीशन होना चाहिये । गाँधी ने उन्हें सलाह दी कि इस पर भरोसा रखे और इसके सम्मुख प्रमाण प्रस्तुत करें ताकि यह हो चुके अन्य का निराकरण कर सके।

पंजाब में हुई घटनाओं की जांच के लिये नियुक्त कांग्रेस उप समिति के गाँधी भी एक सदस्य थे । इस समिति के माध्यम से गाँधी को पूरे मामले का प्रत्यक्ष जानकारी प्राप्त हुई । अन्ततः जब साम्राज्यवादी सरकार ने हण्टर आयोग की रिपोर्ट प्रकाशित की तो उसे पढकर गाँधी बहुत द्रवित हुए । आयोग ने पंजाब की घटनाओ पर लीपापोती कर पाश्विक अपराध के दोषी प्राधिकारियों को दोषमुक्त कर दिया था । इससे उनकी यह मान्यता, कि अंग्रेज न्यायपंसद है, भंग हो गई और उन्होंने घोषणा की कि भारतीय इस प्रकार की निन्दात्मक कार्यवाहियां सहन नहीं करेगें । उन्होंने कहा, "कि उनके विचार से अब समय आ गया है कि भारतीय प्रभावपूर्ण कार्यवाही के लिये संसद में पेश याचिकाओं पर ही निर्भर रहना छोड़ दें । आवश्यक हो तो संसद मे अपील करे किन्तु यदि संसद उन्हें निराश करे और यदि उन्हें स्वयं को राष्ट्र कहलाने में सक्षम समझते है तो उन्हें सरकार से समर्थन वापिस ले लेना चाहिये । इस प्रकार जब गाँधी ने देखा कि अंग्रेज शासकीय अराजकता की अनदेखी कर रहे है और बाग में हुए भयंकर नरसंहार की लीपापोती कर रहे है तो उन्होंने जून 1920 में पंजाब व खिलाफत मामलों को जोड़ दिया और ब्रिटिश सरकार के साथ असहयोग करने के लिये इन्हे मुख्य आधार बना दिया । सितम्बर 1920 मे कलकत्ता में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस के विशेष सत्र में खिलाफत व पंजाब के मामलों को तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा स्वराज की मांग की उपेक्षा को असहयोग आंदोलन के मुख्य कारण घोषित कर दिया । इस सम्बन्ध में प्रस्ताव भी पारित किया गया । कलकत्ता में आयोजित कांग्रेस के विशेष सत्र में पारित प्रस्तावों को बाद में दिसम्बर 1920 में नागपुर में आयोजित वार्षिक सत्र में पुष्ट कर दिया गया ।

6.6.2 असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम

असहयोग आंदोलन का एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया तथा लोगो को इस बारे में शिक्षित करने के प्रयास किये गये । असहयोग आंदोलन में कुछ नकारात्मक व कुछ सकारात्मक कार्यक्रम थे तथा अंतिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा की चेतावनी थी । गाँधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सात सूत्री असहयोग आंदोलन कार्यक्रम बनाया जिसे हम नकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कह सकते है । ये सात सूत्री कार्य कम थे:-

1. सरकार द्वारा प्रदत्त उपाधियों व सम्मानजनक पदों को लौटाना व राजकीय सेवाओं से त्यागपत्र देना ।
2. सरकारी या अनुदानित स्कूल एवं कॉलेजों का बहिष्कार ।
3. 1919 के अधिनियम में प्रस्तावित चुनावों का बहिष्कार ।
4. ब्रिटिश द्वारा भारत में स्थापित अदालतों का बहिष्कार ।
5. विदेशी माल व व्यापार का बहिष्कार ।
6. सरकारी कार्यक्रमों का बहिष्कार ।
7. ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्रीय गतिविधियों के प्रति असहयोग ।

सकारात्मक असहयोग कार्यक्रम कुछ इस प्रकार थे :-

1. सूत कातना व खादी का प्रचार ।
2. छुआछुत उन्मूलन ।
3. अन्तरवैयक्तिक विवादों को सुलझाने के लिये पारम्परिक पंच संस्थाओं की स्थापना ।
4. राष्ट्रीय स्कूल व कॉलेजों की स्थापना ।

यदि असहयोग आंदोलन के उद्देश्य इन कार्यक्रमों से प्राप्त नहीं होते हैं तो अन्तिम हथियार के रूप में सविनय अवज्ञा को अपनाने की बात कही गई । गाँधी ने नये वाइसराय लार्ड रीडिंग को लिखे पत्र में सारी स्थिति को स्पष्ट कर दिया ।

6.6.3 आंदोलन में गाँधी की भूमिका व कार्य योजना

गाँधी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इस प्रकार पुनर्गठित करने का प्रयास किया कि इसमें सभी का अधिक से अधिक प्रतिनिधित्व हो । गांवो व छोटे कस्बों से भी कांग्रेस के सदस्य जोडे गये तथा वार्षिक सत्रों के बीच में भी सतत रूप से ठीक ढंग से कार्य हुए ।

गाँधी ने भारतीय जनता को 'एक वर्ष में स्वराज' का वादा किया यदि वे असहयोग आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेते है । लेकिन उन्हें शांतिपूर्ण व वैधानिक तरीके अपनाते हुए बड़े से बड़े बलिदान के लिये साहस व तत्परता दिखाने पर भी बल दिया गया ।

गाँधी ने अनेक राष्ट्रीय नेताओं के साथ पूरे भारत का दौरा किया और लोगों को असहयोग आंदोलन के बोरे में बतलाते हुए उन्हें इसमें भाग लेने के लिये प्रेरित किया । गाँधी ने स्वयं को प्राप्त दक्षिण अफ्रीकी युद्ध पदक व केसर-ए-हिंद स्वर्ण पदक लौटा दिये और कहा कि वे ब्रिटिश सरकार के प्रति सम्मान भाव अब नहीं रखते है क्योंकि वह अपनी अनैतिका के पक्ष में गलती पर गलती किये जा रही है । गाँधी का अनुसरण करते हुए अनेक नेताओं व अन्य भारतीय व्यक्तियों ने ब्रिटिश उपाधियां लौटा दी और अहिसंक असहयोग आंदोलन के विभिन्न कार्यक्रमों में बढ चढ़ कर हिस्सा लिया । इस मामले में सरकार की प्रतिक्रियायें असफल रही चाहे प्रारम्भ में हस्तक्षेप न करने की नीति हो या बाद में आंदोलन बंद करने के लिये प्रमुख नेताओं का तुष्टिकरण के प्रयास हो । अन्ततः सरकार बलप्रयोग के लिये मजबूर हुई । इसके अन्तर्गत अहिंसक असहयोगी आंदोलनकारीयों के विरूद्ध हिंसा व उनकी गिरफ्तारी की गई । स्वैच्छिक संगठनो को अवैध घोषित कर दिया गया । जन सभाओं व जुलूसों को बलपूर्वक तितर

बितर किया गया । सामूहिक गिरफ्तारियां की गई व गिरफ्तार लोगों के साथ बर्बरता अत्याचार किये गये।

दिसम्बर 1920 में आयोजित कांग्रेस के नागपुर सत्र से दिसम्बर 1921 में आयोजित अहमदाबाद सत्र तक कुल एक वर्ष बीत चुका था और गाँधी के 'एक वर्ष में स्वराज' के वादे के पूर्ण होने के कोई संकेत नहीं थे । कांग्रेस के सदस्यों में असन्तोष था, लोगों में बैचेनी थी तथा वे गाँधी की आलोचना कर रहे थे । कुछ राष्ट्रवादी विद्रोह करना चाहते थे । लेकिन गाँधी स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसात्मक साधनों के पक्ष में नहीं थे । वह अपनी पूर्व मान्यता पर अडिग थे कि स्वराज प्राप्ति के लिये हिंसा का रास्ता नहीं हो सकता । उन्होंने बार बार सत्याग्रह संघर्ष के आत्मशुद्धि पक्ष पर ध्यान आकर्षित किया था । सरकारी हिंसा व दमन के बीच अहिंसा पर अडे रहकर उन्होंने अपने ऊपर लगे कायरता के आरोपो को भी झुठलाया । उन्होंनें स्पष्ट किया!, कि यदि असहयोग आंदोलन हिंसक हो जाता है तो वे इसका बंद करने का पूरा प्रयास करेगें और इसे पूरे राष्ट्र में फैलने से रोकेगें । बम्बई के गेट वे ऑफ इंडिया पर प्रिंस ऑफ वेल्स के आगमन पर 17 नवम्बर 1921 को आयोजित सरकारी समारोह में यूरोपिय लोग, पारसियों व अन्य पर हुए हमलों की भी उन्होंने निंदा की । गांधी ने भारतीयों से व्यक्तिगत अपील करते हुए ऐसे हिंसात्मक कार्यो से दूर रहने को कहा और जब तक ये उपद्रव समाप्त नहीं हो गये तब तक उपवास रखा जो पाँच दिन तक चला ।

यद्यपि भड़की हिंसा के कारण गांधी ने सविनय अवज्ञा कार्यक्रम स्थगित कर दिया तथापि कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओं व दिसम्बर 1921 व जनवरी 1922 में स्वयंसेवकों की गिरफ्तारी व मुकदमेबाजी के कारण गाँधी को सविनय अवज्ञा पर अपने पक्ष पर पुनर्विचार करना पड़ा । लेकिन राष्ट्रव्यापी सविनय अवज्ञा के स्थान पर बारदोली, गुजरात में एक सीमित अवज्ञा आंदोलन चलाने का निश्चय किया ताकि वे कार्यकत्ताओं की गतिविधियों पर व्यक्तिगत निगरानी रख सकें । 1 फरवरी 1922 को वाइसराय को लिखे अपने पत्र में गाँधी ने इस निर्णय से अवगत कराया और उन्हें भारतीयों के विरूद्ध सरकार द्वारा की जा रही दमनात्मक कार्यवाही को सात दिन में रोकने का समय दिया।

दुर्भाग्य से 5 फरवरी 1922 को चोरी चीरा में असहयोग आंदोलनकारियों व पुलिस के बीच हिंसक मुठभेड़ हुई । यह संयुक्त प्रांत के गोरखपुर जिले का एक छोटा सा गांव था । इस हिंसात्मक घटना का समाचार गाँधी के पास तीन दिन बाद पहुँचा तो वे बेहद आहत हुए । उन्होंने कहा कि भारत अभी सविनय अवज्ञा के लिये तैयार नहीं है और बारदोली में सविनय अवज्ञा का विचार त्याग दिया । 24 फरवरी 1922 को दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की सभा में गाँधी के कहने पर एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें चौरी चीरा घटना की निंदा की गई, भारत मे हर जगह पर चल रहे जन सविनय अवज्ञा आंदोलन को स्थगित कर दिया गया और रचनात्मक कार्यक्रमों पर जोर दिया गया । इस प्रकार 24 फरवरी 1922 को असहयोग आंदोलन औपचारिक रूप से समाप्त हुआ ।

6.6.4 आंदोलन का महत्व

यद्यपि असहयोग आंदोलन अपने उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर सका तथापि यह आंदोलन गाँधी व भारत दोनों के लिये महत्वपूर्ण था । गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस वास्तव में राष्ट्रीय व जन आंदोलन बन गया । कांग्रेस पर गाँधी का नियन्त्रण हुआ तथा और स्वतन्त्रता आंदोलन को गति मिली । गाँधी ने लोगो में राष्ट्रीयता की भावना जागृत की । उन्होंने माना कि गाँधी का स्वराज का वादा पूरा हो सकता है और उन्होंने गाँधी के आह्वान पर राष्ट्रीय आंदोलन में उत्साह से भाग लिया । सरकारी आदेशों की आलोचना या अवहेलना करने पर होने वाली सरकारी दमनात्मक कार्यवाही का डर लोगों के दिमाग से निकल गया । साधारण व गरीब लोग भी बडे से बडे बलिदान के लिये साहस व तत्परता का परिचय देने लगे । इस आंदोलन ने इस तथ्य को फिर से पुष्ट किया कि विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सत्याग्रह का माध्यम महना सम्भावनाओं से परिपूर्ण है तथा सत्याग्रह की सक्रियता व भावना को सरकारी पारम्परिक तरीकों से नहीं दबाया जा सकता । स्वराज प्राप्ति के लिये गाँधी द्वारा शुरू किये गये अहिंसक सत्याग्रह आंदोलन का भारत की ब्रिटिश सरकार के पास कोई जवाब नहीं था ।

6.7 बारडोली सत्याग्रह

भारत में ब्रिटिश शासन के औपनिविशिक हितो के कारण सरकार का मुख्य ध्यान राजस्व पर था और वह भारतीय लोगो की आवश्यकता पर बहुत कम ध्यान देती थी । भारतीय किसानों के भूमि सम्बन्धी हितो की भी यही स्थिति थी । परिणामत: भारत के अनेक हिस्सों में भूमि सम्बन्धी असन्तोष उभर रहा था । गुजरात के सूरत जिले में बारडोली तालुक में किसानो द्वारा यह असन्तोष खुल कर व्यक्त किया गया और गाँधी के सत्याग्रह तकनीक से इसको हल करने की मांग की गई ।

6.7.1 बारडोली सत्याग्रह के लिये उत्तरदायी कारण

1927 में सरकार ने बारडोली तालुक में राजस्व निर्धारण 22 प्रतिशत बढाने का निश्चय किया । बारदोली में किसान असन्तोष का यह प्रमुख व प्रारम्भिक कारण था । बारडोली के किसानों का कहना था कि यह बढोतरी अनुचित है, क्योंकि टैक्स अधिकारी बिना ढंग से जांच किये गलत रिपोर्ट तैयार किया गया है जिससे सरकार टैक्स बढा सके । किसानो ने बढे हुए टैक्स देने में असमर्थता व्यक्त की ।

6.7.2 बारडोली सत्याग्रह का कार्यक्रम

1920-22 के असहयोग आंदोलन के दौरान गाँधी ने बारदोली को एक आदर्श स्थान के रूप में चयनित किया था जहां प्रथमत: सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाया जायेगा । तत्पश्चात् अन्य स्थानो पर असहयोग आंदोलन के उद्धेश्यों की प्राप्ति के लिये ऐसे ही कार्य किये जायेंगे किन्तु चौरी चौरा की हिंसात्मक घटना के कारण फरवरी 1922 में यह निर्णय रद्द कर दिया और असहयोग आंदोलन ही स्थगित कर दिया । 1927 में बारडोली में किसान आंदोलन के कारण गाँधी फिर परिदृश्य में आये और 12 फरवरी 1928 को उन्होंने बारडोली में सत्याग्रह

शुरू करने के संकेत दिये । यद्यपि उन्होंने बारडोली सत्याग्रहियों का प्रत्यक्ष नेतृत्व नहीं किया तथापि वे यंग इंडिया में लेख लिखकर अपने विचार व्यक्त करते रहे तथा अभियान का समर्थन करते रहे । वे अभियान की पूरी सूचना रखते थे । यद्यपि गाँधी जी अभियान को निर्देशित व प्रेरित करते रहते थे तथापि वल्लभ भाई पटेल ने अब्बास तैयब जैसे साथियों के साथ प्रत्यक्ष नेतृत्व सम्भाला । अब्बास तैयब गाँधी के साथ दक्षिण अफीका में काम कर चुके थे । बारडोली तालुक व आस पास के लोगो ने इस आंदोलन में उत्साह से भाग लिया । न केवल पुरूषों ने अपितु महिलाओं ने भी आंदोलन मे भाग लिया व अलग अलग स्थानो पर नेतृत्व किया । अनेक गांवो के मुखिया व प्राधिकारियों ने भी अपने सरकारी पद त्याग कर अभियान में भाग लिया । सत्याग्रह कैम्प स्थापित किये गये, प्रतिदिन समाचार बुलेटिन जारी किये गये, सूत कातना व अन्य रचनात्मक गतिविधियां शुरू की गई, जनसभायें की गई, गीतो की रचना कर उन्हें गाया गया, प्रार्थनायें की गई, गाँधी की आत्मकथा में से चुनिंदा अनुच्छेदो को सभाओं में पढा गया । ग्रामीण बुजुर्गो व प्राधिकारियों को सत्याग्रहियो का साथ देने को कहा गया, राजस्व अधिकारियों से कर जमा न करने के लिये कहा गया । ग्रामीणों ने अपने औजारों को खोल कर छिपा दिया और जब प्राधिकारी या पुलिस उनकी सम्पत्ति जल करने व उसे बेचने का प्रयास करती तो ग्रामीण हिंसा का सहारा कदापि नहीं लेते थे । समझाइए वाले तरीको के साथ-साथ सामाजिक बहिष्कार के माध्यम से भी लोगों को सत्याग्रह के साथ जुडने के लिये प्रेरित किया गया ।

6.7.3 गाँधी की कार्य योजना

गाँधी ने बारडोली के किसानों का समर्थन किया व माना कि उनकी मांगे न्यायोचित है । इसके समर्थन में उन्होंने कुँजरू, वजी व अमृतलाल ठक्कर द्वारा की गई बारडोली जांच की ओर इशारा किया । उन्होंने सत्याग्रहियों को सदा सतर्क रहने की पूर्व चेतावनी दी और बारडोली सत्याग्रह के प्रति निष्ठा बनाये रखें । सत्याग्रह की तकनीक का गुणगान करते हुए उन्होंने सत्याग्रह कर रहे किसानों का मनोबल बढाया । साथ ही उन्होंने सत्याग्रह के आधारभूत नैतिक मूल्यों के साथ सतत रूप से जुडे रहने को कहा । उन्होंने लोगों से बारदोली अभियान का समर्थन करने की अपील की और सत्याग्रह आंदोलन का समर्थन करने बाहर से आये लोगों के प्रयासों को भी सराहा । आंदोलन के बारे में फैलाई जा रही दुर्भावनापूर्ण अफवाहों को भी उन्होंने दूर करने का प्रयास किया और खुली चुनौती दी कि कोई भी बारडोली सत्याग्रह आंदोलन से सम्बन्धित हिसाब किताब का लेखा परीक्षण कर अपने संदेहों का दूर कर सकता है ।

विरोध कर रहे सत्याग्रहियों पर सरकारी कार्यवाही की धमकी पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए गाँधी ने कहा कि सैकड़ों-हजारों लोग सत्याग्रही बन रहे है । करो या मरो का भाव लेकर आने वाले इन सत्याग्रहियों पर सरकारी धमकियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला । ये वो लोग है जो मृत्यु के भय से मुक्त है, धन-सम्पत्ति का मोह त्याग चुके है और आत्म सम्मान को सर्वोपरि मानते है । साथ ही उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सरकार के रोष से नाराज न हों और सदा सत्य के मार्ग पर चलें । उन्होंने आंदोलन का समर्थन किया व कहा कि सत्याग्रहियों की शिकायतों को सुनने के लिये एक स्वतन्त्र व निष्पक्ष समिति बने व उनके साथ न्याय करे

तथा संघर्ष के संदर्भ में गिरफ्तार हुए सत्याग्रहियों को रिहा करने सम्बन्धी शर्तों को लागू करें, संघर्ष के दौरान जब्त भूमि लौटाई जाये और लोगो को हुए नुकसान का पुर्नभरण करे । उन्होंने कहा कि यदि सरकार ये मांगे मान लेती है तो लोग अपना बकाया राजस्व नियमपूर्वक जमा करायें । उन्होंने कहा कि सरकार इस आंदोलन से सबक ले की वह सत्य व अंहिसा पर टिके लोगो के विरूद्ध नहीं जा सकती । ऐसी स्थिति में उसे लोगों के साथ सहयोग करके उनकी सद्भावना प्राप्त करे व अपना जनाधार मजबूत करें । इसी प्रकार बारडोली के लोग भी आंदोलन से सबक लें कि जब तक वे अहिंसा पर अडिग रहेंगे प्राधिकारियों या किसी से भी डरने की आवश्यकता नहीं है । इस प्रकार संगठित हो अहिंसा पर अडिग रहने की भावना संयुक्त प्रयास से रचनात्मक कार्यक्रमों में संलग्न रहकर विकसित की जा सकती है ।

6.7.4 सत्याग्रह की प्रगति

सरदार पटेल के नेतृत्व में सत्याग्रह आंदोलन अपनी मूल मांगो पर अडा था कि जांच समिति का गठन हो । बाद में मांग थी कि सत्याग्रह में भाग लेने वाले लोगों की जब्त भूमि व सम्पत्ति छोडी जाये और कैद सत्याग्रहियों को रिहा किया जाये । ऐसे में सरकार ने बल प्रयोग का मानस बनाया। सूरत में अडियल प्राधिकारियों को नियुक्त करने, पटेल जैसे प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार करने, सत्याग्रह कैम्पों को जस्त करने व सेना की मदद माँगने जैसे कार्यो का सरकार ने विचार बनाया।

ऐसी परिस्थितियों में, विशेषत: जब सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की आशंका थी, गाँधी 2 अगस्त 1928 को बारडोली आ गये ताकि सरदार पटेल के गिरफ्तार होने की स्थिति में वे नेतृत्व सन्भाल सकें । सत्याग्रह आंदोलन के समर्थन में बम्बई विधान परिषद, सेन्ट्रल असेम्बली व ब्रिटिश संसद में स्वर सुनाई दिये । यद्यपि वाइसराय इरविन व गवर्नर विल्सन जाँच कराने या टैक्स के पुराने दरों को स्वीकार करने के पक्ष में नहीं थे तथापि 6 अगस्त 1928 को सरकार अन्तत: झुक गई । उसने विज्ञप्ति जारी कर बताया कि बढ़े हुए करों के मामले की जांच के लिये कमेटी बनाई जायेगी जिसे ब्रूमफील्ड समिति कहा गया । सरकार जस्त भूमि को छोडने, सत्याग्रही कैदियों को रिहा करने वाले राजस्व अधिकारियों को बहाल करने के लिये सहमत हो गई । बदले में सरदार पटेल ने वादा किया कि किसान पुरानी दरों पर निर्धारित कर जमा करायेगें । इस प्रकार बारडोली सत्याग्रह का अन्त हुआ । इधर किसानों ने पुरानी दरों पर भू राजस्व चुकाना शुरू किया उधर आर.एस. ब्रूमफील्ड और आर.एम. मैक्सेल की ब्रूमफील्ड समिति बारडोली के किसानों की अधिकतर मांगे मान ली और नयी भू राजस्व दरें प्रस्तावित की जिससे किसान, सरदार पटेल व गाँधी सभी सन्तुष्ट हुए।

6.7.5 सत्याग्रह का महत्व

सत्याग्रह की सफलता ने भारत के लोगों मे उत्साह भर दिया । पहली बार सत्याग्रह को इतने बडे स्तर पर परखा गया । बारदोली के पूरे तालुक ने इस आंदोलन मे प्रत्यक्ष भाग लिया और उन्हें समर्थन देश के अन्य हिस्सों तथा दक्षिण अफीका से भी मिला । इसकी सफलता ने सिद्ध किया कि यदि लोग अडिग हो तथा हिंसा या उपद्रव के मार्ग पर न चलें तो अन्तत:

ब्रिटिश सरकार भारतीयों की मांगो के आगे झुकेगी । इससे न केवल बारडोली अपितु पूरे भारत के किसानो का मनोबल बढ़ा तथा आशा की किरण जगी । यह आंदोलन पूर्णरूप से गाँधी सत्याग्रह के मूलभूत नियमों के अनुसार चला । इस आंदोलन ने यह बात पुष्ट की कि गाँधी ने 1922 में असहयोग आंदोलन के दौरान बारडोली का ही चुनाव करके सही ही किया । बारदोली अभियान उनकी अपेक्षाओं पर खरा उतरा और इसकी सफलता से गाँधी व कांग्रेस निश्चित रूप से प्रभावित हुए कि सविनय अवज्ञा को राष्ट्रीय स्तर पर परखा जाये और इसके शीघ्र बाद ही गाँधी ने 1930 में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरूकर दिया ।

6.8 सविनय अवज्ञा आंदोलन

गाँधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन 1930 में नमक कानून का विरोध करने के लिये शुरू किया था । यह कानून भारत में ब्रिटिश शासन की अनेक बुराईयों में से एक था । इस आंदोलन की औपचारिक शुरुआत 12 मार्च व 1930 को गाँधी द्वारा नमक सत्याग्रह के प्रारम्भ के साथ ही हुई ।

6.8.1 सविनय अवज्ञा आंदोलन के कारण

अपने शोषक औपनिविशिक हितों की रक्षा की नीति पर चलते हुए ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों के दमन व उपेक्षा का भाव जारी रखा । अत: भारत में असन्तोष व्यापक था जबकि 1920 का दशक समाप्ति की ओर था । ऐसी सरकार पर नकेल डालने के लिये कोई भी राजनीतिक दल सक्षम नहीं था और न ही कोई दल भारतीय आम जनो में पनप रहे असन्तोष को रोक सकती थी । सरकार ने 1919 के सुधारों की प्रगति के बार में रिपोर्ट तैयार करने व संवैधानिक सुधारों के बारे मे सुझाव देने के लिये साइमन कमीशन को नियुक्त किया । इस नियुक्ति को लेकर भी आम तौर पर रोष था । 1928 की नेहरू रिपोर्ट में भारत को स्वतंत्र उपनिवेश बनाने की माँग का समर्थन अंग्रेजों ने नहीं किया । कांग्रेस के अन्दर युवा वर्ग भारतीय आवश्यकताओं के आगे सरकार को झुकाने व दबाव बढाने के लिये अधिक कारगर उपाय करने की माँग करने लगा । वे स्वतन्त्र उपनिवेश के स्थान पर भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता के पक्ष में थे ।

1929 की लाहौर कांग्रेस ने अपनी कार्यकारी समिति को अधिकृत कर दिया कि पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लक्ष्य के लिये सविनय अवज्ञा आंदोलन चला सकती है । गाँधी ने लार्ड इरविन को लिखे अपने पत्र में ग्यारह सूत्री न्यूनतम मांगो को पूरा करने की माँग की ताकि कांग्रेस को पूर्ण स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिये शुरू किये जा रहे सविनय अवज्ञा आंदोलन को रोका जा सके । 14- 16 फरवरी 1930 को कांग्रेस की कार्यकारी समिति ने अहमदाबाद के साबरमती आश्रम में सभी की व गाँधी को सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के लिये पूर्णत: अधिकृत कर दिया । नमक सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य नमक अधिनियम की कर ऐसे कानून को हटाने की मांग थी जो समस्त भारतीयों, विशेषत: गरीबों के लिये मुश्किलों से भरा ।

सरकार द्वारा पारित नमक अधिनियम भारत में तैयार नमक पर कर लगाने के बारे में था । इसके माध्यम से सरकार भारत में उत्पादित नमक पर पूर्ण नियन्त्रण व एकाधिकार करना

चाहती थी । बिना लाइसेन्स प्राप्त किये नमक उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया । इस कानून का उल्लंघन करने पर उत्पादित नमक जब्त करने व छः माह की कैद का प्रावधान था ।

गाँधी ने कहा कि सरकार का ऐसा अधिनियम प्रत्येक भारतीय पर प्रतिकूल असर डालेगा । गरीबों पर तो यह कुठराघात था । उन्होंने कहा कि इन कानूनों के कारण गांव बरबाद हो चुके है और बेरोजगारी बढने से गरीबों की दुर्दशा बढ़ी है । उनके अनुसार यह एक घोर अमानवीय कर है।

आंदोलन के दीर्घकालीन उद्देश्यों के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि गाँधी जी ने भारत में ब्रिटिश की बुराईयों पर वार करके इन बुराइयों को तत्काल हटाने पर बल दिया । उन्होंने कहा कि औपनिवेशिक शासन के शोषण के कारण भारतीय गरीबी की ओर बढ रहे है । इसने उन्हें राजनीतिक दासता के स्तर पर ला कर खड़ा कर दिया है । इसने भारतीय संस्कृति की जडों को हिला दिया है तथा भारतीय आध्यात्मिकता का भी अपमान किया है । अब और इन्तजार करना और सरकारी की बुराईयों का मूक दर्शक बने रहना पाप होगा । अहिंसक सविनय अवज्ञा चलाते हुए गाँधी को आशा थी कि सरकार को बुराई के रास्ते से हटाने में वे सफल होगें । उन्हें आशा थी कि सरकार उनकी अपील पर सकारात्मक प्रतिक्रिया करेगी । उन्होंने सरकार को चेतावनी दी कि ऐसा न होने पर उनके पास नमक कानून तोड़ने के रूप में सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के अतिरिक्त कोई विकल्प नहीं होगा । नमक कानून तोड़ने की कार्ययोजना व प्रस्तावित तिथि सरकार को प्रेषित कर दी गई ।

6.8.2 आंदोलन की कार्ययोजना व प्रगति

गाँधी जी की पहल पर सरकार ने सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की । उन्होंने तो खेद व्यक्त करते हुए दावा किया कि इससे कानून का उल्लंघन होगा व आम शांति भंग होगी ।

परिणामत: गाँधी ने अपनी योजनानुसार आगे बढने का निश्चय किया कि अहमदाबाद का साबरमती आश्रम प्रारम्भ बिन्दु होगा जहां से वह 240 मील दूर दाण्डी समुद्र तट की ओर बढेगा । अपने चुनिंदा सत्याग्रहियों के साथ वे वहां नमक का उत्पादन करेंगे और इस प्रकार नमक कानून का उल्लंघन करेगें । चुने हुए सत्याग्रहियों को उन्होंने भावी रणनीति के बारे में दिशा निर्देश दिये । लोगो को उन्होंने समझाया कि किस प्रकार नमक कानून तोड़ा जा सकता है । इस कार्यवाही के साथ साथ वे शराब व विदेशी कपड़ों की दुकान के आगे धरना दे सकते हैं, कर जमा कराने से मना कर सकते है, अदालतों का बहिष्कार कर सकते है मुकदमेबाजी से दूर रहे व अन्तत: सरकारी पदों से त्यागपत्र दे सकते है । उनका विशेष आग्रह सत्य और अहिंसा के रास्ते पर चलने का था । उन्होंने लोगों को सावधान किया कि वे गुस्से मे आकर कुछ न करें । उन्होंने संकेत दिया कि ऐसे उल्लंघन वाले कार्यो पर सरकार दमनात्मक कार्यवाही तो करेगी ही किन्तु लोग न तो डरें और न ही प्रतिकार करें । उनका तर्क था कि सत्य और अहिंसा मे जो शक्ति है उससे सरकार पशोपेश मे पड़ जायेगी और अन्तत: उसे अपने बुरे कार्य छोडने पडेगें । उन्होंने कहा कि सरकार द्वारा गिरफ्तारी किये जाने पर लोग कांग्रेस कार्यसमिति से दिशा निर्देश ले सकते है । चुने हुए सत्याग्रही स्वयंसेवकों को गाँधी ने निर्देश देते हुए बताया कि उन्हें सत्याग्रह प्रयाण के दौरान क्या करना है । उन्होंने स्वास्थ्य एवं भोजन सम्बन्धी निर्देश

दिये । उन्होंने केवल उन स्वयंसेवकों को चुना जो शारीरिक श्रम व मानसिक सहनशक्ति में श्रेष्ठ है ।

इस दौरान कांग्रेस कार्यकारीं समिति ने सभी कांग्रेसियों व लोगों से कहा कि सत्याग्रह संघर्ष में हो सम्भव सहयोग करें । साथ ही अहिंसा व्रत के पालन पर भी बल दिया गया । गाँधी द्वारा नमक कानून तोड़ने के बाद कांग्रेस ने सदस्यों व जनता से कहा कि गाँधी जी का अनुकरण करें । राष्ट्रीय, प्रान्तीय व स्थानीय स्तर पर नेतृत्व की वैकल्पिक व्यवस्था की गई । पटेल को प्रयाण कर रहे सत्याग्रहियों के आगे चलने के लिये चुन गया । मिलने वाले लोगों को उन्होंने आंदोलन के लक्ष्यों के सम्बन्ध मे शिक्षित किया । उन्होंने उनसे शराब से दूर रहने, छुआछूत छोडने और रचनात्मक कार्य करने का निवेदन किया।

12 मार्च 1930 को प्रात: लगभग 6:30 बजे गाँधी ने रामधुन के साथ प्रसिद्ध डांडी मार्च शुरू की गाँधी आगे आगे और सत्याग्रही उनके पीछे थे । मार्ग में पड़ रहे गांवो के लोगों से गाँधी ने बात की और सैंकडो-हजारों लोगों को स्वराज के लिये भारतीय आंदोलन में साहस और अहिंसा के साथ भाग लेने के लिये प्रेरित किया।

5 अप्रेल 1930 को गाँधी डांडी पहुँचे । अगले दिन 6 अप्रेल 1930 को प्रात: 6:30 बजे दाण्डी के समुद्रतट पर पहुँचे, एक मुट्ठी नमक उठाया और प्रतीकात्मक रूप से नमक कानून का उल्लंघन किया । कुछ देर बाद अन्य स्वयंसेवकों को निर्देश दिया गया कि गाँधी का अनुसरण करें । फिर क्या था, संकेत मिलते ही देश भर में नमक कानून तोड़ा गया।

शुरू में सरकार ने दमनात्मक नीति नहीं अपनाई और हस्तक्षेप नहीं किया । उन्हें आशा थी कि गाँधी जी लोगों को संघटित करने में सफल नहीं होगें । नमक कानून का उल्लंघन करते ही उन्होंने गाँधी को गिरफ्तार नहीं किया । भारतीय सरकार ने अपने अधीनस्थ अधिकारियों को सलाह दी कि आम गिरफ्तारियों से बचें न्यूनतम बल प्रयोग करें, यदि आवश्यक हो तो नेताओं की गिरफ्तारी प्राथमिकता से की जाये ताकि आंदोलन कमजोर पड़े । किन्तु सरकार ने जैसा सोचा था वैसा कुछ नहीं हुआ । अन्तत: उसने गिरफ्तारी और बल प्रयोग के पारम्परिक तरीके अपनाये । गाँधी जी ने घोषणा की कि वे नमक कानून का उल्लंधन जारी रखेगे और घरसाना नमक उद्योग पर धावे का नेतृत्व करेगें । आंदोलन के तेजी से बढते कदम, प्राधिकारियों, गवर्नरों, सैन्य अधिकारियों के दबाव के कारण अन्तत: वायसराय इरविन ने 4 मई 1930 का गाँधी को गिरफ्तार करने का आदेश दिया । 4 व 5 मई 1930 के बीच के रात को 12:45 बजे हथियार बन्द पुलिसकर्मियों के साथ सूरत के ब्रिटिश जिला मजिस्ट्रेट ने गाँधी को गिरफ्तार कर लिया व उन्हें बम्बई के यरवदा सेन्ट्रल जेल भेज दिया गया ।

वैकल्पिक नेताओं ने घरसाना नमक उद्योग की ओर अहिंसक मार्च किया । इस बार सरकार नहीं चूकी व उसने बल प्रयोग कर गिरफ्तारियां की । समझौता वार्ता के लिये सरकार का एक प्रतिनिधि गाँधी से जेल मे मिलने गया । समझौता अन्तत: 5 मार्च 1931 को गाँधी इरविन समझौता के रूप में हुआ । अन्य बातों के अलावा इस समझौते में सविनय अवज्ञा आंदोलन स्थगित करने पर भी सहमति व्यक्त की ।

6.8.3 आंदोलन का महत्व

जहां तक सविनय अवज्ञा आंदोलन की उपलब्धियों का प्रश्न है- इसके अन्तर्गत शुरू किया गया नमक सत्याग्रह ने अपने तात्कालिक लक्ष्य काफी हद तक प्राप्त कर लिये । यद्यपि सरकार ने नमक कानून निरस्त नहीं किये किन्तु कानून की व्याख्या कुछ इस प्रकार की गई कि गरीब भारतीयों को राहत मिली । नमक उत्पादन योग्य क्षेत्रों के आस-पास रहने वाले लोगों को घरेलू उपयोग हेतु नमक इकट्ठा करने या उत्पादन करने की छूट दी गई । ऐसी व्यवस्था की गई कि गांव के गांव में नमक बेचा जा सकता है बाहर नहीं । सरकार ने कुछ अन्य रियायतें भी दी जैसे अहिंसक आंदोलनकारियों को माफी, जब्त सम्पत्ति को उदारतापूर्वक लौटाना व विशेष नियन्त्रक अध्यादेशों को वापिस लेना । सरकार ने यह भी सहमति व्यक्त की कि भारत में संवैधानिक सुधारों पर होने वाली चर्चाओं में कांग्रेस के प्रतिनिधियों को भी आमन्त्रित किया जायेगा । सविनय अवज्ञा आंदोलन ने कई दिशाओं में प्रगतिशील कदम बढाये । साम्राज्यवाद विरोधी व राष्ट्रीय संघर्ष पहले की अपेक्षा बड़े स्तर पर चलाये गये । प्रभावशाली नेतृत्व केवल राष्ट्रीय स्तर तक ही सीमित नहीं था, प्रान्तीय व स्थानीय स्तर पर भी अच्छी संख्या में प्रभावशाली नेता उपलब्ध थे । सरकार आगे बढ़कर आंदोलनकारियों से वार्ता कर रही है- इससे आंदोलनकारियों का मनोबल बड़ा । ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था । समाज के विभिन्न वर्गो के लोगों को इस अभियान के लिये संघटित किया गया- गरीब, निरक्षर, स्त्री-पुरूष, धार्मिक, अल्पसंख्यक, ग्रामीण, शहरी, उच्चवर्ग, निम्नवर्ग, छात्र, जनजातियां, व्यापारी आदि । भारत में ही नहीं अपितु विदेशो मे प्रेस रिपोर्टों के माध्यम से लोगों को आंदोलन के समाचार मिल रहे थे।

गाँधी के नेतृत्व में प्रथम अभियान व बाद में घरसाना नमक अभियान पूर्ण रुप से सत्याग्रह संघर्ष के मूलभूत सिद्धान्तों के अनुसार चलाया गया । आंदोलन का तात्कालिक उद्देश्य था नमक कानून के परिणामस्वरुप गरीब जनता पर आई विपदा से उन्हें मुक्ति दिलाना । ये कानून ब्रिटिश शासन के अन्याय के प्रतीक थे और सत्याग्रहियों का यह कर्तव्य था कि इन कानूनों की अवज्ञा करते हुए दृढ़तापूर्वक सत्य और न्याय की मांग करे । सत्याग्रहियों ने अहिंसा व्रत का कड़ाई से पालन किया । सत्याग्रहियों की खास विशेषता थी- आत्मनिर्भरता । सविनय अवज्ञा के दौरान उन्हें स्वयं के लिये अथवा परिवार के लिये किसी भी प्रकार की भौतिक सहायता लेने से इन्कार करने को । जन समर्थन प्राप्त करने के लिये पर्चे बांटे गये, प्रेस रिपोर्टें छपवाई गई । शुरू से अन्त तक सरकार से बातचीत के माध्यम से सौहार्दपूर्ण समझौते तक पहुँचने के प्रयास किये गये । अभियान की विभिन्न योजनाओं के संदर्भ में सरकार को अवगत कराया जाता रहा ।

सविनय अवज्ञा आंदोलन ने यह भी साबित किया कि सत्याग्रह सरकार के जुल्मों का प्रभावपूर्ण तरीके से सामना कर सकता है । इसने दुनियाँ को दिखा दिया कि राज्य की हिंसा व बुराई का उसी रूप में सामना करना आवश्यक नहीं है । हमारे पास अहिंसा के रास्ते का विकल्प उपलब्ध है और यह हिंसा व बुराई का सामना बेहतर ढंग से कर सकता है ।

6.8.4 सविनय अवज्ञा का पुनरुत्थान व अन्त

1931 के गाँधी इरविन समझौते के अनुसार गाँधी इंग्लैण्ड में आयोजित दूसरे गोल मेज सम्मेलन में भाग लेने के लिये सहमत हो गए जिसमें भारत में भावी संवैधानिक संशोधनों पर विचार विमर्श किया जाना था । लंदन प्रस्थान करने से पूर्व उन्होंने कहा कि गोल मेज सम्मेलन के कोई सार्थक परिणाम निकलने की सम्भावना उन्हें दिख नहीं रही है । उन्हें आभास था कि इंग्लैंड के नेताओं की राजनैतिक मंशा भारतीयों के संवैधानिक संशोधनों के बारे मे अपेक्षाओं के विपरीत है । गोल मेज सम्मेलन में वही हुआ जिसका गाँधी को डर था और वह इंग्लैण्ड से निराश ही लौटे ।

इस दौरान भारत में लार्ड इरविन के स्थान पर लार्ड वेलिंग्टन वायसराय बने । वैलिंग्टन के नेतृत्व में सरकार ने कांग्रेस, उसके नेताओं, राष्ट्रीय आकांक्षाओं व लोगों की गतिविधियों के प्रति किए जाने वाले कार्यवाही को पूरी ही उलट दिया । गाँधी-इरविन समझौते का खुला उल्लंघन हुआ । सरकार ने हर तरफ हिंसा व आतंक का माहौल बना दिया ।

लगभग चार माह तक अनुपस्थित रहने के बाद गाँधी इंग्लैण्ड से भारत 28 दिसम्बर 1931 को पहुँचे । कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक 29 दिसम्बर 1931 को हुई । गाँधी ने वैलिंग्टन से मिलने का निवेदन भेजा और सविनय अवज्ञा आंदोलन उस मुलाकात तक के लिये स्थगित ही रखने का प्रस्ताव दिया । वायसराय ने मिलने से इन्कार कर दिया और गाँधी को चेतावनी दी कि आंदोलन यदि पुन: शुरू किया जाता है तो गाँधी व कांग्रेस को इसके परिणाम भुगतने होगें । 3 जनवरी 1932 को गाँधी ने राष्ट्र का आव्हान किया और कहा कि लोग एक और लम्बे व कठिन संघर्ष के लिये तैयार रहें । सरकार ने गाँधी को पहले ही 4 जनवरी 1932 को गिरफ्तार कर लिया । सविनय अवज्ञा के दौरान आकस्मिक स्थितियों से निपटने के प्राधिकारियों को असीमित शक्तियाँ देने सम्बन्धी अध्यादेश जारी किये गये । यद्‌यपि तैयारी पूरी नहीं थी । आंदोलन में लोगों की सहभागिता विशाल थी । शराब व विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरने दिये गये, विभिन्न राष्ट्रीय दिवस मनाये गये, प्रदर्शन किये गये सरकारी अध्यादेशों का उल्लंघन किया गया । बाद में उन्होंने गिरफ्तारियां भी दी ।

भारतीयों से निपटने में सरकार ने कोई कसर नहीं छोड़ी । सविनय अवज्ञा को कुचलने के लिये कठोर और दमनकारी कार्यवाही की गई । कांग्रेस जैसे संगठनो को अवैध घोषित किया गया और उनकी जमा राशि अन्त कर ली गई । आंदोलन मे भाग लेने वालों पर हिंसात्मक कार्यवाही की गई । जेलों में उनके साथ अमानवीय व्यवहार किया गया । अपराधी घोषित प्रतिभागियों से कर व जुर्माना वसूल करने के लिये उनकी सम्पत्ति या तो जब्त कर ली गई या सस्ते दामों में बेच दी गई । महिलाओं के साथ भी दुर्व्यवहार किया गया । प्रेस पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये गये ।

सरकार की इस प्रकार की कार्यवाही ने पुन: शुरू किये गये सविनय अवज्ञा आंदोलन पर बेहद असर डाला । धीरे-धीरे लोगों की कमी होती गई और उत्साह में भी कमी आती गई । कई स्थानों पर प्रतिभागियों ने अहिसंक संघर्ष के मूल सिद्धान्तों का पालन भी नहीं किया ।

अन्ततः 19 मई 1933 को गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन बारह सप्ताह के लिये स्थगित कर दिया । 14 जुलाई 1933 को उन्होंने जनता सविनय अवज्ञा आंदोलनो को समाप्त करने का आव्हान किया और अलग-अलग चल रहे सत्याग्रहों का समर्थन किया । यह लगभग एक वर्ष तक चला और अन्ततः 7 अप्रेल 1934 को गाँधी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन को पूर्णतः बंद करने का निश्चय किया ।

6.9 वाइकॉम सत्याग्रह

ब्रिटिश शासन में ट्रेवेनकूर राज्य का एक बड़ा गांव और भारत के केरल राज्य का एक भाग, वाइकोम, हिन्दुओं के लिये एक प्रमुख धार्मिक स्थल है । भगवान शंकर के भक्त यहां बड़ी संख्या मे पहुँचते है । ब्रिटिश शासन के दौरान भगवान शंकर के मंदिर के आस-पास की सड़के सार्वजनिक थी । किन्तु मंदिर मे काम करने वाले और वहीं आस-पास रहने वाले रूढ़िवादी पुजारियों व ब्राहमणों ने उन सड़कों पर अछूतो का आवागमन यह कहकर था बंद करवा दिया कि इससे मंदिर या वे स्वयं अपवित्र हो जाते है । कुछ प्रगतिशील व उत्साही सुधारक इन सड़कों को सभी जाति, धर्म और सम्प्रदायों के लिये सार्वजनिक करना चाहते थे । इसके लिये उन्होंने गाँधीवादी सत्याग्रह का रास्ता चुनने का निश्चय किया । सीरिया के एक इसाई जार्ज जोसफ ने इसकी शुरूआत की । प्रारम्भ में इसमें पचास स्वयंसेवक थे । धीरे-धीरे इनकी संख्या सैकडों फिर हजारों मे बढ़ गई । इन स्वयं सेवकों में निम्न व उच्च सभी जातियों के लोग थे ।

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह को गाँधी ने प्रत्यक्षतः शुरू नहीं किया । तथापि उनका आशीर्वाद व उनका दिशानिर्देश सत्याग्रहियों को मिलता रहा । गाँधी ने 'यंग इण्डिया' में छुआछूत, धर्म और सत्याग्रह के बारे में खूब लिखा । सत्याग्रहियों ने यह आंदोलन 1924-25 तक जारी रखा । अप्रेल 1925 से गाँधी ने इस सत्याग्रह में प्रत्यक्षतः भाग लिया ।

6.9.1 वाइकोम सत्याग्रह के उद्देश्य

वाइकोम सत्याग्रह का तात्कालिक लक्ष्य मंदिर के आस-पास की सड़क सभी के लिये खोलना था । लेकिन इस आंदोलन का मूल तत्व यह था कि मानव को मूलभूत अधिकार दिलाना था जिससे छुत-अछूत का भेद न रहे और सभी को सम्मान से जीने का अवसर मिले । इस प्रकार इसका लक्ष्य हिन्दु धर्म में कतिपय मूलभूत सुधार करना था । ट्रेनकूवर राज्य व विधानसभा के कई सदस्य इन सुधारों का समर्थन करने के पक्ष मे नहीं थे । उन्होंने इसका विरोध किया व सत्याग्रहियों के विरूद्ध पुलिस बल प्रयोग का समर्थन किया । इस प्रकार सभी इनके विरोधी हो गये ।

6.9.2 आंदोलन की प्रगति व कार्ययोजना

सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की गई । हथकरधा और विद्यालय भवन निमार्ण व पर्यावरण को स्वच्छ रखने जैसे रचनात्मक कार्य शुरू किये गये । रूढ़िवादी ब्राहमणों को समझाने के लिये बैठके हुई ताकि वे अपने भेदभावपूर्ण व्यवहार छोड़ सके ।

प्रारम्भ में ट्रेवेन्कूर के महाराजा के रीजेन्ट को अपीलें व याचिकायें प्रेषित की गई । साथ ही ब्राह्मणों व मंदिर के पुजारियों से भी प्रार्थना की गई । जब वांछनीय परिणाम नहीं निकले तो प्रतिबन्धित सड़कों पर उच्च जाति के लोगों का सवर्ण जत्था व अछूतो का जुलूस निकाला गया । जब ब्राह्मणों ने अभियान में भाग लेने वालों पर आक्रमण किये और उन्हें पीटा तो उन्होंने कोई प्रतिरोध नहीं किया । जब नेताओं के एक समूह को गिरफ्तार कर लिया गया तो वैकल्पिक नेता तैयार हो गये और आंदोलन शांतिपूर्वक व अहिंसक रूप से चलता रहा । जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी की और सत्याग्रहियों को सड़को व मंदिर में प्रवेश करने से रोका तो सत्याग्रहियों ने प्रार्थना और सूत कातना जैसे अहिंसक कार्य शुरू कर दिया । यह नित्यप्रति दिन चलता रहा । मानसून में जब सड़के पानी से भर जाती, पुलिस तो नावों में सवार हो जाती पर सत्याग्रही बारी-बारी से वहीं डटे रहे । पानी कंधो तक ऊपर आने के बावजूद उन्होंने अपनी प्रार्थनायें जारी रखी । मोर्चेबन्दी को हटाना या उस पर चढ़ने का तो उन्होंने प्रयास ही नहीं किया ।

6.9.3 वाइकोम सत्याग्रह में गाँधी का नेतृत्व

अप्रेल 1925 में ट्रेवनकूर राज्य पहुँचने पर गाँधी ने सत्याग्रह में प्रत्यक्षत: भाग लिया । वह राज्य के प्राधिकारियों से मिले और उन्हें विरोध कर रहे सत्याग्रहियों का पक्ष समझाने का प्रयास किया । गाँधी ने इस आंदोलन का शुरू से ही समर्थन किया था । उन्होंने 'यंग इण्डिया' के विभिन्न अंकों में वाइकोम सत्याग्रह से जुडे विभिन्न मामलों पर अत्यधिक संख्या मे लेख लिखे ।

उन्होंने कहा कि वाइकोम सत्याग्रह यदि सत्य और अहिंसा के मार्ग पर टिका रहता है तो यह पूर्णत: औचित्यपूर्ण है तथा इसे पूर्ण जनसमर्थन मिलना चाहिये । उन्होंने वाइकोम अभियान के संचालन पर सन्तोष व्यक्त किया और कहा कि भविष्य में इस मार्ग पर चलने वाले कार्यकर्त्ताओं के लिये यह एक आदर्श बन सकता है । उन्होंने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि वे अपना अभियान जारी रखे और साथ ही राज्य तथा लोगों का समर्थन पाने का प्रयास भी करते रहें । साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि वे स्वावलम्बी बनें । उन्होंनें उनका मनोबल बढाते हुए कहा कि वे एक अच्छे कार्य के लिये विरोध कर रहे है, उन्हें अपने साधन और साध्य में भरोसा होना चाहिये, अन्त में जीत उन्हीं की होगी।

जातिवादी हिन्दुओ द्वारा छुआछूत व्यवहार की प्रथा की उन्होंने घोर आलोचना की । उन्होंने इस सत्याग्रह को स्वराज की लड़ाई से कम महत्वपूर्ण नहीं माना । यह युगो से चली आ रही कुप्रथा व पूर्वाग्रह के विरूद्ध लड़ाई है । रूढ़िवाद, अंधविश्वास झूठे रीति रिवाज ऐसी प्रथाओं का समर्थन करते है । यह धर्म के नाम पर अधर्म है, ज्ञान के नाम पर अज्ञानता है । छुआछूत पाप है और हिन्दु इस पाप के भागीदार बन रहे है । उन्हें स्वयं इस प्रथा को अपने जीवन से हटा देना चाहिये । उनके लिये शर्मनाक है और जब तक वे इससे छुटकारा नहीं पा लेते, उन्हें स्वयं को शुद्ध नहीं मानना चाहिये । इसके लिये कष्ट भी झेलना पड़े तो झेले और इस प्रकार अपने भाई बहनो के प्रति अपना कर्ज चुकायें ।

गाँधी जी ने सत्याग्रह अभियान मूल सिद्धान्तों पर टिके रहने की आवश्यकता: पर भी बल दिया । उन्होंने हमेशा कहा कि वाइकोम अभियान के कार्यकर्त्ता हमेशा सत्य और अहिंसा के मार्ग पर डटे रहें । उन्होंने कहा कि सत्याग्रहियों को यह प्रयास करना चाहिये कि वे अपने विरोधियों द्वारा किये जा रहे भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देने के लिए बौद्धिक रूप से समझायें । उनके विरोध के कारण यदि विरोधी सन पर वार भी करें तो भी वे प्रतिकार ने करें । वाइकोम सत्याग्रही किसी भी प्रकार की सजा को चुपचाप सहे और अपने विरोधियों के प्रति कोई दुर्भावना न रखें । वाइकोम सत्याग्रह के सुधारमूलक लक्ष्य जोर जबरदस्ती से प्राप्त नहीं किये जा सकते । उन्होंने कहा कि सत्याग्रही के लिये साधन की शुद्धता साध्य से अधिक महत्वपूर्ण है । अगर वे धैर्य बनाये रखते है और कष्ट सहने के लिये सदैव तत्पर रहते है तो उनकी सफलता निश्चित है । उन्होंने सत्याग्रहियों को सलाह दी कि यदि वे ऐसा ही करेगें तो रूढिवादी ब्राह्मण रवेच्छा से भेदभावपूर्ण व्यवहार त्याग देंगे और उनमें 'हृदय परिवर्तन' होगा । उन्होंने सत्याग्रहियों से स्वावलम्बी बने रहने पर भी बल दिया और कहा कि उन्हें जन समर्थन के अतिरिक्त किसी और समर्थन की आवश्यकता नहीं है । सत्याग्रही अपने लक्ष्य और गतिविधियों के बारे मे अपने विरोधियों को भी भयमुक्त रखे और उनके प्रति प्रेम प्रदर्शित करें।

गाँधी जी का अनुमान सही था । सत्याग्रह सफल हुआ । जब गाँधी जी ट्रेवनकूर राज्य गये और राज्य अधिकारियों से कहा कि वे मोर्चाबन्दी हटायें तो वे मान गये । लेकिन जब पुलिस ने मोर्चाबन्दी हटा दी तो भी सत्याग्रहियों ने कहा कि वे इसका अनुचित लाभ नहीं लेगें । जब तक मंदिर के आस-पास की सड़क के सार्वजनिक उपयोग के बारे में ब्राहमण सन्तुष्ट व तत्पर नहीं हो जाते तब तक वे इस सड़क पर प्रवेश नहीं करेंगे । 1925 की हेमन्त ऋतु में ब्राहमणों ने घोषणा की कि वे अछूतों की स्वीकार करने के लिये तैयार है । 1937 में ट्रेवनकूर के महाराज ने एक शाही फरमान जारी कर राज्य के सभी मंदिरो के दरवाजे सभी हिन्दू नागरिकों के लिये खोल दिये । मंदिर के दरवाजों के साथ-साथ केवल ट्रेवनकूर राज्य मे ही नहीं अपितु भारत के अन्य हिस्सो में भी कई अन्य सार्वजनिक संस्थाओं के दरवाजे भी सभी के लिए क्रमशत: खुल गये।

6.9.4 सत्याग्रह का महत्व

इस प्रकार वाइकोम सत्याग्रह शिव मंदिर के आस-पास की सड़क सभी जाति बिन्दुओं के लिये खुलवाने के अपने तात्कालिक लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुआ । इस आंदोलन ने अछूत कहलाने वाले भारतीयों द्वारा झेली जा रही अन्य कई समस्याओं को हल करने में प्रेरक का काम किया । इसने उच्च वर्ग के लोगों को कमजोर वर्ग के लोगो के प्रति अपनी नैतिक जिम्मेदारी का भी एहसास कराया । इसने अछूत कहलाने वाले भारतीयों को सम्मान व न्याय प्राप्त करने का रास्ता बताया । गाँधी का यह मानना कि यह सत्याग्रह स्वराज के सत्याग्रह से कम महत्वपूर्ण नहीं है, इस बात का संकेत था कि ब्रिटिश राज के विरूद्ध चलाये जा रहे राजनीतिक स्वतन्त्रता आंदोलन के साथ-साथ भारत में विद्यमान सामाजिक आर्थिक बुराइयों से लड़ना भी उतना ही महत्वपूर्ण है । वाइकोम सत्याग्रह इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण था कि यह इस बात का प्रतीक था कि धार्मिक अज्ञानता और मूढ़ता से लडना भी आवश्यक है । अन्त में

अपने मूल सिद्धान्तों पर चले इस सत्याग्रह ने यह भी दिखाया कि समाज में पनप रही विभिन्न तनावपूर्ण स्थितियों से लडने के लिये यह बेहद उपयोगी है ।

8.10 भारत छोड़ो आन्दोलन

1942 का भारत छोड़ो आंदोलन भारत की स्वतन्त्रता के लिये गाँधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा चलाया गया अंतिम जन आंदोलन था । अंग्रेजों को 'भारत छोड़ो' का आहवान करते हुए उन्होंने उनसे कहा कि भारत की स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित करते हुए वे इंग्लैण्ड लौट जायें । भारत की स्वतन्त्रता राष्ट्रीय आंदोलन की तात्कालिक व न्यूनतम माँग है और गाँधी के अनुसार इस मांग के साथ कोई समझौता या सौदेबाजी नहीं हो सकती । लोगों ने इस आंदोलन में साहस और उत्साह से भाग लिया । औपनिवेशिक आकांक्षाओं व विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप उपजी स्थिति के कारण सरकार ने इस आंदोलन को कुचलने के लिये अनेक जुल्म किये ।

6.10.1 आंदोलन के कारण

1930 का दशक समाप्ति की ओर था और भारतीयों मे गहरा असन्तोष था । भारत में संवैधानिक सुधारो के लिये गठित क्रिप्स मिशन कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं प्राप्त कर सका । इससे स्पष्ट था कि ब्रिटेन भारतीयों की आकांक्षाओं के अनुरूप कार्य करने के लिये तत्पर नहीं है । उसने भारत पर द्वितीय विश्व में उसका साथ देने का दबाव भी डाला था । ब्रिटिश के इस प्रकार के अधिकार पूर्वक नियन्त्रण के व्यवहार के आगे झुकने के लिये कई राष्ट्रवादी नेता तैयार नहीं थे । वे चाहते थे कि भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के संदर्भ में वे अपना इरादा स्पष्ट करें । लेकिन सरकार ने ऐसी कोई घोषणा। नहीं की । इसके विपरीत उसने किसी भी प्रकार के विरोध को कुचलने की तैयारी की और द्वितीय विश्व युद्ध के कारण उपजी स्थितियों से निपटने की तैयारी की ।

ब्रिटेन द्वारा भारतीयों को सत्ता हस्तांतरण की अनिच्छा के साथ एक कारण और था जिससे आम जनता में असंतोष था । विश्व युद्ध के परिणामस्वरूप आवश्यक वस्तुओं के दाम आसमान छू रहे थे । बंगाल व उड़ीसा में सरकार ने आक्रमणकारी जापानियों को रोकने के उद्देश्य से मछुआरों की नावें अपने कब्जे में ले ली थी । इससे भी लोग नाराज हो गये । भारतीयों में सरकार के प्रति यह भरोसा भी नहीं था कि भारत पर जापानी आक्रमण की स्थिति मे सरकार उनकी जान-माल की सुरक्षा कर सकेगी । उन्हें लगता था कि ब्रिटेन शीघ्र ही साम्राज्यवादी राष्ट्र के रूप मे अपना स्तर खो देगा । अत: नेताओं के साथ-साथ जनता भी चाहती थी कि भारत औपनिवेशिक शासन से जल्दी से जल्दी मुक्ता हो।

6.10.2 आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की भूमिका

गाँधी जी भारतीयों की मनोभावना समझ चुके थे । उन्होंने अपने कुछ साथियों को देश भर का दौरा कर लोगों के मनोभाव को पढ़ने के लिये भेजा । जब वे आश्वस्त हो गये स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये चलाये जाने वाले एक और आंदोलन के लिये भारतीय तैयार है, गाँधी ने के विरूद्ध एक अहिंसक असहयोग आंदोलन की परिकल्पना की । गाँधी की योजना के अनुसार

यह एक जन आंदोलन था जिससे सरकारी कामकाज ठप्प हो जाये । इसका अर्थ यह कदापि नहीं था कि उनकी योजना सत्ता हथियाना या ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फैकना हो । उन्होंने दावा किया कि यह सम्बंधो के पुननिर्धारण का कार्यक्रम है जिसके अन्त में शान्तिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण होगा।

आंदोलन का कार्यक्रम बनाने में गांधी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । उन्होंने 12 सूत्रीय कार्यक्रम बनाया जिसमें अहिंसा व्रत के पालन पर बल दिया गया था । गाँधी के कार्यक्रम का इस प्रकार है :-

1. देशभर में 24 घंटे की हड़ताल
2. गांवो में जनसभा करके आंदोलन चलाने के कांग्रेस के लक्ष्यों से लोगो को अवगत कराना
3. युद्ध के लिये ब्रिटेन द्वारा चलाये गये भर्ती अभियान के प्रति भारत का व्यक्त करने के लिये विरोध मार्च करना
4. राजकीय सेवाओं से त्यागपत्र
5. नमक कानून का उल्लंघन
6. छात्रों द्वारा स्कूल व कॉलेज की पढ़ाई छोड़ना
7. विदेशी कपड़ों व शराब की दुकानों पर धरना देना
8. रेल सड़क यातायात मे अवरोध डालना
9. शहरी औद्योगिक मजदूरों को हड़ताल पर जाने के लिये प्रेरित करना
10. सैन्य बल कर्मियों को विद्रोह करने के लिये प्रेरित करना
11. कर जमा करने से मना करना
12. समानान्तर सरकार का गठन

उन्होंने कहा कि इस कार्ययोजना में जो भी विषय अहिंसक आंदोलन के दायरे में आयेंगे उन्हें शामिल किया जा सकता है ।

गाँधी जी ने भारत छोडो आंदोलन की योजना बनाने में सक्रिय हिस्सा लिया । समाचार पत्र में अपने लेखों तथा कांग्रेस व अन्य संगठनो द्वारा उपलब्ध मंचो से दिये अपने भाषणों मे गाँधी ने आंदोलन के पक्ष में जनमत तैयार करने का प्रयास किया । उन्होंने कहा कि भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता का मजबूत दावा करना चाहिये और इससे कम किसी कीमत पर समझौता नहीं करना चाहिये । उन्होंने इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये लोगों को 'करो या मरो' का नारा दिया । इस नारे का अर्थ था कि भारतीय साहस का परिचय देते हुए भारत को ब्रिटिश शासन से मुक्त कराने के लिये बड़े से बड़े बलिदान के लिये तैयार रहना चाहिये । उन्होंने कहा कि ब्रिटिश शासन से पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग करने का कांग्रेस व जनता को पूरा हक है । उन्हें आशा थी कि अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय भारतीयों का समर्थन करेगा । कांग्रेस के अन्दर उन्होंने प्रमुख नेताओं से विचार विमर्श कर आंदोलन के संदर्भ में उनके विचार जानें । उन्होंने शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापक दौरे कर लोगों को आंदोलन में भाग लेने के लिये प्रेरित किया । उन्हें पूरा भरोसा था कि भारत के लिये पूर्ण स्वतन्त्रता का लक्ष्य औचित्यपूर्ण है । इस मामले में यदि कोई उनका

विरोध भी करता है तो शीघ्र ही उसे अपनी गलती का एहसास होगा तथा शीघ्र ही दृढ़ता से साथ हो जाएगा ।

उन्होंने प्रेस से भी आग्रह किया कि वह स्वतन्त्र व साहसपूर्वक अपना कर्त्तव्य निभायें । उन्होंने स्थानीय शासकों से भी आग्रह किया कि वे भी पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग का समर्थन करें । उन्होंने छात्रों व शिक्षकों से भी कहा कि वे अपने दिलों में स्वतन्त्रता की ज्योति जलाये रखें और साहसपूर्वक कांग्रेस का समर्थन करें तथा भारत की आजादी के लिये अपना केरियर भी त्यागना पड़े तो तैयार रहें । राज्य कर्मियों से भी उन्होंने ऐसा ही आग्रह किया ।

14 जुलाई 1942 को वर्धा में कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक हुई । इसमें गाँधी का जनसंघर्ष का सुझाव स्वीकार कर लिया गया । इसका अनुमोदन करने के लिये बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक प्रस्तावित की गई । 7 अगस्त 1942 को बम्बई में आयोजित बैठक में कई कांग्रेसी एकत्रित हुए । 8 अगस्त 1942 को मध्यरात्रि के कुछ देर बाद ही गाँधी ने लोगो को सम्बोधित किया । ये लोग बम्बई के गोवालिया टैंक पर जमा हुए थे । अपने प्रभावपूर्ण भाषण में उन्होंने कहा कि भारत के लिये पूर्ण स्वराज्य आंदोलन का न्यूनतम व तात्कालिक लक्ष्य है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये वे 'करने या मरने' के लिये तैयार रहें । उन्होंने कहा कि आंदोलन शुरू करने से पूर्व वाइसराय से कांग्रेस की मांगे मानने के लिये निवेदन किया जायेगा । इस दौरान उन्होंने कांग्रेसियों व जनता को निर्देश दिया कि वे रचनात्मक कार्यो में लगें और स्वतन्त्र स्त्री-पुरूषों की तरफ व्यवहार करें ।

सम्भागियों के विसर्जित होने के कुछ घंटे बाद ही सरकार ने गाँधी व कांग्रेस के कुछ प्रमुख नेताओं को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया । गाँधी और प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के समाचार ने चिंगारी का काम किया और गाँधी व अन्य प्रमुख नेताओं के नेतृत्व के बिना ही 'भारत छोड़ो आंदोलन' शुरू हो गया । सरकार ने आंदोलन को कुचलने के लिये बल प्रयोग करने का निश्चय किया । जेल में पड़े गाँधी को भी राष्ट्रीय नेताओं से मिलने की अनुमति नहीं दी गई । आंदोलन की प्रगति के समाचार भी उन तक नहीं पहुँच पाये । इस प्रकार आंदोलन के संचालन में गाँधी कोई भूमिका अदा नहीं कर प[ये । बल प्रयोग व दमन से सरकार ने आंदोलन में जनसहभागिता को कुछ ही समय में कम कर दिया ।

6.10.3 आंदोलन का महत्व

यद्यपि भारत छोड़ो आंदोलन गाँधी के स्पष्ट लक्ष्य भारत के लिये 'स्वतन्त्रता से कम कुछ नहीं ' को प्राप्त नहीं कर सका तथापि कई दृष्टि से यह महत्वपूर्ण था । भारत के लिये 'स्वतन्त्रता से कम कुछ नहीं के लक्ष्य का अर्थ था कि अब भारतीयों की ब्रिटिश शासन से न्यूनतम मांग ही यह है कि भारत को औपनिवेशक एशिक शासन से स्वतन्त्रता मिले । साथ ही यह भी कहा गया कि इस लक्ष्य को और अधिक स्थगित नहीं किया जा सकता । उत्साह व साहस के साथ जनसहभागिता भी उल्लेखनीय। थी । थोडे समय के लिये ही सही. भारत के कुछ हिस्सो में समानान्तर सरकार की स्थापना भी इस आंदोलन की एक उल्लेखनीय विशेषता थी।

6.11 भारत छोड़ो आन्दोलन पश्चात् से जनवरी, 1948 तक

1942 में भारत छोड़ो आन्दोलन से तत्काल और प्रभावी रूप से निपटने के लिए ब्रिटिश सरकार ने गाँधी और काँग्रेस के अन्य नामी नेताओं को आन्दोलन प्रारम्भ होने से पूर्व ही गिरफ्तार कर लिया और सभी आन्दोलन कर्ताओं के विरूद्ध कठोर कार्यवाही करने का निर्यण लिया । 9 अगस्त 1942 को प्रात: ही गाँधीजी को गिरफ्तार कर उन्हें आगा खान महल, पुणे में बंधी बनाया गया । 'भारत छोड़ो आन्दोलन' ने ब्रिटिश शासन को यह स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया कि अब भारतीय जनता स्वतंत्रता से कम कुछ भी ब्रिटिश सरकार से स्वीकार नहीं करेंगे और न ही इस लक्ष्य प्राप्ति में किसी प्रकार की देरी को चुपचाप सहेंगे।

6.11.1 भारतीय स्वतंत्रता. ब्रिटिश शासन की नीति और गाँधीजी

गाँधीजी ने सदैव और अहिंसा को निष्ठापूर्वक अनुसरण करने की शिक्षा दी । उन्होंने इन मूल्यों की सार्तकता केवल व्यक्तिगत जीवन तक ने सीमित कर इन्हें सार्वजनिक जीवन का भी अभिन्न अंग माना । इस कारण जब भी सार्वजनिक क्षेत्र में हिंसा की घटना के बारे में उन्हें सूचना मिली तो वे बहुत दुःखी हुए और प्रायश्चित के तौर पर मौन और उपवास रखने का निर्णय किया और सक्रिय प्रयास हिंसात्मक परिस्थितियों को रोकने और बदलने का प्रयास किया।

आन्दोलन के पश्चात् गाँधीजी की प्रमुख राजनीतिक गतिविधियाँ इस तरह ने भारतीय स्वतंत्रता के लक्ष्य से घनिष्ठ रूप से जुड़ी रही । हिंसा साम्प्रदायिकता पाकिस्तान की माँग और ब्रिटिश सरकार के भारतीय स्वतंत्रता सम्बन्धी प्रस्ताव और निर्णय 1942 के पश्चात् गाँधीजी के विचार और कार्य को प्रभावित करने वाले प्रमुख आधार बने ।

भारत छोड़ो आन्दोलन के बाद आजादी की लड़ाई और अधिक गहनता और भावुकता से भारतीय जनता द्वारा लड़ी गई । समस्त भारत एकजुट होकर इस संग्राम में कूद पड़ा और जो भी योगदान वे स्वतंत्रता संग्राम में कर सकते थे वह वह उन्होंने किया । सरकार के विरूद्ध व्यापक प्रदर्शन कर विरोध जताया गया ।

देश भर में अनेक जगहों पर हिंसात्मक गतिविधियाँ गठित हुई ।

भारतीय जनता को गाँधीजी ने इस उपवास के माध्यम से सत्याग्रह के सिद्धान्तों का स्मरण कराया। 1944 में जब उन्हे जेल से रिहाई मिलने के पश्चात विभिन्न घटनाओं की सही सूचनायें मिलने लगीं तो वे इस बात से बहुत व्यथित हुए कि उनका अनुसरण करने की बात करने वाले आंदोलनकर्त्ता अहिंसा जैसे सत्याग्रह के मूल सिद्धान्त को आन्दोलन के दौरान भुला बैठे । उन्होंने कहा कि केवल किसी का वध नही करना अहिंसा नहीं है अपितु डराना और धमकाना भी हिंसा है । गाँधीजी ने गुप्तता को पाप और हिंसा का प्रतीक माना और कहा कि सरकारी सम्पत्ति को नुकसान पहुँचा कर हृदय परिवर्तन करने का प्रयास व्यर्थ है । शासन और उनके बीच की कटुता और अविश्वास तथा हिंसा की विभिन्न घटना के अलावा गाँधीजी को आगा खान महल, पुणे में नजरबंध रखने के दौरान दो निकटतम साथियों से भी हमेशा के लिए बिछुड़ना पड़ा - अपनी पत्नी कस्तूरबा और अपने सचिव महादेव देसाई । शोक संतप्त गाँधीजी को आगा खान महल में उनकी नजरबन्धी व्यवस्था पर सरकार द्वारा अपव्यय भी दुख का

कारण था क्योंकि यह न केवल अनावश्यक था अपितु गरीब भारतीयों से वसूल किए गए करों से अपव्यय हो रहा था।

8.11.2 ब्रिटिश शासन की सत्ता हस्तान्तरण योजना और गाँधीजी

शासन और उनके बीच की कटुता और अविश्वास को दूर करने तथा सरकार के साथ सहयोग प्राप्त करने हेतु गाँधीजी के प्रयास, निकटतम साथियों - कस्तूरबा और महादेव देसाई से हमेशा के लिए बिछुड़ना और गाँधीजी के बिगड़ते स्वास्थ्य ने ब्रिटिश शासन को गाँधीजी और काँग्रेस से सम्बन्धित अपने रूख को बदलने के लिए प्रभावित नहीं किया । अपितु द्वितीय विश्वयुद्ध में मित्र-राष्ट्रों का विजय की ओर अग्रसर होने, 1945 के आम चुनाव बाद श्रमिक दल का ब्रिटेन में सत्ता संभालने, विश्वयुद्ध के प्रभाव से क्षीण और बढते अन्तर्राष्ट्रीय दबाव से भारत में संवैधानिक विकास और उसे सत्ता हस्तान्तरित कर स्वदेश लौटने के निर्णय के जैसे अनेक महत्वपूर्ण कारणों से ब्रिटिश शासन का रूख बदलने लगा । ब्रिटिश शासन ने काँग्रेस और मुस्लिम लीग से वार्ता पुन: प्रारम्भ किया और संवैधानिक विकास के कार्य को आगे बड़ाया ।

1939 में विश्वयुद्ध के दौरान गाँधीजी ने ब्रिटिश शासन द्वारा भारत को भी युद्ध योजना में सहभागी बनाने के निर्णय का विरोध किया । उन्होंनें कहा कि भारत परतंत्र रहकर मित्र'-राष्ट्रों द्वारा उद्घोषित प्रजातान्त्रिक स्वतन्त्रता अथवा 'प्रजातान्त्रिक मूल्यों की रक्षा हेतु' लड़ाई लड़ने वाली द्वितीय विश्वयुद्ध में सम्मिलित नहीं हो सकता । 1942 के आन्दोलन में गाँधीजी ने अंग्रेजों को तत्काल भारत को अपने हाल पर छोड़ कर स्वदेश जाने की बात कही । गाँधीजी ने कहा कि अत्यंत खराब स्वशासन भी विदेशी शासन की तुलना में स्वीकार्य है । 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में गाँधीजी ने स्वराज प्राप्त करने के लिए 'करो या मरो' का नारा दिया । 1946 में स्वतन्त्रता का संघर्ष निर्णयक चरण में पहुँचा । ब्रिटेन के नए प्रधानमंत्री लॉर्ड एटली ने 15 मार्च 1946 को यह घोषणा की कि केबिनेट मिशन भारत के लिए संवैधानिक सुधार सम्बन्धी सिफारिशें प्रस्तुत करने हेतु शीघ्र भारत आएगा । तीन सदस्य वाले केबिनेट मिशन (लॉर्ड पैथिक लॉरेन्स, सर स्टेफॉर्ड किप्स और ए. वी. एलेक्जेन्डर) ने भारत आकर विभिन्न राजनीतिक दलों के प्रतिनिधियों से मिले परन्तु संवैधानिक सुधार के सम्बन्ध में आम-सहमति न होने के कारण संतोषजनक समाधान नहीं निकल पाया । केबिनेट मिशन ने दो महत्वपूर्ण सिफारिशें प्रस्तुत कीं - संविधान सभा और अंतरिम सरकार का गठन । काँग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा सिफारिश किए गए योजना को स्वीकार किए जाने के कारण शीघ्र चुनाव सम्पन्न किए गए और सितम्बर 1946 में अंतरिम सरकार का गठन किया गया । मुस्लिम लीग न ही अंतरिम सरकार में और न ही संविधान सभा की कार्यवाही में सम्मिलित हुआ । मुस्लिम समुदाय के तथाकथित हितों की रक्षा और पाकिस्तान की माँग के सम्बन्ध में जिन्ना और मुस्लिम लीग की अडियल रवैया ने संवैधानिक सुधार और सत्ता हस्तान्तरण कार्ययोजना का कार्यान्वयन दुष्कर बनाया । मार्च 1947 में लॉर्ड माउन्टबेटन भारत के नए वाइसरॉय बने और संवैधानिक गतिरोध को दूर करने के लिए एक योजना प्रस्तुत की जिसे 'माउन्टबेटन प्लॉन' कहा जाता है । इसमे भारत को विभाजित कर दो स्वतन्त्र राष्ट्र - भारत और पाकिस्तान की स्थापना करने और इन दानों को शीघ्रताशीघ्र सत्ता हस्तान्तरण करने की बात की गई । काँग्रेस

और मुस्लिम लीग द्वारा इस योजना को स्वीकृत किए जाने के कारण संवैधानिक सुधार और सत्ता हस्तान्तरण कार्य योजना में आया गतिरोध दूर हुआ। ब्रिटेन की संसद में 'माउन्टबेटन प्लॉन' सम्बन्धी विधेयक को स्वीकृति प्रदान की और इस तरह 'भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम' 15 जून 1947 को पारित हुआ। राजमुकुट ने इसे 18 जूलाई 1947 को स्वीकृति प्रदान की। 15 अगस्त 1947 को भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में अस्तित्व में आया।

6.11.3 भारत का विभाजन और गांधीजी

महात्मा गाँधी ने कभी भी इस सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया कि मुसलमान अलग राष्ट्र हैं। धर्म के आधार पर राष्ट्रत्व का निर्णय उन्हें स्वीकार नहा था। मुस्लिम लीग द्वारा प्रस्तुत द्वि-राष्ट्र सिद्धांत को गाँधीजी ने सत्य विरोधी माना। उनके मतानुसार भारत के अधिसंख्यक मुसलमानों ने धर्म परिवर्तन से इस्लाम स्वीकार किया है और केवल धर्म परिवर्तन के आधर पर एक प्रथक राष्ट्र निर्मित नहीं होता। उन्होंने कहा कि उनकी अन्तरात्मा किसी भी हालत में यह स्वीकार नहीं करती कि हिंदू धर्म और इस्लाम धर्म दो पूर्णत: विरोधी धर्म हैं जो विरोधी संस्कृतियां और सिद्धांत पर आधारित हैं। उनके मतानुसार हिन्दुओं और मुसलमानों को जोड़ने वाली अनेक कड़ियाँ हैं जिसके कारण भारत में इन दोनो धर्म को मानने वाले लोगों की सम्मिलित संस्कृति है। इस आधार पर भारत को एक ही राष्ट्र माना जाना चाहिए। हिन्दुओं और मुसलमानों में फूट के लिए गाँधी ने बहुत हद तक ब्रिटिश सरकार को दोषी ठहराया। गाँधीजी ने यह भी माना कि सांप्रदायिक तनाव का मुख्य कारण अंधविश्वास है।

ब्रिटिश शासन द्वारा भारत में संवैधानिक विकास और उसे सत्ता हस्तान्तरित कर स्वदेश लौटने का निर्णय लिया जा चुका था। काँग्रेस और मुस्लिम लीग को स्पष्ट कर दिया गया के यदि वे अपने मतभेद दूर नहीं कर पाते तो ब्रिटिश शासन विवश होकर भारत को विभाजित कर दो प्रथक स्वतन्त्र राष्ट्रों को सत्ता हस्तान्तरित कर देगी। काँग्रेस और मुस्लिम लीग और दोनों सम्प्रदायों में बढ़ती दूरियाँ और अविश्वास के वातावरण ने साम्प्रदायिक दंगों को अवश्यम्भावी बना दिया। माउंटबेटन योजना, साम्प्रदायिक दंगे और अंतरिम सरकार की विफलताओं के कारण विभाजन अपरिहार्य लगने लगा था। काँग्रेस के कई सदस्य विभाजन को एक तात्कालिक अनिवार्यता के रूप में स्वीकार करने लगे थे। यद्यपि गाँधीजी ने यह कहा कि वे भारत के विभाजन को हृदय से स्वीकार नहीं करेंगे, उनका यह भी कहना था कि वे अपने विश्वास और मत को जबरन किसी पर थोप नही सकते और यदि मुसलमान इस बात पर दृढसंकल्पित हो जाते है कि उन्हें भारत से अलग होना है तो अहिंसा में विश्वास करने वाले व्यक्ति की हैसियत से वे प्रस्तावित भारत विभाजन का सबल प्रतिरोध नहीं कर सकते। पर चूँकि भारत विभाजन का तर्क अस्तय है अथवा उनके अन्तरात्मा के विरूद्ध है, इसलिए गाँधीजी ने यह भी कहा कि वे इसे रोकने के लिए हर संभव अहिंसक प्रयास करेंगे। अन्तरात्मा के आधर पर बहुसंख्यक से अलग विपरीत दिशा में चलने के लिए उनमें धैर्य और साहस दोनों ही पर्याप्त मात्रा में थी। भारत विभाजित होकर 1947 में स्वतंत्र हुआ। जहां एक ओर 15 अगस्त 1947 को देश के लाखों लोग आजादी का जश्न मना रहे थे वहीं दूसरी ओर महात्मा गाँधी आजादी के जश्न-समारोह से प्रथक होकर बिहार और बंगाल में फैले साम्प्रदायिक दंगों को

रोकने का प्रयास कर रहे थे । 125 साल जीने की इच्छा रखने वाले गाँधीजी यदि कुछ और समय जीवित रहते तो विभक्त भारतवर्ष अथवा भारत-पाक एकता बढ़ाने के लिए कुछ अवश्य करते । परन्तु भारत के स्वतन्त्र होने के तुरन्त बाद ही उनकी हत्या के कारण वे इस संबन्ध में कुछ नहीं कर सके।

6.11.4 1947 के साम्प्रदायिक दंगे और गाँधीजी

1947 में स्वतंत्रता भारत के दहलीज़ तक अनेक जगहों पर साम्प्रदायिक दंगों के तांडव को साथ लिए पहुँची। जहां एक ओर 15 अगस्त 1947 को देश आजादी के जश्न में डूबा हुआ था वहीं दूसरी ओर बिहार और बंगाल में साम्प्रदायिक दंगे व्यापक स्तर पर फैले हुए थे । अहिंसा और शान्ति के पुजारी महात्मा गाँधी ऐसे अहिंसा युक्त समाज की अनदेखी कर आजादी के जश्न-समारोह का अंग नही बन सकते थे । ऐसा समाज जहाँ केवल सतही स्तर पर स्वतंत्रता हो और आन्तरिक स्तर पर साम्प्रदायिक और जातिगत अत्याचार विध्यमान हो गाँधीजी को स्वीकार्य नहीं था ।

इसलिए महात्मा गाँधी आजादी का जश्न मनाने की बजाय बंगाल और बिहार के साम्प्रदायिक दंगे रोकने में लग गए । वे कुछ चुनिन्दे सत्याग्रहियों को साथ लेकर बंगाल और बिहार चले गए । बंगाल के नोआखाली के गाँवों में पैदल घूमते रहे, बिहार के मुसलमानों को आश्वस्त करते रहे और कलकत्ता में दंगा रोकने के लिए न केवल लोगों को समझाते रहे बल्कि उपवास पर बैठने की बात भी कहीं । प्रार्थना सभाओं में कौमी एकता, सहिष्णुता और हिंसा का परित्याग लगातार गाँधीजी के उद्‌बोधन के केंद्रीय विषय बने रहे । साम्प्रदायिक हिंसा को रोकने के लिए वे उपवास पर बैठे । निःशक्त जनों को पूर्ण आत्म-सम्मान के साथ आजाद भारत में जीवन जीने के अधिकार दिलाने का भी गाँधीजी भरसक प्रयास किया । आजाद भारत अमन और शान्ति से कैसे आगे बडे इसकी चर्चा वे अनेक नेताओं और विद्‌वानों से करते रहे । परन्तु सशक्त और सर्वोदयी राष्ट्र निर्माण का उनका प्रयास परिणति तक नही पहुँच सका । 30 जनवरी, 1948 को सांय 5:17 बजे प्रार्थना सभा में जाते वक्त उनकी गोली मारकर हत्या कर दी गयी।

6.12 सारांश

1915 से जनवरी 1948 तक राष्ट्रीय परिदृश्य में गाँधीजी का अद्भुत प्रभाव । जब कभी भी जन आंदोलन का विचार बनता अधिकांश राजनीतिज्ञ, कार्यकर्ता व जनता उन्हें ही नेता की मंशा व्यक्त करते । गाँधी ने हर आंदोलन की कार्य योजना बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की । उनकी मान्यता थी कि सत्याग्रह के सिद्‌वान्तों के अनुरूप अहिंसक आंदोलन के माध्यम से राष्ट्रीय स्वतन्त्रता जैसे लक्ष्य भी प्राप्त किये जा सकते है । उनकी यह भी मान्यता थी की भारत को स्वतन्त्रता शीघ्र तथा किसी प्रकार का समझौता किये बिना प्राप्त हो जानी चाहिये । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आवश्यकता पडने पर अकेले भी जाने को तैयार थे । लक्ष्य और साधन दोनों के प्रति उनका दृढ़ समर्पण भाव था । स्वतन्त्रता आन्दोलन को जन आन्दोलन बनाकर नैतिक और अहिंसक साधनों के प्रयोग से भारत को स्वतंत्रता करने में उनका

महत्वपूर्ण योगदान था । स्वतंत्रत भारत को सशक्त और सर्वोदयी राष्ट्र बनाने तथा समाज में न्याय और भ्रातत्व भाव स्थापित करने का उनका अनूठा सपना था और उन्होंने इसकी कार्य योजना के बारे में विस्तृत विवेचना भी की और प्रयास भी किए । परन्तु दुर्भाग्य से स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् उन्हें अधिक समय नही मिला क्योंकि 30 जनवरी, 1948 को उनकी हत्या कर दी गयी थी।

6.12 अभ्यास प्रश्न

1. असहयोग आंदोलन के कारणों, कार्यक्रम व महत्व पर प्रकाश डालिये ।
2. सविनय अवज्ञा आंदोलन के क्या कारण थे? इसमें गाँधी की भूमिका व इस आंदोलन के महत्व पर प्रकाश डालिये ।
3. 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के कारणों पर प्रकाश डालिये । आंदोलन की कार्ययोजना बनाने में गाँधी की क्या भूमिका थी?
4. वाइकोम सत्याग्रह के उद्देश्यों व महत्व पर चर्चा करें ।
5. भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में गाँधी की भूमिका की चर्चा करें ।
6. भारत छोड़ो आन्दोलन पश्चात् से जनवरी, 1948 तक गाँधीजी के सार्वजनिक कार्यो की चर्चा करें ।

6.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नंदा, बी. आर. महात्मा.गाँधी : ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
2. ब्राउन जूडिथ, गाँधीज राईज टू पॉवर: इण्डियन पोलिटिक्स 1915-1922, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977
3. ब्राउन जूडिथ, गाँधी एंड सिविल डिसोबिडिएंस : द महात्मा इन इण्डियन पोलिटिक्स 1928-34, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1972
4. सरकार सुमीत (अनुवादित), आधुनिक भारत 1857-1947, राजकमल प्रकाशन. नई दिल्ली, 2000
5. कुमार, बी. अरूण, गाँधीयन प्रोटेस्ट. रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2008
6. झॉ, डी.सी. महात्मा गाँधी, द काँग्रेस एण्ड द पार्टीशन ऑफ इण्डिया, संचार पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1995
7. रॉथरमण्ड, दैतमर, महात्मा गाँधी: एन एस्से इन पॉलिटिकल बायोग्राफी, मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1991
8. ज़कारिया, रफीक, गाँधी एण्ड द ब्रेक-अप ऑफ इण्डिया, भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, 1999
9. जकारिया, रफीक, द क्राइम ऑफ पार्टीशन, भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, 2002
10. किब्रिया मजहर, गाँधी एण्ड इण्डियन फ्रीडम स्ट्रगल, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉरपेरेशन नई दिल्ली,1999

11. कपूर, ए.एन. , गुप्ता वी.पी., एवं गुप्ता, मोहिनी, द गाँधीयन इरा, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007

इकाई - 7

गाँधी: एक पत्रकार

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 इंडियन ऑपिनियन
7.3 एक पृष्ठ का बुलेटिन 'सत्याग्रह'
7.4 नवजीवन
7.5 हरिजन
7.6 विज्ञापनों के पक्ष में नहीं
7.7 रचनात्मक कार्यक्रमों से संबंधित पत्र
7.8 पत्र-पत्रिकाओं का आदर्श जरूरी
7.9 गाँधी युग के पत्रों का योगदान
7.10 गाँधी युग (सन् 1920- 1947)
7.11 गाँधी महान पत्रकार एवं संपादक
7.12 सारांश
7.13 अभ्यास प्रश्न
7.14 संदर्भ ग्रंथ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य पत्रकार गाँधीजी के जीवन और उनका पत्र-पत्रिकाओं में योगदान तथा संपादक के रूप में उन्हें रेखांकित करना है । गाँधीजी का भारत को स्वाधीनता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है और उन्होंने अपना आन्दोलन चलाने के लिए 'जनजीवन', 'हरिजन', 'इंडियन ओपिनियन' आदि पत्रों-पत्रिकाओं को आधार बनाया । गाँधी जी का पत्रकार एवं संपादक के रूप में आज भी वास्तविक एवं शोधपरक मूल्यांकन नहीं हुआ है । इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेंगे -

- गाँधी को पत्रकार के रूप में,
- गाँधीजी का पत्र-पत्रिकाओं का प्रति दृष्टिकोण,
- 'इंडियन ओपिनियन' के प्रकाशन का उद्देश्य,
- 'हरिजन' का प्रकाशन और संपादन का उद्देश्य,
- गाँधीजी का विज्ञापनों के प्रति दृष्टिकोण,
- पत्र-पत्रिकाओं के लिए जरूरी आदर्श,
- गाँधी महान पत्रकार एवं संपादक ।

7.1 प्रस्तावना

गाँधीजी की भारत को स्वाधीन कराने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है । गाँधीजी पेशे से वकील थे लेकिन उन्होंने अपना आन्दोलन चलाने के लिए पत्रकारिता को मुख्य आधार बनाया । पत्रकारिता और अखबारों की महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य भूमिका को गाँधी जी ने अच्छी तरह महसूस कर लिया था । उनके शब्दों में "मेरा ख्याल है कि ऐसी कोई भी लड़ाई जिसका आधार आत्मबल हो, अखबार की सहायता के बिना नहीं चलाई जा सकती है । अगर मैंने अखबार निकालकर दक्षिण अफ्रीका में बसी हुई भारतीय जमात को उसकी स्थिति न समझाई होती और दुनिया में फैले हुए भारतीयों को दक्षिण अफ्रीका में क्या कुछ हो रहा, इसे 'इंडियन ओपिनियन' के सहारे अवगत न कराया होता तो मैं अपने उद्देश्य में सफल नहीं हो सकता था । इस तरह मुझे भरोसा हो गया है कि अहिंसक उपायों से सत्य की विजय के लिए अखबार एक बहुत ही महत्वपूर्ण और अनिवार्य साधन है ।"

7.2 इंडियन ओपिनियन

महात्मा गाँधी जब नेटाल में थे और गोरे लोगों के रंगभेद के विरूद्ध लड़ रहे थे तो उन्होंने 'इंडियन ओपिनियन' की स्थापना की । 4 जून 1903 को चार भाषाओं में 'इंडियन ओपिनियन' साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया जिसके एक अंक में हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती और तमिल भाषा में छ' कॉलम प्रकाशित होते थे । उन्होंने एक प्रेस भी डाल लिया । श्री मुनसुख लाल नाजर संपादक और मदनजीत गाँधीजी के सहायक संपादक थे । मदनजीत मुंबई के रहने वाले थे और उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में गाँधीजी के साथ राजनीतिक क्षेत्र में कार्य किया था ।

'इंडियन ओपिनियन' के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए गाँधीजी ने लिखा - "पत्र की नीति इस उपमहाद्वीप में भारतीयों के हित को संसार के सामने उपस्थित करना है । किन्तु हम कह देना चाहते हैं कि पत्र केवल भारतीय समाज के अधिकार की ही बात नहीं करेगा वह एक बड़े और विशाल साम्राज्य में उसके क्या कर्त्तव्य है, यह बताने में भी कभी किसी प्रकार की आनाकानी नहीं करेगा ।"

भारत की सांस्कृतिक चेतना तथा परम्पराओं को भी गाँधीजी ने एक पत्र के माध्यम से उद्घाटित किया । सन् 1909 में गाँधीजी को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा । उन्होंने अपने पत्र का आकार बदल दिया, टिप्पणियां संक्षिप्त कर दी और बाहर से आने वाले समाचारों को बहुत काट-छाटकर और छोटा बनाकर छापने लगे । वे देश और दुनिया के बड़े-बड़े आदमियों पर केवल टिप्पणियां ही नहीं लिखते थे, उन पर लेख भी लिखते थे । टायस्टाय, लिंकन, मेजिनी, एलिजाबेथ, फ्राई, फ्लोरेंस नाइटेंग्लस जैसे प्रसिद्ध व्यक्तियों के संबंध में लिखने के अतिरिक्त उन सत्याग्रहियों के जीवन के बारे में लिखा जिन्होंने दक्षिण अफ्रीका के संघर्ष में जान और माल का नुकसान उठाया । उन्होंने लिखा कि अब हमारी सारी शक्ति हमें संक्षिप्तीकरण में लगानी चाहिए । संपादन में संक्षिप्तीकरण का कितना योगदान हो सकता है, इसे 'इंडियन ओपिनियन' के सन् 1910 से लगातार 1914 तक के अंक प्रदर्शित करते हैं ।

आगे चलकर हिन्दी एवं तमिल के स्तम्भों को देना मंद कर दिया और पत्रिका केवल अंग्रेजी और गुजराती में नियमित सामग्री देती रही । आर्थिक कष्टों में पकड़कर गाँधीजी ने समाचार पत्र के स्वामित्व को बदलकर उसे ट्रस्ट का रूप दे दिया।

सन् 1914 में गाँधीजी भारत आ गए और उन्होंने समाचार पत्र-प्रकाशन की योजना बनाई । उन दिनों प्रत्येक समाज सुधारक और नेता अपने विचारों के प्रचार के लिए पत्र-पत्रिका प्रकाशित किया करते थे । राजाराम मोहन राय से लेकर केशवचन्द्र सेन, गोखले, तिलक, फिरोजशाह मेहता, दादाभाई नौराजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, सी.वाई. चितांमणि आदि सभी अपने-अपने अखबार निकाले । उस समय श्रीमती एनीबीसेंट का 'न्यू इंडिया', मौलाना मोहम्मद अली का 'उर्दू' साप्ताहिक, मौलाना, अब्दुल कलाम आजाद का 'अल हिलाल' लोकमान्य तिलक का 'केसरी' और सुरेन्द्रनाथ बनर्जी 'बंगवासी' आदि समाचार पत्र प्रकाशित हो रहे थे।

भवानी प्रसाद मिश्र ने अपने लेख सर्वोदय पत्रकारिता' में 'इंडियन ओपिनियन' की पाठ्य सामग्री के संबंध में लिखा है । इस पत्र में निम्न सामग्री प्रकाशित होती थी:

1. समाचार पाठकों की अपनी-अपनी मातृ-भाषा में प्रकाशित होते थे ।
2. ऐसे समाचार जिनका संबंध पाठकों के राजनीतिक और सामाजिक हित यार विरोध से हो ।
3. मातृभाषा में होने वाली महत्वपूर्ण घटनाओं को समीक्षा ।
4. व्यापार और उद्योग से संबंधित उतार-चढ़ाव और उनकी संभावनाए ।
5. सामाजिक, नैतिक तथा बौद्धिक विषयों पर देश-विदेश के प्रसिद्ध लेखकों के विचार, निबंध, और जीवनियाँ।

7.3 एक पृष्ठ का बुलेटिन 'सत्याग्रह'

गाँधीजी के पास पत्र-पत्रिकाओं के संपादन का भार ग्रहण करने के प्रस्ताव आए । उन्होंने सभी प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए । प्रसिद्ध समाचार पत्र 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के संपादक पद को भी गाँधीजी ने अस्वीकार कर दिया । मुम्बई से 7 अप्रैल, 1919 को 'सत्याग्रही' के नाम से एक पृष्ठ के बुलेटिन को निकालना प्रारम्भ किया जो मुख्यत: अंग्रेजी में और अंशत: हिन्दी में था । इनका उन्होंने कोई डिक्लेरेशन नहीं दिया और इसलिए इसका कोई चंदा भी नहीं रखा । 'सत्याग्रही' के प्रकाशन पर गाँधीजी ने कहा कि "हम इस बात का कोई यकीन नहीं दिला सकते कि अखबार नियमित रूप से निकलता रहेगा, क्योंकि संपादक के किसी भी क्षण गिरफ्तारी की संभावना हैं । किन्तु हम इस बात की जरूर कोशिश करेंगे कि एक संपादक की गिरफ्तारी के बाद दूसरा संपादक इसकी जिम्मेदारी लेता जाए । इसे हम यथासंभव तब तक चलाते रहेंगे जब तक रौलट एक्ट वापस नहीं ले लिया जाता है"।

7.4 नवजीवन

'सत्याग्रही' में मुख्य रूप से सत्याग्रह के ही समाचार दिए जाते थे । 'सत्याग्रही' के बाद गाँधीजी ने कुछ धनिक गुजरातियों की मदद से निकलने वाले साप्ताहिक अखबार 'यंग इंडिया'

का संपादन अपने हाथ में लिया और जल्दी ही उसका संस्करण 'नवजीवन' नाम से जुलाई, 1919 में शुरू कर दिया । यह पत्र पहले मासिक रूप से निकला और फिर 7 अक्टूबर, 1919 को साप्ताहिक कर दिया गया । असहयोग आन्दोलन में 1922 में गाँधीजी के जेल जाने पर 'यंग इंडिया' और नवजीवन (हिन्दी) मृतप्राय हो गए । जेल से छूटने के बाद 3 अप्रेल,1924 को इन साप्ताहिकों का प्रकाशन पुन: शुरू हो गया । दूसरी बार 3 नवम्बर, 1932 को गाँधीजी असहयोग के अपराध में फिर से बंद कर दिए गए और जनवरी, 1935 में छूटे ।

7.5 हरिजन

गाँधीजी के मन में अस्पृश्यता का प्रश्न महत्व धारण करने लगा और उन्होंने तीनों पत्रों का नाम बदलकर 'हरिजन' रख दिया । 8 मई, 1933 तक वे इन पत्रों का संपादक एवं मार्गदर्शन जेल से ही करते रहे । सितम्बर, 1933 में गाँधीजी वर्धा आ गए और तब 'हरिजन' के तीनों संस्करण वहीं से निकलने लगे।

'हिन्दी हरिजन' के संपादक में अनेक व्यक्तियों का सहयोग रहा है । श्री महादेव देसाई, प्यारेलाल जी, श्री वियोगी हरि, श्री रामनारायण चौधरी, हरिभाऊ उपाध्याय, काशीनाथ त्रिवेदी, किशोर लाल मशरूवाला, काका साहेब कालेलकर आदि इस पत्र के सहयोगी थे । गाँधीजी ने इस साप्ताहिकों के बारे में लिखा है कि - 'ये समाचार पत्र नहीं है, विचारपत्र हैं और उनमें विचार एक ही व्यक्ति के जाहिर किए जाते हैं । इसीलिए जब तक मैं जिंदा हूँ महादेव या प्यारेलाल जी भी इनमें अपने मन की बात नहीं लिखेंगे ।" इस प्रकार कहा जा सकता है कि "हरिजन" में जो कुछ भी प्रकाशित होता था वह गाँधीजी के विचारों का ही रूपांतर होता था । 8 अगस्त, 1942 में गाँधीजी की गिरफ्तारी के बाद 'हरिजन' बंद हो गया । सरकार आदेश दिया कि सन् 1933 से लेकर 1942 तक का सारी फाइलें नष्ट कर दी जाए । सन् 1944 में जेल से छूटने के बाद गाँधीजी ने साढ़े तीन वर्ष के बाद फिर 'हरिजन' निकालना शुरू किया।

जुलाई, 1947 में गाँधीजी ने सरदार वल्लबभाई पटेल को लिखा कि अब 'हरिजन' आदि पत्र बंद कर दिए जाने चाहिए, ऐसा मुझे लगता है । क्योंकि सरकार इस वक्त तुम्ही लोगों के हाथ में है । मुझे इसके विरोध में कुछ नहीं कहना चाहिए । मेरा मन सरकार के कामों के साथ नहीं है । अगर अखबार चलेगा तो मैं सरकार के खिलाफ लिखूंगा । अंत के दिनों में गाँधीजी बहुत ही कम लिखने लगे थे। अधिकांश उनमें उनके प्रार्थना प्रवचन ही रहते थे । इसके बाद गाँधीजी नोआखाली चले गए और अखबार सहयोगियों के हाथ में रहा । 1 मई, 1947 को वे नोआखाली से दिल्ली वापस लौटे और उन्होंने कोई छ: के व्यवधान के बाद फिर 'हरिजन' में लिखना शुरू किया । किन्तु 30 जनवरी, 1948 को वे हमारे बीच से चले ही गए।

7.6 विज्ञापनों के पक्ष में नहीं

गाँधीजी ने जितने भी पत्र निकाले, सभी साप्ताहिक थे । संभवत: उन्होंने दैनिक समाचार पत्र की कभी आवश्यकता ही अनुभव नहीं की । आजकल की पत्रकारिता की तरह पैसा कमाना लक्ष्य नहीं था । समाचार पत्रों में विज्ञापन देने के भी पक्ष में वह नहीं थे और उन्होंने

जितने भी पत्र निकाले उनमें कभी कोई विज्ञापन नहीं निकाला । पत्र के लिए किसी से कर्ज लेना भी उन्हें पसंद नहीं था । ग्राहक संख्या बढाकर पत्र को स्वावलम्बी बनाना ही उनका लक्ष्य था । गाँधीजी की मान्यता थी कि जो समाचार पत्र आर्थिक दृष्टि से स्वावलंब नहीं है और जिसे विज्ञापनों का सहारा लेना पड़ता है, उसको चलाने से कोई लाभ नहीं है ।

गाँधीजी का हिन्दी के प्रति अनुराग था और उसके प्रचार के लिए वह चिन्तित रहते थे । गाँधीजी की भाषा के संबंध में पं.जवाहरलाल नेहरू ने ठीक ही लिखा है - "उनकी भाषा, सादी, सरल और विषम संगत होती थीं । किसी भी अनावश्यक शब्द का प्रयोग वह शायद ही कभी करते थे । उनकी इस भाषा शैली की छाप उनके द्वारा संचालित संपादित पत्रों में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है । उनका मानना था कि कठिन शब्दों का प्रयोग समाचार पत्रों में नहीं करना चाहिए । जिन शब्दों का अर्थ समझ नहीं आता उनका अर्थ दूसरों से समझ लेना चाहिए।

'हिन्दी नवजीवन' के प्रथम संपादकीय में ही उन्होंने अपनी कठिनाइयों मर्यादाओं पर प्रकाश डाला था । उन्होंने लिखा था - "यद्यपि मित्रों के आग्रह से विवश होकर और के उत्साह से 'यंग इंडिया' का हिन्दी अनुवाद निकालने की चेष्टा मैं करता हूँ । हिन्दुस्तानी भाषानुरागी 'हिन्दी नवजीवन' में उत्तम प्रकार की हिन्दी की आशा न रखे ।"

7.7 रचनात्मक कार्यक्रमों से संबंधित पत्र

गाँधीजी का व्यक्तित्व बहुमुखी था । खादी, ग्रामोद्योग, बुनियादी शिक्षा, राष्ट्र भाषा प्रचार, महिला-सुधार, हरिजन सेवा और प्राकृतिक चिकित्सा उनके रचनात्मक कार्यक्रम के प्रमुख अंग थे । सन् 1923 में बापू ने साबरमती आश्रम, वर्धा से 'अखिल भारतीय खादी समाचार' निकाला । इसके बाद चरखा संघ की ओर से सन् 1933 में वर्धा से महाराष्ट्र खादी पत्रिका' मासिक का प्रकाशन हुआ। जुलाई 1941 में सेवा श्रम आश्रम, वर्धा से श्री कृष्णदास गाँधी के संपादकत्व में "खादी जगत् ' (मासिक) का प्रकाशन शुरू हुआ।

गाँधीजी ने 'बुनियादी शिक्षा' के रूप में शिक्षा-जगत् को एक नया विचर दिया । वर्धा के हिन्दुस्तानी तालीमी संघ की ओर से सन् 1939 में एक मासिक पत्रिका नई तामिल निकली । वर्धा से 'महिला आश्रम पत्रिका' (त्रैमासिक) भी संवत् 2002 विक्रम की गाँधी जयंती से प्रारम्भ हुई। राष्ट्रभाषा प्रचार के लिए स्वतंत्रता से बापू ने जो योगदान दिया है, वह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है । काका कालेलकर और श्रीमन् नारायण अग्रवाल के संपादकत्व में सन् 1939 में 'सब की बोली' मासिक पत्रिका निकाली।

राष्ट्र भाषा प्रचार-समिति, वर्धा ने 15 जून 1941 से 'राष्ट्रभाषा' मासिक का प्रकाशन प्रारम्भ किया । हरिजन सेवक संघ की ओर से सन् 1933 में 'हरिजन सेवक' का प्रकाशन शुरु हुआ। सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली की ओर से सन् 1940 में 'जीवन साहित्य' मासिक निकला ।

भारत में सर्वोदय पत्रकारिता' को प्रारम्भ करने का श्रेय गाँधीजी को ही है । कोई भी स्वस्थ पत्रकारिता 'सर्वोदय पत्रकारिता' है । गाँधीजी के शब्दों में 'पत्रकारिता एक सेवा है ।' गाँधीजी ने एक बार कहा था कि - 'मेरी जीवन ही मेरा संदेश है।' इसलिए उन्होंने जब शब्दों के

माध्यम से अपना संदेश देना तय किया तो उसे अपने जीवन का पर्याय बताया । गाँधीजी की सर्वोदय की कल्पना को मूर्त रूप देने 'के लिए गाँधी सेवा संघ, वर्धा द्वारा सन् 1939 में 'सर्वोदय' मासिक का प्रकाशन शुरू हुआ । गाँधीजी के देहवसान के बाद आचार्य विनोबा भावे के मार्गदर्शन में सर्वोदय, भूदान, ग्रामदा आदि की जो गतिविधियां चल रही है, उनका प्रचार करने के लिए गाँधी के पथ पर, भूदान यज्ञ, ग्राम भावना, ग्रामराज, शताब्दी संदेश आदि पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन हुआ ।

7.8 पत्र-पत्रिकाओं का आदर्श जरूरी

गाँधीजी ने पत्र-पत्रिकाओं के सामने कुछ आदर्श रखे । वे चाहते थे कि विश्व की सभी पत्र-पत्रिकाएं इन आदर्शो को निभाकर निकले । जब उन्हें लगे कि किसी कारण से ये आदर्श अनिवार्य मानते थे, उनमें सबसे पहली बात तो यह है कि कोई भी पत्र-पत्रिका के सामने कोई उदांत ध्येय होना चाहिए । केवल मनोरंजन या पैसा कमाने की दृष्टि से पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन अवांछनिय है । ये वाणी की स्वतंत्रता के पूरे पक्षपाती थे । साथ की आत्म संयम पर उनका बहुत अधिक जोर था । कोई ऐसी बात जिससे किसी भी प्रकार की शील, हानि होती हो, उनकी पत्रकारिता की परिधि में नहीं आती थी । पत्र-पत्रिकाएं देश के शासन से भी अधिक शक्तिशाली है, इसलिए उन्हें अपनी शक्ति का उपयोग बहुत ही सावधानी से करना चाहिए । गाँधीजी ने पत्रकारिता के कुछ मापदंड भी स्थापित किए है । उन्होंने लिखा है - “समाचार पत्र का एक उद्देश्य तो यह है कि वह जनता की भावनाओं को समझे और उसे अभिव्यक्त करे । दूसरा यह है कि वह जनता में कुछ वांछनीय विचारों को जागृत करे और तीसरा यह कि जो आम दोष हो, उनका निर्भीकता से भंडाफोड़ करें।"

7.9 गाँधी युग के पत्रों का योगदान

पत्रकार गाँधी की पत्रकारिता का व्यापक प्रभाव उनके समय में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं पर पड़ा है । गाँधीजी स्वयं तो पत्रकार थे ही, उन्होंने देश के प्रमुख नेताओं को भी पत्रकार बना दिया । उनकी प्रेरणा से राजेन्द्र बाबू ने सन् 1920 में पटना के सर्चलाइट प्रेस से हिन्दी साप्ताहिक 'देश' का प्रकाशन शुरू किया । काशी के शिवप्रसाद गुप्त ने भी गाँधीजी की प्रेरणा से सन् 1920 में दैनिक 'आज' की स्थापना की । श्री गणेश शंकर विद्यार्थी ने गाँधीजी के भारत आगमन के एक वर्ष पूर्व सन् 1913 में 'प्रताप' प्रकाशित किया । श्री बनारसी दास चतुर्वेदी ने कलकत्ता से 'विशाल भारत' और अंबिकाप्रसाद वाजपेयी ने दैनिक 'भारतमित्र तथा स्वतंत्र साप्ताहिक' का संपादन किया । श्री कृष्ण दत्त पालीवाल ने आगरा से ‘सैनिक' निकाला । गाँधीजी के नेतृत्व में चल रहे आंदोलन ने ही श्री हरिभाऊ उपाध्याय को सन् 1923 में 'मालव मयूर' निकालने के लिए प्रेरित किया ।

असहयोग आंदोलन और सविनय अवज्ञा आंदोलन जैसे आन्दोलनों ने अनेक प्रकार के समाचार पत्रों पत्रिकाओं को जन्म दिया और पुराने पत्रों की दिशा बदल दी । कहा जा सकता है कि जलियांवाला बाग हत्याकांड और उस पर हुई गाँधीजी तथा देश के नेताओं की प्रतिक्रिया ने

समाचार पत्रों की दिशा बदल दी । राष्ट्रीय आंदोलन में जिन पत्रों का महत्वपूर्ण योगदान रहा उनमें मद्रास का 'हिन्दू और स्वराज्य, मुम्बई क्रोनिकल, बाम्बे सेटिनल, गुजराती, जन्मभूमि, मराठी, काल और नवाकाल दिल्ली का 'हिन्दुस्तान टाइम्स, हिन्दुस्तान, और स्वामी श्रद्धानंद द्वारा स्थापित विजय, अर्जुन, वीर अर्जुन तथा मालवीय जी द्वारा स्थापित नवयुग कलकत्ता का 'भारतमित्र, नागपुर का 'नवभारत, राजस्थान केसरी, त्यागभूमि प्रजासेवक और नवज्योति अजमेर नई दुनिया आदि उल्लेखनीय है । इन सभी पत्रों ने भारतीय राष्ट्रीयक और स्वाधीन चेतना को विकसित किया और जोखिम उठाए । उनके संपादकों को जेल जाना पड़ा । प्रेस जक कर लिए गए, जमानते मांगी गई और यदि जमानतें नहीं दी गई तो समाचार पत्र बंद कर दिए गए।

7.10 गांधी युग (सन् 1920-1947)

बहुत की कम लोग जानते होंगे कि हिन्दी पत्रकारिता में जो काल-विभाजन किया गया है, उसमें सन् 1920 से 1947 तक का युग 'गाँधी युग' कहा जाता है । इन 27 वर्षो में गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम और 1920 से 1947 तक का युग 'गाँधी युग' कहा जाता है । इन 27 वर्षो में गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम और असहयोग आंदोलन के प्रसार के लिए देश में अनेक दैनिक साप्ताहिक और मासिक पत्रों का प्रकाशन हिन्दी से प्रारम्भ हुआ । हिन्दी पत्रकारिता की स्वस्थ एवं पुष्ट परम्परा की भूमिका इस काल में दृढ़ हुई । इस युग की पत्रकारिता पर गाँधीजी का विशेष प्रभाव रहा । श्री रामनारायण चौधरी ने गाँधी युग के संदर्भ में लिखा है कि "गाँधी युग के दौरान अधिकांश समाचार पत्र राष्ट्रीयता की भावना से भरपूर निकलने लगे थे तथा गाँधी जी की नैतिक प्रेरेणा और उनके स्वयं के प्रभाव से उक्त पत्रकारों ने अपने लिए आचार संहिता भी स्वयं निर्धारित कर ली थी ।"

7.11 गांधी महान पत्रकार एवं संपादक

गाँधीजी का पत्रकार एवं संपादक के रूप में आज वास्तविक एवं शोधपरक मूल्यांकन नहीं हुआ है । उनके राजनीतिक मूल्यों और विचारधारा पर ही बहुत अधिक कार्य हुआ है । आज आवश्यकता इस बात की है कि हम गाँधी जी के पत्रकार एवं संपादक को नए आयाम में देखे और परिभाषित करें । उन्होंने पत्रकारिता के जो आदर्श बताए हैं और अपने जीवन काल में स्थापित किए है, उनका अनुसरण करें । वरिष्ठ पत्रकार एम. चेलापतिराव ने गाँधीजी को महान पत्रकार माना है । उनके शब्दों में, "गाँधीजी शायद सबसे महना पत्रकार हुए हैं और उन्होंने जिन साप्ताहिकों को चलाया और संपादित किया वे संभवत: विश्व के सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक पत्र है।"

7.12 सारांश

भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन में गाँधीजी एक ऐसे नेता थे, जिन्होंने भारत की राजनीति. साहित्य, कला तथा संस्कृति को सर्वाधिक प्रभावित किया । लगातार 25 वर्षो तक राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व महात्मा गाँधी ने किया । उन्होंने भारतीय इतिहास को एक नया स्वरूप ही

प्रदान नहीं किया अपितु, भारत की विचारधारा पर अमिट छाप छोड़ी । गाँधीजी ने पत्रकारिता को सत्य की विजय के लिए महत्वपूर्ण और अनिवार्य साधन माना है । गाँधीजी ने अपने पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से अपने विचारों को जनमानस तक पहुंचाया। उनके व्यक्तित्व ने जनता पर जादू-सा कर दिया और उनकी एक आवाज पर लोग मर मिटने को तैयार हो गए । उन्होंने स्वाधीनता आंदोलन को नेतृत्व दिया तथा सत्याग्रह, असहयोग और भारत छोड़ो आन्दोलन को सक्रियता प्रदान की ।

7.13 अभ्यास प्रश्न

1. पत्रकार गाँधी का पत्र-पत्रिकाओं में योगदान रेखांकित कीजिए ।
2. 'इंडियन ओपिनियन' की स्थापना एवं प्रकाशन की विवेचना कीजिए तथा इसकी नीति पर प्रकाश डालिए ।
3. 'नवजीवन' पर एक आलोचनात्मक लेख लिखिए ।
4. 'हरिजन' गाँधीजी के विचारों का ही रूपांतरण करती थी । ' इस कथन की विवेचना कीजिए ।

7.14 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. जैन, रमेश, हिन्दी पत्रकारिता: इतिहास एवं संरचना, आविष्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2006
2. गोयनका, कमल किशोर गाँधी. पत्रकारिता के प्रतिमान, नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली 2008
3. क्रिपलानी, कृष्णा, गाँधी ऐ लाइफ, एन. बी. टी. नई दिल्ली, 2008
4. भट्टाचार्य, एस. एन. महात्मा गाँधी द जर्नलिस्ट, ग्रीनवुड प्रेस, कनेक्टीकेट अमेरिका, 1984
5. शर्मा सुनील, जर्नलिस्ट गाँधी: सेलेक्टेड राइटिन्गस ऑफ गाँधी, यश प्रिन्टर्स, मुम्बई 1994
6. सिंह, श्यौराज अम्बेडकर गाँधी और दलित पत्रकारिता, अनामिका पब्लिशर्स, दिल्ली. 2008

इकाई - 8

गाँधी आश्रम और अहिंसात्मक आन्दोलन

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 आश्रम की प्रेरणा एवं उद्देश्य
8.3 फोनिक्स आश्रम
8.4 टॉलस्टाय आश्रम
8.5 सत्याग्रह आश्रम
8.6 साबरमती आश्रम
8.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान
8.8 सेवाग्राम
8.9 सारांश
8.10 अभ्यास प्रश्न
8.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- गाँधी द्वारा कौन से आश्रम कब और कहाँ स्थापित किए गए थे इसकी जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
- इन आश्रमों के उद्देश्य तथा संचालन के बारे में जान सकेंगे ।
- श्रेष्ठ व्यक्तित्व निर्माण तथा आदर्श समाज की स्थापना के सन्दर्भ में इनकी भूमिका को समझ सकेंगे
- स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए इनके द्वारा प्रदान किए गए योगदान का आकलन कर सकेंगे ।

8.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी ने अपने सक्रिय राजनीतिक जीवन में ऐसे आश्रमों की स्थापना की जहाँ उन्होंने अपने दर्शन को व्यावहारिक रूप प्रदान करने या उन्हें परीक्षण करने का प्रयास किया । जहाँ दक्षिण अफ्रीका में गाँधी ने 'फोनिक्स एवं टॉल्सटाय फार्म' की स्थापना की वहीं भारत में उन्होंने साबरमती आश्रम, सत्याग्रह आश्रम और विनोभा भावे के माध्यम से सेवाग्राम की स्थापना की थी । इन आश्रमों के माध्यम से गाँधीजी आदर्श समाज की स्थापना के लिए ऐसे कर्मठ व्यक्तियों का निर्माण करना चाहते थे जो निस्वार्थ रूप से अपनी सेवायें प्रदान कर सकें । आश्रम से जुड़े ऐसे व्यक्तियों को सत्य, अहिंसा, स्वावलम्बन, स्वदेशी सत्याग्रह इत्यादि के सन्दर्भ में प्रशिक्षण प्रदान करने का प्रयास किया गया । उन्हें सादगी, शारीरिक श्रम, चर्खा चलाना तथा अनेक रचनात्मक कार्यक्रम के सन्दर्भ में शिक्षा एवं प्रशिक्षण दिया गया । भारतीय

स्वतंत्रता आन्दोलन तथा स्वतंत्र भारत में गाँधीवादी उद्देश्य को साकार करने में इन आश्रमों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है ।

8.2 आश्रम की प्रेरणा एवं उद्देश्य

गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम ऐसी प्रयोगशालायें थी जहां वे और उनके सहयोगी जीवन-पद्धति के एव विकल्प के रूप में अहिंसा के साथ प्रयोग करते थे । आश्रम उनके विभिन्न आन्दोलनों को संचालित करने वाले सदस्यों के लिए आवश्यक अनुशासन एवं चेतना विकसित करने के साथ-साथ आर्थिक एवं नैतिक समर्थन भी उपलब्ध करवाते थे । गाँधीजी का विश्वास था कि पारस्परिकता, सादगी तथा कठोर परिश्रम पर आधारित आश्रम-जीवन एक ऐसे संयमवाद को विकसित करेगा जो समाज-सुधार के लिए उपयोगी सिद्ध होगा । उन्हें आश्रमों को स्थापित करने की प्रेरणा प्राचीन भारतीय गुरूकुलों, तपोवनों, दक्षिण-अफ्रीकी ईसाई ट्रेपिस्ट-संघों, स्वामी विवेकानन्द द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशनों तथा गोखले के भारत सेवक-समाज से मिली थी । इस दिशा में वे हेनरी थोरो से भी अत्यधिक प्रभावित थे । गाँधीजी सत्य एवं अहिंसा पर आधारित एक ऐसी स्वच्छ एवं निष्पक्ष सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक-व्यवस्था की स्थापना करना चाहते थे जिसमें व्यक्ति अपने व्यक्तितत्व का सर्वांगीण विकास कर सके । उनका मानना था कि ऐसी व्यवस्था की स्थापना की दिशा में प्रयास करने हेतु कुछ ऐसे व्यक्ति तैयार करने होंगे जो सामान्य व्यक्तियों को तैयार कर एक आदर्श-समाज की स्थापना करने में सहायक हो सके । गाँधीजी ने ऐसे व्यक्तियों को तैयार करने के लिए एक औपचारिक प्रशिक्षणालय की स्थापना की दिशा में सोचा । भारतीय इतिहास, परम्पराओं एवं संस्कृति के अनुरूप ऐसे प्रशिक्षणालय को ' 'आश्रम' ' के नाम से अभिहित करने का निर्णय लिया गया । आश्रम-व्यवस्था के माध्यम से गाँधी लोगों को सत्य, अहिंसा, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, स्वावलम्बी आदि के लिए तैयार करने हेतु औपचारिक प्रशिक्षण देने और ऐसे व्यक्तियों प्रशिक्षण प्रदान कर समाज के लोगों को इस दिशा की ओर प्रेरित व अग्रसर करने का उद्देश्य रखते थे।

आश्रम व्यवस्था की स्थापना, आश्रम का संगठन. आश्रम में प्रशिक्षण के पाठ्यक्रम एवं कार्यक्रम का निर्धारण. उनका समय-समय पर मूल्यांकन गाँधीजी की प्रशासन एवं प्रबन्ध विज्ञान में रूचि, कौशल एवं परिज्ञान का परिचय देती है । आश्रम एक प्रकार से गाँधी की प्रयोगशाला थी और आश्रमवासी उनके यंत्र ।

गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम-व्यवस्था का सूक्ष्म निरीक्षण करने पर हम पायेंगे कि ये आश्रम ' 'वसुधैव कुटुम्बकम' ' के सिद्धान्त पर आधारित हैं तथा इन आश्रमों में ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, जाति-प्रजाति आदि के लिए कोई स्थान नहीं था । आश्रम के जीवन का सार था-

"जात पांत पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई । "

गाँधीजी एक संयुक्त परिवार के सदस्य थे और अपनी माता पुतली बाई के विचारों से अत्यंत प्रभावित थे । उनकी आश्रम सम्बन्धी व्यवस्था में उनकी माता का प्रभाव स्पष्टत: देखा जा सकता है यथा प्रार्थना, उपवास, एकादशी, प्रदोष-व्रत आदि, अल्पाहार, शाकाहार तथा ब्रह्मचर्य के व्रत का पालन भी आश्रमवासियों के अनिवार्य व्रतों में से था ।

गाँधी द्वारा स्थापित "आश्रम" निःसंदेह पहले दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह से तथा बाद में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े हुए थे । गाँधीजी का विश्वास था कि समाज की सेवा का अर्थ ' 'आत्मदर्शन ' है और आश्रमवासियों का यह प्रमुख उद्देश्य था ।

गाँधीजी ने दक्षिणी अफ्रीका तथा भारत में आश्रम के द्वारा सत्याग्रहियों को प्रशिक्षण देकर भावी आन्दोलन में भाग लेने हेतु तैयार किया तथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन को इससे निर्णयकारी नैतिक बल प्राप्त हुआ।

गाँधीजी ने बचपन से ही आश्रम जैसी झाँकी अपने संयुक्त परिवार (पोरबन्दर) में देखी थी और उस सामुदायिक जीवन से गाँधीजी ने यह पाठ सीखा कि ' 'हमें न केवल मनुष्यता के लिए जीना है परन्तु हमें मनुष्यता मैं जीना है । ' (Living not only for mankind but also living in mankind) गाँधीजी ने आश्रमों को एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित किया । सभी आश्रमवासी एक परिवार के सदस्य की भांति । वहाँ रहते थे अथवा आश्रम एक परिवार की भांति था । सभी आश्रमवासी यहां तक बच्चे भी कुछ कार्य करते थे । आश्रम में नौकर या सेवक नहीं रखे जाते थे ।

कहा जाता है कि जहां सन्त रहते हैं वहीं आश्रम होता है, पर ऐसी बात नहीं है । सन्त तो पर्वत की गुफाओं में, एकान्त कुटियाओं में और खुले जंगलों में भी रहते हैं, लेकिन जहां पर संत के साधक अपनी साधना अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु करते हैं उसे भी आश्रम कहते हैं । आश्रम के अपने उद्देश्यों के साथ कुछ नियम भी होते हैं । इसी भावना से ओत-प्रोत दिखाई देते हैं गाँधीजी द्वारा स्थापित आश्रम । गाँधीजी के अनुसार आश्रम का अर्थ सामूहिक धार्मिक जीवन से था और गाँधीजी के अनुसार आश्रम उनके स्वभाव में ही था।

आश्रम स्थापना के पीछे गाँधीजी की भावना यही थी कि व्यक्ति स्वयं को पहचाने तथा सम्पूर्ण समाज को अपना ही परिवार समझे । प्रेम, अहिंसा, सत्य समानता एवं इन सबसे बढकर मानवता की भावना का विकास करें । उनकी मान्यता थी कि सभी प्राणी एक ईश्वर की संतान है, न कोई उच्च है न कोई निम्न,ईश्वर के लिए सभी प्राणी समान है, फिर मानव-मानव में भेद कैसा?

8.3 फोनिक्स आश्रम

जब गाँधीजी सन् 1895 में दक्षिण-अफ्रीका आये तब वे न महात्मा थे न ही नेता तथा दक्षिण अफ्रीका के बारे में भी उन्हें तब तक कोई विशेष जानकारी नहीं थी । किन्तु दक्षिण-अफ्रीका की समस्याओं के सम्बन्ध में संघर्ष करते-करते उन्होंने अपने आपको दो दशकों के लम्बे प्रवास-काल में एक धनाढ्य वकील से एक सफल जनसेवक नेता बना लिया । गाँधीजी में सामुदायिक-जीवन बिताने का प्रयोग करने की अभिलाषा प्रारम्भ से ही विद्यमान थी । सन् 1903 के आसपास गाँधीजी के चारों ओर ऐसे लोग एकत्रित होने लगे थे जो उनकी योजनानुसार सहकारी-जीवन व्यतीत करने के लिए तैयार थे । सन् 1903 में गाँधीजी ने ' 'इण्डियन ओपिनियन. (Indian opinion) के माध्यम से भारतीय समुदाय की सेवा करने तथा उसे संगठित करने का निर्णय लिया । जोहान्सबर्ग के पास प्लेग फैल जाने के कारण उन्हें रस्किन

की पुस्तक ' 'अनटू दिस लास्ट' ' में उल्लिखित रूपरेखा के आधार पर एक साम्यवादी-कृषि-समुदाय स्थापित करने का विचार आया । उन्होंने डरबन पहुंचने पर ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' को सहकारी आधार पर चलाने का निर्णय लिया और प्रेस तथा उसके कर्मचारियों के लिए एक कृषि-फार्म खरीदा । कर्मचारियों को प्रतिमाह अग्रिम वेतन दिया जाता था तथा वर्ष के अन्त में बचे हुए सम्पूर्ण लाभ को उनमें ही वितरित कर दिया जाता था । गाँधीजी ने इस क्रान्तिकारी योजना में सभी कर्मचारियों को सम्मानित किया और एक ओर ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' को प्रकाशित करने का खर्च कम किया तो दूसरी ओर कर्मचारियों के जीवन में गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास किया । नेटाल की उस सुन्दर भूमि को "गार्डन कॉलोनी ' का नाम दिया गया जहां यूरोपीय एवं भारतीय कर्मचारी भाईचारे की भावना से रहते थे तथा एक दूसरे की सभ्यता एवं संस्कृति से प्रभावित थे । प्रेस के सह-स्वामी ' 'व्यावहारिक' ' को यह योजना पसन्द नहीं आई और उसने अपना हिस्सा गाँधीजी को बेच दिया । इसके बाद डरबन से चौदह मील दूर फोनिक्स रेलवे स्टेशन से अढाई मील दूर पीजंग नदी के किनारे एक सौ एकड़ भूमि खरीदी गई । इसके लिए गाँधीजी द्वारा प्रारम्भ में एक हजार पौण्ड तथा बाद में पांच हजार पौण्ड निवेश किये गये । उस स्थान को ' 'फोनिक्स' ' नाम इस नये समुदाय के प्रयोगात्मक स्वरूप को देखते हुए दिया गया था । एक पौराणिक दन्तकथा है कि ' 'फोनिक्स' ' पक्षी बार बार मरकर जीवित हो जाता है अर्थात वह कभी नहीं मरता । गाँधीजी भी अपने इस प्रयोग को इतिहास में अमर कर देना चाहते थे।

सन् 1904 में अक्टूबर एवं नवम्बर माह में ' 'इण्डियन-ओपिनियन' ' प्रेस को डरबन से फानिक्स में स्थानान्तरित करने का निर्णय लिया गया । फोनिक्स में भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान की गई । कुछ ने टीन की चद्दरें तथा भवन-निर्माण की सामग्री प्रदान की । कुछ भारतीय कारीगरों तथा बढ़इयों, जिन्होंने गाँधीजी के साथ ' 'बोअर युद्ध' में काम किया था, की सहायता से एक महीने के भीतर ही प्रेस के लिए भवन तैयार कर दिया गया । सांपों तथा जंगली घास से भरे सुनसान प्रदेश में यह कार्य अत्यन्त दुष्कर था । गाँधीजी कलात्मकता के बजाय कठोर संयम पर अधिक जोर देते थे।

डरबन से फोनिक्स तक भारी प्रेस मशीनों को ले जाने में तीन नदियों तथा उबड़-खाबड़ रास्ते के कारण कठिनाई हुई । उन्हें सोलह बैलों द्वारा खींचकर फोनिक्स तक पहुंचाया गया । बैस्ट नामक व्यक्ति ने तेल का इंजन लगाकर बिजली की आवश्यकता को पूरा किया क्योंकि उसके अभाव में चार आदमी मिलकर छपाई मशीन का हाथों से पहिया घूमाने के लिए आवश्यक थे । धीरे-धीरे समाचार पत्र के स्वरूप में भी सुधार किया गया । बैस्ट ईश्वर से प्रार्थना करता था और सभी व्यक्ति इससे काफी प्रेरित होते थे । सम्पूर्ण फोनिक्स आश्रम में सहयोग का ऐसा वातावरण बना कि अब समाचार-पत्र स्वालम्बन के आधार पर नियमित रूप से छपने लगा । भाड़े के व्यक्तियों तथा पशुओं से सहायता कभी-कभी ही ली जाती थी । यद्पि अन्य स्त्रोतों तथा गाँधी जी की वकालत के पारिश्रमिक से होने वाली आय सन् 1909 तक कम पड़ने लगी फिर भी यह निर्णय लिया गया कि ' 'इण्डियन-ओपिनियन' ' कम से कम एक पृष्ठ का तो छपता ही रहेगा । फोनिक्स आश्रम पर भी आन्तरिक दबाव बढ़ता चला गया।

बन्दी-सत्याग्रहियों के बच्चों को भी वहां रखा गया जिनके कारण आश्रम-वासियों पर अतिरिक्त आर्थिक बोझ बढ़ता चला गया । इस अवसर पर गाँधीजी ने ऐसे संघर्ष काल को अपनी आध्यात्मिक शक्ति तथा सेवा करने का उपयुक्त अवसर मानने का आहवान किया । उनके अनुसार फोनिक्स न केवल अपने जीवन तथा समाचार पत्र के स्तर को सुधारने का अवसर ही था अपितु समाचार-पत्र के माध्यम से शिक्षा-प्रसार तथा जनहित से सम्बन्धित कार्यो के सम्पादन का भी अच्छा स्थान था । वे लोगों को आपस में झगड़ा न करने तथा उपलब्ध साधनों के दुरूपयोग न करने का परामर्श देते थे । जहां तक हो सके लोगों को अपने प्रयासों से आश्रम की आर्थिक स्थिति को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

सत्याग्रह आन्दोलन में व्यस्त रहने तथा लन्दन में जाकर भारतीयों के हितों लिए कार्य करने के कारण गाँधीजी आश्रम व्यवस्था पर अधिक ध्यान नहीं दे पाये । अत: उन्होंने पद से सम्बन्धित कार्य-भार अपने एक निकट सहयोगी मगनलाल गाँधी को सौंपा । गाँधी के अभाव में आश्रम अपना पूर्ववत् कार्य सम्पादन में सक्षम नहीं हो सका क्योंकि मूलत: आश्रमवासियों का आधार गाँधीजी के प्रति निष्ठा तथा भारतीय हितों के प्रति लगाव था, न कि प्रत्येक के लिए स्थान प्रदान करना । फिर भी एक समुदाय के रूप में फोनिक्स-आश्रम चलता रहा और उसने धीरे-धीरे एक छोटी बस्ती का स्वरूप धारण कर लिया । वहां रहने के लिए कुछ और जमीन खरीदी गई तथा कुछ नये मकानों का निर्माण किया गया । जॉन कोर्डिस ने वाष्प-स्नानागार का भी निर्माण किया । फोनिक्स आश्रम में विस्थापितों की संख्या निरंतर बढ़ती गई । गाँधीजी ने कस्तूरबा गाँधी तथा अपने भतीजे गोकुलदास को लम्बे समय तक वहां रखा । जोहान्सबर्ग पहुंचकर गाँधीजी ने पोलक को रस्किन की पुस्तक ' 'अनटू दिस लास्ट' ' का उन पर पड़े प्रभाव के बारे में बताया । पोलक भी इससे बड़ा प्रभावित हुआ और 'सके परिणामस्वरूप वह भी गाँधीजी की योजना में खुशी-खुशी शामिल हो गया । पोलक ने ' 'ट्रान्सवाल क्रिटिक' ' के उप सम्पादक के पद को त्याग दिया और वह ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' के लिए कार्य करने लगा।

बैस्ट की पत्नी श्रीमती पाईवेल (गाँधीजी उसे ग्रेनी कह कर पुकारते थे) आश्रम की महिलाओं को सिलाई-बुनाई सिखाती थी । वही उनको संगीत आदि का भी अनौपचारिक शिक्षण प्रदान करती थी । फोनिक्स आश्रम शनै: शनै: एक छोटे गाँव का स्वरूप धारण करता चला गया । उसमें निवास करने वाले परिवारों की संख्या बढ़ती चली गई । उस समय तक गाँधीजी ब्रहमचर्य के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण पूर्णत: विकसित नहीं कर पाये थे किन्तु सादगी एवं आत्मनिर्भरता पर उनका विश्वास सदैव बढ़ता चला गया । उन्होंने अपने स्वयं के ऊपर होने वाले व्यय को कम करने का प्रयास शुरू किया । वे अपने कपड़े स्वयं धोते थे । स्वयं ही अपने सिर के बाल काटते थे । जोहन्सबर्ग तक वे पैदल आते और पैदल ही जाते थे । अपना काम अपने हाथों से करना फोनिक्स आश्रम का प्रमुख सिद्धान्त था । आटा-पीसने के लिए हाथों से चलाई जाने वाली चक्की खरीदी गई । इस कार्य में आश्रम में रहने वाले बच्चों को भी कभी-कभी शामिल किया जाता था । इसे बच्चों की खेलकूद की एक प्रक्रिया का हिस्सा ही बना दिया गया था । प्रत्येक व्यक्ति को शौचालय भी साफ करने का दायित्त्व दिया गया था । कुल मिलाकर गाँधीजी की दृष्टि से अभी चरित्र निर्माण की प्रक्रिया ही चल रही थी । फोनिक्स की

यह कहानी मुख्यत: गाँधीजी के एक सफल बेरिस्टर, सार्वजनिक कार्यकर्ता तथा भारतीय समुदाय के प्रवक्ता बन जाने से सम्बन्ध रखती है । वे ' 'इण्डियन ओपिनियन' ' के छपने के लिए अधिकांश विषय-सामग्री को तो उपलब्ध करवाते ही थे साथ ही अपने पास से प्रतिवर्ष चार पांच हजार पौण्ड वित्तीय सहायता भी प्रदान करते थे । इस दौरान एक वकील तथा सामाजिक कार्यकर्त्ता के रूप में उनकी प्रतिष्ठा में अत्यधिक वृद्धि हुई । इसी समय पाश्चात्य लोगों में भी उनका प्रभाव निरन्तर बढ़ता चला गया । इसी के फलस्वरूप एक जर्मन यहूदी वास्तुकार हर्मन केलनबाख तथा एक पादरी जॉसफडाक ने अपना सर्वस्व गाँधीजी को सौंप दिया और गाँधीजी के साथ रहने लगे । इनके साथ गाँधीजी भगवद्‌गीता, ईसा के उपदेशों, मेटलैण्ड तथा टॉलस्टाय के उपदेशों पर लम्बी-लम्बी बहस करते थे । गाँधीजी अपनी सेवाओं के बदले में दी गई अनेक कीमती भेंटों को कस्तूरबा के घोर विरोध के बावजूद भी समुदाय को समर्पित कर देते थे।

गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व का उनके सहयोगियों पर बहुत प्रभाव था और वे आश्रम में नैतिक परामर्श तथा अनुनय के माध्यम से ही अपने साथियों का दिल जीत लेते थे । उनका आश्रम में सदैव कठोर संयम एवं कायिक श्रम, अहिंसा, अपरिग्रह तथा समभाव पर जोर रहता था । गाँधीजी का नेतृत्व वस्तुत: करिश्मात्मक शैली का था और वे आत्म-त्याग एवं विशुद्ध सेवा भावना पर जोर देते थे, किन्तु वे अपने अनुयायियों में विवेकपूर्ण अनुशासन की भावना को विकसित करना चाहते थे । उन्होंने सभी सहयोगी विदेशी तथा हिन्दू परिवारों में समभाव एवं निस्वार्थ-सेवा-भावना कूट-कूट कर भरने का प्रारम्भ से ही भरसक प्रयास किया और इस उद्देश्य में वे अत्यधिक सफल भी हुए । वे ' 'फोनिक्स-आश्रम ' को इन्हीं आदर्शो पर संस्थापित करते हुए उसे स्वास्थ्य, कृषि एवं शिक्षा का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र बना देना चाहते थे । इसी का परिणाम यह हुआ कि फोनिक्स ने न केवल दक्षिण-अफ्रीका में गाँधीजी को सत्याग्रही दिये अपितु उनमें से अनेक गाँधीजी से पहले और बाद में भी उनके कार्यो एवं उद्देश्यों को आगे बढ़ाते रहे।

8.4 टॉलस्टाय आश्रम

टॉलस्टाय फार्म को फोनिक्स-आश्रम योजना के पूरक के रूप में स्थापित किया गया था । दक्षिण-अफ्रीका में संचालित सत्याग्रह के द्‌वितीय चरण से सम्बन्धित निर्धन भारतीय परिवारों के निवास की समस्या आयी तो गाँधीजी ने उन्हें बसाने हेतु टॉलस्टाय-फार्म स्थापित कर उन्हें वहां बसाकर उनकी तत्सम्बन्धी समस्या का निवारण किया । इसे गाँधीजी ने ट्रान्सवाल में फोनिक्स आश्रम के ढंग पर एक ऐसे सहकारी-परिवार-मण्डल के रूप में स्थापित करने का प्रयास किया था जहां सत्याग्रहियों के परिवार आत्म-निर्भर रहते हुए एक नवीन प्राकृतिक (प्रकृति से तादात्म्य स्थापित) सादा, निर्मल तथा स्वच्छ जीवन का निर्वाह कर सकें । इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु केलनबाख ने जोहन्सबर्ग से इक्कीस मील दूर ग्यारह सौ एकड़ का फार्म खरीद कर गाँधीजी को सौंप दिया । गाँधीजी तथा सत्याग्रहियों को बिना किसी किराये तथा बिना किसी धन के 30 जून, सन् 1910 में तब तक के लिए दे दिया जब तक कि सत्याग्रह

का संघर्ष समाप्त नहीं हो जाता । गाँधीजी फोनिक्स योजना के अनुभवों का लाभ उठाते हुए इसे एक सफल संस्था बनाना चाहते थे ।

8.5 सत्याग्रह आश्रम

जो लोग फोनिक्स आश्रम छोड़कर भारत आये और रवीन्द्रनाथ टैगोर के ' 'शान्ति निकेतन" में आकर रहने लग गये थे, गाँधीजी ने भारतवर्ष पहुंचकर उन पर शान्ति निकेतन पद्धति से भिन्न अपने नवीन शैक्षिक-प्रयोग करने शुरू कर दिये । उन्होंने अहमदाबाद के समीप आश्रम स्थापित करने का निर्णय लिया । यह नवीन आश्रम सत्याग्रह-आश्रम के नाम से अभिहित किया गया । उन्होंने 25 मई सन् 1915 को इसकी आधारशिला रखी । स्वयं गाँधीजी ने भी यह अनुभव किया कि वे अपने ' 'जन्म स्थान' ' वाले प्रान्त में रहकर अपनी मातृ-भाषा के माध्यम से देशवासियों की अधिक सेवा कर सकते हैं । अहमदाबाद बुनाई-कताई के लिए प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध रहा है । वित्त की कमी को वहां के गुजराती धनिकों ने पूरी कर दी थी । वस्तुत: पहले आश्रम अहमदाबाद के निकट ' 'कोचरब' ' नामक गांव में स्थापित किया गया था । अहमदाबाद के एक वकील जीवनलाल देसाई ने गाँधीजी एवं उनके पच्चीस स्त्री-पुरूष साथियों को अपना बंगला भेंट कर दिया था । सब लोगों ने उसके नामकरण हेतु सेवाश्रम, सेवामन्दिर और तपोवन आदि अनेक नाम सुझाये लेकिन गाँधीजी ने उसका नाम ' 'सेवाश्रम ' रखना इस आधार पर पसन्द किया कि यह नाम किसी पद्धति विशेष से सम्बन्धित नहीं था । गाँधीजी ने शीघ्र ही आश्रम के लिए एक संविधान के रूप में आचरण के नियम बनाये तथा उन्हें अपने मित्रों के मध्य विचार विमर्श हेतु रखे । गाँधीजी ने वस्तुत: पहली बार अपने इस प्रयोग को आश्रम - ' 'धार्मिक पुरूषों का समुदाय' ' कहा है । ' 'धर्म ' शब्द से उनका तात्पर्य सत्य एवं अहिंसा में दृढ़ विश्वास से था जिन्हें सत्याग्रह के प्रयोग के लिए अत्यावश्यक माना गया है।

कोचरब में स्थापित सेवाश्रम में कोई नौकर आदि की व्यवस्था नहीं थी । सभी को शाकाहारी भोजन, कायिक श्रम. समाज सेवा, ब्रहमचर्य, प्रार्थना आदि का कठोरतापूर्वक पालन करना होता था । आश्रमवासियों को नौ संकल्प लेने होते थे जो कठोर संयमवाद के प्रतीक थे । यथा-सत्य, अहिंसा, ब्रहमचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, विदेशी वस्तु-बहिष्कार, अभय एवं अस्पृश्यता । इन संकल्पनाओं का विवेकपूर्ण एवं रचनात्मक ढंग से पालन करना आवश्यक था । गाँधीजी के अनुसार इन्हें हिन्दू-परम्परावाद की अभिव्यक्ति नहीं माना जाना चाहिए । गाँधीजी अस्पृश्यता तथा ऐसी ही अनेक अन्य सामाजिक बुराईयों जैसे बाल विवाह, देवदासी प्रथा, पशुबलि आदि के सभी सख्त विरोधी थे । वहां बच्चों एवं वयस्कों के साथ समान व्यवहार किया जाता था । सबको समान रूप से कताई-बुनाई, कृषि, गोपालन आदि से सम्बन्धित कार्य करने होते थे । बच्चों को धन एवं सुख सुविधाओं की तृष्णा एवं भूख से दूर रखा जाता था । गाँधीजी ने अपने आश्रम में जब दलित परिवार को सम्मिलित किया तो उनका वहां जबर्दस्त विरोध किया गया । किन्तु वे अपने सिद्धान्तों पर अडिग रहे । अस्पृश्यता का विरोध करने के लिए गाँधीजी ने कष्ट सहन करते हुए विरोधियों का हृदय जीतने का प्रयास किग्रा । गाँधीजी ने विचार एवं व्यवहार दोनों के द्वारा समस्त विश्व के समक्ष अस्पृश्यता का विरोध किया।

यद्‍यपि लगातार पांच वर्षो तक किसी भी प्रकार के सत्याग्रह करने का अवसर नहीं आया किन्तु जब भी ऐसा अवसर आया आश्रमवासियों ने अपनी असाधारण प्रतिभा का परिचय देते हुए आश्रम में प्राप्त शिक्षा एवं अनुभव के आधार पर क्रान्तिकारी काम करके दिखा दिया।

8.6 साबरमती आश्रम

कोचरब में अत्यधिक सफाई का ध्यान रखते हुए भी प्लेग फैल गया और आश्रमवासियों के बच्चों की सुरक्षा कठिन हो गई । यह सोचकर गाँधीजी ने पंजाभाई हीराचन्द की सहायता से साबरमती जेल के समीप, कोचरब से तीन चार मील दूर साबरमती नदी के किनारे एक अन्य महत्वपूर्ण स्थान देखा । यह स्थान गाँधीजी को बहुत पसंद आया । इस नये स्थान पर कच्चे मकान, पाठशाला, भोजनालय, रसोईघर, पुस्तकालय तथा हथकरघा हेतु बनातशाला आदि मगनलाल गाँधी के निरीक्षण तथा देखरेख में बनवाये गये । गाँधीजी के परिवार के लिए निवास स्थान नदी के समीप मुख्य स्थान से थोड़ा सा पीछे बनाया गया । जो भी स्त्री, पुरूष बालक आश्रम में रहते थे उन्हें गाँधीजी ने सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, शरीर श्रम आदि आश्रम-व्रतों की दीक्षा दी जाती थी । भारत के दलित-पीड़ित मानव-समाज की सेवा के लिए तैयार किया और उन सबको अपने कुटुम्बी-जन मानकर प्रेम, करूणा, ममता तथा वात्सल्य की अमृतवर्षा की।

आश्रम से सेवा का और सेवा की पद्धति का भाव सहज ही प्रकट होता है । साबरमती आश्रम में उस समय कुछ बहन-भाई व बच्चे मिलाकर लगभग एक सौ पचास थे । आश्रम में विभिन्न प्रकार के और विभिन्न प्रान्तों के लोग थे । आश्रमवासियों मे मेल-मिलाप आपसी भाई चारे व प्रेम भावना का विकास व व्यवस्था बनाये रखना आश्रम की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी ।

आश्रम निश्चित कार्य-पद्धति एवं नियमावली के अनुरूप कार्य करता था । आश्रम की दिनचर्या प्रात: चार बजे जगने की घण्टी से प्रारम्भ होकर रात नौ बजे सोने की घण्टी तक सुव्यवस्थित तरीके से चलती थी । प्रात: 4:20 से 5:00 बजे तक सर्व धर्म प्रार्थना आश्रम भजनावली एक भजन और रामधुन तथा सात दिन में एक बार गीता-पारायण होता था । शाम की प्रार्थना में गीता के दूसरे अध्याय के अंतिम 19 श्लोक, भजन और रामधुन गायी जाती थी । गाँधीजी के अनुसार सुबह-शाम की ये प्रार्थनायें आश्रम की सबसे बड़ी खुराक एवं औषधि थी । गाँधीजी भोजन के बिना जिन्दा रह सकते थे, लेकिन प्रार्थना के बिना जिन्दा रहना उनके लिए असम्भव था । उनके दूसरे कामों में भंग पड़ सकता था, लेकिन प्रार्थना में भंग पड़ना सम्भव नहीं था।

सुबह-शाम की प्रार्थना तो उनकी आत्मा को सात्विक पोषण देने वाली खुराक ही थी । उनका कहना था - "रात की जड़ता और निद्रा में बुरे स्वप्न भी देखे हों तो उन्हें धोने के लिए प्रार्थना साबुन का काम करती है और हमारा नया जीवन-कार्य प्रार्थना से आरम्भ होता है । प्रार्थना दिन की थकान को दूर करने और दिन के व्यवहार में हमसे कुछ भूलें हुई हों तो उनका प्रायश्चित करने तथा प्रार्थना के बाद हम भगवान का नाम रटते हुए निद्रा देवी की गोद में शांतिपूर्वक सो सकें, इसके लिए अमोघ औषधि के समान है। "

आश्रम में नौकर रखने का रिवाज था ही नहीं । सफाई से लेकर भोजन बनाने तक का सारा काम आश्रम निवासी ही करते थे । बीमारी को छोड़कर किसी काम के लिए कोई अपवाद नहीं था । गाँधीजी स्वयं इन कार्यो में हिस्सा लेते थे । कताई, बुनाई, धुलाई, खेती, गौशाला, चर्मालय शिक्षण आदि काम सभी आश्रमवासी करते थे । कोई काम छोटा और बड़ा नहीं था । जो काम जिसको सौंपा जाता था वह उसे बड़े ही आत्मीय भाव से सम्पन्न करता था । यहां तक कि वर्षो साथ में रहने पर भी एक दूसरे की जाति तक जानने का विचार किसी के मन में नहीं आता था।

गाँधीजी एक पिता की भांति आश्रमवासियों के लिए थे तथा आश्रम की सारी समस्याओं का समाधान भी वे एक मुखिया की भांति करते । इस तरह आश्रम एक परिवार की तरह हो गया । खाने की बात किसी को समझानी हो तो गाँधीजी उसमें घण्टों लगा देते थे । अपने हाथ से बीमार को दवा देते, एनिमा देते और स्पंज करते । कुष्ठरोगी जैसे भयंकर रोगी की मालिश करते । बीमारों को नित्य देखते और उनके खान-पान, नींद व आराम के समाचार जानकर आगे की सब बातें बता देते । अपने हाथ से माँ की तरह परोसकर खाना खिलाते । आश्रम-परिवार अपने ही ढंग का अनोखा परिवार था । आश्रम जीवन की अपनी निराली विशेषता थी । जिसको उसका रंग लगा उसने पीछे मुड़कर कभी नहीं देखा । गाँधीजी ' 'आश्रम ' के द्वारा ' 'विश्व-कुटुम्ब ' की भावना सिद्ध करना चाहते थे । इसीलिए आश्रम के द्वारा सभी बहन-भाइयों के लिए खुले थे और सभी को आश्रम में स्थान मिलता था।

चरखे का स्थान आश्रम में महत्त्वपूर्ण था क्योंकि ' 'हिन्द स्वराज्य' ' में भी गाँधीजी ने यह माना था कि चरखे के जरिये हिन्दुस्तान की कंगालियत मिट सकती है । जिस रास्ते भुखमरी मिटेगी उसी रास्ते स्वराज्य मिलेगा । आश्रम के खुलते ही उसमें करघा शुरू किया गया था,प्रयोग से आश्रमवासी अपरिचित थे । काठियावाड़ और पालनपुर से ही करघा मिला और वहीं से सिखाने वाले मिले । मगनलाल गाँधी ने बुनने की पूरी कला सीख ली थी । फिर आश्रम में एक के बाद एक नये-नये बुनने वाले तैयार हुए । आश्रमवासियों ने मिल के कपड़े पहनना बंद कर दिया और निश्चय किया कि हाथकरघे पर देशी मिल के सूत का बुना हुआ कपड़ा ही पहनेंगे ।

इमामसाहब ने, जो दक्षिण अफ्रीका से ही गाँधीजी के साथी थे तथा अपनी पुत्री अमीनाबहन और दामाद गुला मरसूत कुरेशी के साथ साबरमती-आश्रम में रहते थे, खादी का महत्त्व हिंदू ओर मुसलमान तथा अन्य सभी के लिए बताते हुए कहा ' 'खादी तो हिन्दू मुसलमान, पारसी, सिक्ख, ईसाई सभी के लिए एकसी है । हिन्दू स्त्रियां तो बाहर निकल कर दूसरे काम भी कर सकती हैं लेकिन मुसलमान स्त्रियां तो वह भी नहीं कर सकती । मुसलमान पर्दानशीन औरतों के लिए तो चरखा रोजी का बहुत ही अच्छा साधन है । मुसलमान जुलाहे बुनते धुनते हैं । अगर हिसाब निकाला जाए तो खादी से मुसलमानों को पहुंचने वाला फायदा हिन्दुओं से कम नहीं पाया जाएगा।"

गाँधीजी कहते थे कि आश्रम एक महाशाला है, जिसमें एक निश्चित समय ही शिक्षा के लिए नहीं होता बल्कि सारे समय शिक्षा का कार्य चलता रहता है । ऐसा हर आदमी, जो

आत्मदर्शन सयमदर्शन की भावना से आश्रम में रहता है शिक्षक भी है और विद्यार्थी भी है । जिस काम में वह कुशल है उसका शिक्षक है जो काम उसे सीखना है उसका वह विद्यार्थी है ।

8.7 आश्रम का सविनय अवज्ञा आन्दोलन में योगदान

जिस प्रकार दक्षिण-अफीका के आश्रमों ने दक्षिण-अफ्रीकी-सत्याग्रहों में योगदान किया था उसी प्रकार सन् 1930 के सविनय-अवज्ञा आन्दोलन ने साबरमती-आश्रम को बहुत प्रतिष्ठा दिलाई । इसके पहले भी साबरमती के कार्यकर्त्ताओं ने चम्पारन, अहमदाबाद और बारदोली के आन्दोलनों में भाग लेकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी । सविनय अवज्ञा आन्दोलन अथवा नमक सत्याग्रह के स्वरूप एवं संचालन का सम्पूर्ण भार गाँधीजी पर ही था । 12 मार्च सन् 1930 से प्रारम्भ होने वाले डाण्डी-अभियान ने स्वराज के महान् आदर्श हेतु आश्रम के 78 सदस्यों को यह अवसर प्रदान किया कि वे अपनी निष्ठा एवं क्षमता का प्रदर्शन कर सकें । गाँधीजी ने इन सभी के नाम ' 'यंग इण्डिया ' में पहले ही प्रकाशित कर दिये थे । 24 दिन के लम्बे प्रयास में 241 मील की यात्रा की गई । गाँधीजी ने घोषणा की कि ' 'हम ईश्वर के नाम पर यह अभियान शुरू कर रहे हैं । " गाँधीजी ने इन साथी सत्याग्रहियों के माध्यम से भारतीय जनजीवन से सम्बद्ध कर्मशीलता विजय-श्री का वरण किया । सूर्योदय एवं सूर्यास्त के समय खुले आकाश के नीचे प्रार्थनाएं की जाती थी तथा सभी आश्रमवासी प्रतिदिन एक घण्टा कताई करते थे और अपनी डायरी लिखते थे । इस यात्रा की आधी में अनेक स्थानीय प्रशासन धराशायी हो गये क्योंकि तीन सौ नब्बे गांवों के सरपंचों ने अपने पदों से त्यागपत्र दे दिये थे । धीरे-धीरे अभियान-कर्त्ताओं की संख्या सैकड़ों से हजारों हो गई जिनमें व्यापारी, स्त्रियां आदि भी शामिल थी । सम्पूर्ण विश्व का ध्यान गाँधीजी तथा इन विविधतापूर्ण सत्याग्रहियों पर केन्द्रित हो गया । समुद्र किनारे स्थित डाण्डी पहुंचकर गाँधीजी ने नमक चुनते हुए नमक कानूनों को तोड़ दिया और इसके बाद सामूहिक असहयोग आन्दोलन, जिसमें गैर-कानूनी ढंग से व्यापक स्तर पर नमक बनाने तथा विदेशी वस्त्रों एवं शराब की दुकानों का बहिष्कार प्रारम्भ हुआ । इस आन्दोलन में लाठियों एवं डण्डों की मार खाते हुए आश्रम की अनेक महिलाओं ने शौर्य एवं साहस का प्रदर्शन किया । ज्यों-ज्यों आन्दोलन आगे बढ़ा तो गाँधीजी को बन्दी बना लिया गया और हजारों सत्याग्रहियों को बहुत बुरी तरह से मारा गया और पीटा गया और अन्ततः जेल में बंद कर दिया गया । गाँधीजी यह जानकर गौरवान्वित हुए कि आश्रमवासियों ने इतना महान् त्याग एवं कष्ट-सहन का प्रदर्शन किया है ।गाँधीजी के लिए यह बहुत ही मान-सम्मान की घड़ी थी । उन्होंने इसे अपनी पद्धतियों एंव आदर्शो की विजय बताया । अनेक आश्रमवासी भारत को स्वराज दिलाये बिना आश्रम जाने को तैयार नहीं थे । जिन लोगों को गाँधीजी के साथ जेल जाने का मौका नहीं मिला वे रास्ते में आने वाले गाँवों में ही रहकर जनता की सेवा में संलग्न हो गये । इस प्रकार गाँधीजी का रचनात्मक कार्यक्रम स्थान-स्थान पर साकार रूप लेने लगा ।

8.8 सेवाग्राम

मध्य-भारत में वर्धा नामक स्थान पर रमणीकलाल मोदी ने 14 जनवरी सन् 1921 को जो आश्रम स्थापित किया था उसे गाँधीजी के निर्देश पर विनोबा भावे ने सम्भाला । विनोबा

भावे ही गाँधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी कहे जाते हैं । विनोबा भावे ' 'कोचरब आश्रम ' के महत्वपूर्ण सदस्य थे । विनोबा भावे ने कोचरब एवं साबरमती से प्रेरणा एवं प्रशिक्षण लेकर सेवागांव (बाद में सेवाग्राम) में सत्याग्रह-आश्रम की स्थापना की । इस आश्रम का उद्देश्य गाँधीजी ने ग्राम सेवा तथा ग्राम विकास रखा । उन्होंने कहा कि यह आश्रम मौलिक रूप से रचनात्मक कार्यों के सम्पादन से सम्बन्धित होगा । राजनीति आदि के लिए इसमें कोई स्थान नहीं होगा । गाँधीजी ने कांग्रेस-जनों पर रचनात्मक कार्य करने के लिए अत्यधिक जोर दिया था । उन्होंने कहा था कि उसके अभाव में वे एक दिन भी देश का शासन चलाना नहीं सीख सकते । सन् 1930 के बाद में सामूहिक कार्यों के बजाय स्थानीय सुधारों एवं ग्रामोन्नति की गतिविधियों में व्यक्तिगत प्रयासों पर जोर देने लगे।

उन्होंने राजनीति के बाहर भी ऐसे व्यक्तियों से सम्पर्क करना शुरू किया जो ग्राम-सेवा के कार्यों में संलग्न होने को तैयार हों । इस दिशा में उनका एक समृद्ध मारवाड़ी उद्योगपति जमनालाल बजाज से सम्पर्क हु आ जिन्होंने साबरमती तथा अन्य रचनात्मक कार्यक्रमों में भारी वित्तीय सहायता की थी । वह गाँधीजी द्वारा स्थापित बीस समाज सुधार संगठनों में से तेरह के सदस्य थे ।

गाँधीजी ने सन् 1933 में हरिजन-सेवक संघ की स्थापना की जिससे सवर्णों को दलितों की सेवा के लिए संगठित किया जा सके । उनका कहना था कि अस्पृश्यता निवारण का काम न तो दलितों द्वारा किया जाए और ना ही गैर हिन्दुओं द्वारा, अपितु यह कार्य अपने पापों के प्रायश्चित के रूप में सवर्ण हिन्दुओं को करना चाहिए । इसी तरह सन् 1934 में गाँधीजी ने अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ (All Indain Village Industries Association) की स्थापना की थी । गाँधीजी निःस्वार्थ भाव से ग्राम सेवा के कार्यक्रमों में सक्रिय होना चाहते थे क्योंकि दलितों की स्थिति में सुधार एवं ग्राम सेवा और ग्राम-विकास का कार्य को गाँधीजी ने भारत के सशक्तिकरण और स्वराज के लिए अपरिहार्य माना । गाँधीजी ने अत: दलितोद्धार एवं ग्राम-सेवा का संकल्प लिया ।

सविनय अवज्ञा आन्दोलन के कारण सरकारी प्रतिबन्धों के वशीभूत साबरमती-आश्रम के अनेक आश्रमवासी वर्धा में विनोबा भावे द्वारा स्थापित सत्याग्रह आश्रम में रहने लगे । उस समय गाँधीजी हरिजन-सेवा एवं ग्रामोद्योगों के विकास आदि कार्यों में संलग्न थे । गाँधीजी ने घोषणा की कि उनका साबरमती के पद-चिन्हों पर चलते हु ए वैसे आश्रम की स्थापना का कोई इरादा नहीं है । वही गुजरात विद्यापीठ के अध्यापकों ने उनकी प्रेरणा से जनता को शिक्षित करने के लिए गांव को गोद लिया था । सन् 1934 में जमनालाल बजाज के परामर्श पर गाँधीजी ने अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ के मुख्यालय के रूप में वर्धा का चयन किया था । अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ का प्रबन्ध प्रसिद्ध गाँधीवादी अर्थशास्त्री जे.सी. कुमारप्पा के हाथ में था ।

सेवाग्राम के स्थान का चयन और गतिविधियों के संचालन में मीरा बहन की भी महत्वपूर्ण भूमिका थी । गाँधीजी के साथ यहाँ मगन-बाड़ी में रहते समय वह एक सिण्डी नामक ग्राम के बीच से गुजरा करती थी । इस गांव में भयानक गन्दगी थी । ' 'हरिजन ' के नये

सम्पादक महादेव देसाई के सहयोग से मीरा बहन ने सिण्डी में सफाई कार्यक्रम शुरू किया । परन्तु गाँव वालों ने गन्दगी फैलाने के क्रम को नहीं छोडा । तब गाँधीजी ने दो-तीन स्वयंसेवकों की सहायता से मीरा बहन को प्रतिदिन सुबह-सुबह गाँव की सड़कें साफ करने का निर्देश दिया । स्वयं गाँधीजी एक दिन सुबह सफाई-दल के साथ गये और गाँव वालों के समक्ष सादे मिट्टी के शौचालय बनाने का प्रस्ताव रखा । उन्होंने इन कार्यो के द्वारा उत्पन्न खाद को पैदावार बढ़ाने तथा पूरे वर्ष सब्जी आदि उगाने के काम में लिये जाने का आग्रह किया । मीरा बहन को और भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पडा परन्तु अपने कार्य की प्रगति एवं सेवा-सफाई के आधार पर मीरा ने शीघ्र ही गाँव वालों का विश्वास जीतने में सफलता अर्जित कर ली ।परन्तु सन् 1935 के अन्त में गाँधीजी का स्वास्थ्य खराब होने के कारण गाँधीजी को सेवागांव के पास एक आश्रम में ले जाया गया और उनकी सेवा में लगे जमनालाल बजाज ने आगन्तुकों एवं आश्रमवासियों के द्वारा गाँधीजी से सम्पर्क करने पर पूर्णतया रोक लगा दी।

गाँधीजी ने अपने स्वास्थ्य गिर' जाने पर भी सवोगांव में हो रहने का निश्चय । यद्यपि उनके इस निर्णय का जमनालाल बजाज ने विरोध किया पर गाँधीजी के तर्को के सामने उनकी एक भी नहीं चली । बजाज ने भी सभी प्रकार से गाँधीजी को सहायता देने का कार्यक्रम बनाया । सेवागाँव में उनके लिए झोंपड़ा बनाया गया । उन्होंने अपने स्वास्थ्य की कोई परवाह नहीं की । उनका झोंपड़ा लकड़ी एवं बास से बनाया गया । सेवागांव में अत्यधिक गर्मी पड़ती थी । डाक्टरों ने गाँधीजी के उच्च रक्तचाप को देखते हुए उन्हें ठण्डे स्थान पर जाने का परामर्श दिया ।

स्वास्थ्य सुधार के साथ-साथ आगन्तुकों की संख्या भी बढ़ने लगी । इस प्रकार गाँधीजी का सेवाग्राम जे. सी. कुमारप्पा के शब्दों में ' 'भारत की यथार्थ में राजधानी ' बन गया । गाँधीजी ने अपने भारी भरकम पत्राचार को भी संक्षिप्त करना चाहा और इरा कार्य में उन्होंने महादेव देसाई की सहायता ली । सेवाग्राम में डाकघर तक भी नहीं था । गाँधीजी ' 'हरिजन' ' के लिए लेख भी लिखते थे और सभी छोटे-बड़े आगन्तुकों से भेंट भी करते थे । उनका अखिल भारतीय ग्रामीण उद्योग संघ सम्बन्धित कार्य भी बढ़ता गया । वे स्वयं कई अवसरों पर अत्यधिक दुःखी भी हो जाते थे कि सेवाग्राम तथा आस पास के गाँवों में स्वयं अपने हाथों से कोई काम नहीं कर पा रहे हैं और विभिन्न रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रशासनिक कार्यो में ही उलझे हुए रहते हैं । राजनीति तथा अन्य कार्यो में उलझे हुए होने के कारण उनका घूमना-फिरना भी बहुत कम हो गया था ।

संक्षेप में एक आश्रम के रूप में सेवाग्राम का विकास एक योजनाबद्ध कार्यक्रम के स्थान पर राष्ट्रीय मामलों में गाँधीजी के करिश्मात्मक व्यक्तित्व के प्रभाव का परिणाम था । उनके इस प्रयोग ने ग्राम पुनर्निर्माण के विषय में गाँधीजी के विचारों को जो कि मूलत: मानवतावादी थे, प्रयोगात्मक स्वरूप प्रदान करने का अवसर दिया । गाँधीजी इस ग्राम जीवन एवं ग्राम सेवा को दिन-प्रतिदिन के सामुदायिक जीवन के अनुभवों से विकसित करना चाहते थे । अतएव उनका मानना था कि वहां ऊपर से थोपे हुए नियम-उपनियम व निर्देशन नहीं होने चाहिए ।नीरस एवं थोथे आकड़ों के बजाय गाँधीजी प्रत्येक गांव में रहने वाले निम्नतम व्यक्ति की

आवश्यकताओं के संदर्भ में काम करते थे । उनके लिए व्यक्ति ही गांव की आधारशिला था । वे सीधे व्यक्ति की सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक तथा मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं से जुड़े हुए थे । उनकी मान्यता थी कि ग्राम-सुधार का दायित्त्व स्वयं व्यक्ति के कन्धों पर डाला जाना चाहिए । उनके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि उसका पूर्ण आध्यात्मिक, बौद्धिक तथा नैतिक विकास किया जाये और यह केवल अपने साथी-व्यक्तियों की सेवा के द्वारा ही किया जाना सम्भव था । समाज के प्रति अपने दायित्वों को सम्पादित करने की भावना गीता से ग्रहण की जानी चाहिए । आश्रम के स्त्री-पुरूष गाँधीजी के प्रति समर्पित थे और उनके निर्देशानुसार समाज सेवा के कार्यो में सक्रिय रहते थे।

8.9 सारांश

गाँधीजी के सभी आश्रमों में गतिविधियों का संचालन नैतिक एवं परोपकारी मूल्यों के आधार पर किया जाता था । मानव विकास के आदर्श सम्बन्धी गाँधी धारणा क्रान्तिकारी तथा मानवीय थी । किन्तु उसका मूल आधार कठोर संयमवाद था जिसका लक्ष्य मानव में सरलता, आन्तरिक शक्ति, तथा सांसारिक महत्वाकांक्षाओं के प्रति विरक्ति था । वे आत्म-साक्षात्कार के द्वारा मानव की पूर्णता में अर्थात् मोक्ष-प्राप्ति में विश्वास करते थे । उनके अनुसार मनुष्य की प्रकृति तथा बाह्य परिवेश से उसका सम्बन्ध एक सावयवी समग्र था जिसको अलग-अलग करके नहीं देखा जा सकता । मानव और प्रकृति की इसी एकता का अनुभव करते हुए मानव अपनी निहित क्षमताओं का साक्षात्कार कर सकता है । उन्होंने अपने आश्रमों में वही सब करने-कराने का प्रयास किया । दूसरे शब्दों में, शुद्ध-भोजन, शुद्ध-विचार और शुद्ध-कार्य ही व्यक्ति में नैतिकता का विकास तथा अन्ततोगत्वा न्यायपूर्ण समाज का सृजन कर सकते हैं।

गाँधीजी रूढ़िवाद से सदैव दूर रहते थे । वे अपने चिन्तन एवं दर्शन को- 'गतिशील तथा विकासात्मक व्याख्या करने के पक्ष मे थे । वे अपने विचारों एवं व्यवहारों का ' 'पवित्रीकरण ' नहीं चाहते थे । इसी कारण उन्होंने कहा था कि ' 'गाँधीवाद जैसी कोई चीज नहीं है तथा मैं अपने पीछे कोई भी सम्प्रदाय बनाकर नहीं छोड़ना चाहता । मैंने सरल ढंग से अपने दैनिक-जीवन एवं समस्याओं पर लागू हो सकने वाले शाश्वत-सत्यों को ही अपनी शैली में लागू किया है।

राज्य की केन्द्रीयकृत प्रवृत्तियों के विरूद्ध गाँधीजी ने सहकारी, सामंजस्यपूर्ण और स्वावलम्बी समाज की रचना का सन्देश दिया । उनके मानवतावादी विचार हॉब्स की मान्यताओं का प्रत्युत्तर थे । शाकाहारिता, धार्मिक-परम्परा, निष्काम-कर्म, आत्मत्याग, सेवा आदि उनकी अहिंसा के अंग उपांग थे । इनका ही प्रयोग करके उन्होंने न्यायपूर्ण समाज के निर्माण की सम्भावनाओं को बताया । दक्षिण-अफ्रीका में गाँधीजी के सत्याग्रह एवं आश्रमों का लक्ष्य भारत के दलितों के जीवन को ऊँचा उठाना था । किन्तु उनको भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति मात्र से परे जाकर सामाजिक रूप से विभाजित देश में एक समग्र सामाजिक-क्रान्ति का सृजन करना था । इसके लिए उन्होंने केवल हिन्दू जन समाज की शब्दावली का ही प्रयोग न कर ईसाई, मुसलमान, पारसी आदि सभी से विचार एवं भाव ग्रहण किये । विभिन्न आश्रमों में उन्होंने यह

सब अपने अस्पृष्यता-निवारण, सफाई सुधारों, महिला उत्थान और सह-शिक्षा आदि कार्यक्रमों को अपनाकर किया ।

8.10 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी द्वारा स्थापित किए गए विभिन्न आश्रमों का संक्षिप्त परिचय दीजिए ।
2. आश्रमों की स्थापना के पीछे गाँधी की प्रेरणा तथा उद्देश्यों की विवेचना कीजिए ।
3. दक्षिण अफ्रीका में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी गतिविधियों की विवेचना कीजिए ।
4. भारत में गाँधी द्वारा स्थापित आश्रमों का संक्षिप्त परिचय एवं उनकी गतिविधियों की विवेचना कीजिए ।
5. स्वतंत्रता आन्दोलन में गाँधी द्वारा स्थापित किए गए आश्रमों की भूमिका का विश्लेषण कीजिए ।

8.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गाँधी एम.के., सत्य के साथ मेरे प्रयोग, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1957
2. गाँधी एम.के., सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, वी.जी देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद 1972
3. चिन्मोय, श्री, महात्मा गाँधी : द हार्ट ऑफ लाइफ, आनी प्रेस, न्यू योर्क 1994
4. थोम्सन, मार्क, गाँधी एण्ड हिस आश्रम, पोपुलर प्रकाशन, मुम्बर्ब, 1983
5. रूडॉल्फंस् एल. आइ. एवं एस. एच., पोस्टमॉर्डन गाँधी. गाँधी इन द वर्ल्ड एण्ड एट होम, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2005

इकाई - 9

नारी सम्बन्धी गाँधी के विचार

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 उदारवादी गाँधी
9.3 तत्ववादी गाँधी
9.4 परिवार के प्रति दृष्टिकोण
9.5 कमजोर व अत्यधिक सुमेध स्थिति वाली स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण
9.6 नारी भी सांस्कृतिक संरचना में
9.7 लिंग-विभेद से परे
9.8 महिलायें व स्वरोजगार
9.9 स्त्री-पुरूष सम्बन्धों की पुनर्संरचना
9.10 लिंग-भेद व परिवार के बारे में पुनर्विचार
9.11 सारांश
9.12 अभ्यास प्रश्न
9.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप जान जायेंगे कि.

- उदारवादी एवं तत्ववादी दृष्टिकोण के प्रति गाँधी की मान्यता
- महिलाओं के बारे में गाँधी के विचार
- परिवार के प्रति गाँधी का दृष्टिकोण।
- महिलाओं के सशक्तिकरण के प्रति गाँधी का दृष्टिकोण

9.1 प्रस्तावना

नारी लेखन पर गाँधी की गहनता आधुनिक पाठक के लिए विस्मयकारी है । स्वतंत्रता आंदोलन और स्थानीय समुदाय क्षेत्रों में नारी जाति की राजनीतिक सक्रियता व सेवा का आग्रह गाँधी के सम्पूर्ण सार्वजनिक जीवन काल में निरन्तर बना रहा है । गाँधी के नेतृत्व में चले स्वतंत्रता संघर्ष ने नारी चेतना के एक नये युग का आरम्भ किया अत: वह भारतीय नारी मुक्ति की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था । स्वतंत्रता आंदोलन में नारी जाति को सम्मिलित- करके गाँधी ने नारी शक्ति के अद्भूत स्त्रोतों का दोहन किया और उसे राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में सकारात्मक शक्ति के रूप में प्रयुक्त किया।

अनेक बार गाँधी के विचार उन्नीसवीं व बीसवीं सदी के (पूर्वार्द्ध के) दार्शनिकों से मेल खाते हैं जो जे. एस. मिल के समान नारी अधिकारों की वकालत करते हैं । इन सभी के दर्शन में हम मारी के लिए उन सभी समान अवसरों की माँग पाते हैं जो अभी तक उन्हें नहीं मिले थे

। किन्तु साथ ही गाँधी उदारवादी पाश्चात्य (तथा अनेक बार पूर्वी) विचारकों से भी सहमत नजर आते हैं।

उपर्युक्त सन्दर्भों के अतिरिक्त गाँधी दर्शन में अनेक स्थानों पर नारी की सुमेध स्थिति का वर्णन, नारी की स्वायत्तता पर बल. भारतीय समाज में नारी संबंधित कुरीतियों पर कुठाराघात तथा लिंगभेद की आलोचना आदि बातें दृष्टिगोचर होती हैं । इनमें से अधिकांश स्थानों पर गाँधी स्थानीय स्तर पर परिस्थितियों और परम्पराओं की बात करते हुए समाज के पिछड़े व शोषित वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । इन नारी लेखनों में ऐसा ही एक सन्दर्भ है जो समाज के पारम्परिक विवादास्पद लिंगभेद संबंधी प्रथाओं - जो पुरूष श्रेष्ठता का आग्रह रखता है के विरूद्ध आवाज उठाता है ।

9.2 उदारवादी गाँधी

उदारवाद का अर्थ अनेक व्यक्तियों द्वारा अपने-अपने तरीके से लगाया गया है, उसमें से एक अर्थ इस बात पर बल देता है कि प्रत्येक व्यक्ति समान है और प्रत्येक व्यक्ति के अपने कुछ अधिकार है । पारंपरिक उदारवाद के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपने मूलभूत अधिकारों का उपभोग करना चाहिए और यह राज्य का कर्तव्य है कि वह उसके अधिकारों की रक्षा करे तथा व्यक्ति के अधिकारों में न्यूनतम हस्तक्षेप करे । व्यक्तिगत नागरिक समूहों अर्थात राज्य के अतिरिक्त अन्य समूहों की गतिविधियों को अपने अधिकारों के उपयोग के लिए सामान्यत: स्वाधीनता प्राप्त होती है ।

गाँधी उदारवाद से असंख्य प्रकार से असहमत प्रकट होते हैं । उनके अनुसार अधिकार की उत्पत्ति कर्त्तव्य में से ही होती है, वे व्यक्तिवाद की अपेक्षा समूह की सामुदायिकता पर अधिक बल देते हैं । साथ ही गाँधी का निरंतर ध्यान नागरिक समाज की उन प्रथाओं पर रहता था जो व्यक्ति की गरिमा और स्वतंत्रता को बढ़ाती या घटाती है । यद्यपि वे उदारवाद के इस मूलभूत सिद्धांत से सहमत है कि प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा अनिवार्यत: बनी रहनी चाहिए । यही विचार उनके भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति की चेष्ठा तथा भारतीय समाज से छुआछूत उन्मूलन की चेष्ठा के पीछे मूलत: प्रेरणादायक बना । स्त्री-पुरुष संबंधों के संदर्भ में भी यही मूल विचार दृष्टिगोचर होता है।

27 मार्च 1931 को गाँधी के निर्देशन में अखिल भारतीय काँग्रेस का 45 वां अधिवेशन आरंभ हुआ, जिसमें भारतीय अधिकार पत्र का दावा किया गया जो आगे चलकर काँग्रेस द्वारा भारतीय संविधान का हिस्सा घोषित हुआ तथा बाद में संविधान का भी हिस्सा बना । गाँधी द्वारा अधिनियम में उन प्रावधानों पर विशेष प्रसन्नता प्रकट की गयी जो न केवल राजनैतिक क्षेत्र में, बल्कि सार्वजनिक और निजी रोजगार के क्षेत्र में तथा देश के सामाजिक संरचना के निर्माण के क्षेत्र में भी नारी समानता पर बल देते हैं । पूर्ण उदारवादी शैली में गाँधी स्त्रियों के सम्पत्ति स्वामित्व के संदर्भ में पुरूषों से समानता संबंधी कानूनों का भी पुरजोर समर्थन करते है ।

9.3 तत्ववादी गाँधी

तत्ववाद के अंतर्गत किसी वस्तु की मूलभूत अनिवार्य विशेषताओं का संज्ञान उसे समझने व उस पर कार्य करने के लिए आवश्यक है । लैगिंकता के विषय में एक प्रकार से गाँधी को तात्विक कहा जा सकता है । आत्मा के स्तर पर गाँधी स्त्री-पुरूष की पूर्ण समानता को स्वीकार करते हैं और दोनों को ही समान स्वायत्ता और गरिमा का अधिकारी मानते हैं, साथ ही वे स्त्री-पुरूष भिन्नता तथा रुकता की अवधारणा का भी समर्थन करते हैं । उनके अनुसार दोनों के कर्म क्षेत्र पृथक है तथा दोनो को अपने-अपने क्षेत्रों में कर्तव्य पालन करना चाहिए । यद्यपि दोनों के संबंधित क्षेत्र अनेक बार जटिल रुप से परस्पर गुंथे हुए प्रतीत होते है तथा जो पुरूष वर्ग के लिए उपयुक्त जान पड़ता है वही स्त्री वर्ग के लिए भी उपयुक्त जान पड़ता है । इस आधार पर किये गये वर्गीकरण में दोनों की विशेषताएँ व सांस्कृतिक आवश्यकताएँ सामान्यत: समान पायी जाती है ।

कार्यक्षेत्र के वर्गीकरण के संदर्भ में गाँधी पारम्परिक ढांचे को स्वीकार करते हैं तथा पुरूष को आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु तथा स्त्री को बच्चों तथा घर की देखरेख के लिए जिम्मेदार मानते है । गाँधी के अनुसार स्त्री का प्राथमिक दायित्व घर की देखभाल है तथा अन्य किसी भी प्रकार का कार्य चाहे कृषि से संबंध हो या कारखानों से अथवा अन्य किसी भी स्थान से संबंधित हो वह. मात्र अतिरिक्त समय में किया जाना चाहिए । पुरुष घर के लिए आपूर्ति के द्वारा तथा स्त्री घर के प्रबंधन के द्वारा एक दूसरे के पूरक व सहयोगी बनते हैं । अत: स्त्री-पुरूष कार्य क्षेत्र की विभिन्नता के संदर्भ में गाँधी कोई संदेह नहीं रखते और सामाजिक. सांस्कृतिक व जैविक सभी स्तरों पर इस भिन्नता को आधार मानते हैं ।

यद्यपि गाँधी के नारी सम्बन्धी विचारों में तत्ववादी सिद्धान्तों की मान्यताओं का समावेश दिखता है, तथापि कुछ संदर्भों में उनके यह विचार केवल तत्ववादी होना नहीं माना जा सकता । गाँधी स्त्री के गृह कार्य के बाहर भी समय दिये जाने को उचित तो मानते हैं पर साथ ही स्त्रियों द्वारा पुरूषों की कुछ जैविक विशेषताओं, जैसे दृढ़ निश्चियता, और पुरूषों द्वारा स्त्रियों की कुछ विशेषताओं, जैसे स्नेह व देखभाल की क्षमता, को अपनाए जाने की आवश्यकता अनुभव करते है । साथ ही वे नारी की मूलभूत क्षमताओं पर किसी प्रकार की सीमाओं को स्वीकार नहीं करते चाहे वह उच्चतम राजनैतिक पदों को सम्भालने संबंधित कार्य ही हो ।

संशोधित रुप में जो तत्ववाद गाँधी दर्शन में दृष्टिगोचर होता है, उसे पूर्णत: समझने के लिए मात्र नारी संबंधी विचारों का अध्ययन ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसके लिए उनका स्वायत्तता संबंधि संपूर्ण दर्शन समझना आवश्यक है । गाँधी के लिए स्वायत्तता का अर्थ है कि नैतिक व्यक्ति होने के नाते प्रत्येक मनुष्य को अपनी गरिमा बनाये रखने का अधिकार है किंतु साथ ही दूसरों की गरिमा बनाये रखने का कर्तव्य भी उससे जुड़ा है । सत्य के संदर्भ में उन्हें पुरूषार्थ की अवधारणा अत्यन्त प्रिय है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भय अथवा दण्ड के सत्य के प्रति अपनी विशिष्ट सोच विकसित करता है । गाँधी के अनुसार चूंकि परम सत्य को पूर्णत: समझ पाना किसी व्यक्ति के लिए संभव नहीं है. इसलिए प्रत्येक व्यक्ति सत्य के मात्र आशिक पक्ष को ही ग्रहण कर पाता है । इस प्रकार से ग्रहण किए गए सत्य के आशिक और

वैयक्तिक पक्ष को अन्य व्यक्तियों पर आरोपित नहीं किया जाना चाहिए । ऐसे बाध्यकारी आरोपण गाँधी की दृष्टि में हिंसात्मक है क्योंकि हिंसा मात्र युद्ध या अपराधों तक सीमित नहीं होती वरन् अधिकांशत: हिंसा को संस्थाबद्ध कर दिया जाता है । यहीं पर हमें दलित वर्गो की तथा महिलाओं की समस्या का उपचार नजर आता है । गाँधी के लिए प्रत्येक प्रकार की हिंसा अपने शिकार की स्वायत्तता का हरण करती है और इसलिए इसका विरोध किया जाना चाहिए ।

9.4 परिवार के प्रति दृष्टिकोण

परिवार एवं विवाह गाँधी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण संस्थाएँ है । प्रेम, सुरक्षा, शिक्षा तथा दूसरों के प्रति नैतिक उत्तरदायित्व की शिक्षा देने वाले अनेक अवसरों को गाँधी अपने पारिवारिक जीवन के मीठे पलों के रुप में स्वयं अपनी आत्मकथा में वर्णित करते है ।

प्रत्येक व्यक्ति का जीवन परिवार से प्रारंभ होता है तथा प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे पर निर्भर रहता है । पारिवारिक घटनाओं का सबसे गहन प्रभाव परिवार के सबसे छोटे सदस्यों पर पड़ता है, यद्‍यपि वे इसे प्रभावित करने में सबसे कम क्षमतावान होते है । गाँधी परिवार के आर्थिक स्वावलम्बन की आवश्यकता पर बल देते हैं जिसमें परिवार के सदस्य गरिमापूर्ण तथा परस्पर सम्मानपूर्ण तरीके से अपना योगदान देते है । परिवार के बच्चों के प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करने के लिए गाँधी अनेक बातों को आवश्यक मानते हैं । प्रथमत: वयस्क सदस्यों को परिवार की जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति करनी होती है । गाँधी द्‍वारा 'आधुनिकता का विरोध करने का यह भी एक कारण माना जा सकता है कि उनके अनुसार इसके कारण ही व्यापक स्तर पर बेरोजगारी और अल्परोजगारी भारतीय समाज में फैली है जिससे जैविक आवश्यकताओं की पूर्ति करना कठिन हो जाती है । द्‍वितीय, गाँधी परिवारों को ऐसे समाज की स्थापना करने पर जोर देते हैं जहां नैतिक मूल्यों को भूतकाल की अवधारणा कह कर उपेक्षित नहीं किया जाता वरन् नैसर्गिक तौर पर नैतिक मूल्यों का पालन किया जाता है । तृतीय, वे परिवार के सदस्यों की स्वायत्तता को न केवल पारिवारिक स्तर पर, बल्कि वृहद सामाजिक स्तर पर भी आवश्यक मानते है ।

गाँधी इस तथ्य से अवगत थे कि अधिकांश भारतीय स्त्रियां गृहकार्य व उससे संबंधित दायित्वों तक सीमित है और पारिवारिक परिस्थितियाँ उनकी स्वायत्तता का पूर्ण हरण कर लेती है । पारिवारिक सदस्यों के परस्पर संबंध समानता के स्तर पर या फिर कम-सोपान के स्तर पर हो सकते हैं । अपने अध्ययन की समग्रता में गाँधी उन सभी व्यक्तियों की दशाओं पर चिंतन करते है जिनकी स्थिति परिवार व समाज में सुभेद्‍य व नाजुक हैं । इस प्रकार वे उदारवाद के अमूर्त व्यक्ति और अधिकारों की बात नहीं करते बल्कि संबंधित व्यक्ति की विशिष्ट भूमिका (जैसे माँ अथवा पत्नी) के स्तर पर आकर हल खोजने का समर्थन करते हैं।

गाँधी बह्मचर्य पर बल देते हैं, यद्‍यपि उनके अनुसार यह पवित्रता स्त्री-पुरूष के उस पारस्परिक जुड़ाव अथवा गठबंधन पर तनिक भी कुठाराघात नहीं करती, जिसका गाँधी समर्थन करते है । विवाह गाँधी के लिए पूर्णत: स्वाभाविक है और किसी भी अर्थ में उसकी आलोचना वे उचित नहीं मानते । विवाह में दोनो पक्षों की पूर्ण स्वीकृति एक अनिवार्य आवश्यकता है और इसीलिए वे बाल-विवाह का पूर्ण विरोध करते है । इसी आधार पर वे दहेज प्रथा का भी विरोध

करते हैं, जो उनकी नजर में 'लड़कियों के विक्रय' के समान दूषित प्रथा है । गाँधी इसे माता-पिता का दायित्व मानते है कि वे अपनी बालिकाओं की शिक्षा-दीक्षा इस प्रकार करें कि वे स्वयं दहेज आधारित विवाह को अस्वीकार कर दे तथा ऐसी मांग करने वाले व्यक्ति से रिश्ता तय करने की अपेक्षा कुंवारी रहना पसंद करे विवाह का एकमात्र सम्मानीय आधार पारस्परिक व सहमति होना चाहिए । उपरोक्त प्रकार के परिवर्तनों से न केवल दहेज प्रथा का अंत होगा, बल्कि माता-पिता अपने बालकों व बालिकाओं का लालन-पालन भी समान तरीके से करेंगे ।

इसके अतिरिक्त, दहेज प्रथा और जातिगत बाध्यता के कारण विवाह क्षेत्र में व्यक्ति की स्वतंत्रता अत्यंत सीमित हो जाती है । फलत: गाँधी दहेज प्रथा का विरोध करते है तथा विवाह को माता-पिता द्वारा एक क्रय-विक्रय की प्रक्रिया में परिणित होने से रोकने की भी बात करते है । दहेज प्रथा जातिगत बाध्यता से जुड़ी हुई समस्या है क्योंकि यदि विवाह की स्वतंत्रता कुछ व्यक्तियों तक ही सीमित होती है तो इस प्रथा को समाप्त करना कठिन है । अत: दहेज प्रथा के अंत के लिए माता-पिता अथवा कन्या व वर को जाति की सीमाओं से परे जाना होगा इन सब के लिए एक ऐसी चारित्रिक शिक्षा की आवश्यकता है जो युवा पीढ़ी की सम्पूर्ण मानसिकता में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सके।

किसी भी विवाह में दोनो पक्षों का स्वत: प्रेरित होना आवश्यक है और स्त्रियों के संबंध में शारीरिक रुप से स्वायत्त होना विशिष्ट महत्व रखता है । गाँधी विवाह में शारीरिक संबंधो को महत्वपूर्ण मानते हैं, किंतु वे उसके बाध्यकारी स्वरूप के स्थान पर स्त्रियों की स्वतंत्र अभिव्यक्ति होने की आवश्यकता पर बल देते है । उनके अनुसार किसी पुरूष को अपनी पत्नी को स्पर्श करने का अधिकार तब तक नहीं प्राप्त होता, जब तक पत्नी संतानोत्पत्ति की इच्छा नहीं रखती और इस संबंध में गाँधी पत्नियों को भी दृढ़ इच्छा-शक्ति रखने का समर्थन करते है।

किसी भी समाज और संस्कृति में प्रधानतावादी प्रवृत्तियों व उनकी अभिव्यक्ति के प्रति गाँधी अत्यंत सजग थे और वे उन सभी प्रथाओं का विरोध करते थे जो स्वयं के संबंध में निर्णय लेने हेतु पुरुषों को तो स्वतंत्रता देती थी लेकिन स्त्रियों को नहीं । उदाहरणार्थ, विधुर होने पर पूर्ण उदासीनता के साथ पुरूष का पुनःविवाह कर दिया जाता है, जबकि गाँधी के अनुसार पुनःविवाह का अधिकार यदि मात्र पुरूष को प्राप्त है और स्त्रियों को नहीं, तो ऐसा समाज व्यक्ति की गरिमा और स्वायत्तता पर आधारित नहीं है । यदि मूल स्वतंत्रता किसी एक वर्ग के पास है तो वह सभी को प्राप्त होनी चाहिए।

गाँधी इस तथ्य से परिचित थे कि हिंसा और अधिनायकत्व कहीं भी और किसी भी स्थान पर सिर उठा सकता है, किंतु वे उसके औचित्य को स्वीकार नहीं करते, चाहे वह किसी भी समय या स्थान पर विधमान हो । यद्यपि राजनैतिक क्षेत्र में उनका आग्रह राज्य, राष्ट्रीय आंदोलन अथवा अंतर्राष्ट्रीय विवादों से संबंधित होता था परंतु वे सामाजिक व पारिवारिक स्तर पर हिंसा की अभिव्यक्ति से चिंतित थे । उनके अनुसार अहिंसा का निश्चित तौर पर सभी स्थानों पर लागू होता है चाहे पारिवारिक संबंध हो या अधिकारिक सत्ताधारी के साथ संबंध हो । अहिंसा का सिद्धांत आंतरिक अव्यवस्थाओं बाहृय आक्रमणों आदि सभी पर समान रुप से लागू

होता है । दूसरे शब्दों में अहिंसा की क्रियान्विति सभी मानवीय संबंधों तक व्याप्त होनी चाहिए । उल्लेखनीय है कि उपरोक्त सभी संबंधों के उदाहरणों में 'शक्ति की व्याख्या की गई है । गाँधी द्वारा पारिवारिक संबंधो को प्रथम स्थान पर लिया गया है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति अनिवार्य और महत्वपूर्ण रुप से पारिवारिक स्तर पर का होता है । गाँधी पारिवारिक स्तर पर विद्यमान उस शक्ति और पद सोपान क्रम की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहते है जो हिंसात्मक शैली में प्रकट होता है।

पारिवारिक सम्बंध में गाँधी द्वारा अहिंसा का आग्रह तथा परिवार के सदस्यों की स्वायत्तता का स्थापन एक नैतिक आवश्यकता बताया । सभी सदस्यों को साधन नहीं वरन साध्य माना जाना चाहिए । हिंसा और अधिनायकवादी प्रवृत्तियों की समाप्ति के अतिरिक्त गाँधी अन्य बातों के साथ, ये भी प्रावधान स्थापित करना चाहते है कि लिंग भेद से परे जाकर प्रत्येक पारिवारिक सदस्य को समान स्तर प्राप्त हो।

9.5 कमजोर व अत्यधिक सुमेध स्थिति वाली स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण

पारंपरिक विवाह पद्धति में नारी द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं के अतिरिक्त गाँधी समाज की सबसे कमजोर वर्ग की स्त्रियों की भी चर्चा करते है । उनके अनुसार गरीबी और सामाजिक भेद-भाव स्वयं अपने में एक अभिशाप है किंतु स्त्रियों के संबंध में इसका कुप्रभाव कई गुणा बढ़ जाता है।

गाँधी मानते है कि अन्य स्वतंत्रताओं के समान स्त्रियों की सामाजिक स्वतंत्रता भी प्रभावित होती है, उसे अनेक सामाजिक प्रथाओं जैसे- बाल-विवाह, बाल वैधव्य, वैश्यावृति, अंधविश्वास, यर्दाप्रथा, मदिरापान और आर्थिक निर्भरता आदि के द्वारा बाधित किया जा सकता है ।

बाल विवाह विरोधी समिति द्वारा बाल-विवाह एवं बाल-वैधव्य पर एक सर्वेक्षण व उसकी रिपोर्ट प्रस्तुत की गई, जिस पर गाँधी की प्रतिक्रिया उनके इस संबंध में चिंता के स्तर को दर्शाती है। । रिपोर्ट के अनुसार ' सन् 1921 में एक वर्ष से कम उस की पत्नियों की संख्या 9066 थी, जो 1931 में बढ़कर 44,082 हो गयी । यह वृद्धि दर पांच गुणा अधिक थी, जबकि जनसंख्या में वृद्धि दर मात्र 1/10 प्रतिशत की थी । ' इसी प्रकार 1921 में बाल - विधवाओं की संख्या 759 थी जो कि 1931 में बढ़ कर 1515 हो गयी । जनसंख्या की वृद्धि दर उपरोक्त समस्याओं के समाधान की गति से कहीं अधिक है।'

गाँधी के अनुसार "धर्म अथवा परम्परा द्वारा आरोपित बाध्यकारी वैधव्य एक असहनीय स्थिति है जो घरों को भ्रष्ट व धर्म को अपमानित करती है।"

यद्यपि कानून के द्वारा इस प्रथा को वर्जित करने का वे स्वागत करते है, परंतु गाँधी का अधिक विश्वास एक प्रबुद्ध नागरिक चेतना को जाग्रत करने में है । वे उन सभी माता-पिताओं की आलोचना करते है जो शैशवस्था में ही बालिकाओं का विवाह कर देते है और साथ ही उन बालिकाओं के पुन: विवाह का आग्रह भी करते है यदि उनके प्रस्तावित पतियों की मृत्यु

हो जाये । गाँधी के अनुसार वैधव्य के बाद पुर्नविवाह करने या ना करने का निर्णय पूर्णत: स्वयं स्त्रियों का होना चाहिए । उनके अनुसार ' यदि मुझसे इस संबंध में नियम के बारे में पूछा जाए तो वह नियम स्त्री व पुरूष दोनो के लिए समान होना चाहिए।"

गाँधी वेश्यावृति' के बारे में भी चिन्तित थे। जिसे वे शोषण का भद्दा रुप मानते थे जिसमें कि वेश्याओं को एक पुरूष को खुशी प्रदान करने के साधन के रुप में माना जाता है । यह, वह चीज है जो उनके सार्वभौम-सम्मान के तर्को के विपरीत है और उनके इस दावे के भी विपरीत है कि स्वयं के उद्देश्यों के लिए किसी को भी एक 'वस्तु' की तरह व्यवहित नहीं किया जाना चाहिए । "यह मानवता के लिए बेहद शर्म और दुख की बात है कि बड़ा संस्था में महिलाओं को अपनी पवित्रता पुरूष की स्त्री-भोग की लालसा के लिए बेचनी पड़ती है । पुरूष जो नियम-निर्माता है, को महिलाओं की इस दुर्दशा के लिए भयानक दंड भुगतना होगा । ' इसी भाव से गाँधी ने देवदासी प्रथा पर भी रोष प्रकट किया, जो कि मुख्यत: दक्षिण भारतीय हिंदू समुदायों में प्रचलित है जहाँ युवा लड़कियाँ धार्मिक देवताओं के समक्ष नाचती गाती है और बाद में उन्हें पुजारियों और धनाढ्य मंदिर संरक्षकों की काम-भावना को संतुष्ट करने के लिए बाध्य किया जाता है । गाँधी टिप्पणी करते हैं कि सभी पुरूषों को शर्म से फाँसी पर लटक जाना चाहिए तब तक, जब तक कि ' 'एक भी महिला को वासना की दृष्टि से देखा जाता है।“

गाँधी के अनुसार महिलाओं पर लैगिक प्रभुत्व न सिर्फ सक्रिय लैगिंक गतिविधियों में व्यक्त होता है जिसमें महिलाऐं आनंद के साधन के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं बल्कि यह पुरूषों के महिलाओं की 'पवित्रता के प्रति अत्यधिक आग्रह में भी प्रकट होता है । पर्दा प्रथा के बारे में बताते हुए उन्होंनें टिप्पणी की कि पवित्रता कोई ऐसी चीज नहीं है जिसे जबरन लादा जा सके । उन्हें लगता था कि एक महिला के लैगिक व्यवहार का निश्चय प्रत्येक महिला द्वारा व्यक्तिगत रुप से ही होना चाहिए । उनके अनुसार नैतिकता के विधान नहीं बनाये जा सकते । यह तो लिंग भेद से परे स्वतंत्र लोगों के स्वतंत्र चयन में प्रतिबिम्बित होती है । इसके अलावा, गाँधी पुरूषों के दोहरे मापदण्डों से व्याकुल थे जो कि पुरूषों के अपने लैगिक व्यवहार की नैतिक शुद्धता के संबंध में तो उदासीन हैं पर महिलाओं के संदर्भ में इनका आश्रय हमेशा लिया जाता है।

अपने पूरे सार्वजनिक जीवन में गाँधी समाज के सर्वाधिक कमजोर लोगों का मार्गदर्शन करते रहे । अस्पृश्यता, सांप्रदायिक द्वेष, बेरोजगारी और अल्प बेरोजगारी और उपनिवेशवाद के विरुद्ध अभियान उनकी नैतिक प्रतिबद्धताओं की सुविदित अभिव्यक्तियाँ हैं । ये महिलाओं की स्थिति और भूमिका से भी संबंधित हैं तथा उन सबसे भी जो दरकिनार कर दिये गये हैं क्योंकि वे छोटे है, वंचित है या त्रस्त हैं । उनकी योजना का एक भाग महिलाओं के प्रति प्रचलित व्यवहार को चुनौती देना भी था, जो इसके महिलाओं को नीचा दिखाने वाले अर्थों को उदघाटित करने व उसकी निंदा करने के उनके प्रयत्नों के रूप में सामने आता है।

9.6 नारी की सांस्कृतिक संरचनाएँ

अपने समस्त तत्ववाद के साथ, गाँधी ने उन तरीकों की प्रशंसा की जिनमें महिलायें अपनी संस्कृति द्वारा संरचित होती हैं । यह संरचना एकदम भिन्न दो रूपों में दिखाई देती है ।

पहला, जिसे हटाने के लिए गाँधी ने प्रयास किये और दूसरा वह जिसे गाँधी बढ़ावा देना चाहते थे । पहला इस विचार से संबद्ध है कि महिलायें पुरूष की अधीनस्थ हैं, जिनकी उनके पिता व पति से अलग कोई पहचान नहीं है । दूसरा, महिलाओं के संरक्षिकाओं के रुप में समाजीकरण से संबद्ध है, जो कि गाँधी की नजर में, पुरूषों की तुलना में अधिक स्नेहशील, धैर्यवान और कम आक्रामक हैं।

पहले मुद्दे के विरुद्ध, गाँधी ने स्त्री पुरूष संबंधो के संदर्भ में प्रचलित परंपराओं में से कुछ को चुकता दी । दृढ़ विश्वास से उन्होंनें कहा, " धर्मग्रन्थों में जो कुछ भी लिखा हुआ है उसे ईश्वरीय वाणी मानने की जरूरत नहीं है । " बल्कि उन्होंने सुझाव दिया कि धर्मग्रन्थों के नाम पर सत्ताधारियों द्वारा जो कुछ भी रचा गया है उसमें से जो भी धर्म व नैतिकता के आधारभूत सिद्धांतों के विरुद्ध है, उसका सुधार व परिष्कार होना चाहिए । महिलाओं के लिए आवश्यक गुण तय करने वाले विचारों को चुनौती दी जानी चाहिए व नष्ट किया जाना चाहिए, और ऐसा ही प्रयास गाँधी ने भी किया । उनके अनुसार पुरूष व स्त्री में से किसी को भी उच्चतर या निम्नतर नहीं कहा जाना चाहिए । इस लक्ष्य को पाने के लिए गाँधी चाहते थे कि महिलाऐं उन संरचनाओं को तोड़ने में संलग्न हों जो उनके लिए रची गई हैं । यह करने के लिए, महिलाओं हेतु आवश्यक है कि वे इन परंपरागत मान्यताओं की धमकी में आने से इंकार कर दें और स्वयं को इस सामाजिक व्यवस्था में निम्नतर स्थिति में रखा जाना अस्वीकृत कर दें । जैसा कि गाँधी मानते थे कि ''येन केन प्रकारेण पुरूषों का युगों से महिलाओं पर आधिपत्य रहा है इसलिए महिलाओं में एक हीन ग्रंथि विकसित हो गई है । उसने पुरूषों के इस प्रिय उपदेश के सत्य में विश्वास कर लिया है कि वह उससे हीन है ।“

बहुपत्नी प्रथा विराधी व एक पत्नी प्रथा संबंधी उनके तर्कों में सामाजिक रीतियों की संरचनात्मकता तथा विशेषत: लिंग संबंधों के बारे में उनकी सोच प्रकट होती है । प्रथम को स्वीकार्य न मानते हुए द्वितीय को उन्होंने महिला और पुरूष के मध्य घनिष्ठ ऐश्वर्य की अभिव्यक्ति माना । उन्होंने पुनर्स्मरण किया कि 'यद्यपि द्रोपदी के एक समय में पाँच पति थे फिर भी उसे पवित्र कहा जाता था । " उस युग में ऐसा इसलिए था, क्योंकि जैसे एक पुरूष कई स्त्रियों से विवाह कर सकता था वैसे ही (कुछ क्षेत्रों में) एक स्त्री भी एक से अधिक पति अपना सकती थी । विवाह संहिताओं में समय और स्थान के अनुरुप बदलाव आता है।

यदि हम मानवीय संबंधों की मूल संकल्पनाओं में परिवर्तन और उनका पुनर्व्यवस्थीकरण करना चाहे तो गाँधी तर्क देते हैं कि हमें उन संबंधों के दृढ़ रूप को चुनौती देनी होगी जो कि सामाजिक रीतियों में मजबूती से जमे हुए हैं तथा जो कुछ को अधिपति जबकि अन्य को हीन व अधीनस्थ होने को मजबूर करते हैं।

गाँधी के लिए, हमें दृढ़ निश्चयी होकर यह तय करने की आवश्यकता है कि कौनसी सामाजिक रीतियाँ प्रत्येक व्यक्ति को मूल्यवान व सम्माननीय बनाती हैं और एक आलोचनात्मक आवाज उठानी होगी जिसमें उन्हें शामिल करना होगा जिन्हें समकालीन व्यवस्था में दरकिनार कर दिया गया है।

9.7 लिंग-विभेद से परे

गाँधी यह भी सोचते थे कि महिलाओं को वैसा ही सिखाया जाता रहा है और उनमें वे आंतरिक सद्गुण भी होते हैं, विशेष रुप से अहिंसा, जो कि वैसे रूप में अधिकांश पुरूषों में नहीं होती, जिनको कि निश्चय और आक्रामक होने के लिए प्रशिक्षित किया जाता है । उन्होंने महिलाओं को अहिंसा का अवतार कहा क्योंकि उनके पास पीड़ा सहने की अनंत शक्ति होती है । गाँधी जोर देते हैं कि युगों से पुरूषों को हिंसा का प्रशिक्षण मिला है । अहिंसक बनने के लिए उन्हें स्त्रियोचित विशेषताओं को अपनाना होगा । गाँधी स्त्री पुरूष संबंधों की पारंपरिक सोच से परे जाना चाहते थे । उन्होंने कहा कि मेरा आदर्श यह है कि एक पुरूष को पुरूष रहना चाहिए पर इसके साथ-साथ उसे स्त्री भी बनना चाहिए बिल्कुल इसी तरह से एक स्त्री को भी स्त्री बने रहना चाहिए पर इसके साथ उसे पुरूष भी बनना होगा । इसका मतलब है कि पुरूष को महिलाओं जैसी भद्रता और विवेक को अपनाना चाहिए और महिलाओं को भी अपनी कायरता को छोड़कर बहादुर और साहसी बन जाना चाहिए । गाँधी के लिए विभेद करने वाली सांस्कृतिक और मनौवैज्ञानिक विशेषताओं को जिन्हें कि पारंपरिक रूप से विशेषत: एक लिंग के लिए निर्दिष्ट किया गया है जबकि दूसरे के लिए नहीं को एक संरचना के तौर पर देखा जाना चाहिए और इसलिये उन्हें परिवर्तन की दृष्टि से भी देखना चाहिए । उदाहरण के तौर पर 'साहस' एक मात्र पुरुषों की विशेषता नहीं है बल्कि यह एक सद्गुण है जो उस प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है जो स्वायत्त होना चाहता है । पुरूष व स्त्री दोनों निडर हो सकते हैं । पुरुष सोचता है कि वह निडर है लेकिन यह हमेशा सत्य नहीं होता, वैसे ही महिलायें भी सोचती हैं कि वे कमजोर हैं और स्वयं को वैसा कहलाने भी देती हैं लेकिन। यह भी सत्य नहीं है ।"

गाँधी के लिए, संरक्षकों जैसी उत्तरदायित्व वहनता, नैतिक श्रेष्ठता, सभ्य मानसिकता तथा समाज सेवा अपेक्षित गुण हैं जो कि स्त्री या पुरूष में से किसी एक ही के पास होना संभव नहीं । ऐसा करने के लिए स्त्री या पुरूष में से प्रत्येक को उन पारंपरिक विचारों को त्यागना होगा जो यह बताते हैं कि स्त्री या पुरूष होने का क्या अर्थ है । इस तरह विभाजन न केवल उन्नति व विकास में बाधक बनते हैं बल्कि लोगों को केवल उन्हीं के वर्ग के लिए तयशुदा कार्य करने के लिए विवश कर देते हैं । इसका यह भी निहितार्थ है कि स्त्री व पुरूष दोनों स्वयं को पूर्ण भी केवल तब ही महसूस करें जब वे वर्षो से उस वर्ग के लिए निर्धारित को करें । इस प्रकार 'वास्तविक पुरूष आक्रामक है पर स्नेहशील नहीं है, 'वास्तविक' स्त्री धैर्ययुक्त है पर नहीं है । ऐसा मानना, जो कि गाँधी के लिए निराशाजनक है, पुरूषों व महिलाओं द्वारा स्वयं को अनावश्यक तत्वो तक सीमित करने देना जो कि गाँधी के लिए निराशाजनक है, पुरूषों व महिलाओं द्वारा स्वयं को अनावश्यक तत्वों तक सीमित करने देना है और स्वयं को पतन के गर्त में धकेल देना है।

9.8 महिलायें व स्व रोजगार

यदि महिलाओं को साधन नहीं वरन् साध्य बनाया जाना है तो पुरूषों को जल्द ही स्वयं को उनका स्वामी नहीं वरन् साथी व सहकर्मी मानना होगा । फिर भी गाँधी पुरूषों से यह अपेक्षा नहीं करते कि वे स्वयं ही अपने आधिपत्यपूर्ण संबंधों को परिवर्तित कर देंगे । समानता

की तरफ पहला कदम महिलाओं को ही उठाना होगा । महिलाओं के लिए सरल तरीका यह है कि वे अपनी स्वायत्तता और स्वयं को एक पदार्थ माने जाने के विरुद्ध मांग उठाने की पहल करें । गाँधी ने आग्रह किया कि वे स्वयं को गुड़िया और दिल बहलाने की वस्तु बनाये जाने से इंकार कर दें तथा समान सेवाओं में समान माने जाने पर जोर दें । गाँधी के अनुसार वर्तमान में स्त्री-पुरूष संबंधों का उपचार पुरूषों के हाथों में जितना है, उससे ज्यादा महिलाओं के हाथों में है । यदि वे पुरूष की सहयोगी बनना चाहती हैं तो महिलाओं को पुरूषों के लिए, पति के लिए भी, खुद को सजाये जाने से इंकार कर देना चाहिए । यदि महिलाएँ समान होना चाहती हैं तो तीव्र विरोधों में भी स्वयं की पहचान स्थापित में कमजोर न बनें । ताकत पाशविक ताकत नहीं होती बल्कि 'नैतिक शक्ति होती है और इस मामले में गाँधी ने जोर दिया कि महिलाएँ निस्संदेह पुरूषों से उपर हैं । " गाँधी ने हिंदू धर्म ग्रन्थों रवे सात पवित्र महिलाओं के उदाहरण प्रस्तुत किये. जैसे सीता व द्रोपदी, जिन्होंने अपनी अमर प्रसिद्धि अपने पतियों को खुद के शारीरिक आकर्षण से प्रसन्न करके नहीं बल्कि स्वाधीन महिला व पत्नी के रूप में अपनी भूमिका निभाने से प्राप्त की ।

गाँधी ने पाया कि निस्संदेह पुरूषों पर महिलाओं की उपेक्षा व दुर्व्यवहार के लिए दोषारोपण किया जा सकता है और उन्हे बदलना होगा । पर महिलाओं को भी अपने अंधविश्वासों को छोड़ना होगा और स्वयं व अन्य महिलाओं के साथ हो रहे गलत कार्यो के प्रति जागरुक होना होगा । महिलाओं को संरचनात्मक सुधार के वास्तविक कार्य करने होंगे । ये कार्य हैं- महिला स्वतंत्रता, भारतीय स्वतंत्रता, अस्पृश्यता निवारण, गाँवों की आर्थिक दशा में सुधार, ग्रामीण जीवन का पुन: निर्माण व सुधार।

परिवर्तन का पहला प्रयास, ज्यादा से ज्यादा महिलाओं को यह दिखाने की दिशा में होना चाहिए कि उनकी स्थिति की बनावट क्या है और यह महिलाओं का प्राथमिक कार्य है कि वे वर्तमान स्त्री पुरूष संबंधों की संरचना को पहचानें और उसके विरुद्ध विद्रोह करें । गाँधी 'महिला कार्यकर्ता चाहते थे ' जो महिलाओं का मतदाता के रुप में नाम लिखवाये, उन्हें व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करें, उन्हें स्वतंत्र रुप से सोचना सिखायें उन्हें जाति के बंधनों से मुक्त करायें, ताकि उनमें परिवर्तन लाया जा सके । नारी-शक्ति की विमुक्ति में ये सब परिपूरक प्रयत्न होंगे । इन महिला कार्यकर्ताओं को अन्य महिलाओं को यह दिखाना होगा कि उनकी भूमिकाएँ न तो प्रकृति और न ही धर्मकथा द्वारा आदेशित हैं बल्कि ये तो कमजोर के उपर शक्तिशालियों द्वारा की गई संरचनाएँ हैं, और उन्हें यह जानने की आवश्यकता है कि वे अपना जीवन स्वयं संभाल सकती हैं । इसके लिए किसी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता नहीं है, हालांकि गाँधी जोर देते है कि महिलाओं के लिए शिक्षा अंतत: एक अनिवार्यता है । क्योंकि यह उन्हें अपनी स्वाधीनता बचाये रखने में सक्षम बनाती है, बुद्धिमत्तापूर्वक चयन करने की क्षमता देती है और अपने सशक्तीकरण के लिए कार्य करने को प्रेरित करती है । गाँधी सोचते थे कि नारी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए राज्य के कार्य पर्याप्त नहीं, हालांकि कभी-कभी आवश्यक हैं । प्राथमिक महत्व की बात तो यह है कि महिलाओं को स्वयं को एक सामाजिक ताकत के

रूप में उभारना होगा । दूसरे शब्दों में केवल महिलाएँ ही संगठित तरीके से आगे आने पर युगों से चली आ रही अपनी दुर्गति को दूर कर पाने में समर्थ हो पायेंगी ।

9.9 स्त्री-पुरूष संबंधों की पुनर्संरचना

हिन्द स्वराज में, बल्कि वस्तुत: गाँधी की अन्य सभी रचनाओं में स्पष्टत:, एक ही नहीं वरन् आपस में गुंथी हुई परियोजनाओं का एक पूरा समूह है जो विभिन्न भूमिकाओं में व्यक्ति के सम्मान व महत्व के लक्ष्य से जुड़ा हुआ है । ये योजनाएँ उन सब से संबंधित हैं जो परिधि पर हैं चाहे वे युद्ध पीड़ित हों, उपनिवेशवादी साम्राज्य के गाँधी स्वतंत्रता को समाज में स्थित मानते थे जिसे उनका मानना था कि केवल: राज्य द्वारा ही नहीं वरन् सामाजिक रीतियों व संस्थाओं द्वारा भी छीना जा सकता हैं । पूर्ण आर्थिक धार्मिक असमानता, औद्योगीकरण और बेरोजगारी, अस्पृश्यता, पितृसत्तात्मक, रूढ़ियाँ एवं विभिन्न अंधविश्वास इसके उदाहरण हैं । इन अक्षमताओं का मुकाबला करने के लिए गाँधी ने कदाचित् ही राज्य से यह अपेक्षा की हो कि वह बलपूर्वक स्वतंत्रता को स्थापित करे । इसका एक कारण यह है कि वे हमेशा शक्ति संकेन्द्रण के प्रति सशंकित थे जिसकी परिणति उनकी दृष्टि में, व्यक्तिगत स्वतंत्रता के हनन के रुप में होती है।

स्वतंत्रता, जैसा कि गाँधी ने उसे जाना, समानता व उत्तरदायित्व दोनों से घनिष्ठत: संबंधित है । भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि, संसाधनों, स्थिति व शक्ति वाले समाजों में लोगों के लिए यह जानना कठिन होता है कि वे किस तरह दूसरों को प्रभावित कर रहें हैं । केवल तब जब कि लोगों को पृथक करने भिन्नताऐं तुलनात्मक रूप से कम हों तब व्यक्ति दूसरों पर अपने कार्यो के प्रभाव को पहचान पायेंगे । इस स्थिति में स्वतंत्रता व उत्तरदायित्व संयुक्त हो सकेंगे।

गाँधी ने आजीवन संकल्प को इस पर्यवेक्षण के साथ व्यक्त किया, मेरा कार्य समाप्त हो जायेगा यदि मैं मानव परिवार से यह दृढ़ निश्चय करवाने में सफल हो जाऊँ कि प्रत्येक पुरूष या स्त्री चाहे वह शारीरिक रूप से कमजोर हो, अपने आत्मसम्मान और स्वतंत्रता की रक्षा करेगा ।

जब हम लैंगिक समानता के मुद्दे की तरफ मुड़ते हैं तो पाते हैं कि गाँधी ने बढ़ चढ़ कर महिला अधिकारों व लैगिक समानता का पक्ष पोषण किया है । इसी के साथ, गाँधी के लिंग भेद व विवाह से संबंधित तात्विक विचारों को छोड़ पाना असंभव है । बारीकी से जाँचने पर पता चलता है कि यह तात्विकता कई महत्वपूर्ण तरीकों से, अपने परम्परागत रुप से एकदम अलग हो जाती है । अधिकांश तत्ववादियों से भिन्न उन्होंनें प्रकृति व पर्यावरण दोनों पर विश्वास जताया केवल पूर्व पर ही नहीं।

उन्होंने विशेष रूप से जोर दिया कि एक महिला का भाग्य केवल घरेलू कामकाज से ही पूर्ण नहीं हो सकता । उन्होंने इस विचार को नकार दिया कि घरेलू कार्य महिलाओं का सारा समय ले लें । उन्होंने कहा, मेरे लिए महिलाओं की घरेलू दासता हमारे जंगलीपन का प्रतीक है । " गाँधी के अनुसार महिलाओं को भी समाज में प्रमुख स्थान मिलना चाहिए और पुरूषों की तरह महिलाओं को भी उनकी नैतिक विशेषताओं के आधार पर जाँचा जाना चाहिए न कि पूर्व निर्धारित शारीरिक रचना के आधार पर । इसके साथ उन्होंने लिंग-भेद व स्त्री पुरूष संबंधों की

सामान्य समझ पुन:निर्मित की । उनके जीवनदायी विचार परिवार की एकसूत्रता और महिलाओं की स्वायत्तता के संबद्ध हैं ।

उनका पुनर्संरचित परिवार वह जगह है जहाँ पिता एवं माता कर्तव्यों का बंटवारा करते हैं, जो उन्हें ऐसा कहने के लिए अग्रसर करता है कि, बच्चों की देखभाल करना एक संयुक्त जिम्मेदारी है, महिला एक माता है पर उसकी मातृवत कोमलता अपने बच्चों से परे भी विस्तृत होनी चाहिए और इसीलिए उसका कार्यक्षेत्र घर से परे भी विस्तृत होना चाहिए । " उन्होंने न सिर्फ पिता के कर्तव्यों को नये क्षेत्रों तक बढ़ाया, बल्कि इस पर भी जोर दिया कि महिलाओं को घरेलू अभिरुचियों से परे अपने जीवन को अधिक व्यापक समुदायों तक विस्तृत करना चाहिए ।

गाँधी अपनी योजना की कठिनाई को समझते थे । यह समाज में उन संस्थागत रीतियों से जुड़ी है जिनसे व्यक्ति की पहचान धनिष्ठत: संबद्ध होती है । प्रचलित व्यवस्थाओं को बनाये रखने में विद्यमान सांस्कृतिक व मनौवैज्ञानिक निवेश अतिप्रबल है पर, वे कारण बताते हुए कहते हैं।। अनुलंघनीय नहीं हैं । वह कारण जो गाँधी बताते हैं कि दृढ़निश्चयी महिलाएँ साहस पूर्वक, बिना पसीजे अपनी-अपनी स्वायत्तता की माँग पर डटी रहे ।

गाँधी ने कहा था, “ मैं महिलाओं की पूर्ण स्वतंत्रता की उत्कृष्ट इच्छा रखता हूँ । मैं बाल विवाह का तिरस्कार करता हूँ । एक बाल विधवा को देखकर थर्रा जाता हूँ और तब गुस्से से काँप जाता हूँ जब एक पति, जो अभी-अभी विधुर हुआ है निर्दय उदासीनता के साथ दूसरे विवाह के लिए रिश्ता तय करता है । मैं उन माता-पिता की आपराधिक उदासीनता पर शोकाकुल होता हूँ जो अपनी पुत्रियों को बिल्कुल अशिक्षित और अबोध रखते हैं और उनका पालन पोषण केवल किसी साधन संपन्न युवक से विवाह के उद्देश्य से करते हैं । सारे दुख और गुस्से के बावजूद भी मैं इस समस्या की कठिनाई को महसूस करता हूँ । महिलाओं को मताधिकार और एक समान कानूनी दर्जा मिलना चाहिए । लेकिन समस्या यहीं खत्म नहीं होती । बल्कि यह तो उस बिंदू से शुरू होती है जहाँ महिलाएँ राष्ट्रीय राजनीतिक बहस की शुरुआत प्रस्तावित करती है।

9.10 लिंग-भेद व परिवार के बारे में पुनर्विचार

महिलाओं की स्थिति के बारे में गाँधी की समालोचना के स्पष्ट पक्षों में से एक यह है कि महिलाएँ, प्रथमत: व प्रधानत: अपने सम्मान व अधिकारों के लिए दावा प्रस्तुत करें । इस आंदोलन में उन्होंने जिस तरीके से सहायता की वह परंपरागत स्त्री पुरूष संबंधों को स्वयं चुनौती देना था । ऐसा करने के लिए गाँधी पुराने ढर्रे से परे जाना चाहते थे । गाँधी के मस्तिष्क में दूसरे दो प्रकार थे । एक जो मिथकों से असंख्य समाजों में फैलता है और इस विचार से संबद्ध है कि कुछ व्यक्ति स्वायत्त कर्ता के रुप में कार्य करने में असमर्थ होते हैं (जाति, लिंग, वर्ग, नस्ल और समुदाय की वजह से) । दूसरा अपनी उत्पत्ति में अधिक आधुनिक है कि लैगिक अन्याय का समाधान महिलाओं को ज्यादा अधिकार देकर किया जा सकता है । इसका विरोध मुश्किल से ही किया जाता है पर गाँधी इसे अपूर्ण मानते हैं । यह स्थिति जिस चीज पर ध्यान नहीं देती है वह है परिवार । यहाँ इस पर ध्यान देना सहायक

होगा, जिस पर कि गाँधी जोर देते हैं, कि लैंगिक समानता की संकल्पना के किसी भी पुनर्निर्माण में परिवार को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए ।

पारंपरिक रूप से, पितृसत्तात्मक प्रतिमान से कार्य करते हुए, पुरूषों के द्वारा, परिवार को महिला उत्तरदायित्व मानकर, उसकी देखभाल महिलाओं को सौंप दी गई है जो पूर्ण स्वायत्तता की हकदार हैं । यहाँ पुनर्विचार की आवश्यकता है, परिवार की मूल्यवत्ता के विषय में नहीं बल्कि श्रम के विभाजन के संबंध में, जो कि परिवार की देखभाल करते हुए किया जाता है और सामाजिक रीतियों के संबंध में भी, जो इसे सुरक्षित या कमजोर बनाती हैं । आधुनिक युग में, परिवार बिखराव, व्यक्तित्व शून्यता और लाभ प्राप्ति की लालसा के लिए ज्यादा भेद्य हो गये हैं । इसकी पुरानी मोटी और संरक्षी दीवारें नए वाणिज्यिक नियमों से चूर-चूर हो गई है । और यह (ज्यादातर अनिच्छा से) बच्चों की शिक्षा की जिम्मेदारी जनसंचार के माध्यमों और जन समाज से बाँटने लगा है । महिला की पूर्ण स्वायत्तता के बारे में भी बात करना गाँधी के लिए परिवार की स्वायत्तता के बारे में भी बात करना है ।

गाँधी बार-बार उन बहुत से परंपरागत व आधुनिक दोनों तरीकों की तरफ संकेत करते हैं जो स्वायत्तता को नष्ट करते हैं और वे जोर देना चाहते हैं कि कोई भी समाधान, जो समानता की राह की बाधाओं को तोड़ता है, इसका भी ध्यान रखे कि समाज के सभी सदस्य अंतर बद्ध हैं । इस कारण से, वे चाहते थे कि पुरूष व महिला दोनों अपने स्वायत्तता संबंधी दावों को पहचानें जो लिंग-विभेद से ऊपर हों । वे पुरूष व महिला दोनों को यह भी बताना चाहते थे कि वे घर की देखरेख संबंधी पुनर्कृत श्रम विभाजन में परिवार की सुरक्षा का मार्ग देखें । नये श्रम विभाजन की कोई निश्चित रूपरेखा गाँधी प्रदान नहीं करते । बजाय इसके वे दलों के बीच एक संवाद आमंत्रित करते हैं और इसको भी वे रोकने को तैयार हैं यदि उनमें से कुछ दलों की स्वायत्तता पर ध्यान नहीं दिया जा रहा हो, विशेषकर जो सबसे कमजोर हो ।

गाँधी ने आवश्यक माना कि न केवल उन तरीकों और सामाजिक रीतियों की छानबीन जरुरी है जिन्होंने महिलाओं की स्वायत्तता को नष्ट किया है बल्कि इसकी भी जरूरत है कि किस तरह से महिलाओं के समानीकरण ने परिवार में बदलाव किया है । गाँधी के अनुसार नारी सशक्तीकरण में परिवार एक रुकावट की तरह कार्य नहीं कर सकता । उनके विचारों से यह शिक्षा मिलती है कि न केवल यह आवश्यक है कि समाज के सर्वाधिक कमजोर सदस्यों की जरूरतों पर ध्यान दिया जाए बल्कि किस तरह से उनका शारीरिक व नैतिक रूप से संरक्षण व पालन-पोषण किया जाए इस पर भी ध्यान दिया जाना नितांत महत्वपूर्ण है । इसलिए नारी सशक्तीकरण सम्बन्धी कोई भी इस तरह का विचार-विमर्श केवल स्त्री-पुरूष संबंधों तक ही सीमित न होकर उन हजारों रीतियों तक भी फैला होना चाहिए जो परिवार के मूल कार्यो में सहायता करती हैं । दूसरें शब्दों में, कोई भी नारी संबंधी गाँधीवादी बहस परिवार और नागरिक समाज संबंधी बहस भी होती है ।

9.11 सारांश

नारी पर गाँधी का अध्ययन न केवल गहन है वरन वह पूर्णत: मौलिक भी है । गाँधी को किसी भी पूर्व निर्धारित श्रेणी में नहीं रखा जा सकता चाहे वह श्रेणी उदारवादियों की हो, परंपरावादियों की या फिर तत्ववादियों की । कोई भी वाद या श्रेणी उन्हें तभी तक स्वीकार्य थी जब तक वह उनके नैतिक आध्यात्मिक ढाँचे से मेल खाती हो ।

परिवार और नारी सशक्तिकरण उनकी नजर में दो विरोधी नहीं बल्कि साथ चलने वाली प्रक्रियाएँ है । धर्म ग्रन्थों के अन्धानुकरण का विरोध उनकी विवेक प्रधानता को उजागर करता है । कानून का यद्यपि वे विरोध नहीं करते परन्तु उनका अधिक आग्रह एक जाग्रत नागरिक समाज पर रहता है, एक ऐसा समाज जो स्त्री-पुरूष के लिंग भेद से परे जाकर चेतना के स्तर पर व्यक्ति की गरिमा को स्वीकार करता है।

जहाँ तक नारी समस्याओं का प्रश्न है, गाँधी उसे अध्ययन की पृथक इकाई नहीं मानते वरन संपूर्ण सामाजिक धार्मिक ढाँचे और नैतिक मूल्यों के संदर्भ में उसे देखे जाने पर जोर देते हैं ।

9.12 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी किस सीमा तक नारी सम्बन्धी विचारों में पारंपरिक उदारवादियों से सहमत प्रतीत होते हैं?
2. तत्ववाद से क्या अभिप्राय है? गाँधी तत्ववाद की कसौटी पर कितने खरे उतरते हैं?
3. परिवार के प्रति गाँधी का दृष्टिकोण बताइये ।
4. अत्यधिक कमजोर स्थिति वाली स्त्रियों के संबंध में गाँधी क्या उपाय बताते है?
5. नारी संबंधी गाँधी दर्शन का समग्र मूल्यांकन कीजिये ।

9.13 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाँधी एम.के. विमेन्स् रोल इन सोसाइटी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद 1959
2. जोन्स, ई. स्टेनले, महात्मा गाँधी - एन इन्टरप्रिटेशन, हॉडर एंड स्टॉग्टन, लंदन, 1948
3. प्यारेलाल, महात्मा गाँधी द लास्ट फेज, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद 1956
4. आशीष, नंदी, ' 'आपरेशन एंड हूमन लिबरेशन : टुवर्ड्स ए पोस्ट गांधियन यूटोपिया, " इन पॉलिटिकल थॉट इन मॉडर्न इंडिया, संपादित थामस पेन्थम एंड केनेथ एल. उश, सेज, नई दिल्ली, 1986
5. हिंगोरानी, ए. टी., गाँधी फॉर द 21 स्ट सेंच्युरी खण्ड 9, भारतीय विद्या भवन, नई दिल्ली, 1999
6. किश्वार मधु पी. गाँधी एण्ड विमेन, मानुशी प्रकाशन, दिल्ली, 1966

इकाई - 10

अस्पृश्यता और गाँधी : विचार एवं कार्य

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 गाँधी चिन्तन एवं प्रयास
10.3 अस्पृश्यता का उद्भव एवं समाधान
10.4 दलितों की स्थिति में सुधार के प्रयास
10.5 हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन
10.6 जनमत जागत और सत्याग्रह
10.7 मंदिर प्रवेश
10.8 अस्पृश्यता निवारण हेतु आन्दोलन
10.9 उपवास और जनजागृति
10.10 पूना पैक्ट द्वारा पृथक निर्वाचन की समस्या का समाधान
10.11 सारांश
10.12 अभ्यास प्रश्न
10.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

10.0 उद्देश्य

यह इकाई महात्मा गाँधी के अस्पृश्यता सम्बन्धी विचार और कार्य पर प्रकाश डालती है । इसका उद्देश्य है कि -

- गाँधी के चिन्तन और कार्य को समझना ।
- अस्पृश्यता के उद्भव और हिन्दू समाज मे इसके आधार पर व्याप्त जातिगत भेदभाव को समझना ।
- अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए महात्मा गाँधी द्वारा किये गये संघर्ष को रेखांकित करना।
- अस्पृश्यता समाप्त करने के लिए प्रभावी प्रयास क्या हो सकते हैं ।
- अस्पृश्यता निवारण का कार्य केवल कानून निर्माण या सरकारी हस्तक्षेप से पूर्ण न होकर सामाजिक जागृति और लोगों के हृदय परिवर्तन से होगा ।

10.1 प्रस्तावना

महात्मा गाँधी अस्पृश्यता को सामाजिक कलंक तथा न्याय की स्थापना में बाधक मानते थे । उन्होंने अस्पृश्यता उन्मूलन को राजनीतिक स्वतंत्रता की तुलना में अधिक महत्व दिया । गाँधीजी के अनुसार अस्पृश्यता अनैतिक तथा भारतीय समाज पर एक बदनुमा दाग है जो मिथ्या अभिमान और स्वार्थ वृत्ति का सामाजिक रूप है ।

समाज के विभिन्न समुदायों में जीवन स्तर, आर्थिक स्थिति अथवा संस्कृति के प्रसार, नस्ल-रंगभेद आदि से उत्पन्न वर्गीय और विविधता 'सामाजिक असामनता के विस्तार के प्रभावी

कारक के रूप में प्रस्तुत है । किन्तु किसी व्यक्ति को उसके किसी जाति विशेष में जन्म लेने के कारण अस्पृश्य घोषित कर उसे समस्त मानवीय अधिकारों और सम्बन्धों से पूर्णतया विलग और बहिष्कृत करने की अमानवीय, अन्याय तथा अत्याचार पर आधारित छूआछूत प्रथा का एकमात्र उदाहरण भारतीय समाज है । संभवत: भारतीय समाज की मूल परम्पराओं की स्थापना के काल में इस प्रकार की किसी प्रथा का अस्तित्व नहीं था किन्तु कालान्तर में सृजित धर्मग्रंथों में इसके औचित्य की स्थापना ने इसे भारतीय समाज की मानसिकता, जीवन पद्वति तथा सामाजिक संरचना का अभिन्न अंग बना दिया।

समाज में विद्‌यमान समस्त असामनताओं को समाप्त कर सौहार्द्‌व मानवीय संबंधों पर आधारित समाज की स्थापना के लिए गाँधी सदैव प्रयासरत थे । वैचारिक और क्रियान्वित के स्तर पर अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए उनका अमूल्य योगदान रहा है ।

10.2 महात्मा गाँधी चिन्तन एवं प्रयास

भारतीय समाज में जन्म के आधार पर एक वर्ग के साथ इतना अमानवीय तथा क्रूर व्यवहार किया जाता था कि उन्हें स्पर्श करना या उनकी छाया पड़ना भी अपवित्रता का कारण माना जाता है । अत: गाँधी ने इस अमानवीय प्रथा के कारणों को समझने व समाप्त करने का प्रयास किया । अस्पृश्यता को पूर्ण रूप से समझने और समाधान निकालने के लिए गाँधी ने इसके उद्भव और प्रचलन के कारण और प्रकृति को सारगर्भित रूप में समझने का प्रयास किया ।

अस्पृश्यता की उत्पत्ति : अस्पृश्यता की उत्पत्ति को जानने के लिए गाँधी ने ऐतिहासिक ग्रंथों और धार्मिक ग्रंथों का गहनतम अध्ययन नही किया और ना ही इस संदर्भ में अपना कोई नया सिद्धान्त ही प्रतिपादित किया, अपितु दैनिक जीवन के अनुभव व समाज में होने वाले पारस्परिक व्यवहार व अन्त: क्रिया का निरीक्षण करके ही उन्होंने इस संदर्भ में अपने विचार-प्रस्तुत किए हैं, ' 'आरम्भ में अस्पृश्यता स्वास्थ्य संबंधी उपकारों का विज्ञान था और भारत के अलावा, दुनिया के हर क्षेत्र में आज भी उसका सही रूप है । ऐसा माना जाता है कि गन्दे व्यक्ति या वस्तु छूने के योग्य नहीं होते लेकिन जैसे ही उसकी गंदगी खत्म हो जाती है, वह वस्तु या व्यक्ति अछूते नहीं रह जाता अत: मेहतर भी तभी तक अछूत है जब तक कि सफाई कार्य करने के बाद स्वच्छ नहीं हो जाता है । "

गाँधी का मानना था कि अस्पृश्य माने जाने वाले वर्ग तन्मयता से समाज की स्वच्छता का कार्य करके समाज को स्वच्छ रखता है । जिस प्रकार एक मां अपने बच्चे की गंदगी को साफ करके उसके स्वास्थ्य की रक्षा करती है, उसी प्रकार एक सफाई का काम करने वाला व्यक्ति पूरे समाज की गंदगी साफ कर उसके स्वास्थ्य की रक्षा करता है । यदि ब्राह्मण, समाज की आत्मा को स्वच्छ रखने का काम करता है तो उपर्युक्त व्यक्ति समाज के शरीर को । लेकिन सफाई में संलग्न कर्मचारी उन सभी सेवाओं की नीव का निर्माण भी करता है ।

10.3 अस्पृश्यता का उद्भव एवं समाधान

गाँधी न तो इस मत से सहमत थे कि जाति-व्यवस्था अस्पृश्यता की उत्पत्ति का मूल कारण है और ना ही अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए जाति-व्यवस्था को समाप्त करने के

ही पक्षधर थे । उनके शब्दों में ' 'अस्पृश्यता की उत्पत्ति जाति-व्यवस्था से नहीं हुयी है बल्कि इसका उद्‌गम ऊँच नीच के भेद में है जो हिन्दुत्व में शनै-शनै विकसित हुआ है । यह निरन्तर इसे नष्ट कर रहा है । अत: अस्पृश्यता पर आक्रमण का अर्थ है - इस ऊँच-नीच की भावना पर आक्रमण । मैं इस अवधारणा में विश्वास नहीं करता कि जाति-व्यवस्था, वर्णाश्रम से भिन्न होने के बावजूद एक घृणित और पतित अन्धविश्वास हैं । इसकी अपनी सीमायें तथा कमजोरियाँ होने के बावजूद इसमें पापपूर्ण कुछ भी नहीं है - जैसे अस्पृश्यता । यदि अस्पृश्यता का जन्म-जाति व्यवस्था से हुआ है तो यह वैसा ही है जैसे मानवशरीर के किसी अंग का भद्दा विकास या फसल में मोथा लगना । जाति-व्यवस्था. को निम्न जातियों (अस्पृश्यता) के कारण नष्ट कर देना वैसा ही होगा जैसे शरीर में किसी भद्दे अंग के कारण उस पूरे शरीर को नष्ट कर देना या मोथे के कारण फसल को । यदि पूरी व्यवस्था को बचाना है तो इस असंयमित हिस्से (अस्पृश्यता) को समाप्त करना होगा । अस्पृश्यता ऊँच-नीच की भावना से विकसित हुयी है जो धीरे-धीरे हिन्दुत्व को विनाश की ओर ले जा रही है । " स्पष्ट है कि गाँधी अस्पृश्यता के लिए जाति-व्यवस्था को उत्तरदायी न मानकर ऊँच-नीच की भावना तथा इस वर्ग द्वारा किये जाने वाले सफाई के कार्य को अस्पृश्यता के जन्म व विकास का कारण मानते है।

गाँधी ने अस्पृश्यता की प्रकृति को भी समझाने का प्रयास किया है । उन्होंने इस समस्या को अतार्किक, अधार्मिक माना । उनका मानना था कि दलितों के अलावा भी समाज के कुछ व्यक्ति स्वच्छता का काम करते है, लेकिन इन्हें अस्पृष्य नहीं माना जाता अर्थात् इस समस्या का आधार तार्किक न होकर परम्परागत है । हर ब्राह्मण को ऊंचे दर्जे का और पवित्र समझा जाता है जबकि दलितों को अस्पृश्य । न तो सामान्य शिष्टाचार तथा न ही न्याय की दृष्टि से अस्पृश्यता का समर्थन करना संभव है । गाँधी ने अस्पृश्यता को विवेकरहित ही नहीं अपितु अमानवीय तथा हिन्दू-धर्म के प्रतिकूल भी बताया, क्योंकि इस व्यवस्था में समाज के एक बड़े वर्ग को समस्त मानवीय अधिकारों से न केवल वंचित रखा गया था अपितु रूढ़िवादी हिन्दुओं ने इसे हिन्दुशास्त्रों का हवाला देकर धर्मसम्मत सिद्ध करने का प्रयास किया और अस्पृश्यता निवारण को धर्म भ्रष्टता या पाप के रूप में अस्वीकार कर दिया था । अत: गाँधी ने इसके विपरित, अस्पृश्यता पालन की भर्त्सना की और कहा कि - ईश्वर की आखों में, जो कि सबका सृष्टिकर्ता है, सब प्राणी समान है । यदि वह मानव-मानव में भेद करता तो उसमें से एक हाथी के समान तथा दूसरी चीटी के आकार का दिखाई देता लेकिन उसने सभी मानवों की एक समान संरचना की है । " उन्होंने -यह माना कि यह अन्याय की पराकाष्ठा है कि भारतीय समाज के सर्वाधिक उपयोगी सेवक - दलितों को स्वच्छता का काम करने के कारण अस्पृश्य तथा निम्न जाति का समझते है ।

इस अमानवीय प्रथा के पालन के लिए हिन्दुओं की आलोचना में उनकी पीड़ा छुपी हुयी थी, लेकिन उन्होंने इसके लिए हिन्दुओं पर कटु व्यंग्य करते हुये कहा है कि ' 'हम स्वराज्य की स्थापना के लिए अधीर है लेकिन अपने सहधार्मियों के पांचवे हिस्से के साथ बदतर व्यवहार करते हैं । " उन्होंने गीता का उदाहरण देते हुए अस्पृश्यता को हिन्दु धर्म के प्रतिकुल सिद्ध किया ताकि रूढ़िवादी अपने मानसिक जंजाल में से निकल कर गाँधी के प्रयासों को सफल बनाने

में सहयोग दें । उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा, ' गीता में भगवान कृष्ण द्वारा बताये गये समानता के सिद्धान्त में, मैं विश्वास करता हूँ । गीता हमें यह शिक्षा देती है कि चारों जातियों (वर्णों) के साथ समानता के आधार पर व्यवहार किया जाना चाहिए।"

दलितों के प्रति गाँधी की केवल शाब्दिक सहानुभूति नहीं थी । उन्होंने एक ओर अस्पृश्यता का विरोध किया, वहीं दूसरी ओर इसे समाप्त करने के उपाय भी सुझाये । चूंकि गाँधी साध्य-साधन की पवित्रता तथा सत्य-अहिंसा में अद्य आस्था रखते थे अत: स्वाभाविक रूप से अस्पृश्यता समाप्ति के साधन भी उपर्युक्त सिद्धान्तों की सीमा में ही निर्देशित किये गये । इस हेतु उन्होंने दोहरे सुधार की पेशकश की - एक ओर दलितों की स्थिति में सुधार और दूसरी और सवर्ण हिन्दुओं का हृदय-परिवर्तन।

10.4 दलितों की स्थिति में सुधार

उनका मानना थ कि दलितों की सामाजिक, शैक्षणिक आर्थिक स्थिति में सुधार किये जाये तो वे स्वयं जागत होंगे, स्वच्छ रहेंगे तथा अपनी दीनता के लिए स्वयं को दोषी नहीं मानेगे । लेकिन प्रश्न उठता है कि यह काम कौन करें? गाँधी के अनुसार अस्पृश्यता पर सभी दिशाओं से आक्रमण करने वाला एक ठोस रचनात्मक कार्यक्रम होना चाहिए । इस काम के लिए हजारों स्त्री-पुरूषों, लड़के-लड़कियों की समग्र ऊर्जा की आवश्यकता है जो कि श्रेष्ठ धार्मिक प्रेरणा से प्रेरित हो । ऐसे दलित सेवकों को अपना पूरा ध्यान दलितों के लिए निम्नलिखित कार्य में लगाना चाहिए :

दलितों को स्वास्थ्य तथा स्वच्छता की शिक्षा व विकास, अस्वच्छ व्यवसायों में उन्नत विधियों का प्रयोग, गौ-मास तथा अन्य मृत पशुओं के मांस भक्षण का त्याग, मादक द्रव्यों के सेवन का परित्याग, दलितों को इस बात के लिए प्रेरित करना कि जहाँ उपलब्ध हों. वे अपने बच्चों को विद्यालय भेजें तथा स्वयं माता-पिता को रात्रि विद्यालय में बुलाना । स्वयं कार्यकत्ताओं के मध्य छूआछूत का परित्याग, इत्यादि ।

गाँधीजी का मानना था कि यदि दलितों की सामाजिक तथा शैक्षणिक स्थिति में सुधार किया जाय तो वे अपनी स्थिति के प्रति स्वयं जागत हो जायेंगे तथा उनके मन से सवर्ण हिन्दुओं का भय समाप्त हो जायेगा । लेकिन भय समाप्त करके वे दलितों को हिन्दुओं के विरूद्ध खुले संघर्ष के लिए तैयार नहीं कर रहे थे, अपितु उन्हें यह आभास दिलाना चाहते हैं कि वे समाज के सबसे निम्न व पतित लोग न होकर महान् समाज सेवक हैं जो पूरे समाज की स्वच्छता के लिए अपने कर्त्तव्य से कभी विमुख नहीं होते । दलितों को सम्बोधित करते हुए गाँधी ने कहा ' 'तुम्हें आभास होना चाहिये कि तुम हिन्दू समाज को स्वच्छ कर रहे हो अत: स्वयं अपने जीवन को भी स्वच्छ रखो । हिन्दू स्वभाव से पापी नहीं है, वे अज्ञान में डूबे हुए है । छूआछूत इसी वर्ष समाप्त हो जानी चाहिए । मेरी दो सर्वाधिक प्रबल इच्छायें हैं - अछूतों की मुक्ति एवं गोरक्षा । जब ये दोनों इच्छायें पूर्ण हो जायेंगी, स्वराज्य आ जायेगा तथा इसी में मेरा मोक्ष भी है।"

इस प्रकार गाँधीजी अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए व्यग्र थे, लेकिन लक्ष्य पूरा होने से बहुत दूर था । अहिंसा में आस्था के कारण गाँधी का मानना था कि ' 'यद्यपि सवर्ण हिन्दुओं ने सार्वजनिक स्थानों - कुओं, मंदिर, विद्यालय, यहाँ तक कि सडकों के प्रयोग को भी दलितों के लिए प्रतिबिन्धित कर रखा था लेकिन इन मानवीय अधिकारों को सवर्णों से बलात् छीना नहीं जा सकता है । अत: दलितों के लिए अलग कुएं खोदकर, पाठशालायें खोलकर सवर्णों को उनके उपयोग के लिए आमंत्रित कर सकते हैं । संभव है ऐसा करने पर दलितों का सामाजिक बहिष्कार किया जाय लेकिन हमें यह देखना होगा कि ऐसी स्थिति में उन्हें अन्यत्र रोजगार मिल जाय । हमें हरिजनों को यह शिक्षा देनी होगी कि वे दृढ़ता पूर्वक तथा अहिंसा पूर्वक रहना सीखें और सवर्णों को नम्रता पूर्वक याद दिलाते रहें कि अन्याय सर्वदा कायम नहीं रहता।"

गाँधी मानते थे कि दलितों की दुर्दशा के लिए आर्थिक कारण भी उत्तरदायी थे । यहां तक कि दलितों जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी पर्याप्त रूप से नहीं कर सकते थे । उनकी आजीविका का एकमात्र साधन समाज की स्वच्छता तथा चमड़े का काम था । अन्य व्यवसाय अपनाने पर प्रतिबन्ध था । अत: ऐसी स्थिति में यदि दलित सवर्ण हिन्दुओं की इच्छा के खिलाफ, मानवीय अधिकारों की प्राप्ति के लिए कदम उठाते तो सवर्ण हिन्दु उनका सामाजिक बहिष्कार करते जिसके परिणामस्वरूप उनकी स्थिति और शोचनीय हो जाती । अत: जहाँ एक ओर उन्होंने दलितों को सवर्णों के प्रति नम्रता का व्यवहार करने की बात की, वहीं दूसरी ओर खादी को आर्थिक सहायता के रूप में पेश किया । उनके अनुसार खादी दलितों के जीवन का आधार है । यह दलितों सहित गरीबों के लिए सहायक है क्योंकि अन्यों के लिए और भी कई व्यवसाय सुलभ है, लेकिन दलितों को नहीं । दलितों की दयनीय स्थिति के बारे में विचार व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा, "............ उन्हें सार्वजनिक सड़के, विद्यालय, अस्पताल, कुंए, पार्क आदि का उपयोग करने की स्वतंत्रता नहीं । राह में चलते समय निश्चित दूरी रखने के नियम का पालन न करना उसका अपराध माना जाता है । समाज मै बहिष्कृत कर गाँव व शहर के सबसे बुरे स्थान पर रखा जाता है, जहां व्यवहारिक रूप से ही वे किसी प्रकार की सामाजिक सुविधा प्राप्त नहीं कर सकते । सवर्ण हिन्दू डॉक्टर तथा वकील उनकी सेवा नहीं करते उनके धार्मिक कार्यक्रम ब्राह्मण सम्पन्न नहीं करते । आश्चर्य की बात है कि इस सब के बावजूद वे अपना अस्तित्व कायम रखते हुए सम्प्रदाय में ही बने हुए हैं।"

यही नहीं गाँधी को दलितों की उपर्युक्त दुर्दशा के बावजूद सहनशीलता की पराकाष्ठा मानवीय क्षमता से बाहर दिखाई दी । इसीलिए गाँधी ने दलितों की दुर्दशा को देखने के बाद यहाँ तक कह दिया कि ' 'उनका इस हद तक दमन किया गया है कि वे सब अपने आताताईयों के विरूद्ध विद्रोह के लिए भी खड़े हो सकते है । " इसीलिए गाँधी ने दलितों की स्थिति में सुधार के लिए और हिन्दुत्व के सिर से अस्पृश्यता का दाग मिटाने के लिए दलित सेवकों को, अपना सब कुछ उनकी सेवा में त्याग देने के आहवान किया है जैसे - पारिवारिक सम्बन्ध, सामाजिक लाभ और यहां तक कि स्वयं जीवन का भी । दलित को भूखों मारने के स्थान पर स्वयं भूखे मरना तथा यह काम किसी राजनीतिक लक्ष्य के लिए नही अपितु हिन्दुत्व को

जीवित तथा शुद्ध रखने के लिए करना भी ऐसे प्रयासों मे शामिल किए गए । गाँधी जानते थे कि दलितों की इस दुर्दशा से मुक्ति के लिए इसी प्रकार के आत्म त्याग की आवश्यकता है । ऐसे कार्यकर्त्ताओं के संगठन के लिए गाँधी ने 1932 के पूना पैक्ट के पश्चात् ' 'हरिजन सेवक संघ ' की स्थापना की थी जो दलितों की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्थिति में उन्नति के लिए समर्पित होकर काम करें।

10.5 हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन

गाँधी की इस अवधारणा में दृढ़ आस्था और विश्वास था कि अस्पृश्यता निवारण सहित समाज सुधार का कोई भी कार्य शक्ति के आधार पर सफल नहीं हो सकता और ना ही केवल कानून से समाज सुधारों संभव है । जनता के विचारों को तथा हृदय को परिवर्तित करके ही ऐसा किया जा सकता है । गाँधी के अनुसार अस्पृश्यता कानून की शक्ति से भी समाप्त नहीं की जा सकती । यह तभी समाप्त की जा सकती है जबकि बहुसंख्यक हिन्दू महसूस करें कि यह उनके. लिए शर्मनाक तथा ईश्वर व मानवता के प्रति अपराध है । अन्य शब्दों में, अस्पृश्यता निवारण हिन्दुओं के हृदय परिवर्तन तथा शुद्धिकरण की प्रक्रिया है । कानून की सहायता तभी ली जा सकती है जबकि कानून सुधारों की प्रगति को रोकता हो या उसमें बाधा डालता हो जैसे - मंदिर के संरक्षकों तथा मंदिर जाने वाली जनता की इच्छा के बावजूद कानून किसी मंदिर विशेष को खोलने के विरूद्ध हो ।

इसी प्रकार शक्ति द्वारा अस्पृश्यता निवारण के संदर्भ में उन्होंने कहा, ' 'कुछ अस्पृश्यों का कहना है कि यदि हिन्दुओं ने उनके प्रति व्यवहार में परिवर्तन नहीं किया तो वे ताकत का सहारा लेंगे । क्या अस्पृश्यता ताकत से मिटाई जा सकती है? क्या इन साधनों से अस्पृश्यों की प्रगति हो सकती है? केवल एक रास्ता है, जिसके माध्यम से मैं और तुम कट्टर हिन्दुओं को उनकी हठधर्मिता से विमुख कर सकते हैं और वह रास्ता है - धैर्यपूर्ण, तर्क-वितर्क तथा उचित व्यवहार, जहाँ तक सवर्ण हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन ना हो, मैं आपको धैर्य बनाये रखने को कहता हूँ ।"

अस्पृश्यता निवारण को वे स्वराज्य के समान ही महत्वपूर्ण मुद्दा मानते थे तथा दलितों को विश्वास दिलाना चाहते थे कि उनके हृदय में दलितों के प्रति संवेदना है । लेकिन वे इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सत्य और अहिंसा को ही उचित साधन मानते थे । वे मानते थे कि नाराज होकर बल पूर्वक हृदय परिवर्तन नहीं करवाया जा सकता, प्रेम से ही ऐसा किया जा सकता है । गाँधी अस्पृश्यता निवारण को सवर्ण हिन्दुओं के लिए प्रायश्चित का काम मानते थे क्योंकि सदियों से सवर्ण हिन्दुओं ने अपने सहधर्मियों के प्रति अमानवीय व्यवहार किया है । गाँधी ने उन जड़ों को टटोलने की कोशिश की जिसके आधार पर सवर्ण हिन्दुओं ने अस्पृश्यता को अपने जीवन का अभिन्न अंग बना रखा था तथा अस्पृश्यता का विरोध करने वाले व्यक्ति को धर्म तथा स्वयं अपना ही शत्रु समझते थे । गाँधी के शब्दों में, ' 'कट्टरपंथी हिन्दुओं का विश्वास है कि अस्पृश्यता शास्त्र सम्मत है और यदि इसे समाप्त कर दिया गया तो हिन्दु धर्म पर भारी संकट आ जायेगा । अत: हरिजनों के मंदिर प्रवेश के लिए सवर्णों को बाध्य करने से उनका हृदय परिवर्तित नहीं हो सकता बल्कि इस हेतु उनके विश्वास को बदला जाय कि मंदिर

प्रवेश निषेध अनुचित है । यह हृदय परिवर्तन के द्वारा ही संभव है और हृदय परिवर्तन उनसे अपील करके जैसे - प्रार्थनायें, उपवास, स्वयं आत्म पीडन सहकर ही किया जा सकता है । ऐसे सुधारक को मृत्युपर्यन्त उपवास के लिए तैयार रहना चाहिए।"

हृदय परिवर्तन की अवधारणा की सफलता को सिद्ध करने के लिए ही गाँधी ने अपने अस्पृश्यता विरोधी भाषणों के प्रभाव को इन शब्दों में व्यक्त किया है ' 'हिन्दुस्तान के हर भाग में सैकड़ों छोटी-मोटी सभाओं में कुछ अपवादों को छोड़कर अस्पृश्यता के विरूद्ध मेरी प्रस्तुति का कोई विरोध नहीं हुआ। भीड़ की भीड़ ने प्रस्ताव पारित करके छुआछूत का तिरस्कार किया तथा ईश्वर को साक्षी मानकर शपथ ली कि वह उन्हें अस्पृश्यता को समाप्त करने के लिए की गई प्रतिज्ञा को पूरा करने की शक्ति दे।"

जब 1937 में चुनावों के बाद प्रान्तों में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल बने तो गाँधी ने उम्मीद की कि कांग्रेस का आधार जनमत होने के कारण अस्पृश्यता के लिए बेहतर काम कर सकती है । उन्होंने कहा कि ' 'अस्पृश्यता जैसे कुप्रथा, जो धर्म के नाम पर जनता की रीढ़ की हड्डी बन गई है, उसे शक्ति के बल पर नहीं मिटाया जा सकता । कांग्रेस ने जनशक्ति के आधार पर अपने आप को स्थापित किया है । आशा है कांग्रेस मंत्री जनमत को शिक्षित करके अपनी प्रगति के कदमों को बढ़ाने के लिए जन समर्थन प्राप्त करेंगे जिसके परिणाम से कांग्रेसी मंत्रिमण्डल वाले प्रान्तों में हरिजन सम्बन्धी सुधार कार्यो को प्रेरणा मिलेगी और इसके खिलाफ खड़ी ताकतें स्वत: समाप्त हो जायेंगी । "

इस प्रकार गाँधी ने अस्पृश्यता निवारण के लिए दोहरे सुधार कार्यक्रम का विचार रखा । जहाँ अपने विरूद्ध हिंसा का खतरा न हो, वहां दलितों को अपने कानूनी अधिकारों का प्रयोग' करना चाहिए और जहां जरूरत हो, न्यायलय की शरण लेनी चाहिए । दूसरी और दलित सेवकों को सवर्णों में अपना आन्दोलन जारी रखना चाहिए और मात्र वैधानिक अधिकारों तक ही नहीं रूकना चाहिए । अस्पृश्यता निवारण दोहरी शिक्षा का काम है - एक और सवर्णों की और दूसरी और दलितों की । उपदेश तथा उदाहरण द्वारा सवर्णों को धैर्य पूर्वक यह सिखाना होगा छूआछूत ईश्वर व मानवता के प्रति अपराध है । दलितों को यह शिक्षा देनी होगी कि उन्हें निडर होकर अपने मध्य में अस्पृश्यता समाप्त कर देनी चाहिए।

तत्कालीन समाज सुधारकों के विपरित गाँधी कानून को समाज का साधन नही मानते थे लेकिन वे यह जानकर आश्चर्य चकित रह गये कि भारत में अंग्रेजी न्यायालयों ने अस्पृश्यता को इस हद तक मान्यता दे रखी थी कि दलितों द्वारा किये गये कुछ काम तो ब्रिटिश भारतीय दण्ड संहिता के अंतर्गत अपराध की श्रेणी में आते थे, जैसे - किसी हिन्दू मंदिर में दलितों का प्रवेश भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत ' दण्डनीय अपराध था अत: मंदिर प्रवेश संबंधी आन्दोलन से पूर्व वे इस विधान को समाप्त करना चाहते थे । इसी उद्देश्य से श्री रंगा अय्यर ने केन्द्रीय विधायिका में विधेयक प्रस्तुत किया । लेकिन यह विधेयक कांग्रेसी समर्थन के अभाव में गिर गया।

सवर्ण हिन्दुओं द्वारा दलितों के नाम से छूआछूत किये जाने वाले अमानवीय अत्याचारों से मुक्ति पाने के लिए मुस्लिम शासन के काल से ही इन लोगों द्वारा धर्म परिवर्तन की परम्परा रही है । ब्रिटिश काल में भी ईसाई धर्म प्रचारकों ने इन्हें समानता की स्थिति प्रदान

करने का लालच देकर धर्म स्वीकार करने के लिए प्रसार प्रसार आरम्भ किया । गाँधी ने ऐसे धर्म परिवर्तन करने के द्वारा समस्या का वास्तविक समाधान नहीं माना।

वस्तुत: गाँधी जानते थे कि सभी धर्म के समाजों में ऊंच नीच की भावना का संक्रामक रोग लग गया है अत: दलितों को यदि हिन्दू समाज में रहते हुए न्याय नहीं मिल सकता तो अन्य किसी समाज में भी नहीं मिल सकता क्योंकि अन्य धर्म के प्रचारकों ने धर्म परिवर्तन करवाने के लिए दुकान तो लगा रखी है पर उनके पास ऐसा कोई विशेष आध्यात्मिक गुण नहीं जो कि दलितों से उन्हें पृथक दर्शाता हो । गाँधी ने धर्म परिवर्तन का इस आधार पर विरोध किया कि धर्म रोजमर्रा के जीवन में अदला बदली की वस्तु नहीं है।

धर्म परिवर्तन के प्रश्न पर गाँधी ने दोहरी नीति अपनायी । एक ओर दलितों को यह समझाने का प्रयास किया कि न्याय की प्राप्ति के लिए धर्म परिवर्तन उपयुक्त उपाय नहीं है क्योंकि दुनिया में जिस किसी धर्म को वे स्वीकार करेंगे, आजीवन अपनी मूल पहचान को खत्म नहीं कर सकते । अत: बुद्धिमानी इसी में है कि वे अपने पूर्वजों के धर्म में ही बने रहे और न्याय प्राप्त करने का प्रयास करें । दूसरी ओर उन्होंने सवर्णों को इस बात के लिए दोषी ठहराया कि उनके द्वारा धर्म परिवर्तन दलितों पर थोपी गयी अमानवीय निर्योग्यताओं के कारण ही दलित सामुहिक रूप से धर्म परिवर्तन की मानसिकता बना चुके हैं । उन्होंने कहा ' 'हिन्दू समाज अग्नि परीक्षा के दौर से गुजर रहा है । दलितों के व्यक्तिगत या सामूहिक धर्म परिवर्तन से हिन्दू धर्म नष्ट नहीं होगा बल्कि तथाकथित सवर्ण हिन्दुओं द्वारा हरिजनों को मौलिक न्याय से वंचित रखने के पापपूर्ण निषेधों से नष्ट होगा । इसलिए धर्म परिवर्तन की हर धमकी सवर्ण हिन्दुओं को इस बात की चेतावनी है कि यदि वे समय पर सचेत नहीं हुए तो बहुत देर हो चुकी होगी।"

अस्पृश्यता निवारण के लिए गाँधी ने न तो यह स्वीकार किया कि धर्म परिवर्तन मुक्ति का साधन है और ना ही यह कि हिन्दू समाज में विद्यमान अस्पृश्यता सहित सभी बुराईयों को समाप्त करने के लिए समाज सुधार का काम गैर हिन्दू करें । उनके मतानुसार अस्पृश्यता का पाप हिन्दुओं द्वारा किया गया है अत: उन्हें पश्चाताप, शुद्धिकरण तथा दण्ड पाकर अपने दलित बिन्दुओं से ऋणमुक्त हो जाना चाहिए । दूसरे, जहाँ एक सवर्ण हिन्दू के मन में दलितों के प्रति संवेदना व करूणा, प्रेम करोड़ों सवर्णों के हृदय को द्रवित कर देगा, वहां यदि गैर हिन्दू ऐसा करेगा तो हिन्दुओं पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा । गैर हिन्दू के सद्भावपूर्ण तथा परोपकारी प्रयासों से हिन्दुओं की आँखें नहीं खुलेंगी क्योंकि ये प्रयास हिन्दुओं में अपराध बोध पैदा नहीं कर सकते । इसके विपरीत, बाहरी हस्तक्षेप हिन्दु अस्पृश्यता की और दृढ़ता से कायम रखेंगे । अत: सभी गम्भीर व प्रभावी प्रयास स्वयं हिन्दू समाज में से ही किये जाने चाहिए।

वस्तुत: गाँधी अस्पृश्यता को एक धार्मिक समस्या मानते थे तथा इसके पालन को पाप । अत: उनका कहना था कि अस्पृश्यता निवारण का काम न तो दलितों द्वारा किया जाए और ना ही गैर हिन्दुओं द्वारा, अपितु यह कार्य अपने पापों के प्रायश्चित के रूप में सवर्ण हिन्दुओं को करना चाहिए।

10.6 जाग्रत जनमत और सत्याग्रह

समाज सुधार का आधार जनमत होता है और जिस समाज के लोग अज्ञान के अंधकार में डूबे हों. कुरीतियों तथा अंधविश्वासों से घिरे हों, गाँधी के अनुसार, ऐसे समाज के सुधार के लिए कानून निरर्थक है । जब तक जनता की सहमति न हो, सुधार के क्षेत्र में सरकार नेतृत्व या पहल नहीं कर सकती । क्योंकि सरकार स्वभावत: शासितों की इच्छाओं की व्याख्या कर उन्हें क्रियान्वित करती है । अत: यदि जनमत सुधारों के विरूद्ध या उदासीन हो तो सरकार कानून नहीं बना सकती । यहां तक कि, एक घोर निरंकुश सरकार भी अपनी प्रजा पर ऐसे सुधार नहीं थोप सकती जिन्हें प्रजा आत्मसात ना करे । यदि सरकार कानून बना भी ले तो ऐसे कानूनों का पालन भी नहीं किया जाता।

सामाजिक कुरीतियों के विरूद्ध गाँधी के अनुसार, सत्याग्रह एक कारगर उपाय हो सकता है लेकिन सत्याग्रह द्वारा लोगों को समाज सुधार के लिए सहमत करने वाले सत्याग्रही में निम्न गुण होने चाहिए - आत्मानुशासनशीत, आत्मनियंत्रक आत्मशुद्धि तथा समाज में उसकी सुप्रतिष्ठा । फिर सर्वप्रथम जिस कुप्रथा को वह समाप्त करना चाहता है, उसके विरूद्ध जनमत जाग्रत करना चाहिए और जब पर्याप्त रूप से जनमत जागरूक हो जाय तो बड़े से बड़ा व्यक्ति भी न तो बुराई को अपनाने का और ना ही समर्थन देने का साहस करेगा । एक जाग्रत तथा प्रबुद्ध जनमत सत्याग्रही का सबसे शक्तिशाली हथियार है । इस प्रकार, गाँधी अस्पृश्यता निवारण सहित सभी सामाजिक बुराईयों को समाप्त करने के लिए जनता की ऐच्छिक स्वीकृति को अनिवार्य मानते थे । बल के रूप में केवल सत्याग्रह बल का प्रयोग करने के पक्ष में थे क्योंकि गाँधी के अनुसार साध्य-साधन की पवित्रता तथा सत्य अहिंसा का पालन करते हुए ' 'सत्याग्रह ' ही सर्वाधिक उपयुक्त साधन है । यही प्रतिवादी का हथियार भी है।

10.7 मंदिर प्रवेश

भारतीय समाज में दलितों को केवल सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक रुप से ही बहिष्कृत नहीं किया गया अपितु धार्मिक क्षेत्र में तो उन्हें अधर्मी कहकर समस्त धार्मिक अधिकारों और स्वतंत्रता से वंचित कर दिया गया । उन्हें न तो हिन्दू धर्म ग्रंथों के अध्ययन का अधिकार था और ना ही 'मंदिर ' नामक धार्मिक इमारतों में प्रवेश का । गाँधी ने धार्मिक क्षेत्र में सबको समानता व न्याय दिलाने के लिए मंदिर प्रवेश संबंधी निषेधों को अधार्मिक ठहराते हुए सवर्ण हिन्दुओं से अपेक्षा की कि वे धर्म की रक्षा के नाम पर अपने सहधर्मियों के प्रति अमानवीय तथा अधार्मिक प्रतिबन्धों को समाप्त कर दें । किसी भी दलित व्यक्ति को मंदिर में जाने से रोकना धर्म तथा मानवता का अपमान है । गाँधीजी का मानना था कि यदि धार्मिक समानता स्थापना की जाए तो आर्थिक तथा राजनीतिक उन्नति शीघ्रता से होगी । गाँधी केवल विद्यमान मंदिरों को खोलने के पक्ष में नहीं थे अपितु मानते थे कि दलितों सहित सभी हिन्दुओं के लिए नये मंदिर खोले जायें तथा इन मंदिरों में किसी के साथ भी किसी प्रकार का भेदभाव न हो, इसका ध्यान रखा जाय ।

रूढ़िवादी तथा कट्टरपंथी हिन्दुओं द्वारा इस मत का विरोध किये जाने से वे अनभिज्ञ नहीं थे । अत: उन्होंने दलित-सेवकों को मार्ग निर्देश दिया कि वे हिन्दुओं का हृदय परिवर्तन करने के लिए सत्याग्रह का सहारा लें और आत्मपीड़न द्वारा अपने विरोधी का हृदय परिवर्तन करने का प्रयास करें । इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गाँधी की विचारधारा के अनुरूप प्रसिद्ध ' वायकोम सत्याग्रह ' किया गया था । गाँधी ने दलित सेवकों को संबोधित करते हुए कहा था कि यदि वे मंदिर जाने के आदी हों तो अपने साथ दलितों को मंदिर में ले जायें और यदि अपने दलित साथियों के साथ उन्हें भी मंदिर में न जाने दिया जाय, और सेवकों की यह दृढ़ आस्था हो कि अस्पृश्यता अनुचित है तो वे उस मंदिर को उसी प्रकार त्याग दे जैसे हम बिच्छू या आग को छोड़ते है।

इस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में समानता की स्थापना के लिए गाँधी ने दलितों द्वारा मंदिर प्रवेश की मांग की तथा हिन्दू धर्म को जीवित रखने के लिए धर्म के नाम पर इस अधर्म को समाप्त करने की बात की।

जहां तत्कालीन समाज सुधारकों ने समस्त मानवीय असमानताओं की रक्षक जाति-व्यवस्था को अस्वीकार कर इसे समाप्त करने के लिए अन्तर्जातीय विवाह तथा भोज का समर्थन किया वहां गाँधी ने इन दोनों प्रथाओं को व्यक्तिगत रूचि का विषय बता कर इन्हें अस्पृश्यता निवारण के कार्यक्रम में सम्मिलित नहीं किया । इससे भी आगे, अन्तर्जातीय विवाह की आलोचना की और कहा कि एक ही जाति समूह में विवाह करने से एक हद तक आत्म-संयम का अभ्यास होता है क्योंकि व्यक्ति को अपना जीवन साथी एक निश्चित समूह के अन्तर्गत ही चुनना होता है । लेकिन अन्तर्जातीय विवाह और भोज पर प्रतिबन्ध को न तो वे व्यक्ति के ऊपर बलात् थोपना चाहते थे और ना ही किसी को उसकी इच्छा के विरूद्ध अन्तर्जातीय विवाह या भोज के लिए बाध्य करना चाहते थे । लेकिन अस्पृश्यता की भावना के आधार पर यदि कोई व्यक्ति प्रतिबन्ध लगाये तो इसे उन्होंने अनुचित माना।

10.8 अस्पृश्यता निवारण हेतु आन्दोलन

गाँधी ने अस्पृश्यता की केवल आलोचना ही नहीं की अपितु समाप्त करने के लिए सक्रिय रूप से प्रयास भी किये । पीड़ित मानवता के दुःख दर्द को महसूस करते हुए न्याय की प्राप्ति के लिए उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में ही संघर्ष आरम्भ कर दिया । रंग तथा नस्ल के भेदभाव के विरूद्ध आन्दोलन में सफलता के बाद वे जब 1920 में भारतीय राजनीतिक रंगमंच पर अवतीर्ण हुए तो उन्होंने भारत में पीड़ित मानवता के विरूद्ध तुरन्त आवाज उठायी । गाँधी के नेतृत्व में 1922 के कांग्रेस के बारदोली कार्यक्रम में ' 'अस्पृश्यता निवारण के मुद्दे को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया । दलितों की उन्नति के लिए सक्रिय कार्यक्रम की नीति निर्धारित करने के उद्देश्य से एक पृथक समिति का गठन भी किया गया जिसे अपने कार्य के लिए तिलक स्वराज फण्ड में से 50 हजार रूपये भी दिये गये।

यंग इंडिया नामक पत्र के माध्यम से इस कुप्रथा के विरूद्ध संघर्ष को उन्होंने जन-जन तक पहुंचाने का प्रयास किया । राजनीतिक कार्यो के बाद, जब भी उन्हें समय मिला उन्होंने अपना समय रचनात्मक कार्यक्रम में लगाया जिसमें अस्पृश्यता निवारण को महत्वपूर्ण स्थान था

। उन्होंने हिन्दुस्तान के हर कोने में सम्बोन्धित की गई सभाओं में अस्पृश्यता निवारण का महत्वपूर्ण स्थान था । उन्होंने हिन्दुस्तान के हर कोने में सम्बोन्धित की गई सभाओं में अस्पृश्यता के पालन को अमानवीय, अधार्मिक तथा अतार्किक कह कर समाप्त करने की अपील की। गाँधी अपना काम स्वयं करते थे इस संबंध में उनके चरित्र की यह बड़ी विशेषता थी । दक्षिण अफ्रीका प्रवास से ही वे अपना पैखाना खुद साफ करते थे किसी अन्य व्यक्ति से वह यह काम नहीं करवाते थे । असहयोग आन्दोलन की असफलता के बाद सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930) तक रचनात्मक कार्यक्रम को प्रमुखता दी गई जिसमें खादी और चरखे के अलावा अस्पृश्यता निवारण हेतु कार्य किया गया । गाँधी ने स्वयं सम्पूर्ण भारत का भ्रमण करके सवर्ण हिन्दुओं से अस्पृश्यता निवारण के लिए पैसा एकत्रित किया । इसी दौरान प्रथम गोल मेज सम्मेलन हुआ जिसमें कांग्रेस ने भाग लिया।

1931 में जब गोलमेज आरम्भ हुआ तो मार्च 1931 में गाँधी इर्विन पैक्ट के अन्तर्गत सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित कर दिया गया और कांग्रेस के एकमात्र सर्वेसर्वा के रूप में भीमराव अम्बेडकर ने प्रतिनिधित्व किया । इसमें अम्बेडकर ने सर्वप्रथम दलितों के लिए पृथक समुदाय होने के आधार पर राजनीतिक रूप से भी उन्हें पृथक समुदाय के रूप में मान्यता की माँग की । ताकि वे अपने समस्त मानवीय अधिकारों को प्राप्त कर सकें । जबकि गाँधी का कहना था कि जो लोग दलितों के लिए पृथक राजनीतिक निर्वाचन की बात करते हैं, वे न तो आज के भारतीय समाज की संरचना को जानते है और ना ही भारत को । गाँधी के अनुसार पृथक निर्वाचन इस समुदाय को सदैव के लिए ऐसे ही रहने के लिए बाध्य करेगा ।

ऐसे पारस्परिक विरोधी विचारों के कारण अल्पसंख्यक समस्या का गोलमेज सम्मेलन में कोई सर्वसम्मत हल न निकलने पर सम्मेलन इस निर्णय पर स्थगित हो गया कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री द्वारा इस संदर्भ में दिया गया निर्णय इन प्रतिनिधियों को मान्य होगा ।

10.9 उपवास और जनजागृति

17 अगस्त 1932 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैक्डोनाल्ड ने भारत में अल्पसंख्यकों की समस्या के हल के लिए जो निर्णय दिया, उसमें दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था की गई थी । इसके विरोध में गाँधी ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर सूचित किया कि पृथक निर्वाचन हिन्दू समाज के विघटन की योजना है और यदि पृथक निर्वाचन की व्यवस्था को समाप्त न किया गया तो 20 सितम्बर, 1932 से वे इसके खिलाफ आमरण अनशन करेंगे । ब्रिटिश सरकार का कहना था कि इस संदर्भ में वह कुछ नहीं कर सकती. सम्बद्ध पक्ष की सहमति से ही ऐसा हो सकता है । परिणाम स्वरूप 20 सितम्बर की दोपहर से गाँधी ने आमरण अनशन आरम्भ किया, सम्पूर्ण भारत में सनसनी फैल गयी । समस्या से निपटने के लिए हिन्दू नेताओं ने बॉम्बे में एक सभा बुलाई जिसमें समझौते के लिए अम्बेडकर को भी बुलाया गया ।

गाँधी का कहना था कि उपवास का उनका लक्ष्य हिन्दुओं की आत्मा को जगाकर कार्य के लिए प्रेरणा देना है । सम्पूर्ण भारत में हलचल मच गयी । इलाहाबाद, बनारस, कलकत्ता

तथा देशी रियासतों ने कई मंदिर दलितों के लिए खोल दिये गये । सवर्णों ने भ्रातृत्व प्रदर्शन करते हुए दलितों के साथ भोजन किया ।

10.10 पूना पैक्ट और पृथक निर्वाचन की मांग का समाधान

अम्बेडकर अपनी मांग पर दृढ़ थे । सप्रू व मालवीय, राजेन्द्र प्रसाद के प्रयासों से वार्ता आरम्भ हुई । काफी प्रयासों के बाद अम्बेडकर इस बात पर राजी हुए कि पृथक निर्वाचन समाप्त करने पर संयुक्त निर्वाचन में दलितों के लिए स्थानों को दुगुना किया जाए । आरक्षण की अवधि तथा इस संदर्भ में जनमत संग्रह पर भी गाँधी व अम्बेडकर में विचार भेद था । लेकिन काफी बहस के बाद 24 सितम्बर, 1932 को पूना में पृथक निर्वाचन समाप्त कर, नयी शर्तों के साथ जो समझौता हुआ, उसे पूना पेक्ट कहा जाता है । समझौते के अनुसार आरक्षित स्थानों की संख्या 78 के स्थान पर 148 कर दी गई । प्राथमिक तथा द्वितीय निर्वाचन की स्थापना की गई । प्राथमिक निर्वाचन में दलितों के 4 उम्मीदवारों के पैनल का चयन करना था और द्वितीय चरण में संयुक्त मतदान द्वारा इन चारों दलित उम्मीदवारों में से एक का चयन किया जाना था । आरक्षण द्वारा का प्रतिनिधित्व तब तक कायम रहेगा जब तक कि दोनों पक्ष आपसी समझौते द्वारा इसे समाप्त ना दें ।

उपवास का कम से कम एक अच्छा परिणाम हुआ - दलित के लिए पृथक की समाप्ति और इस प्रकार राष्ट्रीय जीवन में एक दरार और पड़ने से बच गया । लेकिन इसमें भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि जहां इस समझौते में निर्धारित संवैधानिक सुधार अगले लगभग साढ़े चार वर्षो तक लागू नहीं हुए वहीं सामाजिक स्तर पर अस्पृश्यता निवारण का क्रान्तिकारी कार्य तुरन्त तथा तेजी से आरम्भ हो गया ।

उपवास समाप्ति के बाद गांधी ने कहा था कि यदि उचित समय के अन्दर अस्पृश्यता निवारण सम्बन्धी सुधार नेक नियति से नहीं किये गये तो मुझे पुन: उपवास शुरू करना होगा । गाँधी जानते थे सदियों पुरानी कुप्रथा को एक ही रात में समाप्त नहीं किया जा सकता तथा कार्य और प्रचार द्वारा उपवास के परिणाम को आगे बढ़ाना चाहिए । अत: इस कार्य हेतु 'हरिजन सेवक संघ' नामक अखिल भारतीय संगठन की स्थापना जी.डी. बिड़ला की अध्यक्षता में की गई । जेल से ही प्रेस वक्तव्यों तथा पत्रों का सैलाब लगाकर अस्पृश्यता जैसी बुराई के प्रति जनता को शिक्षित करने का प्रयास किया गया । इसी उद्देश्य से ' 'हरिजन' ' नामक साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया तथा दलितों को 'हरिजन' (ईश्वर के बालक) नाम दिया । इस आन्दोलन के लिए जब गाँधी ने अपने आपको समर्पित किया तो उन्हें ज्ञात हुआ कि समस्या उनके अनुमान से कही अधिक जटिल है । 3 मई, 1933 से 21 दिन का उपवास (अपनी अन्तरात्मा की आवाज पर) करके उन्होंने अपनी आत्म व्यथा को समाप्त किया । सितम्बर 1933 को वे वर्धा चले गये तथा साबरमती आश्रम को 'हरिजन सेवक संघ' को भेंट कर दिया । 7 नवम्बर, 1932 को वे दलितों-उत्थान के लिए देश व्यापी दौरे पर निकल पड़े।

9 महीनों में उन्होंने कुल 12,500 मील यात्रा की । इस यात्रा के दौरान, वह देश के कई अंदरूनी तथा अगम्य भागों में भी गये । सम्पूर्ण हिन्दुओं से उन्होंने सारे पूर्वाग्रह छोड़ने का अनुरोध किया तथा दस महीने में उन्होंने दलित-उत्थान के लिए दस लाख रूपये एकत्र किये ।

यदि वे चाहते तो यह राशि किसी एक महाराजा या करोड़पति से भी ले सकते थे लेकिन दलितों के लिए किए जाने वाले कार्य में अधिक से अधिक लोगों के सक्रिय सहयोग के लिए करोड़ों स्त्री-पुरूष व बच्चों का सहयोग व समर्थन प्राप्त करने के लिए पाई-पैसा अठन्नी, चवन्नी एकत्रित की गई ।

ऐसा नहीं कि दलितों के उत्थानार्थ किया गया दौरा सफलता का चरमोत्कर्ष था । वह युगों से चले आ रहे अत्याचार पर आघात कर रहे थे अत: निहित स्वार्थों का बौखला कर प्रत्याघात करना स्वाभाविक ही था । रूढ़िवादियों ने गाँधी को धर्मद्रोही कर कह कर उनकी सभाओं में काले झण्डे दिखाये, विघ्न डाला और शोर-शराबा करके उन्हें बोलने से रोका । 52 जून, 1933 को पूना म्युनिसिपल्टी हॉल में मानपत्र ग्रहण करने जाते समय उनके दल पर बम फैंका गया जिसमें वे बाल-बाल बच गये । इस पर गाँधी ' ने कहा था "मैं शहीद नहीं होना चाहता लेकिन अपना कर्त्तव्य पालन करते हुए यदि मरना भी पड़े तो इसे अपना सौभाग्य समझूंगा।"

10.11 सारांश

यह मानना पड़ेगा कि गाँधी ने अस्पृश्यता जैसी युगों पुरानी कुप्रथा की जड़े हिला दी । हरिजन सेवक संघ' गाँधी के अनुसार, कांग्रेस का अंग न होकर 1932 के उपवास का परिणाम था' । सक्रिय रूप से काम करने के लिए संघ की शाखायें प्रान्तों में स्थापित की गई जिन्हें 'हरिजन बोर्ड' कहा गया '। गाँधी ने यह आदर्श बताया कि दलितों पर सदियों से सवर्णों ने जो अत्याचार किये हैं उनके प्रायश्चित के रूप में सवर्णों को ही दलितजनोद्वार का काम करना चाहिए।

सम्पूर्ण विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि गाँधी ने समाज के 1/5 भाग को समानता तथा न्याय दिलाने के लिए विचारात्मक तथा कार्यात्मक दोनों साधनों से पूरा प्रयास किया । उन्होंने इसे एक धार्मिक समस्या माना अत: अस्पृश्यता निवारण को हिन्दुओं का शुद्धि आन्दोलन का नाम दिया था । यहीं कारण था कि गाँधी ने अस्पृश्यता निवारण के लिए मंदिर प्रवेश को प्राथमिकता दी क्योंकि मंदिर व्यक्ति के जीवन में अतिमहत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । उन्होंने अपने भाषणों द्वारा समस्या के निदान हेतु जनमत जागत करने का प्रयास किया तथा कार्य के रूप में साम्प्रदायिक पंचाट में दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था के विरूद्ध आमरण अनशन करके उन्हें हिन्दुत्व से एक पृथक समुदाय के रूप में अलग होने से बचा लिया।

10.12 अभ्यास प्रश्न

1. अस्पृश्यता क्या है? इसके उद्भव के कारण बताइये ।
2. गाँधी ने अस्पृश्यता के उद्भव के क्या कारण बताये है ? उदाहरण सहित समझाइये ।
3. अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए गाँधी के प्रयासों को स्पष्ट कीजिये ।
4. दलित वर्गो के उत्थान के लिए गाँधी द्वारा किए गए योगदान का मूल्यांकन कीजिए ।

10.13 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. गाँधी, एम.के., सत्याग्रह इन साऊथ अफ्रीका, अनु. वी.जी देसाई, नवजीवन पब्लिशिंग हाऊस, अहमदाबाद, 1972
2. नंदा, बी. आर., महात्मा गाँधी : ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
3. डोक जे. जे., गाँधी : ए पेट्रियोट इन साऊथ अफ्रीका, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2005
4. गुप्ता, द्वारका प्रसाद, महात्मा गाँधी और अस्पृश्यता, शान भारती, दिल्ली, 2008
5. सिंह, श्यौराज, अम्बेडकर गाँधी और दलित पत्रकारिता, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2008
6. रे बारेन (सम्पादित), गाँधीस केम्पैन अगेंस्ट अनटचाबिलिटि 1 933- 1934, गाँधी पीस फाउण्डेशन नई दिल्ली, 1996
7. वेट्टिकल थोमस, गाँधीयन सर्वोदय : रीयालाइसिंग ए रियलिस्टिक युटोपिया, नेशनल गाँधी म्यूसियम एवं ज्ञान पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 2002

इकाई - 11

महात्मा गाँधी और भाषा

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 भाषा का विकास एवं गाँधी

11.3 राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में गाँधी के विचार

11.4 प्रान्तीय भाषा के सम्बन्ध में गाँधी के विचार

11.5 अंग्रेजी भाषा पर गाँधी के विचार

11.6 शिक्षा के माध्यम के रूप में भाषा एवं गाँधी

11.7 समीक्षा

11.8 सारांश

11.9 अभ्यास प्रश्न

11.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.0 उद्देश्य

भाषा जनमानस मे संपर्क सूत्र का सशक्त माध्यम है जो लोगों के मध्य स्थापित करती है । प्रस्तुत अध्याय का उद्देश्य भाषा के माध्यम से एक सूत्रता एवं राष्ट्रीय एकीकरण को करना है । इस दृष्टि से गाँधी जी के भाषा सम्बन्धी विचारों का वर्णन निम्न बिन्दुओं के तहत किया गया है, ताकि विद्यार्थी -

- भाषा के विकास से परिचित हो सके,
- राष्ट्रभाषा पर गाँधी के विचार का अध्ययन करें,
- गाँधी के विचारों का प्रान्तीय भाषा के सन्दर्भ में अध्ययन करें,
- अंग्रेजी भाषा पर गाँधी के विचारों से परिचित हो सके,,
- शिक्षा के माध्यम के रूप में भाषा का अध्ययन कर सकें ।

11.1 प्रस्तावना

किसी भी देश की राष्ट्रीय भावना के विकास में एक सामान्य भाषा का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान होता है । राष्ट्र में एक सामान्य भाषा का होना एक ऐसी निर्विवाद आवश्यकता है जिसके माध्यम से राष्ट्रीय जीवन के विविध क्रिया-कलाप संचालित होते हैं । भारत को एक राष्ट्र के रूप में सुदृढ़ करने के उद्देश्य से ही इसके उन्नायकों ने प्रारम्भ से ही इस बात पर बल दिया था कि राष्ट्रभाषा के अभाव में भारतीय राष्ट्रीयता सुदृढ़ नहीं हो सकती । यही कारण था कि बंगाल के केशव चन्द्र सेन और बंकिम चन्द्र चटर्जी तथा गुजरात के महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा महात्मा गाँधी एवं महाराष्ट्र के लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक आदि गैर-हिन्दी भाषी प्रान्तों के मान्य नेताओं ने हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा के लिए उपयुक्त बताया था।

11.2 भाषा का एवं गाँधी

भाषा शब्द संस्कृत की 'भाष्' धातु से बना है जिसका अर्थ है- बोलना । अर्थात जो बोली जाये वही भाषा है । हमारे मन के भाव अथवा विचार जिस साधन द्वारा व्यक्त अथवा सम्पादित होते उसे भाषा कहते हैं । भाषा के बारे में विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न परिभाषाएं की हैं, परन्तु उन सभी विद्वानों की परिभाषाओं को साररूप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है कि ' 'भाषा विश्लेषण सापेक्ष, सार्थक, परम्परागत एवं यादृच्छिक ध्वनिमूलक व्यवस्था है, जिसके माध्यम से सामाजिक मनुष्य अपनी अनुभूतियों भावों तथा विचारों आदि को व्यक्त करता है । प्रारंभ से अन्त तक इसका लक्ष्य पारस्परिक बोध है । " इस तरह भाषा नैसर्गिक है, उसकी प्राप्ति मानव की सबसे बड़ी उपलब्धि है । परिवर्तनशीलता भाषा की एक प्रमुख विशेषता है। अतएव इसके स्वरूप में निरंतर विकास होता रहता है और नये-नये रूप सामने आते रहते हैं।

भाषा के विविध रूप होते हैं, जिसमें एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रूप 'राष्ट्रभाषा है । प्रत्येक समुन्नत, स्वतंत्र, स्वाभिमानी देश की अपनी राष्ट्रभाषा होती हैं । अमेरिका, इंग्लैण्ड, रूस, जापान, चीन आदि सभी देशों में वहाँ की व्यापक बहुप्रचलित भाषा राष्ट्रभाषा के रूप में व्यक्त होती है । राष्ट्रभाषा की रक्षा सीमाओं की रक्षा से भी अधिक आवश्यक है, क्योंकि वह विदेशी आक्रमण को रोकने में पर्वतों और नदियों से भी अधिक समर्थ है । अफ्रीका के दसों देश विगत शताब्दी में स्वतंत्र हुए । उनका सांस्कृतिक स्थिति प्राय: शून्य है । उनकी साहित्यिक या भाषिक परम्परा कोई लम्बी-चौड़ी नहीं है और कोई ऐतिहासिक पृष्ठभूमि भी नहीं है । एक भाषा है, जिसके बल पर प्रत्येक जाति ने विदेशी आधिपत्य से मुक्ति पा ली है । हमारे देश के साथ ही श्रीलंका, बर्मा और पाकिस्तान में स्वतंत्र सत्ता की स्थापना हुई । इन सभी देशों की अपनी-अपनी भाषा है जिसमें सबका कार्य-व्यवहार होता है। यह अत्यन्त खेद की बात है कि भारत में आज भी राष्ट्रभाषा कमोबेश एक समस्या बनी हुई है।

किसी भी देश की राजभाषा भले ही कोई भी हो परन्तु उसकी राष्ट्रभाषा अपनी ही होनी चाहिए । अकबर के समय से लेकर लगभग तीन शताब्दियों तक भारत की राजभाषा फारसी रही थी और सन् 1833 के बाद निचले स्तर पर उर्दू और उच्च स्तर पर अंग्रेजी को राजभाषा का दर्जा प्राप्त रहा । परन्तु हमेशा से सारे देश की सम्पर्क भाषा हिन्दी ही रही है । राजभाषा वह है जिसके माध्यम से सारे राजकार्य-सरकारी आदेश, कचहरी, विज्ञापन आदि, सम्पन्न होते हैं जबकि राष्ट्रभाषा वह है कि जिसके माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र के नागरिक आपसी सम्पर्क, पत्र-व्यवहार अथवा सार्वदेशिक स्तर पर साहित्य का सृजन करते हैं।

भारत में युगों-युगों से मध्य देश की भाषा सारे देश की माध्यम बन जाती रही है । संस्कृत, पालि, प्राकृत और हिन्दी क्रमश: प्रत्येक युग में सम्पूर्ण देश में प्रयुक्त होती रही है । राजनीतिक दृष्टि से भारत की एकता भले ही हाल की चीज हो, किन्तु यहाँ पर सांस्कृतिक एकता सदा बनी रही है और एक भाषा का विस्तार भारतीय संस्कृति के विस्तार के साथ होता ही रहा है ।

सैकड़ों वर्षा से जिस किसी को भी जन-सम्पर्क करने की आवश्यकता हुई चाहे वह शासक हो, धार्मिक या सामाजिक नेता हो, लेखक हो, उसने हिन्दी का उपयोग किया । हिन्दी के आदिकाल का सारा साहित्य हिन्दी प्रदेश के बाहर रचा गया । नाथ साहित्य पश्चिमी भारत में, सिद्ध साहित्य पूर्वी भारत में एवं आदि भक्ति साहित्य महाराष्ट्र और गुजरात में लिखा गया। युगों-युगों से तीर्थयात्रियों, व्यापारियों और कलाकारों सभी की भाषा हिन्दी ही रही है।

19वीं सदी में खड़ी बोली हिन्दी का प्रचार-प्रसार जोरों से हुआ । ईसाई मशीनरियों ने तो पहले से ही अपने प्रचार का अखिल भारतीय माध्यम हिन्दी को बनाया था । उन्हें इस बात का सहज ही आभास था कि जनसाधारण तक पहुँचने की एकमात्र साधन 'हिन्दी' ही है।

एच.टी. कोलब्रुक ने 'एशियाटिक रिसर्च' में लिखा था- "जिस भाषा का व्यवहार भारत के प्रत्येक प्रान्त के लोग करते हैं, जो पढ़े-लिखे तथा अनपढ़ दोनों की साधारण बोल-चाल की भाषा है और जिसको प्रत्येक गाँव में थोड़े बहुत लोग अवश्य समझ लेते हैं । उसी का यथार्थ नाम हिन्दी है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी एक लम्बे अवधि से सारे देश के पारस्परिक सम्पर्क की भाषा रही है । कबीर और तुलसी की वाणी आज भी उन लोगों के कण्ठों से प्रतिध्वनित हो रही है जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है । हिन्दी की इसी स्वीकार्यता के आधार पर हमारे राष्ट्रपिता गाँधी ने इसे भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने का सदैव ही पुरजोर प्रयास किया । समय-समय पर गाँधी जी ने अपने विभिन्न लेखों, पत्रिकाओं व भाषणों में इस पर व्यापक प्रकाश डाला है।

भाषा सम्बन्धी अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए गाँधी अत्यन्त ही गहरे और दूरदर्शिता का परिचय देते हैं । उन्होंने समय-समय पर भाषा सम्बन्धी विचार अपने द्वारा सम्पादित व प्रकाशित पत्रों में लिखे अपने लेखों एवं शिक्षा-परिषदों तथा अन्य सामाजिक सेवा-परिषदों की बैठकों में व्यक्त किया है । उनके भाषा सम्बन्धी विचारों को अलग अलग (राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में विचार, प्रान्तीय भाषा के संबंध में विचार, अंग्रेजी भाषा के सम्बन्ध में विचार) शीर्षकों के रूप में समझा जा सकता है।

11.3 राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध मे गाँधी जी के विचार

गाँधी जी का स्पष्ट मानना है कि 'अगर हमें एक राष्ट्र होने का अपना दावा करना है, तो हमारी अनेक बातें एक-सी होनी चाहिये । भिन्न भिन्न धर्म और सम्प्रदायों को एक सूत्र में वाली एक सामान्य संस्कृति है । इसी तरह हमें देशी और प्रान्तीय भाषाओं की जगह एक सामान्य भाषा की भी जरूरत है । उनका कहना है ' 'यह भाषा कोई और नहीं बल्कि 'हिन्दुस्तानी' ही है, जो 'हिन्दी' और 'उर्दू के मेल से बने और जिसमें न तो संस्कृत की और न ही फारसी या अरबी की ही भरमार हो । हमारे रास्ते की ' बड़ी रूकावट हमारी देशी भाषाओं की कई लिपियाँ हैं । अगर एक सामान्य लिपि अपनाना संभव हो तो सामान्य भाषा का हमारा जो स्वप्न है, उसे पूरा करने के मार्ग की एक बड़ी बाधा दूर हो जायेगी।"

राष्ट्रभाषा के बारे में विचार करते हुए गाँधी जी कुछ सामान्य लक्षणों को हैं जो किसी भी राष्ट्रीय भाषा में अवश्य ही होनी चाहिए । वे निम्नवत् हैं-

(i) वह भाषा सरकारी नौकरों के लिए आसान होनी चाहिए ।

(ii) उस भाषा के द्वारा भारत का आपसी धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक होना चाहिये ।

(iii) उस भाषा को भारत के अधिकांश लोग बोलते हो ।

(iv) वह भाषा राष्ट्र के लिए सरल हो ।

(v) उस भाषा का विचार करते समय क्षणिक या कुछ समय तक रहने वाली पर जोर न दिया जाय ।

गाँधी जी व्यावहारिक आधार पर कहते हैं कि मुझे इनमें से एक भी लक्षण अंग्रेजी भाषा में नहीं मिला । व्यावहारिक तौर पर वह कहते हैं कि आज भी अंग्रेजी सरकार के अन्तर्गत जो प्रशासनिक मशीनरी कार्य कर रही है उसमें अंग्रेज अधिकारी गिनती के ही हैं । आज भी अधिकतर कर्मचारी भारतीय हैं और दिन-ब-दिन उनकी संख्या बढ़ती ही रही है । ऐसे में यह स्वीकार करना ही होगा कि सरकारी सेवाओं में जहाँ भारतीयों की संख्या बहुतायत में है, के लिए अंग्रेजी की तुलना में 'हिन्दी' कही अधिक सरल है।

दूसरे लक्षण पर विचार करते हुए हम देखते हैं जब तक सभी लोग अंग्रेजी भाषा की जानकारी प्राप्त नहीं कर लेते तब तक हमारा धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवहार सामान्य रूप से नहीं हो सकता । यहाँ भी अंग्रेजी भाषा की सीमितता का सहज ही आभास हो जाता है । क्योंकि सबको अंग्रेजी सिखाया जाय इससे अधिक तर्कसंगत है कि कुछ लोगों को हिन्दी भाषा सिखाया जाय ।

तीसरा महत्वपूर्ण लक्षण भी हिन्दी के पक्ष में है । अंग्रेजी आज भी कुछ थोड़े की ही भाषा है । उसकी तुलना में हिन्दी भारत में बड़ी संख्या में लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा है । '

चौथा लक्षण भी अंग्रेजी में नहीं देखा जाता क्योंकि सारे राष्ट्र के लिए वह इतनी आसान नहीं है ।

पाँचवें लक्षण पर विचार करते समय हम देखते हैं कि अंग्रेजी भाषा की आज की सत्ता क्षणिक है । सदा बनी रहने वाली स्थिति तो यह है कि भारत में जनता के राष्ट्रीय काम में अंग्रेजी भाषा की जरूरत थोड़ी ही रहेगी । अंग्रेजी साम्राज्य में उसकी जरूरत होगी ।

इन आधारों पर हिन्दी निश्चित रूप से अंग्रेजी की तुलना मे अधिक सशक्त भाषा है । क्योंकि ये सारे लक्षण हिन्दी में मौजूद हैं । गाँधी कहते हैं- 'हिन्दी के बाद दूसरा स्थान बंगला का है । फिर भी बंगाली लोग बंगाल के बाहर हिन्दी का ही उपयोग करते हैं । हिन्दी बोलने वाले लोग सभी जगह हिन्दी का ही उपयोग करते हैं । उनके ऐसा करने पर किसी को भी आश्चर्य नहीं होता क्योंकि कमोबेश हर जगह हिन्दी की उपस्थिति अवश्य है । हिन्दी के धर्मोपदेशक और उर्दू के मौलवी सम्पूर्ण भारत में अपने भाषण हिन्दी में ही देते हैं और अनपढ़ जनता उन्हें समझ लेती है । गाँधी जी का कहना है कि- 'ठेठ द्राविड प्रान्त में भी हिन्दी की आवाज सुनाई देती है । मद्रास में मैंने अपना सारा काम हिन्दी में चलाया है । सैकड़ों मद्रासी मुसाफिरों को मैंने दूसरे लोगों के साथ हिन्दी में बोलते सुना है । इसके सिवा, मद्रास के

मुस्लिम लोग भी हिन्दी अच्छी तरह बोलते हैं । यह भी ध्यान रखने की बात है कि सारे भारत के मुसलमान उर्दू बोलते हैं और उनकी संख्या सारे प्रान्तों में कुछ कम नहीं है।"

इस तरह हिन्दी भाषा पहले से ही राष्ट्रभाषा बन चुकी है । हमने बरसों पहले उसका राष्ट्रभाषा के रूप में उपयोग किया है । उर्दू भी हिन्दी की इस शक्ति से ही पैदा हुई हैं । मुस्लिम बादशाह भारत में फारसी-अरबी को राष्ट्रभाषा नहीं बना सके । उन्होंनें हिन्दी के व्याकरण को मानकर उर्दू लिपि काम में ली और फारसी शब्दों का ज्यादा उपयोग किया । परन्तु आम लोगों के साथ अपना व्यवहार वे विदेशी भाषा के द्वारा नहीं चला सके । यह हालत अंग्रेज अधिकारियों से छिपी हुई नहीं थी । इसलिए अंग्रेजों ने भी आम जनता से सम्पर्क स्थापित करने के लिए हिन्दी का ही इस्तेमाल किया।

इस तरह हम देखते हैं कि हिन्दी में राष्ट्रभाषा के रूप में संपूर्ण भारतवासियों की भाषा बनने की पात्रता सर्वाधिक है । गाँधी जी को इसी कारण इस बात का पूर्ण विश्वास था कि सारे भारतवासियों को आपस में सद्भावपूर्वक जोड़ने में हिन्दी भाषा ही सक्षम है।

11.4 प्रान्तीय भाषाओं के सम्बन्ध में गाँधी जी के विचार

"स्वधर्मे निधनं श्रेय:, परधर्मो भयावह:।"

भगवद्गीता का यह वाक्य सभी क्षेत्रों में लागू हो सकता है । स्वभाषा को छोड़कर परभाषा के मोह में पड़ना, बहुत बड़ा द्रोह है । माता, मातृभाषा और मातृभूमि-इन तीन में से किसी का भी अपमान स्वाभिमानी मनुष्य कभी सहन नहीं कर सकता । इस भावना रो प्रेरित होकर हरिजन-सेवक (25 .08.1946) में प्रान्तीय भाषाओं की महत्ता पर लिखे अपने लेख में गाँधी जी कहते है:- ' 'मेरी मातृभाषा में कितनी ही खामियाँ क्यों न हों, मैं उससे उसी तरह चिपटा रहूँगा जिस तरह अपनी माँ की छाती से वही मुझे जीवनदायी दूध दे सकती है । मैं अंग्रेजी को भी उसकी जगह प्यार करता हूँ । लेकिन अगर अंग्रेजी उस जगह को हड़पना चाहती है जिसकी वह हकदार नहीं है, तो मैं उससे सख्त नफरत करूँगा । यह बात मानी हुई है कि अंग्रेजी आज सारी दुनिया की भाषा बन गयी है । इसलिए मैं उसे दूसरी जबान के तौर पर जगह दूँगा- लेकिन विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में, स्कूलों में नहीं । वह कुछ लोगों के सीखने की चीज हो सकती है, लाखों-करोड़ों की नहीं । आज अपनी मानसिक गुलामी की वजह से ही हम यह मानने लगे हैं कि अंग्रेजी के बिना हमारा काम नहीं चल सकता । मैं इस चीज को नहीं मानता।"

गाँधी जी का निश्चित मानना है कि - "हमने अपनी मातृभाषाओं के मुकाबले । अंग्रेजी से ज्यादा मुहब्बत रखी, जिसका नतीजा यह हुआ कि पढ़े-लिखे और राजनीतिक दृष्टि से जागे हुए ऊँचे तबके के लोगों के साथ आम लोगों का रिश्ता बिल्कुल टूट गया और उन दोनों के बीच एक गहरी खाई बन गई । यही वजह है कि हिन्दुस्तान की भाषायें गरीब बन गई हैं और उन्हें पूरा पोषण नहीं मिला । हमारे पास विज्ञापन के निश्चित पारिभाषिक शब्द नहीं हैं । इस सबका नतीजा खतरनाक हुआ है । हमारी आम जनता आधुनिक मानस से यानी नये जमाने के विचारों से बिल्कुल अछूती रही है । हिंदुस्तान के महान भाषाओं की जो अवगणना हुई है और उसकी वजह से हिन्दुस्तान को जो बेहद नुकसान पहुँचा है, उसका कोई अंदाजा या माप हम नहीं लगा

सकते, क्योंकि हम इस घटना के बहुत नजदीक हैं । लेकिन अगर इस नुकसान की भरपाई करने की कोशिश हमने नहीं की तो हमारी आम जनता को मानसिक मुक्ति नहीं मिलेगी । वह रूढ़ियों एवं बहमों से घिरी रहेगी । नतीजा यह होगा कि आम जनता स्वराज के निर्माण में कोई ठोस मदद नहीं पहुँचा सकेगी । अहिंसा की बुनियाद पर रचे गये स्वराज की चर्चा में यह बात शामिल है कि हमारा हर एक आदमी आजादी की हमारी लड़ाई में खुद स्वतंत्र रूप से हाथ बंटायें।

स्वतंत्र भारत की सरकार से इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने की अपेक्षा करते हुए गाँधी जी हरिजन-सेवक (21.09.1947) में लिखते हैं कि- "अगर सरकारें और उनके सावधानी नहीं लेंगे तो मुमकिन है कि अंग्रेजी भाषा हिन्दुस्तानी का स्थान हड़प ले । इससे हिन्दुस्तान के' करोड़ों लोगों को बेहद नुकसान होगा, जो कभी भी अंग्रेजी समझ नहीं सकेंगे । मेरे ख्याल में प्रान्तीय के लिए यह बहुत आसान बात होनी चाहिए कि वे अपने यहाँ ऐसे कर्मचारी रखें, जो सारा काम प्रान्तीय भाषाओ में और अन्तर-प्रान्तीय भाषा में कर सकें । मेरी राय में अन्तर-प्रान्तीय भाषा सिर्फ 'नागरी' या 'उर्दू लिपि में लिखी जाने वाली 'हिन्दुस्तानी' ही हो सकती है।"

इस बारे में सुझाव देते हुए वे कहते हैं - ' 'सबसे पहली और जरूरी चीज यह है कि हम अपनी उन प्रान्तीय भाषाओं का संशोधन करें, जो हिन्दुस्तान को वरदान की तरह मिली हुई हैं । यह कहना दिमागी आलस के सिवा और कुछ नहीं है कि हमारे अदालतों, हमारे स्कूलों और यही तक कि हमारे दफ्तरों में भी यह भाषा-सम्बन्धी फेरफार करने के लिए कुछ समय, शायद कुछ बरस चाहिए । हाँ, जब तक भाषा के आधार पर फिर से प्रान्तों का बँटवारा नहीं होता, तब तक बम्बई और मद्रास जैसे प्रान्तों में, जहॉ बहुत सी भाषायें बोली जाती हैं, थोड़ी मुश्किल जरूर होगी । प्रान्तीय सरकारें ऐसा कोई तरीका खोज सकती हैं, जिससे उन प्रान्तों के लोग वहाँ अपनापन का अनुभव कर सकें । जब तक हिन्दुस्तानी संघ इस सवाल को हल न कर ले कि अन्तर-प्रान्तीय भाषा 'नागरी' या 'उर्दू लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी हो, तब तक प्रान्तीय सरकारें ठहरी न रहें । इसकी वजह से उन्हें जरूरी सुधार करने में देर न लगानी चाहिए।

भाषा के बारे में एक बिल्कुल गैर जरूरी विवाद खड़ा हो गया है, जिसकी वजह से हिन्दुस्तान में अंग्रेजी भाषा घुस सकती है । और अगर ऐसा हुआ तो इस देश के लिए वह एक ऐसे कलंक की बात होगी, जिसे धोना हमेशा के लिए असंभव हो जायेगा । अगर सारे सरकारी दफ्तरों मे प्रान्तीय का उपयोग इस्तेमाल करने का कदम इसी वक्त, उठाया जाय, तो अन्तर-प्रान्तीय भाषा का उपयोग तो इसे तुरंत बाद ही होने लगेगा।"

देश के गैर-हिन्दी भाषी राज्यों विशेषकर दक्षिण भारत और बंगाल में की स्वीकारोक्ति के लिए गाँधी जी कुछ सुझाव देते हैं । उनका कहना है कि 'द्रविड़ भाई-बहन अंग्रेजी सीखने के लिए जितनी मेहनत करते हैं, उसका आठवां हिस्सा भी हिन्दी सीखने मे करें, तो बाकी के जो दरवाजे उनके लिए बन्द हैं वे खुल जायें और वे इस तरह हमारे साथ एक हो जाएँ जैसे पहले कभी न थे। एक व्यावहारिक सुझाव देते हुए वे कहते हैं कि द्रविड़ लोगों की संख्या कम है इसलिए राष्ट्र की शक्ति मितव्यय की दृष्टि से यह जरूरी है कि हिन्दुस्तान के बाकी सब लोगों

को द्रविड़ भारत के साथ बातचीत के लिए तमिल, तेलुगु, कन्नड, और मलयालम सिखाने के बदले द्रविड़ भारत वालों को शेष हिन्दुस्तान की भाषा सीख लेनी चाहिए।'

दूसरा, महत्वपूर्ण सुझाव यह था कि सभी बड़ी-बड़ी म्यूनिसिपैलिटियों को अपने मदरसों में हिन्दी की पढ़ाई को वैकल्पिक बना देनी चाहिए । दक्षिण अफ्रीका के अपने अनुभवों को बताते हुए वे कहते हैं कि 'वहाँ रहने वाले लगभग सभी तमिल-तेलुगु भाषी लोग हिन्दी बोलते और समझ लेते हैं । इसी तरह बंगाली भाई अगर रोजाना 2-3 घंटे खर्च करें तो अगले दो महीनों में हिन्दी पूरी तरह सीख लेंगे।

11.5 अंग्रेजी भाषा के बारे में गाँधी जी के विचार

गाँधी जी का कहना है कि "अंग्रेजी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की भाषा है, कूटनीति की भाषा है । उसमें अनेक बढ़िया साहित्यिक रत्न भरे है और उसके द्वारा हमें पाश्चात्य विचार और संस्कृति का परिचय मिलता है । इसलिए हममें से कुछ लोगों के लिए अंग्रेजी जानना जरूरी है । वे राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय कूटनीति के विभाग चला सकते हैं और राष्ट्र को पश्चिम का उत्तम साहित्य, विचार और विज्ञान दे सकते है । यह अंग्रेजी का उत्तम उपयोग होगा । इस बारे में कोई दो मत नहीं कि आधुनिक ज्ञान की प्राप्ति, आधुनिक साहित्य के अध्ययन, सारे जगत का परिचय, अर्थ प्राप्ति तथा राज्याधिकारियों के साथ सम्पर्क रखने और ऐसे ही अन्य कार्यो के लिए हमें अंग्रेजी के ज्ञान की आवश्यकता है । बावजूद इसके अंग्रेजी कभी भी हमारी राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती । भले ही आज उसका साम्राज्य सा जरूर दिखाई देता है । और हमारे राष्ट्रीय कार्यो में अंग्रेजी ने बड़ा स्थान ले रखा है लेकिन फिर भी हमें इस भ्रम में कभी न पड़ना चाहिए कि अंग्रेजी राष्ट्रभाषा बन रही है । '

आज के भारत में अंग्रेजी ने हमारे हृदय पर अधिकार कर लिया है और हमारी मातृभाषाओं को वहाँ से सिंहासन च्युत कर दिया है । आवश्यकता यह है कि अंग्रेजी के ज्ञान के बिना ही भारतीय मस्तिष्क का उच्च-से-उच्च विकास सम्भव होना चाहिए । अंग्रेजी के मोह से छुटकारा पाना स्वराज के लिए एक जरूरी शर्त है । अगर स्वराज करोड़ों मरने वालों का, करोड़ों निरक्षरों का, निरक्षर बहनों का और दलितों व अन्त्यजों का हो और इन सबके लिए हो तो हिन्दी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है।

1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के 24वें अधिवेशन (इंदौर) में अध्यक्ष पद से दिये गये भाषण में वह कहते हैं- 'मैं हमेशा से मानता रहा हूँ कि हम किसी भी हालत में प्रान्तीय भाषाओं को नुकसान पहुँचाना या मिटाना नहीं चाहते । हमारा मतलब सिर्फ इतना है कि विभिन्न प्रान्तों के पारस्परिक सम्बन्ध के लिए हम हिन्दी भाषा सीखें । वही भाषा राष्ट्रीय भाषा बन सकती है जिसे अधिक संख्या में लोग बोलते-जानते हों और जो सीखने में सुगम हो।

अगर हिन्दुस्तान को हमें सचमुच एक राष्ट्र बनाना है, तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्रभाषा तो हिन्दी ही बन सकती है, क्योंकि जो स्थान हिन्दी को प्राप्त है, वह किसी दूसरी भाषा को कभी नहीं मिल सकता । इसलिए उचित और सम्भव तो यही है कि प्रत्येक प्राप्त में

उस प्रान्त की भाषा का, सारे देश के पारस्परिक व्यवहार के लिए हिन्दी का तथा अंतर्राष्ट्रीय उपयोग के लिए अंग्रेजी का व्यवहार हो।

11.6 शिक्षा के माध्यम के रूप में भाषा एवं गाँधी

शिक्षा में विदेशी भाषा की आलोचना करते हुए गाँधी कहते हैं- ' करोड़ों लोगों को अंग्रेजी की शिक्षा देना उन्हें गुलामी में डालने जैसा होता है । मैकॉले ने शिक्षा की जो बुनियाद डाली, वह सचमुच गुलामी की बुनियाद थी । यह क्या कम जुल्म की बात है कि अपने देश में अगर मुझे इंसाफ पाना हो तो, मुझे अंग्रेजी भाषा का उपयोग करना पड़े । बैरिस्टर होने पर मैं स्वभाषा बोल ही न सकूँ । हिन्दुस्तान को गुलाम बनाने वाले तो हम अंग्रेजी जानने वाले लोग हैं।

विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा पाने में जो बोझ दिमाग पर पड़ता है वह असहाय है । यह बोझ केवल हमारे ही बच्चे उठा सकते हैं, लेकिन उसकी कीमत उन्हें चुकानी ही पड़ती है । वे दूसरा बोझ उठाने के लायक नहीं रह जाते । इससे हमारे ग्रेज्युएट अधिकतर निकम्मे, कमजोर, निरूत्साही, रोगी और कोरे नकलची बन जाते हैं । उनमें खोज की शक्ति, विचार करने की ताकत, साहस, धीरज, बहादुरी, निडरता आदि गुण बहुत क्षीण हो जाते हैं ।

माँ के दूध के साथ जो संस्कार मिलते है और जो मीठे शब्द सुनाई देते हैं, उनके और पाठशाला के बीच जो मेल होना चाहिए, वह विदेशी भाषा द्वारा शिक्षा से लेने से लुट जाता है । इससे शिक्षित वर्ग और सामान्य जनता के बीच में भेद पड़ गया है । वह हमें साहब समझती है और हमसे डरती है, वह हम पर भरोसा नहीं करती ।.यह रूकावट पैदा हो जाने से राष्ट्रीय जीवन का प्रवाह एक रूक गया है ।

सच तो यह है कि अंग्रेजी अपनी जगह चली जायेगी और मातृभाषा को अपना पद मिल जायेगा, तब हमारे मन जो अभी कंधे हुए हैं, कैद से छूटेंगे और शिक्षित और सुसंस्कृत होने पर भी ताजा रहे हुए हमारे दिमाग को अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त करने का बोझ भारी नहीं लगेगा।

मातृभाषा का जो अनादर हम कर रहे हैं, उसका हमें भारी प्रायश्चित करना पड़ेगा । इससे आम जनता का बड़ा नुकसान हुआ है।

20 अक्टूबर 1917, भड़ौच में आयोजित दूसरी गुजरात शिक्षा-परिषद में अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए गाँधी जी ने कहा कि ' 'अंग्रेजी सीखने के लिए हमारा जो विचारहीन मोह है, उससे खुद मुक्त होकर और समाज को मुक्त करके हम भारतीय जनता की बड़ी से बड़ी सेवा कर सकते हैं । अंग्रेजी के ज्ञान की आवश्यकता के विश्वास ने हमें गुलाम बना दिया है । उसने हमें सच्ची देश सेवा में असमर्थ बना दिया है । पिछले 60 वर्षो से हमारी सारी शक्ति ज्ञानार्जन के बजाय अपरिचित शब्द और उनके उच्चारण सीखने में खर्च हो रही है । यह हमारे राष्ट्र की एक अत्यन्त दुःखपूर्ण घटना है । हमारी पहली और बड़ी-से-बड़ी समाज सेवा यह होगी कि हम अपनी प्रान्तीय भाषाओं का उपयोग शुरू करें, हिन्दी को स्वाभाविक स्थान दें, प्रान्तीय कामकाज प्रान्तीय भाषाओं में करें और राष्ट्रीय कामकाज हिन्दी में करें”

27 दिसम्बर 1917, कलकत्ता में आयोजित पहली अखिल भारतीय समाज-सेवा-परिषद के अध्यक्षीय सम्बोधन में उन्होंनें कहा कि - ' 'यह मेरा निश्चित मत है कि आज की अंग्रेजी शिक्षा ने शिक्षित भारतीयों को निर्बल और शक्तिहीन बना दिया है । इसने भारतीय विद्‌यार्थियों की शक्ति पर भारी बोझ डाला है और हमें नकलची बना दिया है । कोई भी देश नकलचियों की जाति पैदा करके राष्ट्र नहीं उन सकता । भारत आज जिन वहमों का शिकार है उनमें सबसे बड़ा वहम यह है कि स्वतंत्रता से सम्बन्धित विचारों को हृदयंगम करने के लिए और तर्कशुद्धि चिन्तन की क्षमता का विकास करने के लिए अंग्रेजी भाषा का ज्ञान आवश्यक है।"

उपरोक्त तथ्यों को उद्‌घाटित करते हुए गाँधी सदैव इस बात पर बल देते है कि भारतीय शिक्षा-पद्धति में अंग्रेजी को जो अत्यधिक महत्ता दी जाती है, जबकि उसकी जगह मातृभाषा तथा अन्य भारतीय भाषाओं में शिक्षा उपलब्ध कराने की आवश्यकता है मातृभाषा में शिक्षा का सिद्धान्त जो हर जगह लागू है । चीन, जापान, रूस, फ्रांस जैसे देशों ने अपनी भाषाओं द्‌वारा ही विभिन्न क्षेत्रों में सराहनीय विकास किया है । अत: इस बात की महती आवश्यकता है कि हम गाँधी जी के सुझाये गये सिद्धान्तों के आधार पर मातृभाषा और भारतीय भाषाओं के आधार पर ही अपनी शिक्षा व्यवस्था की आधारशिला को निर्मित करें।

11.7 समीक्षा

भारत विविधताओं से भरा हुआ देश है । अपनी भौगोलिक विषमताओं व विविधताओं के साथ ही यह सामाजिक-सांस्कृतिक रूप से भी अत्यन्त विविधीकृत देश है । आमतौर पर अन्य किसी भी देश में इतनी विविधता देखने को नहीं मिलती । अत: यह अत्यन्त स्वाभाविक है कि हमारे यहाँ अनेक भाषायें भी प्रचलित रही है । डॉ. ग्रियर्सन के मतानुसार हमारे यहाँ लगभग साढ़े तीन सौ से भी अधिक भाषायें है, जिनमें 22 समृद्ध, भाषाओं को हमने अपने संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल किया है । हमारे यहाँ प्रान्तों के विभाजन का आधार भी भाषा ही है, ताकि उस प्रदेश के सामान्य कामकाज उसकी अपनी भाषा में चले।

इन प्रान्तीय भाषाओं का हजारों वर्षो का इतिहास है । कुछ भाषायें तो इतनी समृद्ध हैं कि वे भारत ही नहीं वरन् विदेशों के अनेक विश्वविद्‌यालयों में पढ़ाई जाती है । हिन्दी, उर्दू गुजराती, मराठी, बंगाली, तमिल आदि ऐसी ही भाषायें हैं । इन भाषाओं में रचित साहित्यों का विश्वव्यापी प्रकाशन होता है । रवीन्द्र नाथ ठाकुर द्‌वारा रचित 'गीतांजली' नामक कृति का नोबेल पुरस्कार से सम्मानित होना इसका ज्वलंत उदाहरण है ।

भारतीय गणतंत्र के प्रथम राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद का भी यह कहना महत्वपूर्ण है कि - ' 'अपनी मातृभाषा में प्रवीण होना हरेक के लिए जरूरी है । इस तरह हमारी प्रान्तीय भाषाओं का महत्व बहुत ज्यादा है । हमें अपने तमाम कार्य-व्यवहारों में पहला स्थान मातृभाषा को ही देना चाहिए । अंग्रेजी के गलत व्यामोह में न तो हम अंग्रेजी ठीक तरह से सीखते हैं, और न ही मातृभाषा के साथ न्याय कर पाते हैं । इसके लिए हरेक भाषा को अपना योग्य स्थान मिले, यह जरूरी है । " इस तरह गाँधी जी का यह कहना कि प्रान्तीय स्तर पर हरेक कार्य वहाँ के स्थानीय भाषा में होना अत्यन्त प्रासंगिक है । साथ ही उनके द्‌वारा व्यक्त गये

सुझाव कि, हमें अपने प्रत्येक व्यवहार में अपनी भाषा का आदर करना सीखना चाहिए, अत्यन्त आवश्यक है । जब तक हम अंग्रेजी के व्यामोह से स्वयं को पृथक नहीं करते यह अत्यन्त दुष्कर होगा कि हमारी स्वभाषायें अधिक विकसित व समृद्ध होगी और हमारी आम जनता देश को समृद्ध व मजबूत बनाने में कोई भूमिका निभा सकेगी।

भारत जैसे बहुभाषी देश के लिए यह आवश्यक है कि एक ऐसी भाषा हो जो आपस में सभी भाषाओं को जोड़े । यह भाषा निश्चित तौर पर 'हिन्दी' ही है । यद्यपि यह भाषा कई उत्तर भारतीय प्रान्तों की मातृभाषा है परन्तु सम्पूर्ण देश में बोली और समझी जाती है । गाँधी जी ने अपने राष्ट्रभाषा सम्बन्धी विचारों में बहुत ही स्पष्टता से हिन्दी के पक्ष में हिन्द-स्वराज' में लिखा है- ' समग्र हिन्दुस्तान को जो चाहिए वह तो हिन्दी भाषा ही है और उसे नागरी अथवा फारसी लिपि मे लिखने की छूट होनी चाहिए । " दक्षिण अफ्रीका में स्थापित आश्रमों में उन्होंने शिक्षा सम्बन्धी कार्य किया था, उसी समय उन्हें इस बात का विश्वास हो गया था कि सारे भारतीयों को जोड़ने वाली एकमात्र भाषा "हिन्दी" ही है।

राष्ट्रभाषा के जो लक्षण उन्होंनें बताये हैं उसके आधार पर भी अंग्रेजी की तुलना में हिन्दी ही राष्ट्र की भाषा के रूप में खरी उतरती है । हिन्दी को सम्पूर्ण देश में लोकप्रिय बनाने की दिशा में भी उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किया । भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस के वार्षिक सम्मेलनों, जो देश के भिन्न-भिन्न हिस्सों मे आयोजित होते थे, गाँधी जी सदैव हिन्दी में ही बोला करते थे । 1918 में उन्होंने दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार के लिए अपने सबसे छोटे पुत्र देवदास को मद्रास भेजा था और तब से स्थापित 'दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा' आज भी दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार-प्रसार जोर शोर से कर रही है । सच्चाई यह है कि दक्षिण भारतीय प्रान्तों में हिन्दी के जितने विरोध की बात कही जाती है, वह वास्तव में वही की आम जनता द्वारा कम बल्कि राजनीतिक तौर पर अधिक है । गाँधी जी ने 1936 में दक्षिण भारत के अलावा अन्य अहिन्दी भाषी प्रान्तों में हिन्दी भाषा के प्रचार के लिए वर्धा में 'राष्ट्रभाषा प्रचार समिति' को स्थापित किया था।

हिन्दी की एक महत्वपूर्ण विशेषता उसकी ग्रहणशीलता रही है । एक ओर जहाँ वह संस्कृत से काफी हद तक जुड़ी रही है, जो दक्षिण भारतीय भाषाओं तमिल, तेलुगु व मलयालम आदि की मूल भाषा मानी जाती है, वहीं दूसरी ओर उसने उर्दू से भी अनेक शब्दों को ग्रहण करके अपने को समृद्ध बनाया है । ध्यातव्य है कि उर्दू भाषा का प्रचलन पंजाब, कश्मीर व बंगाल आदि में काफी रहा है । इस तरह सही मायनों में हिन्दी ही एकमात्र राष्ट्रव्यापी भाषा हो सकती है । 1941 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने बापू की हिन्दी की परिभाषा में उर्दू को अस्वीकार कर दिया । तत्पश्चात् गाँधी जी ने वर्धा में ही 1942 में 'हिन्दुस्तानी प्रचार सभा का स्थापना की तथा नागरी एवं उर्दू दोनों लिपियों में राष्ट्रभाषा प्रचार का काम प्रारम्भ किया।

14 सितम्बर 1949 को भारतीय संविधान निर्मात्री सभा ने देवनागरी में हिन्दी' को 'राजभाषा' के रूप में स्वीकार किया, परन्तु साथ ही संविधान की धारा 51 में स्पष्ट रूप से यह भी उपबन्धित किया गया कि ' संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार करे,

उसका विकास करे ताकि वह भारत की मिली जुली संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।"

इस तरह भले ही संविधान में गाँधी जी द्वारा सुझाये गये शब्द 'हिन्दुस्तानी' नाम या उर्दू लिपि को स्वीकार न किया गया हो, परन्तु उसका स्वरूप 'हिन्दुस्तानी' का ही होगा, यह उपरोक्त धारा मे बहु त स्पष्टता से कहा गया है । डा' राजेन्द्र प्रसाद ने भी इस सन्दर्भ में स्पष्ट कहा था कि ' 'हमारा कर्तव्य तो उस भाषा को जानने तथा उसे देवनागरी और उर्दू दोनों लिपियों में पढ़ना-लिखना सीखना है।"

आचार्य विनोबा भावे ने मातृभाषा और राष्ट्रभाषा की तुलना मनुष्य की दो आंखो से की है और कहा है कि जो महत्व दोनों आँखों का है वही महत्व दोनों भाषाओं का है । हमे उनका अमल करना चाहिए तथा अपने दैनिक जीवन में उसका अमल करना चाहिए। '

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राष्ट्रभाषा हमारी राष्ट्रीय एकता का तत्व है जिसको सरल, सुगम और सर्व स्वीकार्य बनाना हरेक भारतवासी का कर्तव्य है।

11.8 सारांश

प्रस्तुत अध्याय में गाँधी जी के भाषा सम्बन्धी विचारों का अध्ययन हिन्दी भाषा, प्रान्तीय भाषा, अंग्रेजी भाषा आदि के सन्दर्भ में किया गया है । इस अध्ययन से उन कारणों का पता चलता है जिसके कारण गाँधी हिन्दुस्तान में अंग्रेजी भाषा के प्रयोग का विरोध करते थे एवं स्वभाषाओं तथा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की स्वीकार्यता पर बल देते थे । सशक्त और एकीकृत भारत के लिए गाँधी राष्ट्रभाषा के तौर पर हिन्दुस्तानी का समर्थन करते थे उन्होंने प्रान्तीय भाषा की आवश्यकता, उनका संरक्षण और संवर्धन का समर्थन किया ताकि भारत के सांस्कृतिक विरासत फल-फूल सकें । अंग्रेजी भाषा को राष्ट्रभाषा हेतु अनुपयोगी मानते हु ए उन्होंने हिन्दी को विचारों के आदान-प्रदान हेतु उपयुक्त भाषा माना।

11.9 अभ्यास प्रश्न

1. भाषा के विकास पर गाँधी के विचारों की समीक्षा कीजिये ।
2. भाषा राष्ट्रीय एकीकरण का सशक्त माध्यम है । ' इस कथन के पक्ष एवं में अपने तर्क प्रस्तुत
3. कीजिये ।
4. राष्ट्रभाषा पर एक लघु निबन्ध लिखिये ।
5. शिक्षा का माध्यम स्वभाषा ही होनी चाहिए- गाँधी' । टिप्पणी लिखिए ।
6. अंग्रेजी भाषा पर गाँधी के विचारों की विवेचना कीजिए ।

11.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गाँधी, एम.के., 'मेरे सपनों का भारत; नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008
2. गाँधी, एम.के. हिन्द स्वराज'; नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 2008

3. गोयनका, कमल किशोर, पत्रकारिता के युग निर्माता महात्मा गाँधी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2008
4. शाह, दशरथ लाल, गाँधीजी और हमारी राष्ट्रभाषा, गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद, 2004
5. पाण्डे, बी.एन., महात्मा गाँधी समग्र चिन्तन, गाँधी स्मृति एवं दर्शन समिति, 1994
6. प्रभाकर, विष्णु, गाँधी. समय, समाज और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई (दिल्ली, 2003)

इकाई - 12

बुनियादी शिक्षा के विभिन्न आयाम

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 बुनियादी शिक्षा के लक्ष्य

12.3 स्व-शिक्षा के आदर्श

12.4 शिक्षा के रूप

12.5 नवीन शिक्षा का पाठ्यक्रम

12.6 राष्ट्रीय शिक्षा

12.7 राष्ट्र का पुनर्गठन

12.8 गाँधीवादी शिक्षा के आयाम

12.8.1 शिक्षा तथा सत्याग्रह

12.8.2 मूल्य शिक्षा

12.8.3 हस्तकला तथा शिक्षा

12.8.4 कृषि शिक्षा

12.9 सारांश

12.10 अभ्यास प्रश्न

12.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप सक्षम हो सकेंगे

- बुनियादी शिक्षा की धारणा को जानने में ।
- स्व-शिक्षा के आदर्श को जानने में ।
- गाँधी द्वारा रेखित शिक्षा की पाठ्य-वस्तु को जानने में ।
- गाँधीवादी शिक्षा के विभिन्न आयामों को जानने में ।

12.1 प्रस्तावना

भारत में शिक्षा को आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया माना गया है । यह ज्ञान का व्यावहारिक तथा गतिशील स्वरूप है । शिक्षा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक ज्ञान के प्रवाह का माध्यम रही है, एवं व्यक्ति के सामाजिक तथा व्यक्तिगत स्वरूप को शिक्षा द्वारा प्रकट किया जा सकता है । आज नयी शताब्दी में संयुक्ता तंत्र की प्रवृत्ति का अनुसरण किया जा रहा है । भौगोलिक तथा सांस्कृतिक सीमाओं को समाप्त किया जा रहा है । इसके परिणाम स्वरूप पूरे विश्व में दूरियाँ कम की जा रही हैं तथा हिंसात्मक विधियों को गति प्राप्त हो रही है । आज समाज में हिंसा को सामान्य घटना माना जाता है ।उसका यह कारण है कि आज की शिक्षा में नीति शास्त्र और मूल्यों का कोई सार्थक स्थान नहीं है । आधुनिक शिक्षा केंद्र दुकान

की भाँति काम कर रहे हैं जिनका मुख्य उद्देश्य लाभ कमाना है न कि छात्रों को देश का उत्तम नागरिक बनाना । शिक्षा विचारों के संचरण का साधन है तथा उन विचारों के अनुसार चरित्र तथा समाज का विकास करने का साधन है । शिक्षा एक व्यक्ति के जीवन दर्शन को उसके व्यक्तिगत आदर्शों तथा लक्ष्यों से ही नहीं जोड़ती है बल्कि उसको समाज से भी जोड़ती है।

गाँधी जी का दर्शन तथा उनके विचार भी उनके संचरण का अधिकतम साधन हैं । इसी कारण गाँधी जी को सच्चे अर्थों में एक महान, शाश्वत शिक्षक माना जाता है । गाँधी जी के यदि हमें समाज की वर्तमान समस्याओं से लड़ना है तो इसका हल हमें शैक्षिक प्रणाली में ढूँढना होगा । इनके शैक्षिक विचार मानव क्रिया के प्रत्येक क्षेत्र में प्रासंगिक हैं । गाँधी जी ने सच्ची शिक्षा उसे माना है जो बालकों में सीखने की प्राकृतिक शक्ति को विकसित करे।

12.2 लक्ष्य तथा उद्देश्य

गाँधी जी की बुनियादी शिक्षा योजना या नई शिक्षा का लक्ष्य मानव के मस्तिष्क, शरीर तथा आत्मा को शिक्षित करना है । उनके अनुसार सामान्य शिक्षा केवल मानव मस्तिष्क को ही विकसित करती है । नई शिक्षा केवल सूत कातने या फर्श साफ करने तक ही सीमित नहीं है बल्कि मानव व्यक्तित्व के तीन गुणों के द्वारा बौद्धिक विकास के उद्देश्य को पूरा करती है।

नई शिक्षा की योजना शिक्षित बालकों को सत्यवादी, प्रबल चेतना शक्ति युक्त तथा स्वस्थ बनायेगी । उनके हृदय ग्रामीण भारत में रहेंगे । उनके मस्तिष्क तथा हाथ समान तरीके से विकसित होंगे तथा ईर्ष्या, स्वार्थ और विश्वासघात की भावना समाप्त होगी. उनके अधिक तीव्र मस्तिष्क होंगें तथा वे ईमानदारी के पथ को चुनने की ओर अग्रसर होंगें । वे स्वार्थ रहित सेवा तथा सहयोग के भण्डार होंगें।

12.3 स्व-शिक्षा के आदर्श

गाँधी जी के अनुसार नई शिक्षा देश की वर्तमान परिस्थिति का परिणाम तथा समाज की आवश्यकता पूर्ण करने में सक्षम है । यह नई शिक्षा निम्न आदर्शों पर कार्य करेगी:-

- संपूर्ण शैक्षिक प्रणाली आत्मनिर्भर होगी ।
- इस शिक्षा में श्रम पर अन्तिम सार तक पूर्ण ध्यान दिया जायेगा ।।
- शिक्षा का माध्यम हिंदी होगा ।
- सामाजिक या धार्मिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं होगा बल्कि इसके स्थान पर बुनियादी नैतिक शिक्षा दी जायेगी ।
- समस्त आयु समूहों तथा महिलाओं एवं पुरूषों को प्रवेश दिया ।
- समस्त शैक्षिक प्रणाली को एक समान करने के लिये इस में नामांकित होने वाले सभी लोगों को क्षेत्रीय भाषा सीखनी होगी । ।

12.4 शिक्षा का स्वरूप

इस योजना में बालकों को केवल शारीरिक तथा मानसिक शिक्षा ही नहीं दी जानी चाहिये बल्कि धार्मिक शिक्षा भी दी जानी चाहिये । शारीरिक प्रशिक्षण में बालकों को खेती, बुनाई आदि में पूर्ण दक्षता प्राप्त करनी चाहिये । इससे पर्याप्त शारीरिक विकास होगा । इनके

अलावा बालकों को स्वस्थ एवं हृष्ट-पुष्ट बने रहने के तरीकों से परिचित करवाया जायेगा ताकि वे समान्य पीड़ाओं का इलाज घरेलू उपचारों के उपयोग से कर सकें । इस कार्य को पूरा करने के लिये उन्हें स्थानीय शाकों तथा झाड़ियों की जानकारी दी जानी चाहिये ।

मानसिक विकास के लिये छात्रों को देश की मुख्य भाषाएँ जैसे बंगाली' गुजराती, हिंदी, संस्कृत, उर्दू आदि सिखाई जाऐंगी तथा शिक्षा के प्रथम तीन वर्षो में अग्रेंजी भाषा को न्यूनतम प्राथमिकता दी जायेगी । गणित विषय को सीखने के लिये इसकी समस्त तकनीकों का समावेश करना होगा जो कि पारंपरिक विधियों पर आधारित हों, जैसे पहाड़े, लेखा-बही खाता आदि । बालकों को इतिहास,भूगोल तथा, खगोल विज्ञान के साथ-साथ रसायन विज्ञान की आरम्भिक धारणा भी पढ़ायी जायेगी । धार्मिक शिक्षा में छात्रों की यह पढ़ाया जायेगा कि किसी व्यक्ति का केवल चरित्र ही उसके धर्म का प्रतिबिंब होता है । इस शिक्षा नीति प्राथमिक स्तर तक शिक्षा का माध्यम मौखिक होगा । यदि यह योजना वास्तविकता को प्राप्त कर ले तो इस योजना के अंतर्गत दस वर्षो तक शिक्षा ग्रहण करने वाला छात्र स्नातक के समकक्ष होगा । प्रगति के परीक्षण का तरीका भिन्न होगा । छात्र के आत्म-विश्वास में उसकी सफल शिक्षा प्रतिबिम्बित होगी।

12.5 नवीन शिक्षा का पाठ्यक्रम

महात्मा गाँधी ने एक ऐसी शिक्षा योजना की रूपरेखा दी जो कि प्रत्येक भारतीय बालक के विकास में सक्षम थी । इसकी योजना इस प्रकार थी

1. कम से कम 8 वर्षो तक सह-शिक्षा दी जायेगी ।
2. शारीरिक कार्य को शिक्षा का भाग माना जायेगा ।
3. बालक शारीरिक कार्य अपनी रूचि के अनुसार निश्चित करें ।
4. सामान्य शिक्षा केवल तब ही प्रारंभ की जायेगी जब छात्र को इसका ज्ञान होगा ।
5. प्रारंभिक शब्द-ज्ञान का आरंभ ज्यामितिय आकृतियों के ज्ञान से किया जा सकता है तथा जब इस कार्य के लिये उंगलियों का प्रयोग किया जा सके, तब वर्ण सिखाये जा सकते हैं ।
6. यह महत्वपूर्ण है कि छात्र को लिखने से पहले पढ़ना सीखना चाहिये तथा चित्रों को समझना चाहिये ।
7. इस प्रकार की शिक्षा बालकों को मौखिक रूप से 8 वर्षो तक दी जानी चाहिये ।
8. बालक का हृदय पढ़ते समय अवरूद्ध नहीं होना चाहिये ।
9. कुल मिलाकर शिक्षा में आकर्षण होना चाहिये तथा छात्रों को यह खेल जितनी रूचिकर लगनी चाहिये ।
10. भाषा का माध्यम अनिवार्य रूप से मातृभाषा होनी चाहिये ।
11. बालकों को हिंदी, उर्दू राष्ट्रीय भाषा के रूप में पढ़ाई जानी चाहिये ।
12. धार्मिक शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिये जो कि शिक्षक के छात्रों के साथ व्यवहार तथा अन्त: क्रिया द्वारा प्राप्त की जानी चाहिये ।

13. इस शिक्षा की अगली समयावधि 9 वर्ष से 16 वर्ष होनी चाहिये ।
14. यदि संभव हो तो सह-शिक्षा को ही आगे तक चलाया जाये ।
15. इस अवधि में यदि छात्र हिंदू हों तो संस्कृत और यदि मुस्लिम हों तो अरबी भाषा पढ़ाई जानी चाहियें ।
16. शिक्षा के इस ब्लॉक में शारीरिक शिक्षा पर बल दिया जाये तथा अध्ययन निर्देशों को भी बढ़ाया जाये ।
17. इस दौरान यदि कोई छात्र पैतृक व्यवसाय को देखता है तो उसे उसमें दक्ष करने के प्रयास किये जाने चाहिये ।
18. इस अवधि के अंत से पहले, छात्र को इतिहास, भूगोल, वनस्पति शास्त्र, गणित आदि पर स्वामित्व प्राप्त हो जाना चाहिये ।
19. इसी प्रकार इस अवस्था में छात्राओं को सिलाई, बुनाई तथा पाक कला सीखनी चाहिये ।
20. नवीन शिक्षा की तीसरी अवस्था 16 से 25 वर्ष तक होगी ।
21. इस अवधि में छात्रों को शिक्षा इच्छानुसार दी जानी चाहिये ।
22. इस बात का निश्चय करने का प्रयास किया जाये कि शिक्षा का खर्च 9 वर्ष के बाद छात्र स्वयं उत्पन्न कर सकें ।
23. विद्यालय तथा शिक्षा केंद्रों को रख-रखाव के लिये न्यूनतम धनराशि की आवश्यकता होनी चाहिये ।
24. इस दौरान अंग्रेजी का भी अध्ययन किया जा सकता है क्योंकि अन्य देशों तथा राज्यों के साथ संप्रेषण के लिये अंग्रेजी की आवश्यकता होती है ।
25. महिलाओं के लिये शैक्षिक सुविधायें पुरूषों की भाँति ही होनी चाहिये किंतु विशिष्ट परिस्थिति में ध्यान देना चाहिये ।

12.6 राष्ट्रीय शिक्षा

गाँधी जी के अनुसार ' यह एक छोटा कार्य नहीं है वास्तव में यह एक कठिन कार्य है जो संपूर्ण जीवन की शिक्षा की माँग कर सकता है । " जब संपूर्ण जीवन इसको समर्पित हो जायेगा तो हमें एक स्वतंत्र, स्वप्रेरित तथा स्वनियंत्रित दर्शन की प्राप्ति होगी । यह एक ऐसा कार्य है जहाँ संवेग तथा विश्वास की सहभागिता होती है । इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये संपूर्ण जीवन का समय समर्पित करना पड़ता है । वास्तविक राष्ट्र निर्माण इसी प्रकार हो सकता है ।

यह शिक्षा दर्शन संपूर्ण देश में फैल जायेगा तथा संपूर्ण देश समाज के लिये ही उपयोगी रहेगा और संपूर्ण जनता के लिये भी अत्यधिक महत्वपूर्ण होगा । इस शिक्षा का पहला पाठ स्वच्छता तथा स्वास्थ्य होगा । ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य शिक्षा की कमी के कारण हमारे देश में असामयिक मौत होती है । इस समस्या का एकमात्र इलाज स्वास्थ्य शिक्षा है ।

इस शिक्षा दर्शन का दूसरा स्तर भोजन तथा वस्त्र की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना होगा । कोई भी व्यक्ति भोजन तथा वस्त्र के बिना नहीं रह सकता है, यह सभी के लिये प्रत्येक प्रकार का कार्य जैसे खाना पकाना से लेकर सिलाई तथा हल चलाना आदि के लिए

आवश्यक है । अर्थशास्त्र. गणित, पशुपालन आदि की मौलिक धारणा इस पाठ्यक्रम के दौरान सीखी जा सकती है ।

यदि कुछ रह जाये उसे शिक्षा की तीसरी अवस्था में पूर्ण किया जा सकता है । जैसे एक बालक किसी भाषा का व्याकरण उस भाषा को बोलकर सीखता है इसी प्रकार भूगोल का अध्ययन भ्रमण तथा यात्रा के द्वारा किया जा सकता है । शाब्दिक अर्थों में उस व्यक्ति को स्नातक नहीं कहा जा सकता है जिसने अपने देश की यात्रा नहीं की हो ।

यह आवश्यक नहीं है कि समस्त शिक्षा पारंपरिक विद्यालय विधियों द्वारा प्राप्त की जाये । व्यक्ति की आवश्यकता के अनुसार किये गये बौद्धिक निर्णय अध्ययन को वास्तविक तथा सरल बनाता है । इसलिए परीक्षा की कोई आवश्यकता नहीं होगी । इस प्रकार की शिक्षा के साथ प्रारंभ से ही धार्मिक शिक्षा भी अवश्य दी जानी चाहिये । यह शिक्षा प्रसंग संदर्भ के साथ दी जाये बजाय सैद्धांतिक विधियों के द्वारा दिये जाने के । धार्मिक शिक्षा आध्यात्मिक तथा सामाजिक दोनों प्रकार की है । ये एक ही सिक्के के दो पहलू तथा इनको एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है । शिक्षा में धर्म का स्थान है तो विश्लेषण को भी धर्म में महत्व दिया जाना चाहिये ।

इसके अतिरिक्त विज्ञान की भी अवहेलना नहीं करनी चाहिये । समाज की सेवा का यह सफल माध्यम है । विज्ञान तथा कला दोनों जीवन में महान संतोष देते हैं तथा शिक्षा की बाद की अवस्थाओं में इनको समाविष्ट किया जाना चाहिये । गाँधी जी ने राष्ट्रीय शिक्षा की बात अपने उन भाषण में की जहाँ उन्होंने कहा कि उद्योग तथा धार्मिक मूल संपूर्ण शिक्षा को प्रभावित करते हैं जैसे यूनानियों के लिये संगीत तथा "जिमनेजियम" में सब कुछ समावेशित हो जाता था इसी प्रकार हम उद्योग तथा धर्म से लगभग सभी कुछ सीखते हैं । ज्ञान तथा शिक्षा जीवन से ही प्राप्त किये जाने चाहिये ।

12.7 राष्ट्र का पुनर्गठन

गाँधी जी ने यह घोषणा की थी कि नवीन शिक्षा उनके जीवन का अंतिम किन्तु अधिकतम महत्वपूर्ण कार्य था । उन्होंने कहा यदि ईश्वर ने उनको यह कार्य पूरा करने का अवसर दिया तो भारत का संपूर्ण मानचित्र बदल जायेगा । उनका यह विचार था कि वर्तमान शिक्षा केवल शिक्षित लोगों का मूल्यहीन वर्ग तैयार कर रही है । केवल पुस्तक ज्ञान मूल्यवान लोगों को नहीं बना सकता है । देश को साक्षर लुहार, सुनार, किसान तथा कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है । गाँधी जी ने कहा कि नई शिक्षा माता के गर्भ में भ्रूण के विकास के साथ ही प्रारंभ हो जायेगी । यदि माता कठोर, परिश्रमी, सुव्यवस्थित तथा आत्म-संयमी है तो माता के चरित्र के ये सब लक्षण अगली पीढ़ी में स्वत: ही चले जायेंगे । इस प्रकार से प्रशिक्षित किये गये बालक को मोटे गद्दे पर बैठने पर खुशी नहीं होगी तथा फर्श साफ करने पर कोई शर्म नहीं महसूस होगी । उसकी कोई भी किया बेकार नहीं होगी । उसका मस्तिष्क तथा शरीर समन्वित होकर एक साथ कार्य करेंगें । इससे भुखमरी तथा गरीबी के कम करने में सहायता मिलेगी । गाँधी जी का विश्वास था कि नई शिक्षा तथा गाँव या कुटीर उद्योग एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

12.8 गाँधीवादी शिक्षा के आयाम

12.8.1 शिक्षा तथा सत्याग्रह

सत्याग्रह शिक्षा का सर्वोच्च तथा सर्वोत्तम रूप है । इस प्रकार की शिक्षा सामान्य शिक्षा से पहले दी जानी चाहिये । सत्य तथा प्रेम में छुपी हुई शक्तियों को बालक को सबसे पहले सीखना चाहिये । वास्तविक शिक्षा को यह निश्चित करना चाहिये कि प्रत्येक बालक जीवन संघर्ष में यह सीखता है कि प्रेम, घृणा तथा हिंसा को पराजित कर सकता है ।

12.8.2 मूल्य शिक्षा

गाँधी जी ने पुस्तकों के माध्यम से दी जाने वाली शिक्षा की अपेक्षा मूल्य शिक्षा को उत्कृष्ट माना था । मूल्य शिक्षा मौलिक आवश्यकता है । एक छात्र अपने अच्छे चरित्र और व्यवहार के बहुत लाभ मिलेगा । धर्म तथा मूल्य पर विचार ही नहीं किया जाना चाहिये, उन्हें चरित्र तथा व्यवहार का हिस्सा बनाकर दैनिक जीवन में प्रतिबिम्बित करना चाहिये ।

12.8.3 हस्तकला तथा शिक्षा

गाँधी जी ने वर्धा शिक्षा योजना में इस बात पर बल दिया कि कोई भी विषय जो कताई के पहिये से संबंधित नहीं हो, छात्रों को नहीं पढ़ाया जाना चाहिये । इससे उनका अर्थ था कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में क्रांतिकारी परिवर्तन आवश्यक था । उनका सपना था कि बौद्धिक प्रशिक्षित मस्तिष्क तथा हृदय सभी संघर्षों में विजयी हो सकता है । गाँधी जी का विश्वास था कि यदि वे कवि होते तो अपनी पाँचों उँगलियों का उपयोग करते अर्थात उनकी मानसिक तथा शारीरिक क्षमताओं का अधिकतम उपयोग होता।

उन्होंने कहा कि जो लोग अपने हाथों को प्रशिक्षित नहीं करते, केवल बौद्धिक क्रिया में विश्वास करते हैं, वे संगीत से हीन होते हैं तथा उनके जीवन में तारतम्य का अभाव होता है और उनकी क्षमताऐ निश्चित रूप से अविकसित अवस्था में होती है । केवल पुस्तकीय ज्ञान से एकाग्रता की प्राप्ति नहीं हो सकती है । वे शब्द जिनसे अर्थहीन ध्वनि निकलती है, एक निश्चित समय बाद विचलित हो जाते हैं । इसके फलस्वरूप मस्तिष्क तथा शरीर अपने कार्य करने में असफल हो जाते हैं । इसी कारण हस्तकला को शिक्षा में प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

12.8.4 कृषि शिक्षा

नवीन शिक्षा, गाँधी जी के अनुसार एक अपूर्ण मनुष्य को पूर्ण बनाती है । फल क्या सब्जियों को उगाना केवल शारीरिक श्रम नहीं है किंतु मस्तिष्क को भी शिक्षित करता है । अनाज उत्पादन लाखों भारतीयों की आवश्यकता की पूर्ति करता है । नवीन शिक्षा प्रणाली में शिक्षक पहले दर्जे का हस्तकला विशेषज्ञ होगा । ग्रामीण युवक गाँवों में ही रहेंगे तथा अपने शिक्षक के निर्देशन में अपने लिए आवश्यक सामग्री का उत्पादन करेंगें । इससे लोगों को निःशुल्क शिक्षा मिलेगी । इससे शोषण का समापन होगा क्योंकि लोगों को अपने उत्पाद का पूर्ण अधिकार होगा तथा उसके स्वयं मालिक होंगे।

12.9 सारांश

यदि हमें भारत तथा विश्व की वर्तमान समस्याओं का हल ढूँढना है तो हमें गाँधी जी के सिद्धांतो को याद करना होगा । चाहे हम पसंद करे या नहीं । गाँधीवादी दर्शन की प्रासंगिकता को आज की शिक्षा नीति का नारा माना जा सकता है । यह नीति इस तथ्य पर आधारित है कि सभी के लिये सामाजिक न्याय तथा समानता के लक्ष्य की प्राप्ति केवल शिक्षा के द्वारा ही की जा सकती है । गाँधी जी के अनुसार शिक्षा सामाजिक कांति का मध्यम है । उन्होंने प्रयोगों द्वारा सिद्ध भी कर दिया कि बौद्धिक रूपांतरण के बिना सामाजिक परिवर्तन संभव नहीं है । इसी कारण उन्होंने दक्षिणी अफ्रीका में क्रूरता के विरोध में लड़ने के लिये तथा बाद में भारत की स्वतंत्रता के संघर्ष में शिक्षा को एक माध्यम बनाया था।

गाँधी जी के शिक्षा के दर्शन का सार है कि शिक्षा केवल उत्पादक कार्य के द्वारा दी जानी चाहिये । इस उत्पादक कार्य में शारीरिक तथा बौद्धिक अभ्यास दोनों समाविष्ट होने चाहिये । यह जीवन में स्वतंत्रता तथा आत्म-निर्भरता का सार है । गाँधी जी द्वारा नैतिक शिक्षा को महत्वपूर्ण स्थान देना हमें यह संदेश देता है कि भावी पीढ़ी में मानवीय मूल्यों को विकसित करने की दिशा में एक तीव्र प्रतिबद्धता स्थापित करनी है । उन्होंने वसुधैव कुटुम्बकम की बात भी कही है । कुल मिलाकर गाँधी जी की नई शिक्षा उच्च नैतिक चेतना का प्रतीक है, जिसको लागू करना आज भारत यह जरूरी और चुनौतीपूर्ण कार्य है।

12.10 अभ्यास प्रश्न

1. बुनियादी शिक्षा की धारणा तथा उद्देश्यों की व्याख्या कीजिये ।
2. बुनियादी शिक्षा की पाठ्य-वस्तु की व्याख्या कीजिये ।
3. गाँधी जी के बुनियादी शिक्षा के दर्शन की व्याख्या कीजिये ।

12.11 संदर्भ ग्रन्थ

1. पटेल, एम. एस.. दी एडुकेम्मल फिलॉसफी ऑफ महात्मा गांधी, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 1958
2. चटर्जी, मारग्रेट, गाँधी एण्ड द चैलेंज ऑफ रिलिजियस डाइवर्सिटी, प्रोमिला & कम्पनी, नई दिल्ली, 2005
3. वेबर थॉमस, गांधी एज डिसीप्लिन एण्ड मेन्टोर, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली. 2007
4. रोलां रोमां, महात्मा गांधी, चिन्तन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
5. मिश्रा, शिवदत्त, नई तालीम, प्रयोग, प्रसार एवं परिणाम, गाँधी सेवा संघ. वर्धा, 2009
6. जोशी, सुधर्मा, एडुकेशनल थोट्स ऑफ महात्मा गाँधी, क्रिसेन्ट पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली, 2008
7. त्रिपाठी, श्रीधर, गॉधीयन फिलॉसफी ऑफ एडुकेशन, अनमोल पब्लिकेशन्स प्रालि, नई दिल्ली, 2007

इकाई - 13

महात्मा गाँधी: एक जननेता के रूप में

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 दक्षिण अफीका में सत्याग्रह की शुरूआत
13.3 भारत में गाँधी का पदार्पण एवं नेतृत्व
13.3.1 चम्पारण सत्याग्रह (1917)
13.3.2 अहमदाबाद सत्याग्रह (1917)
13.3.3 खेड़ा सत्याग्रह (1918)
13.4 अखिल भारतीय संघर्ष की शुरूआत रौलट सत्याग्रह (1919)
13.5 खिलाफत आन्दोलन और गाँधी (1920)
13.6 असहयोग आन्दोलन (1920-1922)
13.6.1 निषेधात्मक कार्यक्रम
13.6.1 रचनात्मक कार्यक्रम
13.7 सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930-1934)
13.8 भारत छोड़ो आन्दोलन (1942)
13.9 समीक्षा
13.10 सारांश
13.11 अभ्यास प्रश्न
13.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय मे गाँधी को एक नेतृत्व कर्ता के रूप में दिखाया गया है । उनके सत्याग्रह प्रयोगों तथा जनआन्दोलनों के विभिन्न रूपों की विस्तार से चर्चा की गई है । इस अध्याय के अध्ययन के बाद आप:

- एक जननेता के रूप में गाँधी के आविर्भाव को रेखांकित कर सकेंगे,
- सत्याग्रह व अन्य आन्दोलनों के गाँधीवादी तरीकों से परिचित हो सकेंगे,
- एक सीमित जनाधार के संगठन काँग्रेस को एक राष्ट्रव्यापी भूमिका में सफलतापूर्वक बदल देने के उनके प्रयासों को देख सकेंगे
- साम्प्रदायिक सौहार्द व रचनात्मकता द्वारा आम जनता को एक महान उद्देश्य से जोड़ देने के उनके तकनीकों की विवेचना कर सकेंगे आदि ।

13.1 प्रस्तावना

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में जहाँ उदारवादी राष्ट्रवादी कहे जाने वाले बुद्धिजीवियों ने औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के बारे में एक जटिल समझ सफलतापूर्वक विकसित कर ली थी वहीं 20वीं सदी के पूर्वार्द्ध में चरमपंथी कहे जाने वाले नेताओं ने उपनिवेशवाद के खिलाफ संघर्ष की राजनीति को जन्म दिया था । लेकिन गाँधी के दौर में आकर ही जनता और नेताओं के बीच स्वत:स्फूर्तता और संगठन के बीच बेहतर समझ-बूझ और व्यवहार विकसित हुआ । सबसे बढ़कर यह गाँधी ही थे जिन्होंने जनता के बीच जाकर उन्हें लामबंद किया और राष्ट्रीय आन्दोलन की नींव इस अवधारणा पर रखी कि आम जनता राजनीति की विषय वस्तु है. उसका भाजन नहीं।

दक्षिण अफ्रीका के अपने प्रवास के दिनों से ही गाँधीजी अपने जीवन भर जनता-नेता द्वन्द्वात्मकता की समस्या से जूझते रहे और उनकी राजनीति की सबसे सुदृढ़ आधार जनता का संघर्ष कर सकने की क्षमता, उसकी निडरता, उसकी आत्म बलिदान की भावना, साहस और उसके नैतिक बल उनका अपार विश्वास था।

गाँधी जी के नेतृत्व को निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत समझा जा सकता है-

- सार्वजनिक जीवन का प्रारम्भ दक्षिण अफ्रीका में उनके द्वारा चलाये गये
- भारत में सार्वजनिक जीवन (नेतृत्व) का प्रारम्भिक चरण -
  - चम्पारण सत्याग्रह
  - अहमदाबाद सत्याग्रह
  - खेड़ा सत्याग्रह
- रौलट एक्ट के विरूद्ध संघर्ष
- खिलाफत व असहयोग आन्दोलन का नेतृत्व
- सविनय अवज्ञा आन्दोलन का नेतृत्व
- भारत छोड़ो आन्दोलन का नेतृत्व

गाँधी जी के सार्वजनिक जीवन की शुरूआत का प्रथम दर्शन हमें उनके दक्षिण अफ्रीका के प्रवास में मिलता है । ध्यातव्य है कि दादा अब्दुल्ला के मुकद्दमे की पैरवी करने दक्षिण अफ्रीका गये गाँधी को वहाँ की रंगभेद की नीति तथा भारतीय व एशियाई देशों के नागरिकों के प्रति होने वाले अत्याचारों ने अंदर तक झिंझोड़ कर रख दिया और एक शर्मीला बैरिस्टर तीन वर्षों के भीतर ही एक प्रमुख नेतृत्वकर्ता बन गया । उन्होंने भारतीय श्रमिकों का संगठन, मंत्रियों को स्मरण पत्र तथा समाचार पत्रों में ढेर सारे लेख भारतीयों की दशा में सुधार लाने के उद्देश्य से लिखना शुरू कर दिया । दादा अब्दुल्ला के मुकदमें की समाप्ति के बाद जब उन्होंनें भारत आने का निर्णय किया उसी समय उनके तमाम भारतीय सहयोगियों ने उनसे कुछ दिन ओर वहाँ रुककर अधिकार प्राप्ति हेतु संघर्ष में भारतीयों के मार्गदर्शन का आग्रह किया । मानवता के महान पैरोकार गाँधी उनके आग्रह को नकार नहीं सके और उन्होंनें दक्षिण अफ्रीकी सरकार के अन्यायकारी कानूनों के विरूद्ध अहिंसक आन्दोलन के शुरूआत का निश्चय कर लिया।

13.2 दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह की शुरुआत

वैसे तो 1894 में ही जब प्रिटोरिया की सरकार ने हिन्दुस्तानियों को मताधिकार से वंचित करने का विधेयक पारित किया तभी गाँधी ने उस विधेयक के विरोध में गंभीर संघर्ष के शुरूआत की सलाह लोगों को दी तथा लोगों को संगठित करने के उद्देश्य से 22 मई 1894 को नाटाल इण्डियन कांग्रेस' की स्थापना की परन्तु दक्षिण अफ्रीका में गाँधी के सत्याग्रह का आरम्भ 22 अगस्त 1906 को ट्रांसवाल सरकार के एशियाटिक रजिस्ट्रेशन बिल' के विरूद्ध संघर्ष से हुआ । इसमें भारतीयों को अपमानित करने के उद्देश्य से यह प्रावधान किया गया था कि आठ वर्ष की आयु से प्रत्येक भारतीय का रजिस्ट्रेशन आवश्यक था और परमिट की जाँच के लिए पुलिस कभी भी भारतीयों के घर में घुसकर पूछताछ कर सकती थी । इसके अतिरिक्त भारतीयों से कही भी रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र के लिए पूछताछ की जा सकती थी । गाँधीजी ने लम्बे समय तक भारतीयों के नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष किया किन्तु आशानुकूल परिणाम न मिलने पर गाँधीजी ने सत्याग्रह करने का निश्चय किया।

इन प्रावधानों के विरूद्ध गाँधीजी ने 11 सितम्बर, 1906 को जोहान्सबर्ग के एम्पायर थियेटर में यह निर्णय लिया कि वे इस अत्याचार का विरोध करेंगे । यहाँ पर भाषण देते हुए गाँधी जी ने कहा- 'मेरे सामने केवल एक ही रास्ता है वह यह है कि मैं ऐसे कानून के समक्ष समर्पण करने के पूर्व मरना पसन्द करूंगा । यहाँ तक कि सब लोग भी मुझे छोड़कर चले जायेंगे तो भी मैं अकेला ही अपने व्रत पर दृढ़ बना रहूँगा । " इसी प्रतिज्ञा को सत्याग्रह का शुभारम्भ माना गया ।

इस आन्दोलन ने पूरे उपनिवेश में एक भूचाल का काम किया तथा गाँधी को 10 जनवरी 1908 को दो मास के कारावास की सजा मिली । इसी बीच एक महत्वपूर्ण घटनाक्रम में दक्षिणी अफ्रीकी सरकार के प्रतिनिधि जनरल स्मट्स ने गाँधी से समझौता किया कि यदि भारतीय स्वेच्छा से अपना रजिस्ट्रेशन कराने पर सहमत होते हैं तो वे इस कानून को रद्द कर देंगे । समझौते के आधार पर गाँधी व अन्य की रिहाई हो गयी और गाँधी ने स्वयं अपना रजिस्ट्रेशन कराया परन्तु फिर भी बिल को रद्द नहीं किया गया । इस अनुभव से गाँधी को गहरा धक्का लगा ।

गाँधी ने अब आन्दोलन की रूपरेखा बदल दी और यह निर्णय किया कि अब सभी रजिस्ट्रेशन पत्रों की होली जलायेंगे व हरेक स्थान पर न घूमने के आदेशों की अवहेलना जारी रखते हुए स्वेच्छा से जेल जायेंगे । अनवरत आन्दोलन जारी रखने से सत्याग्रहियों की आर्थिक स्थिति खराब होने लगी । इसी बीच जर्मन नागरिक केलेन बाख ने गाँधी को सहायता के उद्देश्य से 1100 एकड़ का फार्म खरीद कर सत्याग्रहियों को सहायता के लिए प्रदान किया । गाँधी ने इसे टॉलस्टाय फॉर्म नाम दिया । यह स्थान गाँधी के नवीन प्रयोगों का स्थल बना जहाँ सभी धर्मो. जातियों, तथा भिन्न प्रकार के लोग एक साथ रहते थे । गाँधी ने यहाँ अहिंसा, सामाजिक सद्भाव, शिक्षा तथा श्रम सम्बन्धी विचारों का परीक्षण व कार्य रूप में उनका प्रयोग किया।

गाँधी ने एशियाटिक बिल का विरोध के लिए जिस सत्याग्रह की शुरुआत की वह लगभग चार वर्षो तक चला । इस सत्याग्रह के दौरान एक महत्वपूर्ण घटना यह रही कि एक

सरकारी मेहमान के रूप में गोपालकृष्ण गोखले ने दक्षिण अफ्रीका का दौरा किया । गाँधी से उनकी मुलाकात हुई । गोखले ने गाँधी को विश्वास दिलाया कि एशियाटिक बिल रद्द कर दिया जायेगा । वे आन्दोलन वापस ले लें लेकिन गाँधी ने अपनी आशंका जताई जो अन्तत: सच साबित हुई । गोखले की यात्रा का दूसरा महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि गोखले ने गाँधी को भारत की दयनीय हालत से परिचित कराया । इस तरह गाँधी भारत में अपने अभियान के शुरूआत से पूर्व ही यहाँ की स्थिति से काफी परिचित हो चुके थे।

इसी तरह की एक अन्य महत्वपूर्ण घटना दक्षिण अफ्रीकी सुप्रीम कोर्ट द्वारा एक भारतीय दम्पत्ति के विवाह को गैर-कानूनी घोषित करना साबित हुआ । कोर्ट के इस निर्णय से हिन्दू मुस्लिम व पारसी सभी विवाह अवैध घोषित हो गये । इससे गैर इसाई महिलाओं में व्यापक असंतोष उत्पन्न हुआ तथा सत्याग्रह आन्दोलन और तेज हुआ । अब इसमें महिलाओं एवं मजदूरों की भी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित होने लगी । गाँधी ने एक सार्वजनिक भाषण के दौरान कहा कि चह संघर्ष मानवता के लिए है और इस प्रकार यह धर्म की लड़ाई है ।'

इस आन्दोलन के पक्ष में दक्षिण अफ्रीका में रेलवे के गोरे कर्मचारी भी हड़ताल पर चले गए । इस तरह यह सत्याग्रह अत्यन्त व्यापक हो गया लेकिन इसी बीच गाँधी ने यह कहते हुए कि ' सत्याग्रह का उद्देश्य किसी को बर्बाद करना, नीचा दिखाना या कमजोर बनाकर उस पर विजय प्राप्त करना नहीं अपितु सत्याग्रही को चाहिए कि वह अपनी ईमानदारी, बहादुरी एवं आत्मत्याग से विरोधी को प्रभावित करे और उसके हृदय को जीते।

गाँधी के इस सहयोगी रूख ने जनरल स्मट्स के हृदय को प्रभावित किया और 30 जून 1914 को दोनों के मध्य एक समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत सभी विवाहों को वैध घोषित किया गया तथा नाटाल के भारतीय मजदूरों पर लगने वाले कर को समाप्त घोषित किया गया । यह भी तय हुआ कि 1920 को बाद भारत से मजदूरों को नहीं लाया जायेगा । गाँधी ने इसे दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों के लिए 'मैग्नाकार्टा' की संज्ञा दी।

दक्षिण अफ्रीकी सत्याग्रह का महत्वपूर्ण परिणाम यह रहा कि यह व्यापक स्तर पर अहिंसा के सामाजिक एवं राजनीतिक प्रयोग का महान उदाहरण बना जिसने एक अपरिपक्व व : संकोची बैरिस्टर को परिपक्व और अदम्य साहसी नेता बना दिया । यही वह जगह थी जहाँ गाँधी जी ने कार्यक्रमों के लिए स्वयं को तैयार कर लिया । इस तरह गाँधी का प्रथम कर्मक्षेत्र दक्षिण अफ्रीका बना जहाँ ने सर्वप्रथम सत्याग्रह का सफल प्रयोग किया और एशिया के एक प्रभावशाली नेता के रूप में उभरे।

13.3 भारत में गाँधी का पदार्पण व नेतृत्व

दक्षिण अफ्रीका में अपने सत्याग्रह के सफल प्रयोग से उत्साहित गाँधी 09 जनवरी 1915 को भारत वापस लौटे । अपने राजनैतिक गुरू गोखले (गोपालकृष्ण गोखले को गाँधी अपना राजनैतिक गुरू मानते थे) के निर्देशानुसार उन्होंने भारतीय लोगों की दशा व यहाँ के परिस्थितियों का अध्ययन करने तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं के विचारों को जानने के उद्देश्य से अनेक स्थानों का भ्रमण किया । दक्षिण अफ्रीका की तरह ही गाँधी ने यहाँ भी 1915 में साबरमती आश्रम' (अहमदाबाद) की स्थापना की । भारतीय परिवेश में भी गाँधी ने सत्याग्रह का

सफलतापूर्वक प्रयोग किया जो आगे चलकर अमूल्य साबित हुए । अपने नेतृत्व के अद्भुत गुण से राष्ट्रीय आन्दोलन के संचालन से पूर्व उन्होंने कई स्थानीय समस्याओं का सत्याग्रह द्वारा सफलतापूर्वक निराकरण किया । इनमें प्रमुख थे -

13.3.1 चम्पारण सत्याग्रह (1917)

गाँधी ने सर्वप्रथम भारत में बिहार के चम्पारण नामक स्थान पर किसानों का नेतृत्व किया । ध्यातव्य हो कि चम्पारण के राजकुमार शुक्ल के आग्रह पर गाँधी चम्पारण पहुँचे । यही के किसानों को अपनी कुल भूमि के 3/20 हिस्से पर अनिवार्यत: नील की खेती करनी पड़ती थी । इसे 'तिनकठिया पद्धति' कहते थे । गाँधी की इस यात्रा को वहाँ के कमिश्नर ने अवैध घोषित करते हुए उन्हें चम्पारण छोड़ देने का आदेश दिया । गाँधी ने उस आदेश को यह कहते हुए मानने से इंकार कर दिया कि भले ही उन्होंनें कानून की अवहेलना की हो किन्तु उनके लिए मानवता के उच्चतर कानून को अन्तःकरण की आवाज को मानना आवश्यक है । साथ ही गाँधी ने अदालत में सरकारी आदेश न मानने की अपनी गलती स्वीकार की।

अन्तत: इस मुकदमे में गवर्नर ने अपनी गलती स्वीकार की और गाँधी से सहयोग माँगा । गाँधी की सलाह पर एक 'कृषक जाँच समिति' का गठन किया गया जिसके सदस्य गाँधी भी बनाये गये । जाँच के उपरान्त गाँधी की सलाह पर 'तिनकठिया पद्धति' समाप्त घोषित की गई और गाँधी का पहला प्रयास सफल रहा । इस घटना ने गाँधी को आम किसानों में लोकप्रिय बनाया ।

13.3.2 अहमदाबाद सत्याग्रह (1917)

अहमदाबाद मिल मालिकों व मजदूरों के बीच 'प्लेग बोनस' को लेकर छिड़े विवाद ने गाँधी को मजदूरों के बीच अपने सत्याग्रह के प्रयोग और नेतृत्व का अवसर प्रदान किया । मजदूरों की माँग थी कि प्रथम विश्वयुद्ध के बाद बढ़ी महंगाई की तुलना में उन्हें मिलने वाला बोनस काफी कम है, जबकि मिल मालिक इसे समाप्त करना चाहते थे । गाँधी ने मिल मालिकों और मजदूरों को इस पूरे मामले को एक ट्रिब्यूनल को सौंपने पर राजी कर लिया लेकिन मिल मालिकों ने शीघ्र ही हड़ताल का बहाना करके अपने को ट्रिब्यूनल से अलग कर लिया। उन्होंने मजदूरों के लिए 20 प्रतिशत बोनस की घोषणा की साथ ही इसे न स्वीकार करने वाले मजदूरों को नौकरी से निकाल देने की धमकी दी । इस पूरे मामले से गाँधी बहुत क्षुब्ध हुए तथा मजदूरों को हड़ताल पर जाने को कहा । गाँधी ने 35 प्रतिशत बोनस की माँग की । उन्होंनें मजदूरों से अहिंसा का मार्ग अपनाने का आहवान किया तथा उनके उत्साह हेतु खुद भी अनशन पर बैठने का निर्णय लिया । गाँधी के इस निर्णय का मिल मालिकों पर व्यापक असर पड़ा और उन्होंनें 35 प्रतिशत बोनस देना स्वीकार किया । इस तरह अन्तत: गाँधी ने मजदूरों के हितों का सफलतापूर्वक नेतृत्व किया।

13.3.3 खेड़ा सत्याग्रह (1918)

गुजरात खेड़ा जिले के किसानों की स्थिति अतिवृष्टि (1917) एवं अनावृष्टि (1918) के कारण अत्यन्त शोचनीय हो गई थी । परन्तु फिर भी सरकार ने किसानों को लगान माफ करने से स्पष्ट इंकार कर दिया था । गाँधी का ध्यान इस ओर आकृष्ट कराया गया तो उन्होंने फरवरी 1918 में बम्बई में सत्याग्रह की घोषणा की । वह सरकार को बताना चाहते थे कि नागरिकों की राय के बिना वह उन पर हुकूमत नहीं चला सकती । गाँधी ने किसानों को लगान न देने की शपथ दिलाई । साथ ही यह भी कहा कि अगर सरकार गरीब किसानों का लगान माफ कर देती है तो. वे किसान जो लगान दे सकते हैं स्वेच्छा से लगान दे देंगे । चार महीने की संघर्ष के बाद सरकार ने यह निर्देश दिया कि केवल उन्हीं किसानों से लगान वसूली की जाए जो देने की स्थिति में है । इस तरह गाँधी का मकसद पूरा हो गया और आन्दोलन समाप्त घोषित कर दिया गया।

चम्पारण, अहमदाबाद और खेड़ा के सत्याग्रह के प्रयोगों ने गाँधी को प्रारम्भिक तौर पर अपने नेतृत्व के तकनीक को आजमाने का अवसर दिया । साथ ही गाँधी को देश की जनता विशेषकर किसानों-मजदूरों के नजदीक आने व उनकी समस्याओं को जानने का अवसर उपलब्ध कराया था । गाँधी को इसके माध्यम से जनता की ताकत व कमजोरियों का भी एहसास हुआ । इसका परिणाम यह हुआ कि राजनीतिक कार्यकर्ता विशेषकर युवा पीढ़ी उनको श्रद्धा की नजर से देखने लगे और इस दौरान गाँधी जी ने भारतीय जनता के बीच एक जन नेता के रूप में अपनी पहचान बना ली।

13.4 अखिल भारतीय संघर्ष की शुरुआत : रौलट सत्याग्रह (1919)

चम्पारण अहमदाबाद और खेड़ा के सत्याग्रह की सफलता ने गाँधी को साहसी और भारतीय जनमानस में काफी लोकप्रिय बना दिया था । अपने इसी विश्वास के कारण उन्होंने फरवरी 1919 मे प्रस्तावित रौलट एक्ट (इसके अन्तर्गत आतंकवादी गतिविधियों की संभावना के नाम पर ब्रिटिश सरकार किसी भी भारतीय को बंदी बना सकती थी), के विरूद्ध देशव्यापी आन्दोलन का आहवान किया । कहा जा सकता है कि इसी आन्दोलन ने गाँधी को पहली बार एक अखिल भारतीय नेतृत्व का अवसर प्रदान किया।

संवैधानिक प्रतिरोधों के बेअसर होने पर गाँधी ने पुन: सत्याग्रह के शुरूआत की पहल की । देशव्यापी हड़ताल, उपवास व प्रार्थना सभाओं को आयोजित करने का निर्णय हुआ । कुछ निश्चित कानूनों की अवमानना का भी निर्णय हुआ । इस हेतु 6 अप्रैल की तारीख निश्चित हुई । किन्तु दिल्ली में कुछ गलतफहमी वश 30 मार्च को ही हड़ताल आयोजित हो गई और काफी हिंसा भड़की। जल्दी ही यह हिंसा पंजाब व बम्बई तक भी फैल गई । गाँधी ने गुजरात और बम्बई की यात्रा कर लोगों से शान्ति बनाये रखने की अपील की । इस बीच पंजाब में सैफुद्दीन किचलू एवं डाक्टर सत्यपाल की गिरफ्तारी के विरोध में 13 अप्रैल 1919 को जलियाँवाला बाग (अमृतसर) में एक सभा आयोजित हुई । इस सभा पर जनरल डायर ने निहत्थी जनता पर गोलियाँ चलाने का आदेश दिया जिससे व्यापक नरसंहार हुआ तथा हजार की संख्या में लोग मरे

। पंजाब में मार्शल ली लागू कर दिया गया और हिंसा की बढ़ती भूमिका को देख गाँधी ने 18 अप्रैल को सत्याग्रह के वापसी की घोषणा की । इस तरह रौलट एक्ट तथा जलियाँवाला बाग घटनाक्रम ने पहले अंग्रेजी हुकूमत के प्रति नरम रवैया रखने एक नेता को पूरी तरह असहयोगी बना दिया।

13.5 खिलाफत आन्दोलन और गाँधी (1920)

प्रथम विश्वयुद्ध में अंग्रेजों ने मुसलमानों का सहयोग प्राप्त करने के लिए तुर्की के प्रति उदार रवैया बरतने का वादा किया था । किन्तु, युद्धोपरान्त वे अपने वायदे से मुकर गये और तुर्की के खलीफा, जिन्हें भारतीय मुसलमान भी अपना धर्मगुरू स्वीकार करते थे, को अपदस्थ कर दिया तथा तुर्की का बँटवारा करने की संधि कर ली । भारतीय मुसलमानों में अंग्रेजों के इस निर्णय के विरूद्ध तीव्र प्रतिक्रिया और वे स्वयं को ठगा हुआ सा महसूस करने लगे । नवम्बर 1919 में एक खिलाफत सम्मेलन बुलाया गया गाँधी भी विशेष आमंत्रित अतिथि के रूप में शामिल हुए। गाँधी ने भी अनुभव किया कि अंग्रेजों ने मुसलमानों को धोखा दिया है ।

इस क्रम में गाँधी ने खिलाफत कमेटी को अंग्रेजी सरकार के खिलाफ अहिंसक आन्दोलन की सलाह दी। 9 जून 1920 को इलाहाबाद में हुए एक सम्मेलन में खिलाफत नेताओं ने सर्वसम्मति से गाँधी के अहिंसक आन्दोलन के सुझाव को स्वीकृति प्रदान की तथा गाँधी को उसके नेतृत्व की जिम्मेदारी सौंपी । इस प्रकार तत्कालीन समय में वे मुस्लिमों के भी सर्वमान्य नेता के रूप में सामने आये । कालान्तर में उन्होंने खिलाफत को भी असहयोग आन्दोलन से सम्बद्ध करने का निर्णय लिया और इस आन्दोलन द्वारा हिन्दू-मुस्लिम एकता का एक मजबूत आधार तैयार किया।

13.6 असहयोग आन्दोलन (1920-22)

ब्रिटिश सरकार द्वारा 1917 में गठित मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड कमेटी के रिपोर्ट के आधार पर भारतीय शासन अधिनियम, 1919 पारित किया गया । भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इन सुधारों को (मोंट-फोर्ड सुधार) पूरी तरह अपर्याप्त, असंतोषजनक तथा निराशाजनक बताया । सितम्बर 1920 में कलकत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन बुलाया गया जिसमें मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के अन्तर्गत निर्मित भारतीय परिषद अधिनियम पर विचार किया गया । गाँधी ने इसी सत्र में अपना असहयोग कार्यक्रम प्रस्तुत किया । उदारवादी नेताओं के विरोध के बावजूद वे अपने विचार पर दृढ़ रहे तथा कांग्रेस ने उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया । तत्पश्चात् 1920 दिसम्बर में नागपुर में हुए नियमित कांग्रेस अधिवेशन में भी असहयोग प्रस्ताव को भारी बहुमत से स्वीकृति मिली । कांग्रेस ने अपना लक्ष्य घोषित किया शान्तिपूर्ण और वैधानिक तरीकों द्वारा स्वराज की प्राप्ति । ' साथ ही इस आन्दोलन के नेतृत्व का जिम्मा पुन: गाँधी को सौंपा गया । पट्टाभि सीतारमैया ने इसे भारतीय इतिहास में एक नूतन युग के प्रारंभ की संज्ञा दी है।

असहयोग आन्दोलन की शुरूआत करने से पूर्व गाँधी ने देशव्यापी यात्राएँ भी तथा लोगों को इसके कार्यक्रमों व उद्देश्य से अवगत कराया और उनसे सहयोग की अपील की । गाँधी ने इसके संचालन के लिए दो प्रकार के कार्यक्रम बनाये - (1) निषेधात्मक, तथा (2) रचनात्मक

13.6.1 निषेधात्मक कार्यक्रम

इसका अर्थ था सरकार के प्रति असहयोग करना । इन कार्यक्रमों में शामिल थे- सरकारी उपाधियों का बहिष्कार सरकारी विद्यालयों एवं अदालतों का बहिष्कार, विधान-परिषदों का बहिष्कार " विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, दमनकारी कानूनों की सविनय अवज्ञा, सरकारी सेवाओं का बहिष्कार, तथा सरकारी उत्सवों, आयोजनों का बहिष्कार आदि।

13.6.2 रचनात्मक कार्यक्रम

इसके अन्तर्गत उन कार्यो को शामिल किया गया जो जनता के कल्याण के साथ राष्ट्रीयता की भावना की अभिवृद्धि में सहायक हों । ऐसे प्रमुख कार्यक्रम थे- पंचायतों का गठन, कांग्रेस के झंडे के नीचे देश को संगठित करना, विदेशी कपड़ों की जगह खादी का प्रयोग करना, हिन्दू-मुस्लिम एकता का पुनर्स्थापना, दलितों का उत्थान, मद्यपान निषेध हेतु प्रयास करना, राष्ट्रीय विद्यालयों एवं कालेजों की स्थापना करना, आदि।

गाँधी ने प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान प्राप्त 'केसर-ए-हिंद की उपाधि ब्रिटिश सरकार को वापस लौटाकर इस आंदोलन की शुरूआत की । इसके साथ ही हजारों की संख्या में लोगों ने सरकारी अदालतों, स्कूल कॉलेजों का बहिष्कार आरंभ कर दिया और बिहार, काशी, गुजरात एवं अलीगढ़ में राष्ट्रीय विद्यापीठ खोले गए । इस आंदोलन में हिन्दू और मुसलमानों ने समान रूप से भाग लिया । साथ ही सरकार का दमन चक्र चलता रहा । इसी बीच 5 फरवरी 1922 को चौरी चीरा में हुई एक हिंसक घटना ने गाँधी को पूरी तरह विचलित कर दिया व 12 फरवरी को बारदोली में उन्होंने असहयोग आन्दोलन को वापस लेने का ऐलान कर दिया ।

गाँधी के आंदोलन वापस लेने के निर्णय की तीव्र आलोचना हुई । नेहरू, सुभाषचन्द्र बोस आदि अनेक नेताओं ने इसे दुर्भाग्यपूर्ण बताया लेकिन गाँधी इससे तनिक भी विचलित न हुए । गाँधी एक दूरदृष्टा थे तथा वह भविष्य की रणनीति पर सतर्कतापूर्वक काम कर रहे थे । एक ओर जहां वे अपने अहिंसा के मार्ग का त्याग नहीं कर सकते थे वहीं दूसरी ओर एक भविष्यदर्शी नेता के रूप में वे ब्रिटिश सरकार को चौरी-चीरा घटना के आधार पर सम्पूर्ण आन्दोलन को कुचलने का मौका नहीं देना चाहते थे।

आन्दोलन को वापस लेने के पीछे गाँधी की मंशा उसकी ऊर्जा को बनाये रखने तथा जनता को हतोत्साहित होने से बचाये रखने की थी । ध्यातव्य है कि असहयोग आन्दोलन ब्रिटिश सरकार के खिलाफ पहला राष्ट्रवादी आन्दोलन था और ऐसे में प्रारम्भिक दौर में ही किसी तरह का हमला भविष्य के लक्ष्य को हमसे दूर कर सकता था । इस तरह असहयोग आन्दोलन के वापसी का निर्णय एक दूरदर्शी कदम था।

असहयोग आन्दोलन ने भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । इसी आन्दोलन ने पहली बार देश की जनता को एकत्रित किया था । कांग्रेस को सही मायनों में

देश के प्रत्येक वर्ग की वास्तविक प्रतिनिधित्व करने वाली संस्था के रूप में पहचान दिलाई तथा साम्प्रदायिक सौहार्द का अद्भूत नजारा पेश किया । नेहरू ने इस सम्बन्ध में कहा- "गाँधी के असहयोग आन्दोलन ने आत्म निर्भरता एवं अपनी संचित शक्ति का पाठ पढ़ाया । " असहयोग आन्दोलन के दौरान ही गाँधी की असाधारण प्रतिभा ने देशवासियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया । "गाँधी के कुशल नेतृत्व में कांग्रेस समाज के सबसे निचले हिस्से तक पहुँच गई और वे सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के सर्वमान्य नेता के रूप में स्थापित हुए।

13.7 सविनय अवज्ञा आन्दोलन (1930-34)

गाँधी के नेतृत्व में दूसरा महत्वपूर्ण आन्दोलन था - सविनय अवज्ञा आन्दोलन । 1929 में हुई कांग्रेस के लाहौर अधिवेशन में ' 'पूर्ण स्वराज्य' ' का लक्ष्य घोषित किया गया तथा कांग्रेस कार्यकारिणी को यह अधिकार दिया गया कि वह सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू करे । फरवरी 1930 में साबरमती आश्रम में हुई कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में गाँधी को इस बात का अधिकार दिया गया कि वह जब जैसे चाहें सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरुआत कर सकते हैं । गाँधी जन आंदोलनों के मर्मज्ञ थे । उन्होंनें सबसे पहला कार्य इस उद्देश्य से किया ताकि ब्रिटिश सरकार को जनता की दृष्टि में पूरी तरह गलत सिद्ध किया जा सके । इसी उद्देश्य से उन्होंने वायसराय को एक 11 सूत्रीय मांग पत्र सौंपा जिसमें मद्य निषेध, नमक कर का अंत, विदेशी वस्त्र पर आयात पर निषेध कर लगाया जाना आदि शामिल था । साथ ही इस बात का विश्वास दिलाया गया था कि यदि ये माँगे मान ली गई तो वह प्रस्तावित आन्दोलन नहीं करेंगे । परन्तु लार्ड इरविन ने यह कहते हुए कि इससे देश में अराजकता व अशान्ति के फैसले का खतरा है, मांगो को अस्वीकार कर दिया तथा प्रस्तावित आन्दोलन के दमन की रूप रेखा बनाना शुरू कर दिया । अब गाँधी बाध्य होकर आन्दोलन करने पर मजबूर हुए।

गाँधी की नजर में नमक कानून एक ऐसा कानून था जिससे समाज अन्तिम व्यक्ति भी गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा था । इसलिए ही उन्होंनें इसे 'सर्वाधिक दमनकारी कानून' की संज्ञा दी । गाँधी ने निश्चय किया कि वह गांव-गांव पैदल चलकर समुद्र तट पहुँचेंगे और कानून तोड़ने लोगों को आकर्षित करने का यह अद्भुत तरीका था । अपनी निश्चित योजना के तहत गाँधी अपने चुने हुए 7 अनुयायियों के साथ 12 मार्च 1930 को साबरमती से डांडी की ओर चल पड़े । 240 किमी० लम्बा यह अभियान 24 दिनों में पूरा हुआ। 6 अप्रैल को गाँधी जी ने समुद्रतट से मुट्ठी भर नमक उठाकर नमक कानून को तोड़ा इस तरह सविनय अवज्ञा आन्दोलन की शुरूआत की । गाँधी की इस यात्रा ने लोगों के दिलों को किया और उनमें राष्ट्रीयता के प्रति अद्भुत भावना का संचार किया । गाँधी जहाँ-जहाँ से गुजरते हजारों की भीड़ मार्गो के किनारों पर खड़ा होकर उनका अभिनंदन करती व चरखा चलाकर उनके प्रति सम्मान ।

यह एक ऐसा आन्दोलन था जो राष्ट्रीय आन्दोलन में आम जनता की दृष्टि से बेमिसाल था । शीघ्र ही यह आन्दोलन देश के कोने-कोने में फैल गया । संयुक्त प्रान्त में ' मजदूरों की हड़तालें स्कूल कालेजों के बहिष्कार, किसानों की लगान बंदी आदि ने जोर पकड़ा वहीं उत्तर पश्चिम सीमा प्रान्त में खुदाई खिदमतगारों (जिन्हें लाल कुर्ती के नाम से भी जाना जाता है) ने ब्रिटिश के खिलाफ अहिंसक आन्दोलन को संगठित किया तथा श्रमजीवियों के हालत

में सुधार की मांग की पेशावर में गढ़वाल रायफल के जवानों ने अपने ही देश के नागरिकों के खिलाफ गोली चलाने से इंकार यह स्पष्ट संकेत दिया कि अब वास्तव में अंग्रेजी राज्य की नींव हिलने लगी है ।

अंग्रेजी सरकार द्वारा सत्याग्रहियों के प्रति क्रूरतापूर्ण रवैये के खिलाफ ' ने वायसराय को अपने दूसरे कूच की सूचना दी तथा नमक कर न उठाये जाने की स्थिति में धरसाना नमक पर अधिकार कर लेने की घोषणा की । इसके मद्देनजर 4 मई को वायसराय ने गाँधी की का आदेश दिया और उन्हें यरवदा जेल भेज दिया गया । लेकिन गाँधी की गिरफ्तारी की उग्र प्रतिक्रिया हुई और आन्दोलन और तेज हो गया । अमेरिकी पत्रकार वेब मिलर ने अंग्रेजी सरकार के दमन चक्र को बयाँ करते हुए लिखा है- ' 'बीसेक देशों में समाचार भेजने के अपने कार्यकाल के 18 वर्षो के दौरान मैने असंख्य विद्रोह देखे हैं, दंगे, गली कूचों मे मारकाट और विद्रोह देखे हैं लेकिन धरसाना जैसा भयानक दृश्य मैंने जीवन में कभी नहीं देखा है । सबसे आश्चर्यजनक बात स्वयंसेवकों का अनुशासन था । ऐसा मालूम पड़ता कि उन्होंने गाँधी के अहिंसा के सिद्धान्त को पूरी तरह आत्मसात कर लिया हो।" 25 जनवरी 1931 कोर्ट ने शर्त गाँधी के रिहाई की घोषणा की । 5 मार्च 1931 को गाँधी-इरविन समझौता हुआ जिसके अन्तर्गत सविनय अवज्ञा के स्थगन को स्वीकार किया गया तथा यह भी तय हुआ कि काँग्रेस द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेगी । गाँधी कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए । लेकिन अनुदार दल की गाँधी समझौते में रूचि नहीं थी । अत: उसने फिर फूट डालो-राज करो की नीति का अनुसरण जारी रखा । मुद्दों पर सम्मेलन फिर असफल हुआ । गाँधी इससे अत्यन्त क्षुब्ध हुए तथा निराश होकर वापस लोटे।

इसी बीच कांग्रेस ने सरकार को एक प्रस्ताव दिया कि यदि सरकार का रूख छोड़ने को तैयार हो तो कांग्रेस सहयोग को तैयार है अन्यथा सविनय अवज्ञा आन्दोलन पुन: करना पड़ेगा।

गाँधी जी ने पुन: 'सविनय अवज्ञा आंदोलन' प्रारम्भ करने की घोषणा की, इससे पूर्व ही गाँधीजी को गिरफ्तार कर लिया गया । इससे सविनय अवज्ञा आंदोलन और अधिक तीव्र हो गया तथा जेल जाने वालों की संख्या 1 लाख 25 हजार तक पहुंच गई । गाँधीजी 8 मई, 1933 को रिहा दिए गए और 19 मई को आंदोलन 11 सप्ताह के लिए स्थगित कर दिया गया । इसके बाद व्यक्तिगत अवज्ञा आंदोलन प्रारम्भ किया गया और उसे भी अंततः 7 अप्रैल, 1934 में समाप्त कर दिया गया । सविनय अवज्ञा ' गाँधीजी के नेतृत्व में किया गया एक ऐसा अहिंसात्मक आंदोलन था जिसने भारत में अंग्रेजी साम्राज्य नींव हिला दी । सुभाष चन्द्र बोस ने गाँधी जी के डांडी अभियान की तुलना 'एलबा' से लौटकर आने के बाद नेपोलियन के 'पेरिस अभियान' से की । सविनय अवज्ञा आंदोलन के परिणामस्वरूप सन् 1935 के भारत शासन अधिनियम में ब्रिटिश सरकार को सीमित मात्रा में प्रान्तीय स्वायत्तता की मांग स्वीकार करनी पड़ी ।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में सविनय अवज्ञा आन्दोलन दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण संघर्ष था । ज्यूडिथ ब्राउन के शब्दों में - "1930-34 के बीच गाँधी के सविनय अवज्ञा आन्दोलन से भारतीय राजनीति में एक महत्वपूर्ण आयाम जुड़ा । इसने समग्र राष्ट्र को

अपने प्रभाव में ले लिया था । महिलाओं की जितनी भागीदारी इस आंदोलन में दिखी वह अभूतपूर्व थी । कहा जा सकता है गाँधी ने इस आन्दोलन के माध्यम से सम्पूर्ण राष्ट्र को जगाने का कार्य किया तथा अंग्रेजी साम्राज्य को बुरी तरह झकझोर कर रख दिया।"

13.8 भारत छोड़ो आन्दोलन (1942)

भारत छोड़ो आन्दोलन, सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के दौरान भारतीय जनता की वीरता व प्रतिरोध करने की अद्‌वितीय मिसाल पेश करता है । द्‌वितीय विश्वयुद्ध के दौरान जिन परिस्थितियों में यह संघर्ष छेड़ा गया वैसी प्रतिकूल परिस्थितियाँ कभी भी उत्पन्न नहीं हुई थीं । युद्ध की स्थिति की आड़ में अंग्रेजी सरकार ने राष्ट्रीय आन्दोलन को प्रतिबंधित कर रखा था । भ्रमपूर्ण क्रिप्स प्रस्तावों के द्‌वारा भारतीय जनता को स्वशासन का काल्पनिक रूप दिखलाकर उसका समर्थन हासिल करने की ब्रिटिश सरकार की चाल को समझते गाँधी व अन्य राष्ट्रीय नेताओं को देर न लगी । क्रिप्स मिशन के तुरंत बाद ही गाँधी जी ने कांग्रेस कार्यसमिति के लिए एक प्रस्ताव तैयार किया जिसमें अंग्रेजों को भारत छोड़ने के लिए कहा गया था । साथ ही यह भी कहा गया कि यदि अंग्रेज सरकार भारत से अपने साम्राज्य की समाप्ति की घोषणा कर दे तो कांग्रेस मित्र राष्ट्रों को युद्ध में सहयोग करेगी, अन्यथा गाँधी के नेतृत्व में 'स्वराज प्राप्ति का अहिंसक संघर्ष' प्रारम्भ किया जायेगा । इस प्रस्ताव को कांग्रेस कार्यसमिति ने 14 जुलाई 1942 को वर्धा में ही पारित कर दिया ।

8 अगस्त 1942 को अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की ग्वालिया टैंक, बम्बई की बैठक में अंग्रेजों 'भारत छोड़ो' का प्रस्ताव स्वीकृत किया गया । अपने ओजस्वी सम्बोधन में गाँधी ने कहा ' 'एक मंत्र है, छोटा सा मंत्र, जो मैं आपको देता हूँ । उसे आप अपने हृदय में अंकित कर सकते हैं और अपनी साँस-साँस द्‌वारा व्यक्त कर सकते हैं । वह मंत्र है 'करो या मरो'। या तो हम भारत को आजाद करायेंगे या इस कोशिश में अपनी जान दे देंगे । अपनी गुलामी का स्थायित्व देखने के लिए हम जिंदा नही रहेंगे । " गाँधी के उस भाषण पर टिप्पणी करते हुए इंदु विद्‌यावाचस्पति ने लिखा है कि ' 'गाँधी उस रात ऐसे बोल रहे थे मानो उनकी अन्तरात्मा से भगवान बोल रहा हो।"

आन्दोलन के लिए एक विस्तृत कार्यसूची जारी की गई थी जिनमें नमक बनाना, गैर कानूनी सभाओं की सदस्यता, वकालत, शिक्षण संस्थानों, न्यायालयों आदि का परित्याग, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, बिना टिकट यात्रा करना, गाड़ियाँ रोकना, हड़ताल आदि शामिल थे । 9 अगस्त को प्रात: गाँधी सहित सभी नेताओं को गिरफ़्तार कर लिया गया तथा गाँधी को आगा खाँ पैलेस में कैद रखा गया । नेताओं की गिरफ़्तारी सुनकर जनता में भारी आक्रोश उत्पन्न हो गया और सरकार की दमन नीति ने उनके भीतर विद्रोह की भावना पैदा कर दी । 'गाँधी की जय' तथा 'गाँधी को छोड़ दो', के साथ ही 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' का नारा चारों ओर गूंजने लगा।

गाँधी को सरकार के दमन चक्र की तथा हिंसा की जानकारी हुई तो उन्होंनें आत्मशुद्धि हेतु 21 दिनों का उपवास शुरू कर दिया । यद्‌यपि गाँधी की स्वास्थ्य काफी चिन्ताजनक हो गया फिर भी उन्होंने अपना उपवास सफलतापूर्वक पूरा किया ।

8 अगस्त 1942 को शुरू किए गए भारत छोड़ो आन्दोलन का एकमात्र उद्देश्य भारत को स्वतंत्र कराना था । यद्यपि यह आन्दोलन अपने लक्ष्य की सिद्धि करने में सफल नहीं हुआ परन्तु इसके अत्यन्त दूरगामी परिणाम निकले । इसने जनता में असाधारण जागृति पैदा की, इसकी तीव्रता ने के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जनमत तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । इस तरह यह पूरे आन्दोलन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटक साबित हुआ।

13.9 समीक्षा

भारतीय राष्ट्रवासियों के सर्वाधिक महत्वपूर्ण नेता के रूप में गाँधी का आविर्भाव 1920 तक हो गया था और कहा जा सकता है कि 1947 तक वे समग्र रूप से कांग्रेस पर छाये रहे । इसलिए ही इस युग को गाँधी युग भी कहा जाता है।

भारत के राष्ट्रवादी नेता के रूप में गाँधी की भूमिका का मूल्यांकन अत्यन्त कार्य है । इसका कारण यह है कि एक साथ ही गाँधी भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई पड़ते हैं । जैसे-. धर्म सुधारक की भूमिका, समाज सुधारक, की भूमिका, राष्ट्रीय आन्दोलन के नेता की भूमिका आदि । इनमें से किसी एक को अलग करके देखने पर कदाचित हम उनकी भूमिका के साथ न्याय नहीं कर सकते । पं. जवाहर लाल नेहरू के शब्दों मे- ' 'उनमें बराबर ही आन्तरिक द्वन्द छिड़ा हुआ होता था । आन्तरिक द्वन्द हमारी राष्ट्रीय राजनीति में भी छिड़ा रहता था । एक ओर राष्ट्रीय नेता के रूप में गाँधी थे तो दूसरी ओर महज एक इंजन के रूप में गाँधी जिनका पैगम्बरी संदेश न सिर्फ भारत वरन सारी मानव जाति और विश्व के लिए समर्पित था।"

गाँधी भारत को आधुनिक और जनवादी बनाने वालों में महानतम व्यक्ति थे । गाँधी के सफलता के पीछे एक बड़ा कारण उनका सामाजिक आधार था । जनमानस की जो समझ गाँधी के पास थी वैसा अन्य किसी भी नेता में मिलना अत्यन्त दुर्लभ है । किसी भी जनान्दोलन में राजनैतिक कार्य लोगों की चेतना, उनके भोगे हुए अनुभव और सामाजिक परिस्थितियों से अपने आप पैदा होने वाले उनके असंतोष पर आधारित होता है । नेताओं को न सिर्फ इस जन चेतना के अनुरूप कार्य करना होता है बल्कि उन्हें इसे प्रेरित करना, जागृत करना, शिक्षित व निर्देशित करना भी होता है । अपने अनेक राजनैतिक, सामाजिक, नैतिक, क्रियाकलापों द्वारा गाँधी ने अपने समस्त सार्वजनिक जीवन में समय-समय पर अनेक महत्वपूर्ण आन्दोलनों को सशक्त नेतृत्व प्रदान किया।

भारत में किए जाने वाले आन्दोलन के नेतृत्वकर्ता के रूप में गाँधी की रणनीति का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष यह था कि उन्होंनें ब्रिटिश समाज के कुछ वर्गो को अपने पक्ष में कर लेने अथवा उन्हें तटस्थ कर देने का सफल प्रयास किया । उन्होंनें ब्रिटिश जनता को कभी शत्रु के रूप में पेश नहीं किया बल्कि ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों के विरूद्ध आन्दोलन किया । इस तरह उन्होंनें ब्रिटिश औपनिवेशिक सत्ता व ब्रिटिश प्रजा के बीच स्पष्ट अन्तर किया । यह गाँधी के नेतृत्व की अनोखी विशेषता थी, जो उन्हें दुनिया भर में चलाये जाने वाले सभी आन्दोलनों व नेताओं से पृथक करता है।

गाँधी हमेशा यह मानते थे कि नेता स्वयंमेव कोई आन्दोलन पैदा नहीं कर सकते अपितु आन्दोलन तो जनता पैदा करती है । जनता अपने आप ही आन्दोलन की ओर आगे

बढ़ती है और नेता उसका नेतृत्व तभी कर सकता है जब वह उसकी मंशा को ठीक-ठीक भाँप सके । उनका स्पष्ट मानना था कि नेता व जनता के बीच पारस्परिक विश्वास का सम्बन्ध होना चाहिए । 5 फरवरी 1939 को हरिजन' में एक लेख में नेताओं, जन जागरूकता व जनान्दोलन के बीच राजनैतिक सम्बन्धों पर उन्होंनें लिखा- "लाखों लोगों में जागरूकता लाने में समय लगता है । इसे मशीन से नहीं बनाया जा सकता । यह रहस्यमय ढंग से आती प्रतीत होती है । राष्ट्रीय कार्यकर्ता सिर्फ जनमानस की पूर्वापेक्षा की प्रक्रिया तेज कर सकते हैं।" वे बार-बार इस बात को दोहराते थे कि कोई भी नेतृत्व जनता को अपने मर्जी से इस्तेमाल नहीं कर सकता। 1942 में एक ब्रिटिश पत्रकार के प्रत्युत्तर में उन्होंनें कहा कि- ' 'मेरा प्रभाव, बाहर के लोगों को भले ही व्यापक लगे, बहुत सीमित है । मेरे पास लोगों की समस्याओं को सुलझाने के लिए अभियान चलाने की शक्ति हो सकती है, क्योंकि लोग इसके लिए तैयार हैं और उन्हें कोई मददगार चाहिए । लेकिन मुझमें ऐसी कोई शक्ति नहीं है, जिससे मैं लोगों की ऊर्जा ऐसी दिशा में धकेल सकूँ जिसमें उन्हें खुद कोई रूचि नहीं हैं।

13.10 सारांश

समय-समय पर गाँधी ने अपने नेतृत्व में जिन जनान्दोलनों का संचालन किया उनसे गाँधीजी की नेतृत्व कौशल का परिचय मिलता है । नेताओं, समर्थकों तथा स्वत:स्फूर्तता और संगठन के बीच सम्बन्धों पर गाँधी की समझ को उनके द्वारा चलाये गये आन्दोलनों की शैली और व्यवहार में स्वत: ही देखा जा सकता है । गाँधी ने प्रत्येक आन्दोलन को अत्यन्त ही सावधानी से राजनीतिक वैचारिक रूप से खड़ा किया । जन भावनाओं की उनकी समझ अत्यन्त ही सटीक थी । जन भावनाओं की यह समझ ही उन्हें अन्य राष्ट्रवादी नेताओं की नेतृत्व क्षमता से मीलों आगे खडा कर देती है । वे आन्दोलन की तीव्रता को लोगों की भावनाओं की बढ़ती गर्मी के साथ नजदीकी तालमेल से विकसित कर लिया करते थे । उच्च स्तर के नेता, निचले कम के नेता और कार्यकर्ताओं को धीरे-धीरे एक अनुशासित जनता के साथ जोड़ दिया जाता था । उनकी कोशिश होती थी कि जो माँगे प्रस्तुत करनी है उनकी प्रकृति मूलत: लोगों को बड़े पैमाने पर एकजुट करने की हो । इस तरह गाँधी वास्तविक जननेता के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं । कदाचित् जनता के इसी अद्भुत नेतृत्व क्षमता के कारण उन्हें 'राष्ट्रपिता' की संज्ञा दी गई ।

13.11 अभ्यास प्रश्न

1. गाँधी एक जननायक थे' इस पर अपने विचार प्रस्तुत करें ।
2. 'सत्याग्रह पर एक आलोचनात्मक टिप्पणी लिखें ।
3. स्वतन्त्रता संग्राम आन्दोलन में गाँधी की भूमिका का परीक्षण कीजिए ।

13.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चन्द्र, विपिन, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, 1990

2. मनोज सिन्हा (संपादन) - 'गाँधी अध्ययन', ओरियँट ब्लैक स्वान, नई दिल्ली. 2010
3. प्रभाकर, विष्णु, गाँधी. समय, समाज और संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003
4. कुमार, रवीन्द्र, स्वतंत्रता संग्राम के गाँधीवादी युग का संक्षिप्त परिचय, कल्पाज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2008
5. नंदा, बी. आर. महात्मा गाँधी : ए बायोग्राफी, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2009
6. रॉथरमण्ड, दैतमर, महात्मा गाँधी : एन एस्से इन पॉलिटिकल बायोग्राफी, मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली,

इकाई-14

महात्मा गाँधी और राष्ट्रवाद

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

14.3 भारतीय राष्ट्रवाद

14.4 गाँधी का दृष्टिकोण

14.4.1 समायोजन' पर आधारित

14.4.2 यूरोपीय दृष्टिकोण से भिन्न

14.4.3 सर्ववर्गीय समावेश पर आधारित

14.4.4 वह धर्मनिरपेक्षता पर आधारित

14.4.5 वह अन्तर्राष्ट्रीयता के समकक्ष

14.4.6 वह समुदाय व बाहु ल्यवादी

14.4.7 वह जन आधारित धारणा

14.5 सारांश

14.6 अभ्यास प्रश्न

14.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

14.0 उद्देश्य

महात्मा गाँधी और राष्ट्रवाद नामक इस इकाई का उद्देश्य विद्यार्थियों को यह बतलाना है कि-

- राष्ट्रवाद का अर्थ समझाना
- भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि क्या रही है
- राष्ट्रवाद के सम्बन्ध में गाँधी का दृष्टिकोण क्या था
- गाँधी के राष्ट्रवाद सम्बन्धी दृष्टिकोण का महत्व

14.1 प्रस्तावना

राष्ट्रवाद एक आधुनिक विचार है जिसका उदय 18वी शताब्दी में हु आ । इसी समय राज्य नाम की अवधारणा का विकास हु आ तथा राजनीतिक रूप से अपनी एक अलग पहचान स्थापित की । राष्ट्रवाद के उदय के फलस्वरूप राजनीतिक सरोकारों का केन्द्र बिन्दु राज्य में निहित हो गया । धीरे-धीरे इस विचार ने अपनी एक व्यापक पहचान स्थापित की । विश्व स्तर पर राष्ट्रवाद के प्रचार-प्रसार से गैर-आधुनिक से गैर-आधुनिक समाजों का यूरोपीयकरण तथा आधुनिकीकरण हु आ । इसके उदय के साथ अनेक नये सिद्धांतों का उदय हु आ जैसे- संप्रभुता की उत्पत्ति, शासितों के सक्रिय सहयोग से शासन का सिद्धांत, धर्मनिरपेक्ष धार्मिक या जातीय

सामाजिक मानसिकता का विघटन । साथ ही साथ शहरीकरण, औद्योगिकीकरण संचार सेवाओं का प्रचार-प्रसार।

इस प्रकार राष्ट्रवाद को परिभाषित करते हुए यह कहा गया कि, 'राष्ट्रवाद एक राजनीतिक विचार है जो आधुनिक विचारों के साथ आधुनिक समाज की स्थापना करता है । यह बहुसंख्यक लोगो की असीम श्रद्धा, विश्वास व राष्ट्र के प्रति भक्ति है । यह राज्य को केवल राजनीतिक संगठन के रूप में तैयार नहीं करता बल्कि सांस्कृतिक व आर्थिक गतिविधियों का एक नया रूप भी प्रदान करता है । " यूरोपीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में सामान्य रूप से यह विचार दिया जाता है कि यह जैविक 'एकता, एक खास क्षेत्रफल, एक समान अर्थव्यवस्था, समान भाषा, राष्ट्र के प्रति समान सोच, सांस्कृतिक समानता जैसे तत्वों को समाहित करने वाला है ।

प्रख्यात इतिहासकार ई.एच.कार ने राष्ट्रवाद की व्याख्या निम्न शब्दों में की-

i. एक सर्वमान्य सरकार की व्यवस्था जो वर्तमान या भूत की वास्तविकता हो या भविष्य की आकांक्षी;
ii. एक निश्चित क्षेत्रफल तथा इसके सभी व्यक्तिगत सदस्यों के बीच आपसी तालमेल;
iii. कम या ज्यादा मात्रा में एक निश्चित सीमा हो;
iv. दूसरे राष्ट्रों व गैर-राष्ट्रीय समूहों से भिन्न कुछ ऐसे मौलिक तत्व हों, जो एक राष्ट्र को अलग पहचान दें । जिसमें भाषा को प्रमुखता दी जाये;
v. व्यक्तिगत सदस्यों के हित सामूहिक हों;
vi. जनसमूह में राष्ट्र के प्रति भावनात्मक झुकाव हो ।

यद्यपि ये सारे तत्व तीसरे विश्व के देशों के राष्ट्रवाद के रूप में अपनी जगह नहीं बना सकें । इसके अतिरिक्त राष्ट्रवाद को उन राज्यों के साथ जोड़कर देखा जाता है जिनकी पहचान राजनीतिक इकाई के रूप में हो चुकी है । लेकिन इस भावना का उदय उन समुदायों में भी हो सकता है जिनका न तो सामाजिक व सांस्कृतिक ढांचे का विकास हुआ हो और न ही राजनीतिक इकाई के रूप में कोई पहचान हो तथा जो अन्य राज्यों के प्रभुत्व में हो।

14.2 ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

18वीं शताब्दी के आरंभ से लेकर वर्तमान तक राष्ट्रवाद ने विभिन्न रूपों में अपनी मंजिल तय की । 18वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध तथा 19वीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध इसका शैशवकाल माना जाता है । इस काल में राष्ट्रवाद चारित्रिक रूप में अधिक उदार तथा अंतर्राष्ट्रीय था । इस दौर में इसने राष्ट्रीय भिन्नताओं को बिना किसी भेदभाव के स्वीकारा, जिससे इस बात को बल मिला कि यह एक साझे संघर्ष के सहभागी हैं । लेकिन इस समय यूरोप के कुछ भाग में राष्ट्रवाद को एक अलग पहचान के साथ उभारा जा रहा है । इसका दूसरा काल 19वीं शताब्दी के प्रारंभ तथा द्वितीय विश्वयुद्ध के समाप्ति तक माना जाता है । इस दौर में राष्ट्रवादी आंदोलनों ने अपने व्यापक अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को छोड़कर रूढ़िवादी और प्रतिक्रियावादी का रूप अपना लिया । इस प्रवृत्ति का सबसे ज्यादा विकास दो विश्वयुद्धों के बीच के काल में हुआ । यहां तक कि गैर-राष्ट्रवादी साम्यवादी आंदोलनों ने भी राष्ट्रवाद का चोला पहन लिया । इसके

अंतिम काल की शुरूआत द्वितीय विश्वयुद्ध के पूर्वार्द्ध में एशिया, अफ्रीका तथा लैटिन अमेरिका के राज्यों की स्वतंत्रता के साथ शुरू हुई । अब राष्ट्रवादी आंदोलनों का केंद्र यूरोप से तीसरे विश्व के देशों में आ गया । इसका उदय मूल रूप से औपनिवेशिक साम्राज्य के खिलाफ संघर्ष के परिणामस्वरूप हुआ । स्वतंत्रता के बाद भी इन देशों में यह प्रवृत्ति कायम रही और दूसरे विश्वयुद्ध के बाद भाईचारे के रूप में सामने आयी । गुट निरपेक्ष आंदोलनों के द्वारा जो विश्वस्तर पर शक्तिशाली गुटों के विरोध स्वरूप थी । शीतयुद्ध की समाप्ति और भूमंडलीकरण ने एक बार राष्ट्रवाद को उदार राष्ट्रवाद के रूप में मार्ग प्रशस्त किया है, जिसमें राजनीतिक सरकारों को दरकिनार कर आर्थिक सम्बंधों को केन्द्र में रखा गया है । लेकिन यह सब निर्भर करेगा राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर होने वाली गतिविधियों से, इसकी रूपरेखा तथा भविष्य इनके बीच के संबंधों और समायोजन क्षमता ही तय करेगी।

14.3 भारतीय राष्ट्रवाद

भारतीय राष्ट्रवाद की अपनी विशेषताएं है, इसलिए गाँधी के विचारों के विश्लेषण के पहले भारतीय राष्ट्रवाद के उदय संबंधी दो अनिवार्य बिन्दुओं का विश्लेषण करना जरूरी है । राष्ट्रवाद को समझने के लिए इन बिन्दुओं का उल्लेख जरूरी है जिससे राष्ट्रवाद की समझ और भी व्यापक होगी।

1. यह सर्वविदित है कि भारतीय राष्ट्रवाद का उदय यूरोपीय साँचे मे नहीं हुआ । भारतीय राष्ट्रवाद की प्रकृति व स्वरूप यूरोपीय राष्ट्रवाद से बिल्कुल अलग रही है । अत: इसके दायरे में यूरोपीय राष्ट्रवाद के प्रकृति व स्वरूप नहीं आते हैं । यूरोपीय राष्ट्रवाद जैविक एकता, विशिष्ट क्षेत्रफल, एक समान अर्थव्यवस्था, भाषाई समानता, राष्ट्र के प्रति एक सोच तथा सांस्कृतिक समानता तक ही सीमित है । लेकिन भारतीय राष्ट्रवाद का विकास सामाजिक-आर्थिक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमि के साये में हुआ है, इसलिए इसकी प्रकृति और परंपरा यूरोपीय राष्ट्रवाद से अलग है ।
2. भारतीय राष्ट्रवाद कुछ क्रांतिकारी विचारों या आर्थिक व्यवस्था के विभिन्न स्तरों पर होने वाले विकास या फिर सामाजिक परिवर्तनों का उत्पादन भी नहीं है । यह किसी भी तरीके से एक निश्चित दिशा में सामाजिक विकास भर नहीं था । औपनिवेशक ताकतों के फलस्वरूप उपजी पीड़ाओं ने यहां के नेताओं को इन पीड़ाओं ने एक ठोस राजनीति पर काम करने के लिए प्रेरित किया । जिसके कारण संघर्ष का मुख्य उद्देश्य भारत की स्वतंत्रता हो गई । अत: कहा जा सकता है कि भारतीय राष्ट्रवाद आजादी के लिए संघर्ष का ही एक परिणाम था । औपनिवेशिक दासता के मकड़जाल से निकलने के लिए अपनाये जाने वाले तौर-तरीकों ने भारतीय राष्ट्रवाद के स्वरूप को प्रभावित करता रहा । ये सारे तर्क भारतीय राष्ट्रवाद को उन आरोपों से मुक्त करते हैं कि भारतीय राष्ट्रवाद बिना राष्ट्र का राष्ट्रवाद है और साथ ही साथ कैम्ब्रिज इतिहासकारों के उस दृष्टिकोण को नकारती है कि यहां राष्ट्रवाद का उदय आदर्शों, विचारों तथा वैचारिक धाराओं को महत्व देने के बजाय नाम, पद, स्वार्थ तथा एक-दूसरे से आगे निकलने की प्रवृत्ति के फलस्वरूप हुआ । इसके बजाय भारतीय राष्ट्रवाद को राजनीतिक के एक

स्वरूप में जिसकी जड़ औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध संघर्ष में निहित है; समझा जाना अधिक प्रासंगिक और व्यापक होगा।

14.4 गाँधी का दृष्टिकोण

गाँधी ने राष्ट्रवाद पर अलग से अपना कोई मौलिक विचार प्रस्तुत नहीं किया । इसलिए गाँधी के विचारों में राष्ट्रवाद को समझने के लिए उनकी विचारधारा और सम्पूर्ण दर्शन का अध्ययन करना जरूरी है । उनके लिए राष्ट्रवाद भारत की आजादी हेतु निहित संघर्षों में समाहित था । उनके विचारों को इस विषय को लेकर समझने के लिए इन दोनों चीजों पर गौर करना होगा कि गाँधी के हृदय में राष्ट्रवाद नामक पौधा का प्रस्फुटन भारत में नहीं बल्कि दक्षिण अफ्रीका में हुआ और तथ्य अकेले ही अन्य भारतीय राष्ट्रवादियों से अलग करती है । दूसरा चम्पारण या बारदोली के बजाय ट्रांसवाल की राजनीतिक पृष्ठभूमि पर गाँधी ने अपने अद्भुत व अनुपम राजनीतिक दर्शन, तौर-तरीकों का विकास किया । गाँधी ने कहीं एक जगह राष्ट्रवाद के बारे में कोई ठोस विचार नहीं दिया है, इसलिए गाँधी के दृष्टिकोण में राष्ट्रवाद को समझने के लिए सम्पूर्ण गाँधी साहित्य का अध्ययन करना जरूरी है । गाँधी के रचनाक्रमों के अध्ययन के फलस्वरूप कुछ तथ्य उभरकर सामने आये है।

14.4.1 'समायोजन' पर आधारित

गाँधी के दृष्टिकोण में समुदायों का राष्ट्रवादी समरसता कायम करना शामिल था । उनकी राष्ट्रवादी अवधारणा में न केवल धार्मिक समूह बल्कि जातियाँ और प्रजातियाँ भी शामिल थीं । इस पर रविन्द्र कुमार ने टिप्पणी की है कि चूंकि गाँधी के मानस में भारत की वास्तविक तस्वीर वर्गो, जातियों, समुदायों तथा धार्मिक समूहों के एक स्वच्छन्द घनीभूत के रूप में थी, सो वे इस उपमहाद्वीप के जनमानस में राष्ट्रीय भावना भरने में जितना समर्थ थे उतना इनके पूर्व न कोई था न बाद में हुआ।

ब्रिटिश सत्ता को उखाड़ फेंकने के अपने कार्यक्रम में वे सभी जातियाँ, वर्गो, समुदायों, धर्मावलंबियों को एक मंच पर लाये तथा अपने राष्ट्रवाद की भावना से प्रेरित कर लक्ष्य को प्राप्ति के लिए प्रेरित किया । यह काम उन्होंने सभी समूहों को साथ लेकर किया । साथ ही उनका प्रयास था कि विभिन्न मत भिन्नताओं और विभिन्न विचारों वालों को भी जागत कर एक मंच पर लाया जाए।

14.4.4 यूरोपीय दृष्टिकोण से भिन्न

गाँधी का राष्ट्रवाद औपनिवेशिक सत्ता से प्रेरित था लेकिन उनके तौर-तरीके यूरोपीय देशों से कई मायनों में अलग थे । उन्होंने वैसे राष्ट्रवाद को दरकिनार कर दिया जो हिंसा पर आधारित हो जैसा कि यूरोपीय देशों में देखने को मिलता है । वे अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए अहिंसा का उपयोग करना चाहते थे, उनका मानना था कि 'प्रेम या आत्मा की ताकत के आगे हथियारों की ताकत निरीह व निष्प्रभावी है । उनका मानना था कि हिंसा से आपसी संवाद खत्म होते हैं और समाज में हिंसक प्रवृति को बढ़ावा मिलता है । उनका विचार था कि भारतीयों को ब्रिटिश सरकार की गलतियों का एहसास दिलाना चाहिए तथा सत्याग्रह द्वारा अपने

आपको बदलने की कोशिश करनी चाहिए । उनकी नजरों में राष्ट्र की मुक्ति के लिए हिंसा का कोई स्थान न था।

14.4.3 सर्ववर्गीय समावेश पर आधारित

उनका राष्ट्रवाद समाज के सभी तबको के साथ बिना किसी भेदभाव के सामूहिक सोच व लक्ष्य की अभिव्यक्ति थी । वे जाति या वर्ग के आधार पर पृथकतावादी दृष्टिकोण के खिलाफ थे । उन्होंने जातीय ऊंच-नीच के खिलाफ हमेशा आवाज उठायी और भारत से छुआछूत मिटाने का अथक व गंभीर प्रयास किया । वे हमेशा से एक ऐसे राष्ट्रवाद के पक्षधर थे जो विभिन्न वर्गो-समुदायों तथा बहुलतावादी संस्कृति पर आधारित हो । भारत से छुआछूत को हटाने के लिए उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में काफी परिवर्तन किये । दक्षिण अफ्रीका में भी गाँधी सहयोगियों से सभी जातियों व समुदायों के लोग शामिल थे । 1915 में भारत लौटने पर अहमदाबाद में स्थापित पहले आश्रम में उनके व्यापक विरोध के बावजूद दलित व्यापारियों को आमंत्रित किया । उन्होंने दलितों को 'हरिजन' नाम दिया और फिर इसी नाम से उन्होंने साप्ताहिक पत्रिका का प्रकाशन भी किया । यह पत्रिका समाज के निचले तबकों की समस्याओं पर केंद्रित थी । 1932 में जेल से छूटने के बाद छुआछूत को मिटाने के लिए उन्होंने 12500 मील की यात्रा पैदल की । उन्होंने इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए 'हरिजन कोष' की स्थापना की । गाँधी का मानना था कि ब्रिटिश सरकार इसी जात-पात के आधार पर लोगों को बांटकर शोषण कर रही है । जैसा कि 1909 के एक्ट से हिन्दु-मुस्लिम के बीच खाई पैदा की थी । अत: भारत की एकता और अखंडता को रखने के लिए गाँधी ने ब्रिटिश सरकार के सारे कपटपूर्ण नीतियों को कमजोर करने की कोशिश की जिससे भारतीय राष्ट्रवाद कमजोर हो सकता था।

14.4.4 धर्मनिरपेक्षता पर आधारित

गाँधी का राष्ट्रवाद धर्म से प्रेरित होने के बावजूद पंथनिरपेक्ष प्रकृति वाल था । यद्यपि गाँधी की नजरों में भारत विभिन्न धर्मा, भाषाओं, पंथों तथा जातियों का देश था । फिर भी जब कभी भी संश्लेषण विश्लेषण व पारस्परिक अस्तित्व की बात आयी तो अनजाने ही वे हिंदुत्व की तरफ झुके नजर आये । गाँधी द्वारा बार-बार धर्म की बात करने से उनके विचारों में थोड़ी अस्पष्टता और उलझन दिखाई देती है । धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक था, वे धर्म में मिले तमाम रूढ़ियों, रिवाजों और अंधविश्वासों को तोड़ना चाहते थे । वे धर्म को व्यक्तिगत मानते थे जहां लोग अपने दैनिक जीवन के क्रियाकलापों की शुद्धता पर ध्यान देता हो । इसी प्रकार राष्ट्र के संदर्भ में भी उनकी प्रवृत्ति धर्मनिरपेक्ष थी । एम.एन. राय ने प्रारम्भ में गाँधी द्वारा राजनीतिक अध्यात्मिकरण की आलोचना की । लेकिन बाद में उन्होंने समझा कि गाँधी के धार्मिक विचारों की जड़ नैतिक, मानवतावादी तथा वैश्विक थी तथा उनमें किसी व्यक्ति, पंथ, धर्म, समाज या राष्ट्र के प्रति उनके मन में लेशमात्र भी दुराग्रह नहीं था । गाँधी द्वारा हिन्द स्वराज लिखे जाने के समय यह बात बहस का मुद्दा थी कि भारत की राष्ट्र के रूप में स्थापना धार्मिक आधार पर संभव है या नहीं । इस किताब में उन्होंने राष्ट्र शब्द के लिए प्रजा शब्द का इस्तेमाल किया । उनका विश्वास था कि प्रजा नामक शब्द से भारत में एक

साझे संस्कृति का निर्माण होगा । उन्होंने हिन्द स्वराज्य में प्रजा' पर आधारित उदार राष्ट्रवाद को अपनाने पर बल दिया । उन्होंने लोगों का अहवान किया और धर्म को धर्मांधता की बुराई से मुक्त कराने और प्रेम तथा आध्यात्म पर आधारित धर्म का रास्ता सुगम व आसान होता है । इस प्रकार उन्होंने कहा कि सभी संगठित धर्म की अधिक वैधता होती हैं । इसका मतलब यह है कि सभी धर्मो को एक-दूसरे के प्रति सहनशीलता व सम्मान अपनाना चाहिए । यद्यपि गाँधी का झुकाव हिंदुत्व के प्रति था पर उनका दृष्टिकोण बहुत ही व्यापक था । इसमें कोई शक नहीं कि गाँधी धर्म-निरपेक्ष तथा धार्मिक आदर्शो के प्रति समर्पित ही नहीं बल्कि इसको अपनाने में अग्रदूत की भूमिका निभाई । वे साम्प्रदायिक मतभेदों को आपसी मेल-जोल के साथ हल करना चाहते थे, जिसमें समुदायों की भागीदारी अनिवार्य थी । वे एक ऐसे राष्ट्रवाद का निर्माण करना चाहते थे जिसकी बुनियादी सद्भावना, सहअस्तित्व तथा समन्वय पर आधारित थी न कि समावेशीकरण सम्मिश्रण तथा संयोजन पर । कुछ विद्वानों का यह तर्क है कि अंतिम दिनों में उनका धार्मिक बहुलतावाद की सीमा 'बहुल' हिन्दुत्व से आगे जाकर तानों-बानों में गुंथ गई थी तथा उनके धार्मिक विचारों व दर्शन का स्वरूप पूर्णत: वैश्विक हो गया था।

14.4.5 अन्तर्राष्ट्रीयता के समकक्ष

गाँधीवादी राष्ट्रवाद में अन्तर्राष्ट्रीयतावादी अंश था । उनका मानना था कि दोनों सह-अस्तित्व मुमकिन है । इसका कारण था कि वे राज्य व राष्ट्र को एक-दूसरे से पृथक मानते थे । उनके राष्ट्र ऐसे व्यक्तियों का अर्थपूर्ण सम्मिलित स्वरूप है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति अपनी अतशाक्तियों से होकर एक साझे लक्ष्य को पाने के लिए प्रयत्नशील रहता है । पर राज्य एक मशीनी व्यवस्था है जो पर थोप दी जाती है । गाँधी की नजरों में राष्ट्र रचनात्मक और जीवंतता का एक रूप है तो राज्य रूढ़ियों परंपराओं का एक आदर्श रूप।

गाँधी इस बात को सुनिश्चित करना चाहते थे कि राष्ट्र के सामाजिक सरोकारों पर राज्य के काले बादल न छा जाएं । वे इस बात से डरते थे कि राष्ट्र का भाग्य तथाकथित नियंत्रक के रूप मे राज्य द्वारा निष्क्रिय न कर दिया जाये । उन्होंने इस बात पर भी बल दिया कि भारत सिर्फ कुछ समुदायों का समूह नहीं है वरन् यह एक राष्ट्र है जहां लोगों की आकांक्षाएं व आशाएं साझे हित से प्रेरित हैं तथा जिसकी प्रतिबद्धता एक आध्यात्मिक सभ्यता की खोज व निर्माण की विकास है । इस संदर्भ में भीखू पारिख का कथन उल्लेखनीय है कि गाँधी ने राष्ट्रवाद शब्द का प्रयोग देश प्रेम के रूप में किया । अधिकतर जगहों पर उन्होंने सामूहिक गौरव, पैतृक निष्ठा, पारस्परिक उत्तरदायित्व तथा बौद्धिक व नैतिक खुलेपन को अधिक बेहतर व अनुकूल माना । अत: राष्ट्रवाद का विचार को अंतर्राष्ट्रीयवाद के पूरक के रूप में समझा जा सकता है । गाँधी के अनुसार किसी के लिए भी यह सम्भव नहीं है कि वह राष्ट्रवादी बने बिना अंतर्राष्ट्रीयवादी बने । अन्तर्राष्ट्रवाद तभी संभव है जब राष्ट्रवाद की अनुभूति कर ली जाये । राष्ट्रवाद को संकीर्णता, स्वार्थपरता तथा विशिष्टता के चश्मे से देखना गाँधी के अनुसार पाप है तथा आधुनिक राष्ट्रवाद की अवधारणा पर यह कलंक है । आधुनिकता की इस चकाचौंध में प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे को पछाड़कर या गिराकर आगे बढ़ना चाहता है । भारतीय राष्ट्रवाद

इन सबसे भिन्न और अलग मार्ग प्रशस्त करता है । यह अपने आपको इस ढंग से परिपूर्ण करना चाहता है जो सम्पूर्ण मानवता के पक्ष में खड़ा हो सके।

14.4.6 समुदाय व बाहुल्यवादी

गाँधी समुदायवादी रुख के अलावा बहुलता व सम्मिश्रण सरोकारों में अधिक विश्वास रखते थे । यह बात उस समय और अधिक स्पष्ट हुई जब जिन्ना ने मुस्लिम साम्प्रदायिकता के आधार पर, अलग राष्ट्र की मांग की तो इस पर गाँधी का विचार था कि यूरोपीय राष्ट्रों की तरह भारत की राष्ट्रीयता को पारिभाषित करना उचित नहीं है । वे भारत को एक ऐसी सभ्यता का देश मानते थे जहां विभिन्न सम्प्रदाय, जाति में समुदाय के लोग आपसी समझ व सहनशीलता के साथ वर्षो से रहते आ रहे हैं । यह समुदायों का एक ऐसा समुदाय है जहां प्रत्येक अपने कर्म, विचार व दर्शन के लिए स्वतंत्र है पर प्रत्येक का भाग्य एक साझा संस्कृति पर आधारित है । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि भारतीय मुस्लिम सिर्फ क्षेत्रीय दायरे में ही भारतीय नहीं हैं. बल्कि सांस्कृतिक रूप से भी वे पूर्णत: भारतीय है तथा हिन्दुओं के साथ-साथ वे भारतीय सभ्यता के साझे भागीदार है । यद्यपि अन्य समुदायों की तरह उनका अपने विशिष्ट रीति-रिवाज हो सकते हैं पर वे राष्ट्र के भीतर किसी तरह से शांति या सह-अस्तित्व में बाधक नहीं हैं । उनकी नजर में भारत ही एक ऐसी हस्ती थी जिसकी सामाजिक व सांस्कृतिक विशिष्टताएं पूरे भारत में एक समान थी । इसलिए विभिन्न समुदायों के बजाय सभ्यता की बात करते हुए गाँधी ने एक ऐसे भारतीय राष्ट्रवाद के निर्माण की कोशिश की जिसकी बुनियाद बहुलता तथा समरसता पर आधारित हो, जो विविधताओं व विभिन्नताओं का न केवल सम्मान करता हो बल्कि उसके प्रति उत्साह, उमंग और जीवंतता भी रखता हो । वे एक ऐसे वातावरण की रचना करना चाहते थे जहां संस्कृतियों व समुदायों में आपसी मेल-जोल हो । इस प्रकार गाँधी का राष्ट्रवाद मानवतावाद पर आधारित था । गाँधी समुदाय को व्यक्तियों का समूह मानते थे, सो उनकी नजर में आपसी झगड़ों का निपटारा उसी तरह होना चाहिए जैसे परिवार के सदस्यों के बीच होता है।

14.4.7 जन आधारित धारणा

राष्ट्रवाद का उनका सिद्धांत जन आधारित था यही कारण रहा कि भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के आगमन के बाद एक नवीन किस्म के राष्ट्रवाद का जन्म हुआ। गाँधी के आगमन ने राष्ट्रवादी आंदोलन को एक नई दिशा व दृष्टि दी । इससे आंदोलन का स्वरूप बहुजन व बहुवर्ग आधारित हो गया । अपने देशी गतिविधियों के कारण इसने एक अलग पहचान बनाई । गाँधी युग के पूर्व सामाजिक स्तर पर राजनीतिक जागरण कुछ चंद ऊंचे तबकों तक ही सीमित नहीं था बल्कि निजी हित साधने का एक जरिया बन चुका था । औपनिवेशिक शासन के लिए यह परिस्थितियों अनुकूल थी । इसका परिणाम यह हुआ कि समाज वर्गो के आधार पर बंटता चला गया और दूसरी ओर साम्प्रदायिक विभाजन भी इसी का परिणाम था । लेकिन गाँधी ने चम्पारण, खेड़ा, बारदोली जैसे दूर-दराज क्षेत्रों में अपना प्रयोग कर आंदोलन को लोगों से जोड़ा और देशव्यापी जन आंदोलन जैसे असहयोग, खिलाफत, सविनय अवज्ञा आंदोलन से लोगों को

जोड़ा । भारत छोड़ो जैसे अत्यंत प्रभावी आंदोलनों के द्वारा देश के कोने-कोने में हर वर्ग और समुदायों के बीच अपनी बात पहुंचाई तथा साझे लक्ष्य से प्रेरित कर राष्ट्रीय आंदोलन में उनकी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की और इस तरह प्रथम विश्वयुद्ध के समय तक जो आंदोलन कुछ खास लोगों तक सीमित था । उसने हिन्दुस्तान के जनमानस को आंदोलित, स्पंदित व सक्रिय कर दिया ।

वह वही समय था जब कांग्रेस पर गाँधी की पकड़ मजबूत थी इसलिए इस समय के कांग्रेस के सभी प्रयासों में गाँधीवादी विचारधारा की प्रमुख व निर्णायक भूमिका थी । कांग्रेस के सभी कार्यक्रम 'व्यावहारिकता व आध्यात्मिकता' पर आधारित थे । इस परिप्रेक्ष्य में विपिन चन्द्र का यह कथन उल्लेखनीय है कि उपनिवेश विरोधी विचारधारा के साथ-साथ स्वतंत्रता, समानता, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, सामाजिकता, आर्थिक विकास, स्वतंत्र व संयुक्त राजनीति तथा गरीबोन्मुखी विचारों की प्रेरणा ने कांग्रेस की दशा व दिशा बदल दी तथा वह इस बात में सक्षम व समर्थ हुई कि वह राष्ट्रीय आंदोलन को लोकप्रिय जन आंदोलन का रूप प्रदान कर सके ।

यद्यपि गाँधी इस बात को भली-भांति जानते थे कि इस तरह के जन आंदोलनों का भविष्य लंबा नहीं है तथा उसे लंबे समय तक जारी नहीं रखा जा सकता । इसलिए बीच-बीच में उन्होंने विराम की नीति अपनाई जो आगे के आंदोलनों में इस नीति ने ऊर्जा भरने का काम किया । इस तरह गाँधी ने संघर्ष-विराम-संघर्ष की नीति को अपना हथियार बनाया ताकि आंदोलन को लम्बे समय तक कायम रखा जा सके।

इस आंदोलन को व्यावहारिक स्वरूप प्रदान करने के लिए गाँधी ने रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से तेरह (13) बिन्दुओं को तय किया । इन कार्यक्रमों में शामिल थे साम्प्रदायिक एकता, छुआछूत उन्मूलन, मद्यनिषेध. शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, स्वास्थ्य व सफाई, राष्ट्रभाषा, मातृभाषा के प्रति प्रेम तथा ट्रस्टीशिप के द्वारा आर्थिक समानता का प्रचार-प्रसार । खिलाफत आंदोलन के समय गाँधी के प्रयासों से ही हिन्दू-मुस्लिम एकता परवान चढ़ी।

खादी कार्यक्रम और छुआछूत कार्यक्रम मिशन के तौर पर चलाया गया । यद्यपि हिन्दू-मुस्लिम एकता को देश विभाजन से पूर्व भारतीय स्वतंत्रता के अंतिम दिनों में फिर से जिंदा किया गया । लेकिन सवाल उठता है कि क्या गाँधी ने इसे जनआंदोलन का रूप दिया? इस पर विवाद है पर एक बात स्पष्ट है कि राष्ट्रवादी संघर्ष का अंतिम काल गाँधीवादी विचारधारा की गिरफ्त में था। गाँधीवादी राष्ट्रवाद एक व्यापक फलक का राष्ट्रवाद था जो संकुचित व साम्प्रदायिक दृष्टि से परे और सभी जातियों, दबे-कुचले व समाज के पिछड़े तबको को एक समाज धरातल पर लाने की बात करता है । यह राष्ट्रवाद सामाजिक और आर्थिक खाइयों को पाटना चाहता था । धर्म- निरपेक्षता के प्रति उनके विचार पर विवाद की संभावना है । फिर भी धर्म आधारित संकुचित विचारों से वे परे रहे है । उन्होंने धर्म को न केवल व्यक्तिगत दृष्टि से देखा बल्कि संगठित स्तर पर भी गहरी पड़ताल की और साथ ही धर्म को काल्पनिक व वास्तविक तत्वों के बीच स्पष्ट सीमा रेखा निर्धारित की। यह सर्वविदित है कि वे हिन्दू धर्म से काफी प्रभावित थे पर किसी भी मायने में उनमें हठधर्मिता नाम की चीज देखने को नहीं मिलती । वे हिन्दू-मुस्लिम दोनों को समतामूलक दृष्टि से देखते थे । गाँधी रूढ़िवादी राष्ट्रवादी नहीं थे

बल्कि उनकी विचारधारा अंतर्राष्ट्रीयवाद से अधिक प्रेरित थी। उनका राष्ट्रवाद मानवता मर आधारित था । उन्होंने साम्यवादी राष्ट्रवाद को भी स्वीकार नहीं किया । इसके बजाय व लोक मानवतावाद के पक्षधर थे चूंकि भारतीय राष्ट्रवाद औपनिवेशक विरोधी संघर्ष से प्रभावित था इसलिए गाँधी ने राष्ट्रवाद की इस अन अनुभूति को जन आंदोलन का रूप प्रदान किया । विशाल जनमानस को एक मंच पर लाने के लिए अहिंसक आंदोलनों का सहारा लिया तथा खुद भी उस जीवन को जीया । राष्ट्रीय एकता और अखंडता को कायम रखने के लिए बहुत सारे रचनात्मक कार्यक्रम लोगों के समान रखे । अत: गाँधीवादी राष्ट्रवाद को समझने के लिए यह जरूरी है कि उनके विचारों पर दर्शनों को समझें । वे अपने राष्ट्रवाद के द्वारा न सिर्फ भारत की स्वतंत्रता चाहते थे बल्कि एकता और अखंडता को भी अक्षुण्ण रखना चाहते थे।

14.5 सारांश

उपरोक्त विश्लेषण से गाँधीवादी राष्ट्रवाद पर एक स्पष्ट रूपरेखा तैयार करना बहुत ही कठिन काम है । इस कठिनाई के उत्पन्न होने का कारण गाँधीवादी विचारधारा में जटिलता और औपनिवेशिक साम्राज्य के विरूद्ध लड़े जा रहे स्वतंत्रता संग्राम के कार्यक्रमों में परिवर्तन बहुत हद तक अपनी भूमिका अदा करती है । स्वतंत्रता के अंतिम तीन दशकों में गाँधी के दृष्टिकोणों में विरोधाभास तो देखने को नहीं मिलता मर परिवर्तनशीलता जरूर दिखती है । हिन्दू-मुस्लिम एकता भी सामाजिक-राजनीतिक बदलाव में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । इन सब तथ्यों का गाँधी सहित अन्य नेताओं पर भी गहरा प्रभाव पड़ता हे । इन सारी सीमाओं के बावजूद गाँधी की विचारधारा अर्थात् गाँधी का राष्ट्रवाद समुदाय, जाति और अन्य कुंठित विचारधाराओं से ऊपर था । राष्ट्र के संदर्भ में भी वे एक विशेष क्षेत्र से बंधे हुए नहीं थे, बल्कि उनका राष्ट्रवाद अतंर-राष्ट्रवाद का समर्थक था और इस संदर्भ में वे एक-दूसरे को पूरक मानते है । धर्मनिरपेक्षता के संदर्भ में उनकी सोच व्यापक थी पर हिन्दु-मुस्लिम एकता के संदर्भ में उनका विचार बदलता रहता था । वे मुस्लिमों को भारतीय सभ्यता से अलग स्वतंत्र समुदाय के रूप में मानने से इन्कार करते थे । साथ ही उन्होंने खिलाफत आन्दोलन के समर्थन के औचित्य को ढूँढना सही नहीं समझा । उन्होंने धर्म का प्रयोग राजनीति में उचित नहीं समझा क्योकि यह अलग मुस्लिम राज्य का मार्ग प्रशस्त कर सकता था । इस तरह की सोच को कुछ विद्वानों ने अन्तविरोध माना और यह कहा कि वे दक्षिण अफ्रीका में मुस्लिम सहयोग को सही नहीं मानते थे और कुछ विद्वानों मे यह माना कि गाँधी के विचारों में बदलाव के कारण हुआ । कुछ भी हो गाँधी का अंतिम लक्ष्य भारत की स्वतंत्रता थी और इसलिए उनको व्यापक जन आंदोलनों में उनको सफलता मिली । उनके विचारों में जो विरोधाभास हो पर इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि उन्होंने भारत जैसी विविध पूर्ण सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों वाले देश को एकसूत्र मे बांधने का प्रयत्न किया।

अंत में यह कहा जा सकता है कि गाँधी ने राष्ट्रवाद की व्याख्या भारतीय सभ्यता के व्यापक संदर्भों में की थी न कि संकीर्ण राष्ट्रवाद के परिप्रेक्ष्य में और इससे भी अधिक उनका राष्ट्रवाद भारतीय स्वतंत्रता की आत्मा में था इसी आत्मा को पाने के लिए कहीं-कहीं विचारों में बदलाव दिखता है।

14.6 अभ्यास प्रश्न

1. राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि बतलाते हुए भारतीय राष्ट्रवाद का स्वरूप बताइये ।
2. गाँधी का राष्ट्रवादी दृष्टिकोण पर लेख लिखिए ।
3. गाँधी के राष्ट्रवादी दृष्टिकोण की समीक्षा कीजिए ।

14.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. नंदा, बी. आर., गाँधी : पेन इस्लामिज्म इम्पिरिएलिज्म एण्ड नेशनलिज्म इन इण्डिया, ओ.यू.पी., नई दिल्ली, 2002
2. शाह, मोहम्मद, फ्रीडम मुवमेन्ट इन इण्डिया, एसोसिएटेड पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1979
3. ब्राउन, जूडित, गाँधीयन राइस दू पावर : इंडियन पॉलिटिक्स 1915-22 केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1972
4. ब्राउन, जूड़ित, गाँधी एण्ड सिविल डिसओअबीडियन्स : द महात्मा इन इण्डियन पॉलिटिक्स 1928-34, केम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, केम्ब्रिज, 1977
5. रॉथरमण्ड, दैतमर महात्मा गाँधी. एन एस्से इन पॉलिटिकल बायोग्राफी. मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1991
6. कुमार, रविन्द्र स्वतंत्रता संग्राम के गाँधीवादी युग का संक्षिप्त परिचय, कल्पाज पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2008

ISBN : 13/978-81-8496-292-5